“અહો શ્રુતજ્ઞાનમ્” ગ્રંથ જીર્ણોધ્ધાર ૧૪૨

જૈન સાહિત્ય સંશોધક

વર્ષ-03 – અંક-3, ૪

: દ્રવ્ય સહાયક :

પૂજ્ય આચાર્ય શ્રી રામચન્દ્ર-ભદ્રંકર-કુંદકુંદસૂરીશ્વરજી મહારાજાના
શિષ્યરત્ન વર્ધમાન તપની ૧૦૦+૭૯ ઓળીના આરાધક
પૂ. પંન્યાસ પ્રવર શ્રી નયભદ્રવિજયજી મ.સા.ની શુભ પ્રેરણાથી
શ્રી ભાવવર્ધક જૈન સંઘ, રાહેજા ટાવર, મલાડ (ઇસ્ટ), મુંબઈની
જ્ઞાનખાતાની ઉપજમાંથી

: સંયોજક :

શાહ બાબુલાલ સરેમલ બેડાવાળા
શ્રી આશાપૂરણ પાર્શ્વનાથ જૈન જ્ઞાનભંડાર
શા. વીમળાબેન સરેમલ જવેરચંદજી બેડાવાળા ભવન
હીરાજૈન સોસાયટી, સાબરમતી, અમદાવાદ-380005
(મો.) 9426585904 (ઓ.) 22132543

સંવત ૨૦૬૮ ઈ.સ. ૨૦૧૨

શ્રી આશાપૂરણ પાર્શ્વનાથ જૈન જ્ઞાનભંડાર

સંયોજક – શાહ બાબુલાલ સરેમલ

શાહ વીમળાબેન સરેમલ જવેરચંદજી બેડાવાળા ભવન

હીરાજૈન સોસાયટી, રામનગર, સાબરમતી, અમદાવાદ-૦૫.

(મો.) ૯૪૨૬૫૮૫૯૦૪ (ઓ) ૨૨૧૩૨૫૪૩ (ઇ-મેલ) ahoshrut.bs@gmail.com

અહો શ્રુતજ્ઞાનમ્ ગ્રંથ જીર્ણોદ્ધાર – સંવત ૨૦૬૫ (ઈ. ૨૦૦૯) – સેટ નં-૧

પ્રાયઃ જીર્ણ અપ્રાપ્ય પુસ્તકોને સ્કેન કરાવીને ડી.વી.ડી. બનાવી તેની યાદી.

આ પુસ્તકો www.jainelibrary.org વેબસાઇટ પરથી પણ ડાઉનલોડ કરી શકાશે.

ક્રમાંક	પુસ્તકનું નામ	કર્તા-ટીકાકાર-સંપાદક	પૃષ્ઠ
001	श्री नंदीसूत्र अवचूरी	पू. विक्रमसूरिजी म.सा.	238
002	श्री उत्तराध्ययन सूत्र चूर्णी	पू. जिनदासगणि चूर्णीकार	286
003	श्री अर्हद्गीता-भगवद्गीता	पू. मेघविजयजी गणि म.सा.	84
004	श्री अर्हच्चूडामणि सारसटीकः	पू. भद्रबाहुस्वामी म.सा.	18
005	श्री यूक्ति प्रकाशसूत्रं	पू. पद्मसागरजी गणि म.सा.	48
006	श्री मानतुङ्गशास्त्रम्	पू. मानतुंगविजयजी म.सा.	54
007	अपराजितपृच्छा	श्री बी. भट्टाचार्य	810
008	शिल्प स्मृति वास्तु विद्यायाम्	श्री नंदलाल चुनिलाल सोमपुरा	850
009	शिल्परत्नम् भाग-१	श्रीकुमार के. सभात्सव शास्त्री	322
010	शिल्परत्नम् भाग-२	श्रीकुमार के. सभात्सव शास्त्री	280
011	प्रासादतिलक	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	162
012	काश्यशिल्पम्	श्री विनायक गणेश आपटे	302
013	प्रासादमञ्जरी	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	156
014	राजवल्लभ याने शिल्पशास्त्र	श्री नारायण भारती गोंसाई	352
015	शिल्पदीपक	श्री गंगाधरजी प्रणीत	120
016	वास्तुसार	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	88
017	दीपार्णव उत्तरार्ध	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	110
018	જિનપ્રાસાદ માર્તણ્ડ	શ્રી નંદલાલ ચુનીલાલ સોમપુરા	498
019	जैन ग्रंथावली	श्री जैन श्वेताम्बर कोन्फ्रन्स	502
020	હીરકલશ જૈન જ્યોતિષ	શ્રી હિમ્મતરામ મહાશંકર જાની	454
021	न्यायप्रवेशः भाग-१	श्री आनंदशंकर बी. ध्रुव	226
022	दीपार्णव पूर्वार्ध	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	640
023	अनेकान्त जयपताकाख्यं भाग-१	पू. मुनिचंद्रसूरिजी म.सा.	452
024	अनेकान्त जयपताकाख्यं भाग-२	श्री एच. आर. कापडीआ	500
025	प्राकृत व्याकरण भाषांतर सह	श्री बेचरदास जीवराज दोशी	454

026	**तत्त्वोपप्लवसिंहः**	**श्री जयराशी भट्ट, बी. भट्टाचार्य**	**188**
027	**शक्तिवादादर्शः**	**श्री सुदर्शनाचार्य शास्त्री**	**214**
028	**क्षीरार्णव**	**श्री प्रभाशंकर ओघडभाई**	**414**
029	**वेधवास्तु प्रभाकर**	**श्री प्रभाशंकर ओघडभाई**	**192**
030	**शिल्परत्नाकर**	**श्री नर्मदाशंकर शास्त्री**	**824**
031	**प्रासाद मंडन**	**पं. भगवानदास जैन**	**288**
032	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-१**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**520**
033	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-२**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**578**
034	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-३ (१)**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**278**
035	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-3 (२) (३)**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**252**
036	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-५**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**324**
037	વાસ્તુનિઘંટુ	પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરા	302
038	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૧	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	196
039	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૨	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	190
040	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૩	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	202
041	સપ્તસન્ધાન મહાકાવ્યમ્	પૂ. વિજયઅમૃતસૂરિશ્વરજી	480
042	સપ્તભઙ્ગીમિમાંસા	પૂ. પં. શિવાનન્દવિજયજી	228
043	ન્યાયાવતાર	સતિષચંદ્ર વિદ્યાભૂષણ	60
044	વ્યુત્પત્તિવાદ ગુઢાર્થતત્ત્વાલોક	શ્રી ધર્મદત્તસૂરિ (બચ્છા ઝા)	218
045	સામાન્યનિર્યુક્તિ ગુઢાર્થતત્ત્વાલોક	શ્રી ધર્મદત્તસૂરિ (બચ્છા ઝા)	190
046	સપ્તભઙ્ગીનયપ્રદીપ બાલબોધિનીવિવૃત્તિઃ	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	138
047	વ્યુત્પત્તિવાદ શાસ્ત્રાર્થકલા ટીકા	શ્રીવેણીમાધવ શાસ્ત્રી	296
048	નયોપદેશ ભાગ-૧ તરઙ્ગિણીતરણી	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	210
049	નયોપદેશ ભાગ-૨ તરઙ્ગિણીતરણી	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	274
050	ન્યાયસમુચ્ચય	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	286
051	સ્યાદ્યાર્થપ્રકાશઃ	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	216
052	દિન શુદ્ધિ પ્રકરણ	પૂ. દર્શનવિજયજી	532
053	બૃહદ્ ધારણા યંત્ર	પૂ. દર્શનવિજયજી	113
054	જ્યોતિર્મહોદય	સં. પૂ. અક્ષયવિજયજી	112

શ્રી આશાપૂરણ પાર્શ્વનાથ જૈન જ્ઞાનભંડાર

સંયોજક – શાહ બાબુલાલ સરેમલ

શાહ વીમળાબેન સરેમલ જવેરચંદજી બેડાવાળા ભવન

હીરાજૈન સોસાયટી, રામનગર, સાબરમતી, અમદાવાદ-૦૫.

(મો.) ૯૪૨૬૫૮૫૯૦૪ (ઓ) ૨૨૧૩૨૫૪૩ (ઇ-મેલ) ahoshrut.bs@gmail.com

અહો શ્રુતજ્ઞાનમ્ ગ્રંથ જીર્ણોદ્ધાર – સંવત ૨૦૬૬ (ઈ. ૨૦૧૦) – સેટ નં-૨

પ્રાયઃ જીર્ણ અપ્રાપ્ય પુસ્તકોને સ્કેન કરાવીને ડી.વી.ડી. બનાવી તેની યાદી.

આ પુસ્તકો www.jainelibrary.org વેબસાઇટ પરથી પણ ડાઉનલોડ કરી શકાશે.

ક્રમ	પુસ્તકનું નામ	ભાષા	કર્તા-ટીકાકાર-સંપાદક	પૃષ્ઠ
055	श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहद्न्यास अध्याय-६	सं	पू. लावण्यसूरिजी म.सा.	296
056	विविध तीर्थ कल्प	सं	पू. जिनविजयजी म.सा.	160
057	ભારતીય જૈન શ્રમણ સંસ્કૃતિ અને લેખનકળા	ગુજ.	पू. पूण्यविजयजी म.सा.	164
058	सिद्धान्तलक्षणगूढार्थ तत्त्वलोकः	सं	श्री धर्मदत्तसूरि	202
059	व्याप्ति पञ्चक विवृत्ति टीका	सं	श्री धर्मदत्तसूरि	48
060	જૈન સંગીત રાગમાળા	ગુ.	श्री मांगरोळ जैन संगीत मंडळी	306
061	चतुर्विंशतीप्रबन्ध (प्रबंध कोश)	सं	श्री रसिकलाल एच. कापडीआ	322
062	व्युत्पत्तिवाद आदर्श व्याख्यया संपूर्ण ६ अध्याय	सं	श्री सुदर्शनाचार्य	668
063	चन्द्रप्रभा हेमकौमुदी	सं	पू. मेघविजयजी गणि	516
064	विवेक विलास	सं/ગુ.	श्री दामोदर गोविंदाचार्य	268
065	पञ्चशती प्रबोध प्रबंध	सं	पू. मृगेन्द्रविजयजी म.सा.	456
066	सन्मतितत्त्वसोपानम्	सं	पू. लब्धिसूरिजी म.सा.	420
067	ઉપદેશમાલા દોઘટ્ટી ટીકા ગુર્જરાનુવાદ	ગુજ.	पू. हेमसागरसूरिजी म.सा.	638
068	मोहराजापराजयम्	सं	पू. चतुरविजयजी म.सा.	192
069	क्रियाकोश	सं/हिं	श्री मोहनलाल बांठिया	428
070	कालिकाचार्यकथासंग्रह	सं/ગુ.	श्री अंबालाल प्रेमचंद	406
071	सामान्यनिरुक्ति चंद्रकला कलाविलास टीका	सं.	श्री वामाचरण भट्टाचार्य	308
072	जन्मसमुद्रजातक	सं/हिं	श्री भगवानदास जैन	128
073	मेघमहोदय वर्षप्रबोध	सं/हिं	श्री भगवानदास जैन	532
074	જૈન સામુદ્રિકનાં પાંચ ગ્રંથો	ગુજ.	श्री हिम्मतराम महाशंकर जानी	376

075	જૈન ચિત્ર કલ્પદ્રૂમ ભાગ-૧	ગુજ.	श्री साराभाई नवाब	374
076	જૈન ચિત્ર કલ્પદ્રૂમ ભાગ-૨	ગુજ.	श्री साराभाई नवाब	238
077	સંગીત નાટ્ય રૂપાવલી	ગુજ.	श्री विद्या साराभाई नवाब	194
078	ભારતનાં જૈન તીર્થો અને તેનું શિલ્પસ્થાપત્ય	ગુજ.	श्री साराभाई नवाब	192
079	શિલ્પ ચિન્તામણિ ભાગ-૧	ગુજ.	श्री मनसुखलाल भुदरमल	254
080	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-૧	ગુજ.	श्री जगन्नाथ अंबाराम	260
081	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-૨	ગુજ.	श्री जगन्नाथ अंबाराम	238
082	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-૩	ગુજ.	श्री जगन्नाथ अंबाराम	260
083	આયુર્વેદના અનુભૂત પ્રયોગો ભાગ-૧	ગુજ.	पू. कान्तिसागरजी	114
084	કલ્યાણ કારક	ગુજ.	श्री वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री	910
085	**विश्वलोचन कोश**	सं./हिं	श्री नंदलाल शर्मा	436
086	કથા રત્ન કોશ ભાગ-1	ગુજ.	श्री बेचरदास जीवराज दोशी	336
087	કથા રત્ન કોશ ભાગ-2	ગુજ.	श्री बेचरदास जीवराज दोशी	230
088	હસ્તસઞ્જીવનમ્	સં.	पू. मेघविजयजीगणि	322
089	એન્દ્રચતુર્વિંશતિકા	સં.	पू.यशोविजयजी, पू. पुण्यविजयजी	114
090	સમ્મતિ તર્ક મહાર્ણવાવતારિકા	સં.	आचार्य श्री विजयदर्शनसूरिजी	560

श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार

संयोजक – शाह बाबुलाल सरेमल - (मो.) 9426585904 (ओ.) 22132543 - ahoshrut.bs@gmail.com

शाह वीमळाबेन सरेमल जवेरचंदजी बेडावाळा भवन

हीराजैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अमदावाद-05.

अहो श्रुतज्ञानम् ग्रंथ जीर्णोद्धार – संवत २०६७ (ई. 2011) सेट नं.-३

प्रायः अप्राप्य प्राचीन पुस्तकों की स्केन डीवीडी बनाई उसकी सूची। *यह पुस्तके www.jainelibrary.org वेबसाइट से भी डाउनलोड कर सकते हैं।*

क्रम	पुस्तक नाम	कर्त्ता / टीकाकार	भाषा	संपादक / प्रकाशक	पृष्ठ
91	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-१	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	272
92	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-२	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	240
93	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-३	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	254
94	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-४	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	282
95	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-५	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	118
96	पवित्र कल्पसूत्र	पुण्यविजयजी	सं./अं	साराभाई नवाब	466
97	समराङ्गण सूत्रधार भाग-१	भोजदेव	सं.	टी. गणपति शास्त्री	342
98	समराङ्गण सूत्रधार भाग-२	भोजदेव	सं.	टी. गणपति शास्त्री	362
99	भुवनदीपक	पद्मप्रभसूरिजी	सं.	वेंकटेश प्रेस	134
100	गाथासहस्त्री	समयसुंदरजी	सं.	सुखलालजी	70
101	भारतीय प्राचीन लिपीमाला	गौरीशंकर ओझा	हिन्दी	मुन्शीराम मनोहरराम	316
102	शब्दरत्नाकर	साधुसुन्दरजी	सं.	हरगोविन्ददास बेचरदास	224
103	सुबोधवाणी प्रकाश	न्यायविजयजी	सं./गु	हेमचंद्राचार्य जैन सभा	612
104	लघु प्रबंध संग्रह	जयंत पी. ठाकर	सं.	ओरीएन्ट इन्स्टीट्युट बरोडा	307
105	जैन स्तोत्र संचय-१-२-३	माणिक्यसागरसूरिजी	सं,	आगमोद्धारक सभा	250
106	सन्मति तर्क प्रकरण भाग-१,२,३	सिद्धसेन दिवाकर	सं.	सुखलाल संघवी	514
107	सन्मति तर्क प्रकरण भाग-४,५	सिद्धसेन दिवाकर	सं.	सुखलाल संघवी	454
108	न्यायसार – न्यायतात्पर्यदीपिका	सतिषचंद्र विद्याभूषण	सं.	एसियाटीक सोसायटी	354
109	जैन लेख संग्रह भाग-१	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	337
110	जैन लेख संग्रह भाग-२	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	354
111	जैन लेख संग्रह भाग-३	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	372
112	जैन धातु प्रतिमा लेख भाग-१	कांतिविजयजी	सं./हि	जिनदत्तसूरि ज्ञानभंडार	142
113	जैन प्रतिमा लेख संग्रह	दौलतसिंह लोढा	सं./हि	अरविन्द धामणिया	336
114	राधनपुर प्रतिमा लेख संदोह	विशालविजयजी	सं./गु	यशोविजयजी ग्रंथमाळा	364
115	प्राचिन लेख संग्रह-१	विजयधर्मसूरिजी	सं./गु	यशोविजयजी ग्रंथमाळा	218
116	बीकानेर जैन लेख संग्रह	अगरचंद नाहटा	सं./हि	नाहटा ब्रधर्स	656
117	प्राचीन जैन लेख संग्रह भाग-१	जिनविजयजी	सं./हि	जैन आत्मानंद सभा	122
118	प्राचिन जैन लेख संग्रह भाग-२	जिनविजयजी	सं./हि	जैन आत्मानंद सभा	764
119	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-१	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	404
120	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-२	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	404
121	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-३	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	540
122	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-१	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	274
123	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-४	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	414
124	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-५	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	400
125	कलेक्शन ऑफ प्राकृत एन्ड संस्कृत इन्स्क्रीप्शन्स	पी. पीटरसन	अं.	भावनगर आर्चीऑलॉजीकल डिपा.	320
126	विजयदेव माहात्म्यम्	जिनविजयजी	सं.	जैन सत्य संशोधक	148

श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार

संयोजक – शाह बाबुलाल सरेमल - (मो.) 9426585904 (ओ.) 22132543 - ahoshrut.bs@gmail.com

शाह वीमळाबेन सरेमल जवेरचंदजी बेडावाळा भवन

हीराजैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अमदावाद-05.

अहो श्रुतज्ञानम् ग्रंथ जीर्णोद्धार – संवत २०६८ (ई. 2012) सेट नं.-४

प्रायः अप्राप्य प्राचीन पुस्तकों की स्केन डीवीडी बनाई उसकी सूची। *यह पुस्तके www.jainelibrary.org वेबसाइट से भी डाउनलोड कर सकते हैं।*

क्रम	पुस्तक नाम	कर्त्ता / संपादक	भाषा	प्रकाशक	पृष्ठ
127	महाप्रभाविक नवस्मरण	साराभाई नवाब	गुज.	साराभाई नवाब	754
128	जैन चित्र कल्पलता	साराभाई नवाब	गुज.	साराभाई नवाब	84
129	जैन धर्मनो प्राचीन इतिहास भाग-२	हीरालाल हंसराज	गुज.	हीरालाल हंसराज	194
130	ओपरेशन इन सर्च ओफ सं. मेन्यु. भाग-६	पी. पीटरसन	अंग्रेजी	एशियाटीक सोसायटी	171
131	जैन गणित विचार	कुंवरजी आणंदजी	गुज.	जैन धर्म प्रसारक सभा	90
132	दैवज्ञ कामधेनु (प्राचिन ज्योतिष ग्रंथ)	शील खंड	सं.	ब्रज. बी. दास बनारस	310
133	करण प्रकाश	ब्रह्मदेव	सं./अं.	सुधाकर द्विवेदि	276
134	न्यायविशारद महो. यशोविजयजी स्वहस्तलिखित कृति संग्रह	यशोदेवसूरिजी	गुज.	यशोभारती प्रकाशन	69
135	भौगोलिक कोश-१	डाह्याभाई पीतांबरदास	गुज.	गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी	100
136	भौगोलिक कोश-२	डाह्याभाई पीतांबरदास	गुज.	गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी	136
137	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-१ अंक-१, २	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	266
138	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-१ अंक-३, ४	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	244
139	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-२ अंक-१, २	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	274
140	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-२ अंक-३, ४	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	168
141	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-३ अंक-१, २	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	282
142	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-३ अंक-३, ४	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	182
143	नवपदोनी आनुपूर्वी भाग-१	सोमविजयजी	गुज.	शाह बाबुलाल सवचंद	384
144	नवपदोनी आनुपूर्वी भाग-२	सोमविजयजी	गुज.	शाह बाबुलाल सवचंद	376
145	नवपदोनी आनुपूर्वी भाग-३	सोमविजयजी	गुज.	शाह बाबुलाल सवचंद	387
146	भास्वति	शतानंद मारछता	सं./हि	एच.बी. गुप्ता एन्ड सन्स बनारस	174
147	जैन सिद्धांत कौमुदी (अर्धमागधी व्याकरण)	रत्नचंद्र स्वामी	प्रा./सं.	भैरोदान सेठीया	320
148	मंत्रराज गुणकल्प महोदधि	जयदयाल शर्मा	हिन्दी	जयदयाल शर्मा	286
149	फक्कीका रत्नमंजूषा-१, २	कनकलाल ठाकूर	सं.	हरिकृष्ण निबंध	272
150	अनुभूत सिद्ध विशायंत्र (छ कल्प संग्रह)	मेघविजयजी	सं./गुज	महावीर ग्रंथमाळा	142
151	सारावलि	कल्याण वर्धन	सं.	पांडुरंग जीवाजी	260
152	ज्योतिष सिद्धांत संग्रह	विश्वेश्वरप्रसाद द्विवेदी	सं.	ब्रीजभूषणदास बनारस	232
153	ज्ञान प्रदीपिका तथा सामुद्रिक शास्त्रम्	रामव्यास पान्डेय	सं.	जैन सिद्धांत भवन	160
	नूतन संकलन				
१	आ. चंद्रसागरसूरिजी ज्ञानभंडार – उज्जैन	हस्तप्रत सूचीपत्र	हिन्दी	श्री आशापुरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार	
२	श्री गुजराती श्वे.मू. जैन संघ-हस्तप्रत भंडार – कलकत्ता	हस्तप्रत सूचीपत्र	हिन्दी	श्री आशापुरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार	

ખંડ ૩. અંક ૩.

जैनसाहित्यसंशोधक

આશ્વિન ૧૯૮૪

જૈન
સાહિત્ય સંશોધક

જૈન ઇતિહાસ, સાહિત્ય, તત્ત્વજ્ઞાન આદિ વિવિધ વિષયક

સચિત્ર ત્રૈમાસિક પત્ર

संपादक

श्री जिन विजय

(આચાર્ય-ગૂજરાત પુરાતત્ત્વ મંદિર-અમદાવાદ)

प्रकाशक

જૈન સાહિત્ય સંશોધક કાર્યાલય

વાર્ષિક મૂલ્ય રૂ. ૬)] અમદાવાદ [પ્રતિ અંક મૂ. રૂ. ૨)

Aho ! Shrutgyanam

વિષયાનુક્રમણિકા

૧	મહાકવિધનપાલકૃત સત્યપુરીય શ્રીમહાવીર ઉત્સાહ	૨૪૧–૩
૨	સત્યપુરીય શ્રીમહાવીર ઉત્સાહ પરિચય	૨૪૪–૨૫૧
૩	મહમૂદ ગજનવી અને સોરઠના સોમનાથ	૨૫૨–૨૫૯
૪	મૂર્તિપૂજાનું માહાત્મ્ય	૨૬૨–૨૭૨
૫	કવિ દીપવિજયજી લિખિત મહાનિશીથ સૂત્ર પરિચય	૨૫૮–૨૬૧
૬	કડુઆમતની પટ્ટાવલી	૨૭૩–૨૭૭
૭	ઉજ્જયિનીના સંઘનું વિજ્ઞપ્તિપત્ર	૨૭૭–૨૮૧
૮	અધ્યાપક હર્મન યાકોબી લિખિત સમરાઇચ્ચકહાની પ્રસ્તાવના [અનુવાદક–શ્રીયુત ચિમનલાલ જેચંદ શાહ બી. એ.]	૨૮૨–૨૯૪
૯	મહાકવિ ધનપાલ વિરચિત વિરોધાભાસાલંકારમય શ્રીમહાવીર સ્તુતિ. [વિવેચક–પં. શ્રી બેચરદાસ જીવરાજ]	૨૯૫–૩૧૨
૧૦	જૈન તત્ત્વ ચર્ચા— (૧) સ્ત્રીજાતિને દૃષ્ટિવાદ અંગ ભણવાના નિષેધપર એક વિચાર (૨) અવ્યવહારરાશિ ને વ્યવહારરાશિની કલ્પના (૩) કેટલાક વિચારવા લાયક પ્રશ્નો.	૩૧૩–૩૧૯
૧૧	પંન્યાસ પદવી	૩૨૦

Aho ! Shrutgyanam

સંપાદકીય વક્તવ્ય

બીજા અંકમાં અમે જાહેર કર્યું હતું કે ત્રીજો અંક લગભગ આશ્વિનપૂર્ણિમાએ પ્રકટ થશે. પરંતુ, પુરાતત્ત્વ મંદિર હસ્તક છપાતા એક બે ગ્રંથોના કાર્યને અંગે અમારે એ વખતે ખાસ ગુંથાઈ રહેવા જેવું થવાથી ધારેલા સમયે આ અંક પ્રગટ ન કરી શકાયો.

*　　*　　*　　*

આ અંક સાથે, પાલણપુરના શ્વેતાંબર સ્થાનકવાસી જૈન સસ્તુ સાહિત્ય પ્રચારક મંડળ તરફથી પ્રકટ થએલું " આત્મ જાગૃતિ ભાવના " નામનું લઘુ પુસ્તક ભેટ તરીકે મોકલવામાં આવે છે જેનો સ્વીકાર કરી યોગ્ય ઉપયોગ કરવાની અમારા વાચકોને ખાસ ભલામણ કરીએ છીએ.

—સંપાદક.

Aho ! Shrutgyanam

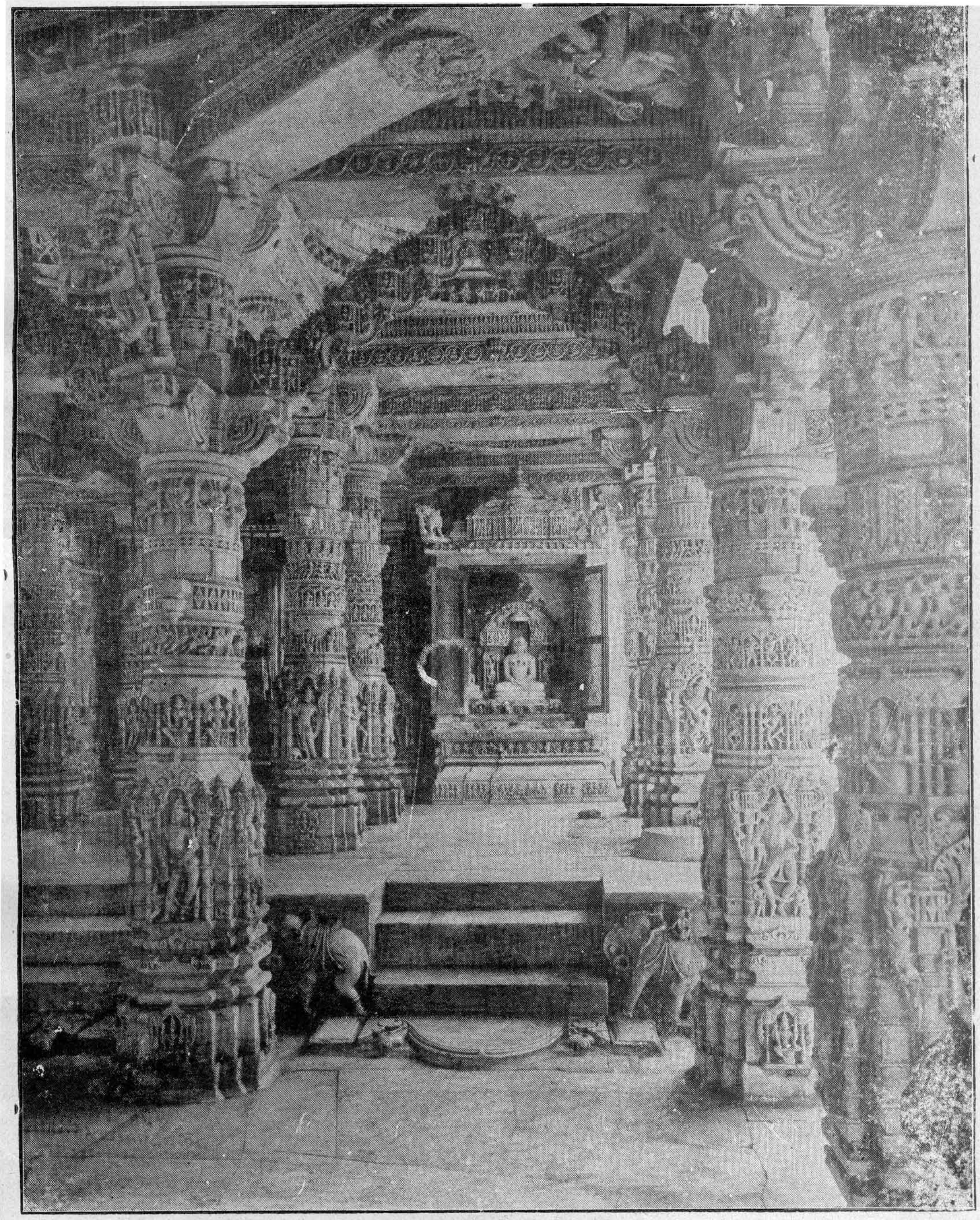

આબુ, દેલવાડા જૈન મંદિર

કુમાર પ્રિન્ટરી, અમદાવાદ

બ્લૉક 'કુમાર'ના સૌજન્યથી

Aho ! Shrutgyanam

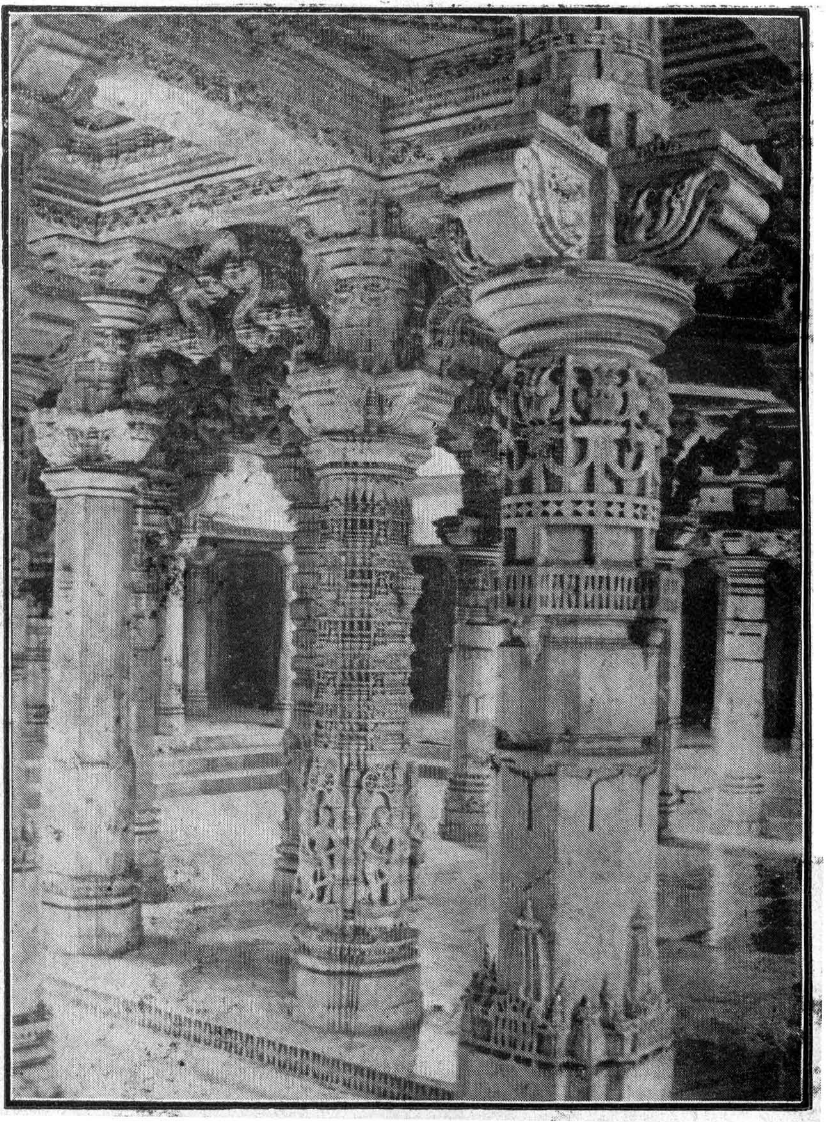

આબુ, દેલવાડા જૈન મંદિર

કુમાર પ્રિન્ટરી: અમદાવાદ

બ્લૉક 'કુમાર'ના સૌજન્યથી

Aho ! Shrutgyanam

जैन साहित्यसंशोधक

‘पुरिसा ! सच्चमेव समभिजाणाहि । सचस्साणाए उवट्ठिए मेहावी मारं तरइ ।’

‘जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइ; जे सव्वं जाणइ से एगं जाणइ ।’

‘दिट्ठं, सुयं, मयं, विण्णायं, जं एत्थ परिकहिज्जइ ।’

—निर्ग्रन्थप्रवचन—

खंड ३] महावीरनिर्वाण संवत् २४५३—आश्विन [अंक ३

महाकवि धनपालकृत सत्यपुरीय-श्रीमहावीर-उत्साह

जिणव जेण दुद्दट्ठ कम्म बलवंता मोडिय,
चउ कसाय पसरंत जेण उम्मूल वितोडिय;
तिहुयण-जगडण-मयण-सरहि तणु जासु न भिज्जइ,
इयरनरहि सचउरि-वीरु सो किम जगडिज्जइ. ॥ १ ॥

वरसुरहि पहरंत खंध माहणसिरि तोडहि,
फरसु अत्थि गब्भरु य लेवि तरुवारिहि झोडहि;
ते तेरिस पाविट्ठ दुट्ठ आरुट्ठ सुधीरह,
नयणिहि पेच्छहि जाव ताव पहरंति न वीरह. ॥ २ ॥

भंजेवि णु सिरिमालदेसु अनु अणहिलवाडउं,
चड्डावल्लि सोरट्ठु भग्गु पुणु देउलवाडउं;
सोमेसरु सो तेहि भग्गु जणमणआणंदणु,
भग्गु न सिरि सचउरि वीरु सिद्धत्थह नंदणु. ॥ ३ ॥

Aho ! Shrutgyanam

बहुएहि वि तारायणेहि रविपसरु किं भिज्जइ,
बहुएहि वि विसहरेहि मिलि वि किं गुरुडु गिलिज्जइ;
बहु कुरंग आरुट्ठ करहि किरि काइ मयंदह,
पूणिहि बहुय तुरुक्क कांइ सच्चउरि-जिणिंदह. ॥ ४ ॥
कसिणाणि णु चिरकालि आसि कुवि जोगनरेसरु,
उव्वसियइ सच्चउरि दिट्ठु तहि वीरु जिणेसरु;
आरंभिउ आहुट्ठ रंगु चामीयर वरतणु,
वरतुरंगदो रहि निमित्तु नरवइहि चलिउ मणु. ॥ ५ ॥
रायाएसिहि दुट्ठभडिहि जिणु जाव न नामिओं,
बद्धु सामि करिवरह खंधि रज्जुहुं संदामिओं;
कड्ढंतह तुट्टेवि रज्जु हय गय धरणीयलि,
निविडिय जिम परिचत्त रुंड पेच्छंतह परबलि. ॥ ६ ॥
पुणवि कुहाडा हत्थि लेवि जिणवरतणु ताडिउ,
पच्छुत्थडवि कुहाडेहिं सो सिरि अंबाडिउ;
अज्जवि दीसहि अंगि घाय सोहिय तसु धीरह,
चलणजुयलु सच्चउरि-नयरि पणमहु तसु वीरह. ॥ ७ ॥
गोसाला संगमय अमर उवसग्ग सहेविणु,
जो न चलिउ झाणह जिणिंदु सिवसुहतग्गयमणु;
तसु कित्तिय उवसग्ग सहवि किय नरह नरिंदह,
नमहु नमहु सच्चउरि-वीरु जो चरमजिणिंदह. ॥ ८ ॥
जसु विरज्जइ समवसरणु चउदेवनिकायहि,
जसु पणमिज्जइ चलणारविंदु सुरवरसंघायहि;
चउदसरज्जह भुवणनाहु जो जंतुहियंकरु,
सो पणमहु सच्चउरि-नयरि सिरिवीरु जिणेसरु. ॥ ९ ॥
कुसुमवुट्ठि किंकिल्लि चमर किन्नरदेवझुणि,
छत्तचिंध दुंदहिनिग्घोस संठिउ सीहासणि;
भामंडलु देहाणुलग्गु जसु तिहुयणि छज्जइ,
वइसाहिहि सच्चउरि-वीरु सो किम पणमिज्जइ. ॥ १० ॥

Aho ! Shrutgyanam

जिम महंतु गिरिवरह मेरु, गहगणह दिवायरु,
  जिम महंतु सु सयंभुरमणु उवहिहिं रयणायरु;
जिम महंतु सुरवरह मज्झि सुरलोइ सुरेसरु,
  तिम महंतु तियलोयतिलउ सचउरि जिणेसरु. ॥ ११ ॥
उद्दालवि दिणयरह तेउ, गहवइ सोमत्तणु,
  गंभीरिम सायरह, हरवि मंदिरह थिरत्तणु;
घडिउ वीरु नं अमिउ लेवि सचउरि सुणिज्जइ,
  तिहुअणि तसु पडिबिंबु नत्थि जसु उप्पम दिज्जइ. ॥ १२ ॥
कोरिंट, सिरिमाल, धार, आहाडु, नराणउं,
  अणहिलवाडउं, विजयकोट्टु, पुण पालित्ताणुं ।
पिक्खिवि ताव बहुत्त ठाम मणि चोज्जु पईसइ,
  जं अज्जवि सचउरि वीरु लोयणिहि न दीसइ ॥ १३ ॥
सहस्सेण वि लोयणह तित्थु न होइ नियंतह,
  वयणसहस्सेहि गुणनतुट्टु निट्ठियहि थुणंतह;
एक जीह धणपालु भणइ इक्कु जं मह नियतणु,
  किं वन्नउ सचउरि-वीरु हउं पुणु इकाणणु. ॥ १४ ॥
रक्खि सामि पसरंतु मोहु नेहुंडुय तोडहि,
  सम्मदंसणि नाणु चरणु भडु कोहु विहाडहि;
करि पसाउ सचउरि-वीरु जइ तुह मणि भावइ,
  तइ तुट्टइ धणपालु जाउ जहि गयउ न आवइ. ॥ १५ ॥

पं० धणपालकृतः श्रीसत्यपुरमंडन-श्रीमहावीरउत्साहः
समाप्तः

Aho ! Shrutgyanam

सत्यपुरीय श्रीमहावीर उत्साह परिचय

જૈન સાહિત્ય સંશોધકના વાચકોને આજે અમે પરમાર્હત મહાકવિ ધનપાલની બે અલભ્ય કૃતિઓની અપૂર્વ ભેટ આપીએ છીએ. એમની પ્રાપ્તિથી દરેક શ્રદ્ધાળુ જૈનને અતિઆનંદ થવા યોગ્ય છે. સાચે જ મહાબ્રાહ્મણ કવિ ધનપાલની આ બે કૃતિઓ અપૂર્વ છે. એમાં પ્રભુ મહાવીરની અતિભક્તિ ભરેલી ગંભીર અને આલ્હાદક સ્તુતિ કરવામાં આવી છે જે દરેક જૈનને કંઠે કરવા લાયક અને નિત્ય પાઠ કરવા લાયક છે.

મહાકવિ ધનપાલ જૈન સાહિત્યાકાશનો એક મહાતેજસ્વી અને અક્ષીણપ્રકાશી નક્ષત્ર છે. એના પ્રતિભાપ્રકાશે જૈન વાઙ્મયના શરીરપિંડને અનેરૂં ઓપ આપ્યું છે. જૈન સાહિત્યસંપત્તિના વિશાળ ભંડારમાં એક અણમોલું અને અદ્વિતીય રત્ન સમર્પી એણે આર્હત મતાનુયાયીઓના પાંડિત્યાભિમાનને અતિ ઉન્નત બનાવ્યું છે. એવું એ રત્ન તે **તિલકમંજરી** કથા છે. આખા સંસ્કૃત સાહિત્યના અનંત ગ્રંથ સંગ્રહમાં બાણની કાદંબરી સિવાય એ કથાની તુલનામાં આવી શકે એવી બીજી કોઈ કૃતિ વિદ્યમાન નથી. અલબત્ત, બાણ ધનપાલનો પુરોગામી હોઈ તે એના ગુરુસ્થાને છે; કાદંબરીની અનુપમ રચનાયે જ ધનપાલને તિલકમંજરી રચવા પ્રેર્યો છે એ નિઃશંસય છે; છતાં ધનપાલ પ્રતિભાની સ્પર્દ્ધામાં બાણથી જો ચઢે નહિં તો ઉતરે તેમ પણ નથી જ. એથી કાલકૃત જ્યેષ્ઠ-લઘુ-સંબંધવાળા હોવા છતાં ગુણધર્મથી તો ગિર્વાણગિરાના એ બંને ગદ્યમહાકવિઓ સમાન આસને જ બેસનારા છે; અને તેથી ધનપાલનું કવિ-જીવન એ બાણના જેટલું જ ગૌરવશાલી છે, એમ કહેવામાં આવે તો તે કથમપિ અત્યુક્તિવાળું નથી.

આવા મહાકવિની અદ્યાપિ અપ્રસિદ્ધ એવી બે કૃતિઓ પ્રસ્તુતઅંકમાં પ્રથમ જ પ્રકાશમાં આવે છે. આમાંની (૧) એક કૃતિ અપભ્રંશમાં છે અને એક પ્રાકૃતમાં છે. પ્રાકૃત કૃતિનો પરિચય જૂદો તે સાથે આપવામાં આવ્યો છે. અહિં, પ્રથમ આપેલી અપભ્રંશકૃતિનો પરિચય કરાવવામાં આવે છે. આ કૃતિ પાટણના ભંડારમાંથી પ્રાપ્ત થઈ છે. સંવત્ ૧૩૫૭–૫૮ માં લખેલી એક પ્રત, જેમાં આવાં અનેક સ્તુતિ-સ્તોત્રો એકત્ર લખેલાં છે તેમાંથી આ સ્તુતિ ઉતારી લીધેલી છે.

આ સ્તુતિનો વર્ણ્ય-વિષય સત્યપુરસ્થ મહાવીરનો ચમત્કારિક પ્રભાવ છે. તેથી અહિં પ્રથમ થોડોક એ સ્થળનો પરિચય આપવો આવશ્યક છે.

મારવાડના જોધપુર રાજ્યના દક્ષિણ ભાગમાં સાચોર કરીને એક ગામ છે. એ ગામનું અસલ સંસ્કૃત નામ **सत्यपुर** છે, એનો પ્રાકૃત ઉચ્ચાર **सच्चउर** થઇ અપભ્રષ્ટ રૂપાન્તર **સાચોર** બન્યું છે. એ સ્થાન ઘણું જૂનું છે. ત્યાં આગળ ભગવાન્ શ્રીમહાવીર સ્વામિનું પ્રાચીન, તીર્થભૂત, પવિત્ર જૈન ધામ છે. જૈન કોમમાં એ એક તીર્થસ્થળ ગણાય છે. 'જગચિંતામણી' નામના એક બહુ જૂના કહેવાતા સ્તોત્રમાં **जयउ वीर सच्चउरिमंडण** એવા શબ્દોથી એ સ્થળનો નમસ્કરણીય ઉલ્લેખ કરેલો છે અને દરેક શ્વેતાંબર–મૂર્તિપૂજક જૈન એ સ્તોત્રનો પ્રતિદિન પાઠ કરે છે.

જૈન તીર્થસંરક્ષક આચાર્ય શ્રી જિનપ્રભસૂરિએ પોતાના સમયના જૈન ધર્મના વિવિધ તીર્થોની હકીકત આપનારો જે **विविध तीर्थकल्प** નામનો મહત્ત્વનો ગ્રંથ લખ્યો છે તેમાં એ સત્યપુરનો પણ ખાસ કલ્પ લખ્યો છે. એ કલ્પના અનુસારે, મહાવીર નિર્વાણ પછી લગભગ ૬૦૦ વર્ષે થએલા નાહડ નામના રાજાએ, શ્રીજજ્જગસૂરિ નામના આચાર્યના ઉપદેશથી, એ સ્થાનમાં ભગવાન્ મહાવીરદેવનું મંદિર બાંધ્યું અને તેમાં પિત્તલની પ્રભુપ્રતિમા સ્થાપિત કરી. બ્રહ્મશાંતિ નામનો યક્ષ એ સ્થાનનો અધિષ્ઠાયક બન્યો અને તેથી એનું મહાત્મ્ય અતિશય વધ્યું.

Aho ! Shrutgyanam

જિનપ્રભસૂરિના લખેલા એ આખા સત્યપુર કલ્પનો સાર નીચે પ્રમાણે છે.

આગળના સમયમાં, મરુમંડળ એટલે મારવાડમાં આવેલા નડુલ (નાડોલ) પ્રાંતના મંડનભૂત મંડોવર નગરના રાજાને બલવાન એવા દાઈ (ડાભી) લોકોએ મારી નાખી તેનું રાજ્ય છીનવી લીધું. તે રાજાની રાણી તે વખતે ગર્ભવતી હતી. તેથી તે નાસીને બંભાણપુરમાં જઇને રહી, અને ત્યાં તેને સર્વ લક્ષણસંપન્ન પુત્ર જન્મ્યો. તે નગરની બહાર એક ઝાડે, ઝોળી વળગાડી તેમાં તે બાળકને તેણે સુવાડયો અને પોતે કાંઈ કામ કરવા લાગી. ત્યાં આગળ દૈવયોગથી જજ્જગસૂરિ નામના એક જૈનઆચાર્ય આવી ચઢયા. તેઓ તે ઝાડની છાયાને અણખસતી જોઇને તે ઝોળીમાંના બાળકને એકી ટસે જોઇ રહ્યા, અને તરત જાણી ગયા કે ભવિષ્યમાં આ બાળક મોટો પુણ્યવાન્ થશે. એટલામાં તે રાણીએ આવીને પૂછ્યું કે—ભગવન્! આ બાળક શું કુલનો ક્ષય કરનારો કુલક્ષણો દેખાય છે કે કેવો છે? સૂરિએ જવાબ આપ્યો કે—ભદ્રે, એ તો મહાપુરુષ થવાનો છે. માટે સર્વ પ્રયત્ને આનું પાલન કરવું જોઇએ. ત્યાર પછી વત્સલભાવ આણીને તે બંને માતાપુત્રને સૂરિએ પોતાના મંદિરના જે વ્યપસ્થાપકો હતા તેમની પાસે મુકયાં. તે બાળકનું નામ નાહડ એવું રાખવામાં આવ્યું અને તેને પંચનમસ્કાર મંત્ર સીખડાવ્યાં. તે બાળક બહુ ચપલ હતો. નાનપણમાં જ ધનુષ્યબાણ હાથમાં લઈને, મંદિરમાં મૂકેલી ચોખા મૂકવાની પાટ ઉપર આવતા ઉંદરોને તાકી તાકીને મારવા લાગ્યો. શ્રાવકોએ તેના આ કૃત્યને જોઈ તેને મંદિરમાંથી કાઢી મૂકયો, તેથી તે લોકોની ગાયો ચરાવવાનું કામ કરવા લાગ્યો. એક દિવસે કોઈ ગામ બહાર ફરતા યોગિએ તે બાળકને દીઠો. તેને એ બત્તીસ-લખણો મહાપુરુષ દેખાયો. તેના મનમાં સુવર્ણપુરુષની સાધના કરવાની ઇચ્છા થઈ તેથી તે એની પાછળ પાછળ એની મા પાસે ગયો અને એ માને સમજાવી-વીનવીને ત્યાં જ રહેવા લાગ્યો. અવસર જોઈને યોગિએ નાહડને કહ્યું કે—જંગલમાં ગાયો ચારવતાં થકાં જો તારી નજરે, રાતું દૂધ ઝરતું કોઈ કુલિશનું ઝાડ, પડી જાય તો તે ઉપર નિશાન કરીને મને તેની ખબર આપજે. બાળક નાહડે જોગિની તે વાતનો સ્વીકાર કર્યો અને દૈવયોગે થોડા જ દિવસમાં તેની દષ્ટિએ એવું એક ઝાડ પડયું. યોગિને ખબર કરવાથી તે તેની સાથે ગયો. પછી યથોક્ત વિધાનપૂર્વક યોગિએ ત્યાં અગ્નિ સળગાવ્યો અને તેમાં તે રક્તક્ષીર વૃક્ષને પ્રજ્વાલી તેની આસપાસ પ્રદક્ષિણા કરવા લાગ્યો અને બાળક નાહડને પણ તેમ કરવાનું સૂચન કર્યું. નાહડ પોતાની ચંચલ બુદ્ધિવડે યોગિના મનની દુષ્ટવૃત્તિને તાડી ગયો અને તેથી તે પંચનમસ્કાર મંત્રનું સ્મરણ કરવા લાગ્યો. તે મંત્રના પ્રભાવથી જોગિનું સામર્થ્ય હણાઇ ગયું અને આખરે નાહડે જ તેને ઉપાડી તે અગ્નિમાં નાંખી દીધો. અગ્નિમાં પડતાંની સાથે જ તે સુવર્ણમય બની ગયો. આથી નાહડના મનમાં મંત્રના માહાત્મ્ય વિષે ઉંડી શ્રદ્ધા બેઠી. તે મનમાં વિચાર કરવા લાગ્યો કે—હું શી રીતે એ મંત્રપ્રદાયક ગુરુનો પ્રત્યુપકાર કરી શકું? એમ વિચાર કરીને તે ગુરુ પાસે આવ્યો ને તેમના પગે પડી તે બધી હકીકત કહી; અને કહ્યું કે હવે મારે શું કરવું જોઇએ તેની મને આજ્ઞા કરો. ગુરુએ જિનમંદિર બંધાવવાનો ઉપદેશ આપ્યો અને તેથી તેણે ૨૪ ચૈત્યો બંધાવ્યાં. ક્રમે ક્રમે તેણે મોટી રાજ્યઋદ્ધિ મેળવી અને તે વડે પોતાનું પૈતૃક રાજ્ય પાછું વાળ્યું.

એક દિવસે તેણે ફરી જજ્જગસૂરિને વિનંતી કરી કે-પૂજ્ય, આવું કોઈ કાર્ય બતાવો જેના કરવાથી તમારી અને મારી કીર્તિ લાંબા સમય સુધી વિદ્યમાન રહે. ત્યારે જ્યાં આગળ, ચ્યારે સ્તનમાંથી ગાય દૂધની ધારા છોડતી હતી, એવી એક ભૂમિ ગુરુએ તેને બતાવીને કહ્યું કે આ અભ્યુદયકારક સ્થાન છે. એથી તે રાજાએ ત્યાં આગળ, ભગવાન મહાવીરના નિર્વાણ પછી ૬૦૦ વર્ષે, મોટું, આકાશસુધી જેનું શિખર પહોંચે એવું મંદિર બંધાવ્યું; અને તેમાં પિત્તલની બનેલી મહાવીરસ્વામિની ભવ્ય મૂર્તિ સ્થાપિત કરી જજ્જગસૂરિના હાથે તેની પ્રતિષ્ઠા કરાવી. જ્યારે પ્રતિષ્ઠા કરવા આચાર્ય

Aho ! Shrutgyanam

આવતા હતા ત્યારે વચ્ચે માર્ગમાં એક સારા મુહૂર્તમાં નાહડરાયના પૂર્વપુરુષ વિંઝરાય (વિંધ્યરાજ) ની અશ્વારૂઢ મૂર્તિની પ્રતિષ્ઠા કરી. બીજા એક સારા મુહૂર્તમાં, મીણ જેવી જમીન જોઇને, ગુરુજીના આ દેશથી શંખનામે ચેલાએ દાંડાનો ઘોદો મારી કૂવો બનાવી દીધો. લોકો આજે પણ તેને શંખકુવાના નામે ઓળખે છે. એ કૂવો બાકીના દિવસોમાં સૂકો હોય તો પણ વૈશાખપૂર્ણિમાના દિવસે તો પાણીથી ભરાએલો હોય છે. ત્રીજા લગ્નમાં વીરમૂર્તિની પ્રતિષ્ઠા કરી. જે લગ્નમાં એ વીરસ્વામિની પ્રતિષ્ઠા કરી, તે જ લગ્નમાં **દુગ્ગાસૂય** ગામે અને **વયણપ** ગામે પણ મહાવીરની એ મૂર્તિઓની સાધુ અને શ્રાવકના હાથે પ્રતિષ્ઠાઓ કરવામાં આવી. એ વીરપ્રતિમાની નાહડરાજા રોજ પૂજા-અર્ચા કરતો. આ રીતે નાહડરાજાએ જે પ્રતિમાની સ્થાપના કરી હતી, તેના પ્રતીહારિ તરીકે બ્રહ્મશાન્તિ યક્ષ સદા તેની સાંનિધ્યમાં રહેતો હતો અને તે પ્રતિમાની પર્યુપાસના કરતો હતો.

આ પછી જિનપ્રભસૂરિએ બ્રહ્મશાંતિ યક્ષનો પરિચય આપ્યો છે. એ યક્ષ તે બીજો કોઇ નહિ પણ કલ્પસૂત્રમાંની ટીકામાં વર્ણવેલો શૂલ પાણી યક્ષ છે. યક્ષનું વર્ણન આપીને પછી જિનપ્રભસૂરિએ એ તીર્થને લગતી કેટલીક ઉપયોગી ઐતિહાસિક બીના આપી છે જે નીચે પ્રમાણે છે.

એહવે, ગૂજરાતભૂમિના પશ્ચિમ ભાગમાં **વલભી** એવે નામે ઋદ્ધિ-સમૃદ્ધિથી ભરપૂર એવી નગરી છે. ત્યાં **શિલાદિત્ય** નામનો રાજા રાજ્ય કરે છે. તેણે રત્ને જડેલી કાંકસીના લોભે પ્રેરાઈ **રંક** નામે સેઠને સતાવ્યો. તેથી તે સેઠ કોપે ભરાયો, ને રાજાનો નાશ કરવા માટે, **ગજનીના** સ્વામી હમ્મીરને ખૂબ ધન આપી, તેના મોટા સૈન્યને બોલાવી લાવ્યો. તે વખતે, અધિષ્ઠાયક દેવતાના બળે વલભીમાંથી ચંદ્રપ્રભ સ્વામિની પ્રતિમા, અંબા અને ક્ષેત્રપાલની મૂર્તિઓ સાથે, આકાશમાર્ગે થઈ, દેવપાટણમાં જઈ પહોંચી. વીરનાથની જે પ્રતિમા હતી. તે તેના અધિષ્ઠાયકના સામર્થ્યથી, કોઇએ ન જાણેલા ગુપ્તમાર્ગે, રથારૂઢ થઇને ચાલતી ચાલતી આસો જ સુદી પૂર્ણિમાના દિવસે શ્રીમાલપુરમાં જઇ પહોંચી. બીજા પણ અતિશયવાળા દેવો યથોચિતસ્થાને જઈ વસ્યા. નગરદેવતાએ શ્રીવર્દ્ધમાનસૂરિ નામના આચાર્યને થનારા ઉત્પાતની આગાહી આપી અને કહ્યું કે, જ્યાં આગળ સાધુઓને મળેલું દૂધ રુધિર થઇને ફરી પાછું દૂધ થઈ જાય ત્યાં તમારે વસવું. પછી ગજનીથી આવેલા તે હમ્મીરના સૈન્યે વિક્રમ સંવત્ ૮૪૫ માં વલભી નગર ભાંગ્યું અને તે રાજાને મારી નાંખ્યો. પછી તે હમ્મીર પોતાના સ્થાને ચાલ્યો ગયો.

ત્યારબાદ, બીજી વખતે, બીજો એક ગજનીપતિ, ગૂર્જરદેશને ઉધ્વસ્ત કરીને ત્યાંથી ચાલતો વિક્રમ સંવત્ ૧૦૮૧ ના વર્ષમાં સાચોરમાં આવ્યો. ત્યાં તેણે વીર ભગવાનનું મનોહર મંદિર જોયું. મારો મારો કરતા તે મ્લેચ્છો મંદિરમાં પેઠા. મોટા હાથીઓ જોડીને તે મહાવીરની પ્રતિમાને બહાર તાણવા લાગ્યા. પણ તે પોતાના સ્થાનેથી લેશમાત્ર પણ ન હાલી. ત્યારે બળદોની જોડીઓ લગાડીને તેને ખેંચવા માંડી. તે વખતે પૂર્વભવના અનુરાગબળે બ્રહ્મશાંતિ યક્ષે માત્ર ૪ આંગળ તે મૂર્તિને ખસવા દીધી. તે પછી સ્વયં ગજનીપતિએ હાંકવા છતાં પણ બળદો જરાયે તે મૂર્તિને ખસેડી ન શકયા. છેવટે મ્લેચ્છાધીશ વિલખો થયો, તેથી તે મૂર્તિ ઉપર તેણે ઘણોના ઘા કરવા માંડયા. પણ તે ઘા મૂર્તિને લાગવાને બદલે તેની અંતઃપુરની સ્ત્રીઓ ઉપર પડવા માંડયા. તેથી ખિન્ન થઇને તે તુર્કોએ ખડ્ગના પ્રહારવડે વીરની માત્ર એક આંગળી કાપી લીધી, અને તે લઇને ચાલતા થયા. પણ તેથી તેમના ઘોડાઓની પુંછડીઓમાં આગ લાગી. મ્લેચ્છોને મૂર્છા આવવા લાગી. પછી તેઓ ઘોડાઓને તજીને પગે ચાલવા લાગ્યા પણ તેથી તો તેઓ ધપ કરતાને જમીન ઉપર જ પડવા લાગ્યા. આથી રહમાનને સ્મરતા થકા દીન જેવા બની ગયા. તે વખતે આકાશવાણીવડે તેમને સંભળાયું કે મહાવીરની આંગળી કાપીને તમે તમારા જીવિતને આ પ્રમાણે સંશયમાં નાંખ્યું છે. તે સાંભળી ગજનીપતિ વિસ્મયપામી માથું ધુણાવતો છતો પોતાના સિપાહીઓને

Aho ! Shrutgyanam

તરત હુકમ આપ્યો કે આ આંગળી પાછી ત્યાં જઇને મુકી આવો. પછી ડરતા થકા તેઓ પાછી તે આંગળી ત્યાં મુકવા આવ્યા. તેમણે આશ્ચર્યની સાથે જોયું કે મુકતાંની સાથે જ તે આંગળી ભગવાનના હાથે ચોંટી ગઈ. એ ચમત્કાર જોઇને તુરકોએ તે પછી સાચોરમાં પેસવા પણ માગ્યું નહિ. જૈન સંઘ બહુ ખુશી થયો. ગીત, નૃત્ય, વાદિત્ર, પૂજા અને દ્રવ્યના દાન વગેરે વડે કરી તે મૂર્તિની ખૂબ મહિમા કરવા લાગ્યો.

અન્ય વખતે, ઘણાં વર્ષો વીત્યાં બાદ, માલવાનો રાજા, ગૂજરાતની ભૂમિને લૂટતો થકો સાચોરના સીમાડામાં પહોંચ્યો. તે વખતે બ્રહ્મશાંતિ યક્ષે મોટું સૈન્ય દેખાડીને તેના લશ્કરને નસાડ્યું. તેના પડાવમાં અગ્નિ સળગી ઉઠ્યો, અને માલવાધિપતિ ખજાનો વગેરે મુકીને જીવ લઇ નાઠો. તે પછી સંવત ૧૩૪૮ માં પ્રબળ એવું કફૂરનું લશ્કર આવ્યું. ગામલોકો નાસી છૂટ્યા અને મંદિરના દરવાજાઓ બંધ કરવામાં આવ્યાં. તે વખતે બ્રહ્મશાંતિ યક્ષના માહાત્મ્યથી ૪ યોજન દૂરથી જ અનાહત એવા વાજિંત્રોના ગંભીર સૂરો સાંભળી, સારંગદેવ મહારાજાના આગમનની શંકાથી એ મુગલોનું લશ્કર નાસી ગયું. તેણે સાચોરની સીમમાં પગ પણ ન મુકયાં. તે પછી ૧૩૫૬ ની સાલમાં અલાઉદ્દાનનો નાનો ભાઇ ઉલૂખાન, મંત્રી માધવની પ્રેરણાવડે દિલ્લીથી ગૂજરાત તરફ નીકળ્યો. ચિત્તોડના સ્વામિ સમરસિંહે દંડ દઇને જેમતેમ મેવાડનો બચાવ કર્યો. ત્યાંથી તે યુવરાજ હમ્મીર (બાદશાહનો ભાઇ) વાગડદેશ અને મોડાસા-નગરને લૂટી આસાવલીમાં પહોંચ્યો. કર્ણદેવ રાજા નાસી ગયો. સોમનાથ જઇ, ત્યાંના શિવલિંગને ઘણના ઘા મારી તોડી નાંખ્યું અને ગાડામાં ભરી દિલ્લી મોકલી દીધું. પછી વણથલી જઇ મંડલિકરાયને દંડ્યો અને સોરઠમાં પોતાની આણ પ્રવર્તાવી પાછો આસાવલીમાં આવીને રહ્યો. ત્યાં તેણે મઠ, મંદિર, દેવળ વગેરે બાળી નાંખ્યા. પછી અનુક્રમે ત્યાંથી સાચોર પહોંચ્યો પણ આગળની માફક જ અનાહત દૈવીસૂરો સાંભળીને એ મ્લેચ્છ સૈન્ય પણ જતું રહ્યું.

આવા અનેક ચમત્કારો સાચોરના મહાવીરદેવના વિષયમાં સાભળવામાં આવે છે. પણ ભવિતવ્ય-તાના બળે, કલિકાળના પ્રભાવે, દેવતાઓ પણ પ્રમાદી બની જાય છે. તેમ જ ગોમાંસના લોહીના છાંટણાથી દેવતાઓ દૂર નાસી જાય છે. આવા કોઇ કારણોને લઇને બ્રહ્મશાંતિ યક્ષ કયાંએ પ્રમાદી થઇ દૂર ગયો હતો તેવે વખતે અલાઉદ્દીને તે જ અનંત માહાત્મ્યવાળી ભગવાન્ મહાવીરની મૂર્તિને, સંવત્ ૧૩૬૧ ની સાલમાં, દિલ્લીમાં આણીને તેની આશાતના–અવમાનના કરી !

આ પ્રમાણે જિનપ્રભસૂરિયે વંછિત ફળ આપનાર એવો આ સત્યપુરતીર્થનો કલ્પ બનાવ્યો છે. તેનું ભવ્યજનો નિત્ય વાંચન કરો અને ઇચ્છિત ફળ પામો.

(જુઓ, કલકત્તાની એશિયાટિક સોસાયટી માર્ફત પ્રગટ થયેલ **तीर्थकल्प,** પૃષ્ઠ ૮૮–૯૬)

જિનપ્રભસૂરિએ આ કલ્પમાં વર્ણવેલી સાચોરના મહાવીરદેવની અતિશયતાનું સંક્ષિપ્ત સૂચન કવિ ધનપાલના આ અપભ્રંશ સ્તોત્રમાં પણ સ્પષ્ટ રીતે કરેલું જણાઇ આવે છે. ચમત્કારિક વિગતો સિવાયની જે કેટલીક ઐતહાસિક ભાસતી વિગતોનો ઉલ્લેખ જિનપ્રભસુરિના કલ્પમાં આવેલો છે ને બધીનો, પ્રસ્તુત સ્તોત્ર સાથે સંબંધ ન હોવાથી વિગતવાર ઊહાપોહ કરવાનો અત્ર પ્રસંગ નથી. જિનપ્રભસૂરિના કથન પ્રમાણે સાચોર ઉપર મુસલમાનોની ૩–૪ વાર ચઢાઇ થઇ હતી. એમાં પહેલી એક ચઢાઇ સિવાય બાકીની બધી ધનપાલના સમય પછી બે અઢી સૈકા બાદ થએલી છે, એથી તુરકોએ કરેલા જે ઉત્પાતનું સૂચન ધનપાલ આ સ્તોત્રમાં કરે છે તે જિનપ્રભસૂરિના કથન પ્રમાણે વિક્રમ સંવત ૧૦૮૧ માં કરેલી ગજનીપતિ મ્લેછરાયની સ્વારીના લીધે જ થએલો હોવો જોઇએ.

Aho ! Shrutgyanam

મહાકવિ ધનપાલ એ જ જમાનામાં વિદ્યમાન હતો. ધનપાલ કે જિનપ્રભ બંને એ ગજનીપતિ મ્લેચ્છ રાજાનું નામ આપતા નથી પણ આપણે ઇતિહાસ ઉપરથી તરત સમજી શકીએ તેમ છીએ કે એ ગજનીપતિ તે બીજો કોઇ નહિ પણ ભારતની પરાધીનતાનો સૂત્રપાત કરનાર ઇતિહાસ પ્રસિદ્ધ મહમૂદ ગજનવી જ છે. મુસલમાની તવારીખો પ્રમાણે એણે સંવત ૧૦૮૦-૮૧માં ગૂજરાત ઉપર ચઢાઈ કરી હતી અને ગૂજરાતની રાજધાની પાટણને લૂટી કરી ભારતવિખ્યાત સોમનાથની મહનીય મૂર્તિનો ધ્વંસ કર્યો હતો. ગુજરાતનો રાજા સોલંકી ભીમદેવ તે વખતે રાજ્યધાની છોડીને કચ્છમાં જઇ છુપાઈ રહ્યો હતો, એમ મુસલમાન લેખકોનું કથન છે. પણ અણહિલપુર કે સોમનાથના આ પરાજયનો ઉલ્લેખ ગૂજરાતના અન્ય કોઇ ગ્રંથકારે કરેલો, હજી સુધી જાણવામાં આવ્યો ન હતો તેથી, ઇતિહાસના અભ્યાસીઓ માટે આ એક મોટો કોયડો જ કહેવાય છે. પરંતુ, જિનપ્રભસૂરિએ, ઉપર જણાવ્યું તેમ, સંવત ૧૦૮૧ માં ગજનીપતિએ કરેલી ગૂજરાત ઉપરની સ્વારીનો સ્પષ્ટ ઉલ્લેખ કરેલો છે અને ધનપાલે પોતાના આ સ્તોત્રમાં અણહિલપુર, સોરઠ, અને સોમેશ્વર વગેરે સ્થાનો તુરકો વડે ભગ્ન થયેલાં જણાવ્યાં છે. તેથી એ કોયડાનો ચોક્કસ ઉકેલ આવી જાય તેમ છે. આમ ઐતિહાસિક દૃષ્ટિએ જોતાં ધનપાલનું આ સ્તોત્ર એક ઘણી મહત્ત્વની નોંધ પુરી પાડે છે. આ સ્તોત્રની ત્રીજી કડીમાં ધનપાલ કહે છે કે-તુરકોએ શ્રીમાલદેશ, અણહિલવાડ, ચડ્ડાવલ્લિ (ચંદ્રાવતી) સોરઠ, દેલવાડા અને સોમેશ્વર એ બધાં સ્થાનોનો નાશ કર્યો છે. અને એક માત્ર સાચોરના મહાવીરને જ તેઓ ભાગી નથી શક્યા. ધનપાલે સૂચવેલા આ નામોમાંથી એકાદ નામ સિવાય બાકીનાં બધાં નામો મહમૂદ ગજનવીની ચઢાઇ સંબંધીનાં જે મુસલમાની વર્ણનો છે તેમાં બરાબર મળી આવે છે.

મહમૂદ ગજનવી સાચોર ગયો હતો કે નહિં તેનો કશો ઉલ્લેખ મુસલમાની તવારીખોમાં મળતો નથી. તેથી સાચોરની મહાવીરની મૂર્તિના સંબંધમાં જે ચમત્કારિક પ્રભાવ આ સ્તોત્રમાં વર્ણવેલો છે તે માટે કોઈ અન્ય ઐતિહાસિક પ્રમાણ આપી શકાય તેમ નથી. તેમ જ આવાં ચમત્કારિક કથનોનું સમર્થન કરવાનું ધોરણ વૈજ્ઞાનિક ઇતિહાસશાસ્ત્રને સમ્મત પણ નથી. પણ જેમ હિંદુ ગ્રંથકારોમાં ચમત્કારોવિષેની ઊંડી શ્રદ્ધા રહેલી હોય છે તેમ મુસલમાન ગ્રંથકારોમાં પણ રહેલી હોય છે, તેથી એ ગ્રંથોમાં જો આવી બાબતને લગતા પુરવાઓ શોધી કાઢવાનું વલણ રખાય તો તેને શોધખોળના ક્ષેત્રમાં સ્થાન અવશ્ય આપી શકાય તેમ છે. એટલા માટે અમે આ બાબતની અહિં નોંધ માત્ર લીધી છે. બાકી મુસલમાન લેખકો કાફર લોકોના દેવતાઓની ચમત્કારિક શક્તિનો સ્વીકાર કરે એમ થોડું માની શકાય તેમ છે ? માટે એમના સાહિત્યમાં આવી નોંધની આશા રાખવી એતો વ્યર્થ જેવી જ છે.

હિંદુઓનાં ઐતિહાસિક સાધનોમાં મહમ્મૂદે કરેલી સોમનાથની સ્વારીનું સૂચન સરખું યે ન મળી આવતાં છતાં, જેમ મુસલમાનોના કથન ઉપરથી આપણે તે વાતને ઇતિહાસમાં સ્થાન આપીએ છીએ, તેમ ધનપાલ અને જિનપ્રભસૂરિના કથન ઉપરથી સાચોર સંબંધી આ હકીકતને (મહમૂદ કે તેના સૈન્યની એ સ્થળ ઉપર ચઢાઇ થઈ અને સોમનાથની માફક ત્યાંના મહાવીરની મૂર્તિને પણ તેણે તોડવા પ્રયત્ન કર્યો પણ તે સફળ ન થયો એ બાબતને) પણ ઐતિહાસિક ઘટના શા માટે ન ગણી શકાય. જૈન ગ્રંથોના અવલોકનથી એ તો સ્પષ્ટ સમજાય છે કે, સોરઠના સોમનાથની સમાન સાચોરના મહાવીર પણ તે જમાનામાં ઘણા પ્રખ્યાત હોવા જોઇએ. ધારાની રાજસભાના મુખ્ય પંડિત જેવો મહાકવિ ધનપાલ, જેમ આગળ ઉપર જણાવાશે, એ સ્થાને તીર્થસેવા કરવા માટે આવીને વસી રહે તેમાં એ સ્થાનની મોટી પ્રતિષ્ઠા જ મુખ્ય કારણ હોઇ શકે. એવા સુપ્રસિદ્ધ તીર્થસ્થળમાં, જૈન જેવી બહુ સમૃદ્ધિશાળી-અને તે કાળે તો ખૂબ સત્તાધારી પણ-ગણાતી જાતિએ, પોતાની ધાર્મિક ઉદારતાના ઉદાહરણ રૂપે કેટલી

Aho ! Shrutgyanam

બધી અઢળક સંપત્તિ ખર્ચી નાંખી હશે તેની કલ્પના, આજના જૈન તીર્થોની સમૃદ્ધિને જોઇને પણ સહેજ કરી શકાય તેમ છે. આવા એક સમૃદ્ધિસંપન્ન દેવસ્થાનની મહમૂદને ખબર ન પડે એ માની શકાય તેમ નથી. કારણ, એક તો તે ભારતના પ્રસિદ્ધ દેવસ્થાનોને ભ્રષ્ટ કરવાની કીર્તિનો ભયંકર ભુખ્યો હતો અને બીજું તે સ્થાનોની સંપત્તિને લૂટવાનો પણ તેટલો જ ઉગ્ર તરસ્યો હતો. પોતાના આ સ્વભાવને લઈને તેણે ભારતના બધાં સંપત્તિશાલી અને કીર્તિશાળી સ્થાનોની ચોક્કસ ભાળ મેળવી લીધી હતી અને એક પછી એક તે બધાનો વિધ્વંસ કરવો તેણે આરંભ્યો હતો. અને તેમાં વળી સાચોરના આસપાસના પ્રદેશમાં તો તે સારી પેઠે ફરી વળ્યો પણ હતો. માટે તેના જેવા મહાકુશલ લૂટારાથી સાચોરના દેશ પ્રસિદ્ધ મહાવીર અજ્ઞાત રહે એ માનવું ભૂલ ભરેલું ગણાય. આ કારણોથી આપણને માનવાનું પ્રાપ્ત થાય છે કે તેણે સાચોર ઉપર સ્વારી તો કરી જ હશે; પણ ગમે તે કારણથી, તેને એમાં સફળતા નહિં મળી હોય અને તેથી મહાવીરની મૂર્તિનો વિધ્વંસ કર્યા સિવાય એ જતો રહ્યો હશે. એવા જ કોઇ અજ્ઞાત કારણને ધનપાલ અને જિનપ્રભસૂરિ અતિશયતા માનતા હોય એમ જણાય છે જિનપ્રભસૂરિ ગૂજરાત ઉપર થએલી એ ચઢાઈનું જે ચોક્કસ વર્ષ આપે છે તે અન્ય ઇતિહાસો ઉપરથી યથાર્થ ઠરતું હોવાથી, તેમ જ એમના સિવાય બીજા કોઇ હિંદુ ગ્રંથકારે આ ચઢાઇને લગતી કશીયે હકીકત આપેલી ન હોવાથી, તેની ઉપયોગિતા અને પ્રામાણિકતા પુરવાર થાય છે. ધનપાલનું કથન તો એથીયે વધારે પ્રમાણભૂત છે; કારણ કે તે તો એ વખતે પ્રત્યક્ષ વિદ્યમાન હતો. પ્રભાવકચરિત્ર અને પ્રબંધચિંતામણી ગ્રંથોમાંના વર્ણન ઉપરથી સમજાય છે કે, મહમૂદ ગજનીની ભારતમાંની આખી કારકીર્દી દરમ્યાન એ જીવિત હશે. સાચોર ઉપર તુર્કોના થએલા હુમલા પછી તરત જ કે બેચાર વર્ષની અંદર જ એ ત્યાં જઇને રહેલો હશે. કારણ કે તે વખતે એની ઉમર સારી પેઠે પુખ્ત થવા આવી હતી. પાઇયલચ્છી નામમાલા નામે જે પ્રાકૃતશબ્દ કોષ એણે બનાવેલો છે તેની સમાપ્તિ સંવત્ ૧૦૨૯ જેટલા પાછળના વર્ષમાં જ થઇ ગઈ હતી. જો આપણે એ રચનાને એની બહુ નાની ઉમરમાં થએલી ગણીએ તો પણ તે ઓછામાં ઓછી ૨૦ વર્ષ જેટલી તો હશે જ અને તે રીતે જોતાં સંવત્ ૧૦૮૧ માં તેની અવસ્થા લગભગ ૭૦ વર્ષ જેટલી થવા આવી હશે. સંભવ છે કે એ પછી પણ તે ૧૦-૨૦ વર્ષ જીવિત હોય. પણ તે કરતાં કાંઈ વિશેષ કહી ન શકાય. એટલે તુર્કોની સાચોરવાળી સ્વારીનું જે સૂચન, એના કરેલા આ પ્રસ્તુત સ્તોત્રમાંથી મળી આવે છે, તે બનેલા બનાવના બહુ જ નિકટવર્તી સમયમાં જ થએલું છે એ અર્થાપત્તિથી જ સાબીત થઇ જાય છે,

આ સ્તોત્રનું નામ **ઉત્સાહ** એવું આપેલું છે. 'ઉત્સાહ'ની રચના પ્રતિષ્ઠા વગેરે જેવા કોઇ મોટા મહોત્સવના પ્રસંગે ગાવા માટે કરવામાં આવેલી હોય છે. જેમ કોઇ રાજ્યસિંહાસન ઉપર શત્રુની ચઢાઇ થાય અને તે ચઢાઇમાં એ સિંહાસન અચળ રહી ફરી પાછી નવી પ્રતિષ્ઠા પામે, ત્યારે એ રાજ્યના ઉપાસકોને જે જાતનો હર્ષોલ્લાસ થાય અને એ હર્ષોલ્લાસના નિદર્શક તરીકે રાજકવિઓ જે જાતના ઉત્કર્ષક ગીતો ગાય તે જાતના કવનોને **ઉત્સાહ** નામ આપવામાં આવે છે.

ધનપાલકૃત આ મહાવીરોત્સાહ પણ એ જ પ્રકારની કૃતિ છે. આમાંથી એ સ્પષ્ટ ધ્વનિત થાય છે કે મહાવીર ઉપર કોઈ અનિષ્ટ આક્રમણ થએલું છે અને તે આક્રમણમાંથી એ દેવમૂર્તિ સહીસલામત બચી ગઇ છે, જેથી કવિ તેના અભંગપણાનાં ગૌરવવાળાં ગુણગાન કરે છે. જિનપ્રભસૂરિ તીર્થકલ્પમાં જે એમ જણાવે છે કે—મહાવીરના દૈવી સામર્થ્યને લઇને ગજનીપતિ જ્યારે વિલખો થઇને જતો રહ્યો ત્યારે પરિતુષ્ટ થએલો જૈન સંઘ **वीरभवणे पूआ महिमा गीय नट्ट वाइत्त दविणदाणेहिं पभावणं करेइ** એટલે કે મહાવીરના મંદિરમાં પૂજા, મહિમા, ગીત, નૃત્ય, વાજિંત્ર અને દ્રવ્યનાં દાન

Aho ! Shrutgyanam

વગેરે વડે પ્રભાવના કરવા લાગ્યો. સંભવ છે કે, એજ પ્રભાવના પ્રસંગે મહાકવિ ધનપાલ ત્યાં ઉપસ્થિત હોય અને પોતે પણ આ ગીત બનાવી એ પ્રભાવનાના કાર્યમાં સમ્મિલિત થયો હોય!

આ બધી હકીકત વાંચી વાંચકોને એ શંકા થશે કે કવિ ધનપાલ માલવાની ધારાનગરીની રાજ-સભાનો અગ્રણી પંડિત હોઇને તે મરુભૂમિના સાચોરમાં શા માટે જઇને રહ્યો અને તે માટે શો પુરાવો છે? આ નીચે એજ બાબત સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે.

પ્રભાવક ચરિત્રમાં શ્રીમહેન્દ્રસૂરિના પ્રબન્ધમાં કવિ ધનપાલને લગતી વિસ્તૃત હકીકત આપેલી છે તેમાં જણાવ્યું છે કે–ધારાના વિદ્વાન્ નૃપતિ ભોજદેવને કોઈ જૈન કથા સાંભળવાની ઇચ્છા થવાથી કવિ ધનપાલે બાર હજાર શ્લોક પ્રમાણવાળી **तिलकमंजरी** નામે નવરસ પરિપૂર્ણ ઉત્કૃષ્ટ પ્રકારની કથા બનાવી. તેને ગૂજરાતના મહાવિદ્વાન્ વાદિવેતાલ શ્રી શાન્ત્યાચાર્ય પાસે, જૈન પદ્ધતિની સંગતિની દૃષ્ટિએ તપાસરાવીને પછી તે રાજાને રસપૂર્વક સંપૂર્ણ સંભળાવી. રાજા ભોજ એ કથા સાંભળીને બહુ મુગ્ધ બન્યો. તેના મનમાં આવ્યું કે આ કથા સાથે મારૂં નામ સંકલિત થાય તો તેથી હું અમર બનું; એટલા માટે તેણે કવિને કહ્યું કે, જો તમે ખોટું ન લગાડો તો હું એમાં થોડાંક પરિવર્તનો કરવા સૂચન કરૂં. એમ કહી તેણે જણાવ્યું કે આ કથાની આદિમાં મારા ઇષ્ટદેવ શિવનું મંગલ કરવું, અયોધ્યા નગરીના નામને બદલે ધારાનું નામ મુકવું, શક્રાવતાર તીર્થના સ્થાને મહાકાલનું નામ લખવું, ઋષભદેવના નામની જગ્યાએ શંકરના નામનો નિર્દેશ કરવો અને મેઘવાહન રાજાના બદલે મારૂં–ભોજરાજાનું નામ દાખલ કરવું. આટલું પરિવર્તન જો આમાં કરાય તો હું તને યથેષ્ટ દાન–માન આપી તારી કીર્તિને જગત્માં ફેલાવું. રાજાનો આ વિચાર સાંભળી કવિએ કહ્યું કે, મહારાજ શું તમે નથી જાણતા કે શ્રોત્રિયના હાથમાં રહેલા પવિત્ર પયઃપાત્રમાં જો એક છાંટો સરખો પણ મદ્યનો પડી જાય તો તે સર્વ અપવિત્ર બની જાય છે. તેમ આ કથા રચનામાં કિંચિત્ માત્ર પરિવર્તન કરવાથી પણ આની પવિત્રતામાં મોટી હાનિ થાય, અને તેના લીધે કુળ, રાજ્ય અને રાષ્ટ્રનો પણ ક્ષય થાય. કવિનાં આવાં વચનો સાંભળી રાજા ક્રોધે ભરાયો અને તે ક્રોધના આવેશમાં મોંઢા આગળ જે અગ્નિ બળતી સગડી પડી હતી તેમાં તે કથા–પુસ્તક નાંખી દીધું. આ જોઈ કવિ પણ ગુસ્સે થયો અને, આજ પછી તારૂં મોંઢું જોવું તો હરામ છે, એમ કહી ત્યાંથી ઉઠી પોતાને ઘરે આવ્યો. ખિન્ન ચિત્ત થવાથી બીછાના ઉપર પડયો પડયો આમતેમ આળોટયા કરે પણ સ્નાન, દેવપૂજા, કે ભોજન વગેરે નિત્યનિયમ પણ કરવા ન ઉઠે. એ જોઈ તેની સાક્ષાત્ સર-સ્વતીની મૂર્તિ જેવી નવ વર્ષની જે નાની પુત્રી હતી તેણે બહુ આગ્રહપૂર્વક ખિન્નતાનું કારણ પૂછ્યું. કવિએ રાત્રે બનેલી બધી વાત કહી સંભળાવી. ત્યારે તે પુત્રીએ કહ્યું કે, આમાં શું છે તે આટલા બધા ખિન્ન થયા. એ કથા હું તમને ફરી લખાવી દઉં–મને તે બધી મોંઢે છે. એમ કહી તેણે તરતજ કથા-પીઠ જેટલો ભાગ તેની આગળ બોલી બતાવ્યો જેથી કવિના મનને આલ્હાદ થયો અને પછી ક્રમથી તે પુત્રીના મોંઢેથી આખી કથા ફરી લખી લીધી. બન્યું એમ હતું કે, કવિ જયારે એ કથાની રચના કરવા બેસતો ત્યારે તે પુત્રી રોજે–નિયમથી એ સાંભળી લેતી અને પોતાની અદ્ભુત સ્મરણશક્તિના બળે એને યથાવત્ ધારી લેતી. આ રીતે આખી કથા તેને કંઠે થઇ રહેલી હતી. ફક્ત જયારે વચ્ચે કોં'ક દિવસે તેના સાંભળવામાં નહિં આવ્યો હોય તેટલો ભાગ ખંડિત રહ્યો, જે કવિએ પોતાની બુદ્ધિથી પૂરી કાઢયો અને એમ એ કથા ફરી આખી પુરી કરી લીધી. છતાં, તેમાં ત્રણ હજાર શ્લોક જેટલી ત્રુટી રહી અને તેથી બાર હજારને બદલે નવ હજાર શ્લોક પ્રમાણ જેટલી એ કથા પ્રસિદ્ધિમાં આવી. રાજા તરફથી આ રીતે અપમાન થએલું માની કવિ ધારાનગરી છોડીને પશ્ચિમ દિશા તરફ ચાલી નીકળ્યો અને શ્રેષ્ઠ એવા સત્યપુર નામના નગરમાં આવી પહોંચ્યો. ત્યાં આગળ શ્રી મહાવીરદેવનું શાશ્વતસ્થાન

Aho ! Shrutgyanam

જેવું ચૈત્ય જોઈને તે પરમાનંદ પામ્યો. પછી ત્યાં આગળ તેણે વિરોધાભાસ શબ્દાર્થભરેલી **णिम्मलणहे वि** એ પદથી શરુ થતી મહાવીરની સુંદર સ્તુતિ કરી જે અદ્યાપિ વિદ્યમાન છે (અને તે આ અંકમાં અન્યત્ર આપેલી છે). આ રીતે એ તીર્થની ઉપાસના કરતો તે કવિ ત્યાં જ રહેવા લાગ્યો.

આમ કેટલોક સમય કવિ સત્યપુરમાં રહે છે. તે દરમ્યાન ધારામાં એક મોટો વાદી આવે છે અને તે ભોજની સભાને વાદવિવાદ માટે 'ચેલેંજ' આપે છે. ત્યારે ભોજને એની ગેરહાજરી ભારે ખુંચે છે અને તેથી તે પોતાના પ્રધાન પુરુષો મોકલી એને ફરી આદરપૂર્વક તેડાવે છે. સ્વદેશાનુરાગને લીધે કવિ ફરી ધારા જાય છે. તે વખતે રાજા ભોજ એની સામે આવે છે અને એનો અત્યંત આદર કરી પોતે કરેલા અપરાધની ક્ષમા માંગે છે. કવિ ઉદાર મનથી તે આપે છે અને આવેલા વાદીને પોતાના પાંડિત્યથી પરાજિત કરી ભોજની સભાનું મુખ ઉજ્જવલ કરે છે.

આ કથન ઉપરથી કવિ ધનપાલનું સત્યપુર–સાચોરમાં થએલું આગમન અને ત્યાં રચેલી મહાવીર સ્તુતિ વગેરે બાબતનું સ્પષ્ટીકરણ થઇ જાય છે.

પ્રસ્તુત ઉત્સાહમાં, સાચોરના એ મહાવીર ઉપર તુર્કો સિવાય બીજા પણ એક કોઈ રાજાએ કરેલા આક્રમણનો નિર્દેશ કરેલો છે જે ૫–૬–૭ નંબરવાળી કડીઓમાં જોવાય છે. પણ એ નિર્દેશ બહુ સ્પષ્ટ સમજાતો નથી તેથી એ વિષે કાંઈ ઊહાપોહ કરી શકાય તેમ નથી. કોઈ જોગ નામના રાજાએ એ આક્રમણ કરેલું હોય એમ લાગે છે. તેણે ઘોડા અને હાથીઓને જોડી ભગવાનની મૂર્તિને દોરડાઓ વડે તાણી કાઢવાનો પ્રયત્ન કર્યો છે તેમ જ કુહાડાના ઘા મારીને પણ એ મૂર્તિને તોડી નાંખવાનો ઉપાય અજમાવી જોયો છે. છતાં એ મૂર્તિ, દૈવબળે સ્થિર થઈને રહી છે અને એના ઉપર લાગેલા કુહાડાના ઘાના નિશાન, 'આજે પણ નજરે દેખાય છે' એમ એ શ્રદ્ધાળુ કવિ ભક્તિપૂર્વક કહે છે.

આગળ જતાં ૧૩ મી કડીમાં કવિ એક બીજી પણ મુદ્દાની વાત જણાવે છે. એ કહે છે કેઃ— કોરિંટ, શ્રીમાલ, ધાર, આહાડ, નરાણા, અણહિલવાડ, વિજયકોટ અને પાલીતાણા વગેરે સ્થાનોમાં ઘણી દેવમૂર્તિઓ જોઇ (?) પણ સાચોરના મહાવીરને જોઇને જેવું મન ઠરે છે તેવું કયાંયે ઠરે તેમ નથી. આમાં જે સ્થાનોનાં નામ જણાવ્યાં છે તે બધાં ઇતિહાસ પ્રસિદ્ધ છે અને તે વખતે સુપ્રસિદ્ધ સ્થાનો તરીકે તે ગણાતાં હતાં. કવિએ તે બધાં સ્થાનો જોયાં હોય તેમ આ કડી ઉપરથી સ્પષ્ટ સમજાય છે; અને એ બધાં સ્થાનો કરતાં સાચોરમાં જ એને વધારે ચિત્તસંતોષ થયો હોય તેવું લાગે છે.

આમ આ સ્તોત્રમાંથી તીર્થ માહાત્મ્ય ઉપરાંત ઐતિહાસિક દૃષ્ટિએ વિચારણીય એવી જે વાત મળી આવે છે તે શ્રદ્ધાળુજનો સિવાય અન્યને પણ મનન કરવા પ્રેરે તેમ છે. ભાષા અને રચનાની દૃષ્ટિએ જોતાં પણ આ કૃતિ બહુ સરસ છે. શબ્દશૈલી પ્રાસાદિક અને વસ્તુ ભક્તિરસપૂર્ણ છે.

Aho ! Shrutgyanam

મહમૂદ ગજનવી અને સોરઠના સોમનાથ

આ પહેલાંના લેખમાં મહમૂદ ગજનવીએ કરેલા સોરઠના સોમનાથના ધ્વંસ વિષેની વાત આવી છે. પ્રસ્તુત પત્રના પાઠકો કદાચિત્ એ વાતથી વિશેષ માહિતગાર ન હોય; તેમ જ મહમૂદ કયાં કારણોને લઇને ભારતનાં આ મહાન્ દેવસ્થાનોને નષ્ટભ્રષ્ટ કરવા પ્રેરાયો અને તેમાં ઘણે ભાગે સફળ થયો, તેનો વિચાર પણ ઘણાં જિજ્ઞાસુઓને નહિ આવ્યો હોય, તે માટે અહિં એ સંબંધી કેટલીક વિચારણીય હકીકત આપવાનું ઉચિત ધાર્યું છે.

મહમૂદ ગજનવીએ હિંદુસ્થાનને લૂટવા અને સામર્થ્યહીન બનાવવા માટે, એક પછી એક એમ લગાતાર ૧૬-૧૭ ચઢાઇઓ આ દેશ ઉપર કરી હતી. તેમાં સૌથી છેલ્લી ચઢાઇ સોમનાથ ઉપરની હતી. સોમનાથને ઉધ્વસ્ત કર્યા પછી તેણે બીજી કોઇ મહત્ત્વની ચઢાઇ કરી નથી. સોમનાથના વિજય પછી તેને લાગ્યું હશે કે તેના પ્રાક્રમરૂપી પ્રાસાદ ઉપર એ વિજયથી કળશારોપણ થઇ ગયું, ને હવે બીજું કાંઇ મેળવવા કે જીતવા લાયક બાકી રહ્યું નથી. સોમનાથનો નાશ કરી તે સિંધના રસ્તેથી સીધો ગજની જતો રહ્યો અને ત્રણેક વર્ષ પછી તે ત્યાં પોતાની જીવનલીલા સમાપ્ત કરી ગયો.

ભારતનાં દેવસ્થાનોમાં સોમનાથ તે વખતે એક ઘણું પ્રસિદ્ધ અને પૂજનીય સ્થળ ગણાતું હતું. હિંદુલોકો તે વખતે મોટે ભાગે શિવની ઉપાસના કરતા હતા અને સોમનાથ શિવનું એક સર્વોત્કૃષ્ટ ધામ મનાતું હતું; તેથી એ સ્થળે ભારતના ચારે ખૂણેથી અસંખ્ય મનુષ્યો યાત્રા કરવા આવતા હતા. મોટા મોટા રાજા મહારાજાઓ અને ધનવાન ગૃહસ્થો એ સ્થળમાં આવીને દિવસોના દિવસો રહેતા અને લાખો કરોડો રૂપીઆ એ સ્થાન નિમિત્તે દાન કરતા. મહમૂદ ગજનવીના દરબારનો પ્રસિદ્ધ વિદ્વાન્ **અલ્બેરુની**–જેણે ભારતવર્ષના પરિચયને લગતો અરબીભાષામાં એક અનન્ય ગ્રંથ લખ્યો છે તેણે–પોતાના ગ્રંથમાં સોમનાથની ખ્યાતિ વિષે સ્પષ્ટ ઉલ્લેખ કર્યો છે. આવા મહાન્ સ્થાનને ભ્રષ્ટ કરવું અને તેની સમૃદ્ધિ લૂટી લેવી એ મહમૂદની મોટી ઇચ્છા હતી અને તેથી તેણે જીવનના અસ્તકાળમાં પણ પોતાની એ ઇચ્છાને પૂરી કરવાનો આખરે સમર્થ પ્રયત્ન કર્યો અને ભારતના કમનસીબે તેમાં તે સફળ થયો.

મહમૂદ સોમનાથ ઉપર જે ચઢાઇ લઇ ગયો તે મુલતાન, મારવાડ, ગૂજરાત અને કાઠિયાવાડના રસ્તે થઈ, લઇ ગયો હતો. એ વખતે જ તેણે, કવિ ધનપાલે જણાવેલાં શ્રીમાલદેશ (આબૂની પશ્ચિમનો પ્રદેશ), ચડ્ડાવલ્લિ (ચંદ્રાવતી) અને અણહિલપુર વગેરે સ્થળો લૂટયાં ભાગ્યાં હશે. અણહિલપુર ને દેલવાડા ભાગ્યાનો ઉલ્લેખ તો મુસલમાન લેખકોએ ચોક્ખો કરેલો જ છે. અણહિલપુરમાં તે વખતે ભીમદેવ રાજ્ય કરતો હતો. પ્રબંધચિંતામણિ વગેરે ગ્રંથોના આધારે ભીમદેવ સંવત્ ૧૦૭૭ માં ગાદીએ બેઠેલો હોય તેમ જણાય છે. એમતો એ રાજા માટે બહુ પરાક્રમી હોવાના પુરાવાઓ મળી આવે છે. માળવાના પ્રસિદ્ધ વિદ્વાન્ રાજા ભોજદેવ અને ચેદિના રાજા કર્ણદેવ ઉપર એણે ચઢાઇઓ કર્યાના ઉલ્લેખો મળે છે. ગૂજરાતના સર્વોત્કૃષ્ટ વિદ્વાન્ આચાર્ય હેમચંદ્રે, પોતાના દ્વ્યાશ્રય મહાકાવ્યમાં, એ રાજાના પરાક્રમી-પણાનાં ખૂબ વખાણ કર્યાં છે. પણ એની નજર આગળ થએલા સોમનાથના ભંગનું સૂચન સરખુંયે એ આચાર્ય કરતા નથી. આથી પુરાતત્ત્વજ્ઞોના મનમાં એની કારકીર્દીના વિષયમાં સંદેહ રહ્યાં કરે છે. ફાર્બસ સાહેબ, રાસમાળા નામના ગૂજરાતના પ્રધાન ઇતિહાસ ગ્રંથમાં, આ વિષે પોતાનો અભિપ્રાય આપતાં જણાવે છે કે–'જૈન ગ્રંથકારો પોતાના વર્ણ્યવીરની પ્રતિષ્ઠાને હાનિ લાગે તેવી કશી વાત પોતાના ગ્રંથમાં જણાવતા નથી. દ્વ્યાશ્રયમાં સોમનાથની વાત હેમાચાર્યે બે વખત લખી છે. તેમાં એકવાર સિદ્ધરાજ જાત્રા કરવા જાય છે ત્યારે, અને બીજીવાર કુમારપાલ તેનો જીર્ણોદ્ધાર કરાવે છે ત્યારે, પણ એકે વખત એ દેવાલય ભાગ્યાનો ઇસારો સરખોયે તે કરતા નથી.' અલબત્ત, ફાર્બસ સાહેબનું આ

Aho ! Shrutgyanam

કથન વિચારણીય છે જ; પણ એની સાથે એ વાત પણ એટલી જ વિચારણીય લાગે છે કે મહમૂદ ગજનવીનો ઇતિહાસ લખનારાઓમાં જે જૂનામાં જૂના લેખકો છે તેઓ પણ, તેના આ વિજયનો ઉલ્લેખ, પોતાના ગ્રંથોમાં બિલ્કુલ નથી કરતા. એ લેખકોમાં, સૌથી પહેલો તો ઉત્બી ગણાય છે જે ખુદ મહમૂદનો શિરસ્તેદાર હતો અને સોમનાથ ઉપર થએલી ચઢાઇ પછી લગભગ ૪ વર્ષ તો ચોક્કસ જીવિત હતો. તેણે મહમૂદના જીવનચરિત્રની સારી નોંધ લખી છે પણ તેમાં તેણે આ વિજયનો બિલ્કુલ ઉલ્લેખ કર્યો નથી. એ પછી લગભગ બસો વર્ષે રસીનુદ્દીન અને તે પછી ૨૦ વર્ષે હમીદુલ્લા નામના ગ્રંથકારો થયા જેમણે મહમૂદના વિષયમાં ઘણીક હકીકતો લખી છે પરંતુ તેમણે પણ એ વિજયનો ઉલ્લેખ કર્યો નથી. સોમનાથની ચઢાઇનું પહેલું વર્ણન લખનાર ઇબ્ન અસીર નામનો લેખક છે જે વિ. સં. ૧૨૮૬ (ઇ. સ. ૧૨૩૦)ની આસપાસ વિદ્યમાન હતો. એના જ લખેલા વર્ણન ઉપરથી પાછળના મુસલમાન લેખકોએ એ વિષયને ખૂબ સજાવી-ફુલાવી ને લખ્યો છે. આ વિષયમાં મહારાષ્ટ્રીય વિદ્વાન્ શ્રી ચિંતામણી વિનાયક વૈદ્ય. એમ્. એ. એલ્. એલ્. બી.એ **मध्ययुगीनभारत** નામના પોતાના મરાઠી ઐતિહાસિક ગ્રંથ (ભાગ ૩, પૃષ્ટ ૧૩૨–૩૪)માં જે વિચારો લખ્યા છે તે અહિં આપવાથી આ બાબત વધારે સ્પષ્ટતાથી સમજી શકાશે.

વૈદ્ય મહાશય લખે છે કે–"ગૂજરાતના સોલંકી રાજાઓનો ઇતિહાસ, એ રાજવંશના મૂળ પુરુષ મૂળરાજના સમયથી માંડીને, જૈન અને હિંદુ ગ્રંથકારોએ, પૂર્ણપણે આપ્યો છે. પરંતુ સોલંકી રાજાઓના અત્યંત વૈભવવાળા દિવસોમાં, ગૂજરાત ઉપર આવેલી આ આપત્તિનું, તેમાં નામ સુધાં નથી. મૂળરાજ અણહિલવાડની ગાદી ઉપર, ઇ. સ. ૯૬૧ માં એટલે સબુક્તગીનની પહેલાં ૧૬ વર્ષ બેઠો...આજ સુધીમાં જે શિલાલેખો ઉપલબ્ધ થયા છે તેમાં પણ આ આપત્તિ માટે એકે અક્ષર મળતો નથી. આથી કરી, ગૂજરાત જેવા દૂરના પ્રાંતમાં, કે જ્યાં જવા માટે એક વિસ્તીર્ણ મરૂભૂમિ પસાર કરવી આવશ્યક હતી, મહમૂદે ખરેખર સ્વારી કરી હશે કે નહિ એની સહેજે શંકા થઈ આવે છે. પરંતુ, પોતાના અત્યંત પવિત્ર દેવસ્થાન અને રાજા ઉપર તૂટી પડેલા આ અનર્થનો ઉલ્લેખ કરવા માટે હિંદુલેખક અનુત્સુક જ હોય, અને જે મુસલમાન લેખકોએ આ સ્વારી માટે લખ્યું છે તે તેમણે સેંકડો વર્ષો પછી લખેલું હોવા છતાં પણ, તેમની આગળ તે માટેનો કાંઇક પણ ઉલ્લેખ રહેલો હોવો જોઇએ. તેમણે બિલ્કુલ કાલ્પનિક વાત લખી દીધી હોય એમ સંભવિત લાગતું નથી; આવો વિચાર કરીને ઇલિયટ સાહેબે ઇબ્ન અસીરના પુસ્તકમાંથી જે ઉતારો લીધો છે તે ઉપર આ વૃત્તાંત લખવાનો અમે વિચાર રાખ્યો છે."

આ ઉત્બીએ પોતાના 'કામિલુ-ત-તવારિખ' નામના ગ્રંથમાં આ બાબતની જે હકીકત લખી છે તે નીચે પ્રમાણે છે-"ઈ. સ. ૧૦૨૪ (હીજરી ૪૧૪) મહમૂદે હિંદનાં કેટલાંક શહેર અને કેટલાક કિલ્લા તાબે કરી લીધા અને વળી તેણે સોમનાથ નામની મૂર્ત્તિ લીધી. હિંદની સૌ મૂર્ત્તિઓમાં આ મૂર્ત્તિ સૌથી મોટી હતી. દરેક ગ્રહણને વખતે હિંદુ લોકો ત્યાં જાત્રા કરવા જતા અને એક લાખ માણસ ભેગુ થતું. હિંદુ લોકોના પૂનર્જન્મના મત પ્રમાણે હિંદુ લોકો એવું માને છે કે શરીરમાંથી જૂદા પડયા પછી બધા માણસના આત્મા સોમનાથ ભેગા થાય છે; દરિયામાં ભરતિઓટ થાય છે, એ સોમનાથની પૂજા કરવાના દરિયે ગ્રહણ કરેલો સૌથી સરસ રસ્તો છે. હિંદુસ્તાનની કિમતીમાં કિમતી વસ્તુઓ સોમનાથમાં આવતી હતી. એ દેવળના પૂજારીઓને કિમતીમાં કિમતી દાન મળતાં અને દેવળને ૧૦,૦૦૦ ગામ દાનમાં આપેલાં હતાં. દેવળમાં ઘણામાં ઘણાં મૂલ્યવાળાં અને ઘણાંમાં ઘણાં પાણીવાળાં રત્નો એકઠાં થયાં હતાં. હિંદુસ્તાનમાં ગંગા નામે એક મોટી નદી છે. જેને હિંદુ લોકો ઘણું માન આપે છે, અને મૂઆ પછી સ્વર્ગે પહોંચવાની ધારણાથી મરેલા માણસનાં હાડકાં તેમાં નાંખે છે. આ

Aho ! Shrutgyanam

નદી અને સોમનાથ વચ્ચે આશરે ૧૨૦૦ માઈલ (૨૦૦ પરસંગ)નું છેટું છે, તો પણ સોમનાથની મૂર્તિને નહવડાવવા માટે ત્યાંથી દરરોજ પાણી લાવવામાં આવતું. દરરોજ હજાર બ્રાહ્મણ સોમનાથની પૂજા કરતા અને જાત્રાળુઓને પૂજા કરાવતા. જાત્રાળુઓની હજામત કરવાને ત્રણસો હજામો કામે લાગતા. દેવળને દરવાજે સાડી ત્રણસો ગવૈયા ગાવા બેસતા, અને એ બધાને દરરોજ નક્કી કરેલો પગાર મળતો. જ્યારે મહમૂદ ઉત્તરમાં જીત મેળવતો હતો અને મૂર્તિઓનો નાશ કરતો હતો ત્યારે હિંદુઓ કહેતા કે એ મૂર્તિઓ પર સોમનાથનો કોપ થયો છે. જો સોમનાથ તેમની ઉપર પ્રસન્ન હોય તો તેમનો કોઈથી પણ નાશ થઈ શકે નહીં. જ્યારે આ વાત મહમૂદના સાંભળવામાં આવી ત્યારે સોમનાથ પર ચઢાઈ કરી સોમનાથનો નાશ કરવાનો તેણે નિશ્ચય કર્યો. તેનું ધારવું એવું હતું કે જ્યારે હિંદુઓને માલમ પડશે કે સોમનાથની તેઓ પ્રાર્થના અને ભક્તિ કરે છે, તે નકામી છે ત્યારે તેઓ ઇસલામ ધર્મ અંગીકાર કરશે. "

"તેથી મદદ માટે તેણે અલ્લાની પ્રાર્થના કરી અને ૩૦,૦૦૦ ઘોડા અને ઘણા માણસો લઇ શાબાનની દસમી તારીખે (હીજરી ૪૧૪ ઈ. સ. ૧૦૨૪) ઘઝનીથી ઉપડયો. મૂલતાનનો રસ્તો લઈ તે રમઝાનની અધવચમાં મૂલતાન પહોંચ્યો. મૂલતાનથી હિંદુસ્તાન જવાનો રસ્તો, ખોરાક અને માણસ વગરના ઉજડ જંગલમાંથી જતો હતો, મહમૂદે રસ્તા ખર્ચ માટે ૩૦,૦૦૦ ઉંટપર પાણી અને ખોરાક સાથે લીધો અને અણહિલવાડ તરફ ચાલવા માંડયું. જંગલ ઓળંગ્યા પછી એક બાજુએ તેણે એક કિલ્લો દીઠો. ત્યાં ઘણાં માણસ એકઠાં થયાં હતા અને ઘણા કુવા હતા. આગેવાન લોકો મહમૂદને સમજાવવા આવ્યા, પણ તેણે માન્યું નહીં, કિલ્લાને ઘેરો ઘાલ્યો અને ત્યાંના લોકો બ્હીકથી ગભરાયા અને તેથી અલ્લાની મહેરબાનીથી તેને જીત મળી. એ જગો તેણે ઇસ્લામના અમલ તળે આણી, લોકોને મારી નાંખ્યા અને મૂર્તિઓ ભાગી નાંખી. પછી તેના માણસો સાથે પાણી લઇને તે અણહિલવાડ તરફ ગયો અને ઝીલકાદની શરૂઆતમાં ત્યાં પહોંચ્યો."

"અણહિલવાડનો રાજા, જેનું નામ ભીમ હતું, તે ઉતાવળે નાઠો અને પોતાની રાજધાનીમાંથી નીકળી જઇ લડાઇની તૈયારી કરવા એક નિર્ભય કિલ્લામાં ભરાઇ બેઠો. મહમૂદે સોમનાથ તરફ ચાલવા માંડયું. રસ્તામાં તેણે સોમનાથના તાબાની મૂર્તિઓવાળા ઘણા કિલ્લા જોયા. આ મૂર્તિઓને મહમૂદ સેતાન કહેતો. તેણે લોકોને મારી નાંખ્યા, કિલ્લા તોડી નાંખ્યા, મૂર્તિઓ ભાગી નાંખી, અને પાણી વગરના જંગલમાં થઇ સોમનાથ તરફ આગળ ચાલ્યો. જંગલમાં તેને ૨૦,૦૦૦ લડવૈયા મળ્યા. તેમના સરદારોએ તાબે થવા ના પાડી, તેથી તેમની સાથે લડવા મહમૂદે લશ્કર મોકલ્યું, તેમને હરાવી નસાડયા અને તેની મિલકત લૂટી લીધી. એ જંગલમાંથી તે દેબલવારા * આગળ આવ્યો. અહિંથી સોમનાથ બે દિવસની મુસાફરી જેટલું દૂર હતું. દેબલવારાના લોકો એમ ધારતા હતા કે સોમનાથ દુશ્મનોને હાંકી કાઢશે, તેથી તેઓ શહેરમાં જ ભરાઇ રહ્યા. મહમૂદે એ જગો લીધી, લોકોને કાપી નાંખ્યા, તેમની માલમત્તા લૂંટી લીધી અને પછી સોમનાથ તરફ ઉપડયો."

"ઝીલીકાદના એક ગુરૂવારે સોમનાથ પહોંચતા મહમૂદે દરિયા કિનારે એક મજબૂત કિલ્લો જોયો. તેની ભીંત સાથે દરિયાનાં મોજાં અથડાતાં હતાં, કિલ્લામાંના લોકો મુસલમાનોની હાંસી કરવા લાગ્યા, અમારો દેવ તમને બધાને કાપી નાંખશે એમ તેઓ કહેવા લાગ્યા. બીજે દિવસે એટલે શુક્રવારને દહાડે મુસલમાનોએ કિલ્લાની લગભગ જઇ હલ્લો કરવાનું મંડાણ કર્યું. મુસલમાનો કેવા જુસ્સાથી લઢે છે એ હિંદુઓના જોવામાં આવ્યું ત્યારે તેઓએ કિલ્લા પરથી પોતાની જગો છોડી. મુસલમાનો નિસરણીઓ

* ઉના પાસેનું દેલવાડા ગામ.

મૂકી કિલ્લા પર ચઢી ગયા. કિલ્લા પરથી તેમણે દીન પોકારી, ઇસ્લામનું જોર બતાવ્યું, તોપણ તેમના એટલાં બધાં માણસ કતલ થઇ ગયાં કે લઢાઇનું શું પરિણામ આવશે એ સંદેહ ભરેલું જણાયું. કેટલાક હિંદુઓ સોમનાથના દેવળમાં ગયા, અને મહાદેવને પગે પડી પોતાની વહારે ધાવા પ્રાર્થના કરવા લાગ્યા. રાત પડવાથી તે દહાડે લઢાઇ બંધ રહી."

"બીજે દહાડે સવારમાં મહમૂદે લઢાઇ પાછી ચલાવી. તેના માણસોએ આગલા દિવસ કરતાં પણ વધારે હિંદુઓને કાપી નાંખ્યા અને તેમને શહેરમાંથી નીકળી દેવળમાં ભરાઇ બેસવાની ફરજ પાડી. દેવળના દરવાજા આગળ કમકમાટ ઉપજે એવી કતલ થઇ. દેવળનો બચાવ કરવા આવેલા લોકોનાં ટોળેટોળાં દેવળમાં પેઠાં અને મ્હોં ઉપર હાથ મૂકી રડવા તથા પ્રાર્થના કરવા લાગ્યાં. પછી તે બહાર નીકળ્યાં અને બધાં કપાઇ ગયાં સુધી લડ્યાં. જે થોડાં માણસો બાકી રહ્યાં તે હોડીઓમાં બેસી દરિયા ભણી જવા લાગ્યાં પણ મુસલમાનોએ તેમને પકડી પાડયાં, અને કેટલાંકને કાપી નાંખ્યાં અને કેટલાંકને પાણીમાં ડુબાવી દીધાં."

"સોમનાથના દેવળને સીસાથી જડેલા સાગના છપ્પન થાંભલા હતા. મૂર્તિ એક અંધારા ઓરડામાં હતી. મૂર્તિની ઉંચાઇ પાંચ હાથ અને ફરતો ઘેર ત્રણ હાથ હતો; આટલી તો બહાર દેખાતી હતી પણ એ શિવાય બે હાથ ભોંયમાં દાટેલી હતી. તેની પર કોતરકામ જણાતું નહોતું. મહમૂદે મૂર્તિ પકડી લીધી. તેનો થોડો ભાગ બાળી નાંખ્યો, અને થોડો ધઝની સાથે લઇ ગયો, તેનું જુમામસીદના દરવાજા આગળ પગથીયું કરાવ્યું, અંધારા દેવળમાં રોશની કરવા રત્નજડીત ઝમરૂખ લટકાવેલાં હતાં. મૂર્તિની પાસે ૨૦૦ મણ સોનાની સાંકળ હતી. અને એ સાંકળને ઘંટડીઓ બાંધેલી હતી. રાત્રે જ્યારે એક ચોકી પૂરી થતી ત્યારે સાંકળ હલાવવામાં આવતી તેથી ઘંટના ખડખડાટથી પૂજા કરનાર બીજા બ્રાહ્મણ જાગી ઉઠતા. દેવળની પાસે તીજોરી હતી, તેમાં સોનારૂપાની બીજી ઘણી મૂર્તિઓ હતી. તીજોરીમાં રત્નજડીત કપડાં અને ઘણાં કિંમતી રત્નો હતાં. ૨૦ લાખ દીનાર કરતાં પણ વધારે કિંમતનો માલ દેવળમાંથી મળ્યો. હજાર કરતાં વધારે હિંદુઓ કપાઈ ગયા."

"સોમનાથ જીતી લીધા પછી મહમૂદને ખબર મળી કે અણહિલવાડનો રાજા ભીમ, સોમનાથથી ૨૪૦ માઇલ (૪૦ પરસંગ) છેટે, સોમનાથ અને જંગલની વચ્ચે આવેલા ખંડહતના× કિલ્લામાં ગયો છે. મહમૂદ ખંડહત તરફ કુચ કરી ગયો. ત્યાં આગળ આવી પહોંચ્યો ત્યારે ત્યાં શિકાર કરતા કોઇ માણસને તેણે ભરતી વિષે પૂછ્યું, તો તેને ખબર મળી કે ઉતરી શકાય એટલું પાણી છે પણ પવન આવશે તો ઉતરી શકાશે નહીં. મહમૂદે અલ્લાની બંદગી કરી અને પછી પાણીમાં ઉતરવા માંડયું. તેના લશ્કર સાથે તે સહિસલામત ઉતર્યો અને દુશ્મનને હાંકી કાઢ્યા. ખંડહતથી તે પાછો વળ્યો, અને મધ્ય-સિંધમાં મન્સૂર તરફ જવાનો ઇરાદો કર્યો, કારણ કે ત્યાંના રાજાએ ઇસ્લામ ધર્મનો ત્યાગ કર્યો હતો. મહમૂદના આવવાની વાત સાંભળી રાજા ખજૂરીના જંગલમાં નાશી ગયો. મહમૂદ તેની પાછળ ગયો અને તેને તથા તેનાં માણસોને ઘેરી લીધાં; તેમાંથી ઘણાને કાપી નાંખ્યા, ઘણાને પાણીમાં ડૂબાવી દીધા અને થોડા નાશી ગયા. પછી મહમૂદ ભાટીયા ગયો અને ત્યાંના લોકને તાબે કરી હીજરી ૪૧૭ ની સાલના સફર માસની ૧૦ મી તારીખે ગઝની પાછો આવ્યો."

(ગોવિંદભાઇ હા. દેશાઈ કૃત ગૂજરાતનો પ્રાચીન ઇતિહાસ, પાના ૧૫૬-૬૦)

× ખંડહત દરિયા કિનારે હોવું જોઇએ, પણ એ કયાં હશે એ બરોબર નક્કી થયું નથી. દાક્તર બ્યુલરનું ધારવું એવું છે કે એ કચ્છમાં આવેલું કંથકોટ હશે. કર્નલ વોટસન જણાવે છે કે કાઠિઆવાડને કિનારે મિયાણીની વાયવ્યકોણમાં આવેલું ગાંધવી હશે; મુસિયર ટીનોડ અને દાક્તર વીલનું ધારવું એવું છે કે દાઢર નદીના મુખ આગળ આવેલું ભરૂચ પાસેનું ગંધાર હશે.

Aho ! Shrutgyanam

ફિરિસ્તા અને બીજા બીજા મુસલમાન લેખકોએ ઉત્બીની આ હકીકતને ખૂબ વધારીને લખી છે અને તેમાં અનેક અતિશયોક્તિ ભરેલાં વર્ણનો લખ્યાં છે. એ ઉપર ઉક્ત શ્રીયુત ચિં. વિ. વૈદ્ય સમાલોચનાની પદ્ધતિએ લખે છે કે "પ્રારંભમાં જ અમારે એ કહી દેવું જોઇએ કે આ અતિશયોક્તિ પ્રચુર વૃત્તાંતમાં, પછીના લેખકો વડે વિસ્મય કારક વાતોની ખૂબ જ ભરતી થતી રહી છે. ખાસ કરીને, મહમૂદના ધાર્મિક ગૌરવની સજાવટ કરવાની ઇચ્છાથી સ્વકપોલ કલ્પિત એવી અનેક વાતો તેમણે આ વૃત્તાંત સાથે જોડી દીધી છે. ઉદાહરણ તરીકે, સોમનાથની મૂર્તિમાં અગણિત સંપત્તિ છુપાવેલી હતી, ત્યાંના બ્રાહ્મણોએ, ક્રોડો રૂપિઆ દંડ તરીકે મહમૂદને આપવા કબૂલ કર્યા, તેના મંત્રીએ તે લઇ લેવાની સલાહ આપી, પણ મહમૂદે કહ્યું કે–ઇશ્વરના દરબારમાં આપણે મૂર્તિ વેચનારા તરીકે ન ઠરીએ; મૂર્તિ ભાગનારા તરીકે પ્રસિદ્ધ થઇએ એવી મ્હારી ઇચ્છા છે.–આ વાત ગિબન સુધાંયે લખી છે અને એ ફિરસ્તાની નહિ તો કોઇ બીજાની પણ કેવળ કપોલ–કલ્પના જ છે. સોમનાથની આ હકીકત બનાવટી છે એ વિષે ટીકા કરતાં, ખુદ ઇલિયટે જેનો ઉતારો લીધો છે તે વિલ્સન કહે છે કે—'આ મૂર્તિના અવયવ છિન્ન–વિચ્છિન્ન કરવા બાબત, જૂના મુસલમાનોના લેખોમાં કશોએ ઉલ્લેખ નથી. ખરી રીતે તે મૂર્તિ ને અવયવ જ ન હતા. તેમ જ તે મૂર્તિમાં સંપત્તિ ભરી રાખવાનોયે ઉલ્લેખ નથી. તે મૂર્તિ નક્કર અને ભરતની હતી તેથી તેમાં સંપત્તિ છુપાવી રાખવા માટે અવકાશ જ ન હતો. તે મૂર્તિમાં હીરા અને માણેક છુપાવી રાખવાનો જે શોધ ફિરસ્તાએ કર્યો છે તેને કશો જ આધાર નથી.' આ હકીકત બિલકુલ અક્કલ વગરની છે. કારણ કે સોમનાથની મૂર્તિ એ તો એક નક્કર પત્થર હોવો જોઇએ. તે જ પ્રમાણે એક વિશ્વાસઘાતકી હિંદુ ભોમીયાએ મહમૂદને એક નિર્જલ રણમાં લઇ ગયો પણ ખુદાની પ્રાર્થના કરતાં જ તેને પાણી મળી આવ્યું; અથવા, ગૂજરાત પ્રાંત રસાળ હોઇ તેમાં સોનાની ખાણો હોવાથી મહમૂદનું મન ત્યાં જ રહેવાનું થઇ ગયું, પણ ખુરાસાન આપણી જન્મભૂમિ હોવાથી ત્યાં જ રહેવું આપણને વધારે સુખકર છે, એમ કહી તે કલ્પના છોડી દેવા માટે અધિકારીઓએ તેના મનને ફેરવ્યું; આવી વાતો વિશ્વસનીય લાગતી નથી. પાછાં ફરતાં મહમૂદે તે દેશનો રાજ્યકારભાર, નાસી છૂટેલા રાજાના કોઇ સંબંધી અને સંસાર છોડી વિરક્ત થએલા દાબશિલીમને સોંપી દીધો; આ વાત પણ—ગૂજરાતના તે વખતના રાજા ભીમનો તે કાકો થતો હતો અને સાચે જ તે સરસ્વતી નદીના કાંઠે સંન્યાસી થઇને રહેતો હતો એમ બતાવવામાં આવે છે છતાં—તે વિચિત્ર હોઇને તે પર વિશ્વાસ બેસાડવા સરખી નથી. ઇલિયટે આ સ્વારી વિષેના પુષ્કળ ઇતિહાસકારોના ઉતારાઓ આપ્યા છે અને જેમને વિશેષ જાણવાની ઇચ્છા હોય તે વાંચકોએ ઇલિયટના ગ્રંથમાંથી વાંચી લેવા. ઇબ્ન અસીરના મૂળમાં જ અતિશયોક્તિ ભરેલા વૃત્તાતમાં વળી મીઠું–મરચું નાંખીને એ ઇતિહાસકારોએ પોતાનું વૃત્તાંત લખેલું હોવાથી તેમનો સરાંશ આપવાની કશી આવશ્યકતા નથી."

આમ લખીને વૈદ્ય મહાશય ઇબ્ન અસીરે લખેલા વૃત્તાંતનો ટુંક સાર આપે છે, (જે અમે સવિસ્તર ઉપર આપી દીધો છે) અને તેનું પ્રત્યાલોચન કરતાં તેઓ કહે છે કે–"આ વૃત્તાંત સરળ અને વિશ્વસનીય લાગે છે. બ્રાહ્મણોએ કે પછી જોઇએ તો ક્ષત્રિઓએ, મંદિર પાસે, ક્રોધથી સંતપ્ત થઇને પ્રતિકાર કર્યો પણ તે કેવળ મૃત્યુને બોલાવવા માટે જ હતો. ગૂજરાતના રાજા ભીમને સોમનાથની બહાર જ શત્રુનો જોરથી પ્રતિકાર કરતાં આવ્યો હોત. તે પોતાના નામને અને રાજપૂત બિરુદને જાળવવા તૈયાર થયો હોત તો તેને, મહમૂદે આણેલા સૈન્ય કરતાં વધારે મોટું સૈન્ય, અધિક શું ઘોડેસ્વારનું દળ પણ રણાંગણ ઉપર ઉભું કરી શકયો હોત. પરંતુ અહિં એ પણ ધ્યાનમાં રાખવા જેવું છે કે એ વખતે મહમૂદની કીર્તિ, તેણે મેળવેલા સતત વિજયોને લીધે, નેપોલિયન પ્રમાણે પરાકાષ્ઠાએ પહોંચી

Aho ! Shrutgyanam

ગઇ હતી. એક નેપોલિયન એટલે લાખ માણસનું સૈન્ય માનવામાં આવતું. પરંતુ આવા નેપોલિયનનો પણ વાટર્લૂના સમરાંગણ ઉપર જર્મન અને ઇંગ્રેજોએ સખત વિરોધ કર્યો. આપત્તિના નિરાશકાળમાં સખ્તાઇનું તેજ હિંદુલોકોના હાડમાં દેખાઇ આવતું નથી. મતલબ કે ભીમે કચ્છમાંના એક કિલ્લાનો આશ્રય લીધો તેમાં કાંઇ આશ્ચર્ય પામવા જેવું નથી. કચ્છના રણમાં પાણીની અડચણ છતાં અને ભરતીના વખતે પાણી વધવાનો સંભવ હોવાથી ત્યાં થઇને જવું ધોકાવાળું હોવા છતાં, સોમનાથ લૂટયા પછી મહમૂદ ત્યાં પણ હુમલો લઇ ગયો એમ કહેવાય છે. વિજેતા મહમૂદ આવે છે એ જાણીને ભીમ ત્યાંથી પણ નાસી છૂટયો. પછી રણમાં થઇ સિંધના માર્ગે મહમૂદ ગજની પાછો ફર્યો. રણમાં પાણી મળે તેમ નથી એની તેને ખબર હતી. તે પાણીનો રસ્તો જ ન હતો તો પછી વિશ્વાસ ઘાતકી હિંદી ભોમિયાદ્વારા તેને ફસાવવાનો અવકાશ જ કયાંથી હોય. સિંધના પ્રદેશમાંના ચાંચિયાઓએ ગાત્ર તેને ખુબ જ ત્રાસ આપ્યો હતો. આ ચાંચિયાઓ જૂડ દેશમાંના (જાટ) હતા એમ જણાય છે. પાછળથી આ જાટો ઉપર છેવટની સ્વારી કરીને મહમૂદે તેમને પણ યથાયોગ્ય શિક્ષા આપી દીધી.

મહમૂદ સોમનાથ આવ્યો તે મુલતાનપરથી મરુભૂમિમાં થઈ, રસ્તામાં આવતા અજમેર અને અણહિલવાડ સર કરી, પૂર્વના રસ્તે આવ્યો; અને કચ્છમાં થઈ પાછા જતાં માર્ગમાં મનસૂર તોડી, મુલતાન અને સિંધૂ નદીના રસ્તે ગયો; એમ કેટલાકો કહે છે. માળવાનો પરમાર ભોજદેવ તેની સાથે લડાઈ કરવાની તૈયારી કરતો હતો અને તેણે એને વચ્ચે અડાવ્યો હોત તેથી તે આ પશ્ચિમના માર્ગે પસાર થયો. હિન્દૂલોકો સાથે લડવું પડશે તો કદાચિત્ પોતાની આવી મોટી લૂટ ચાલી જશે એવો તેને ભય લાગ્યો હોવો જોઇએ; એમ પણ કેટલાકોએ લખેલું છે."

આ બધી વિગત ઉપરથી સોમનાથ ઉપર મહમૂદે કરેલી સ્વારીની સમજણ સારી પેઠે થઈ શકશે અને એ સ્વારીના વિષે જે સન્દેહ ઐતિહાસિકોમાં આજ સુધી થઈ રહ્યો છે તેનો નિર્ણય, અમે પ્રથમ લેખમાં આપેલા જિનપ્રભસૂરિ અને કવિ ધનપાલના ઉલ્લેખોથી, યથાર્થ થઈ જાય તેમ છે. અમારી કલ્પના છે કે-મહમૂદ સોમનાથને સર કરી, જેમ ઇતિહાસોમાં જણાવ્યું છે તેમ, કચ્છમાં થઇને સિંધૂ પ્રાંતમાં નહિ ગયો હશે, પણ તે, કચ્છનું નાનું રણ જે કહેવાય છે તેના કાંઠે કાંઠે વાગડ પાસેના પ્રદેશમાં થઈ, સાચોર જઇને પછી મુલતાન તરફ ગયો હશે. માર્ગમાં જતાં જતાં સાચોરના મહાવીરને લૂટવાનું તેનું મન થયું હશે પણ ગમે તે કારણથી તે તેમાં ભગ્નમનોરથ થયો છતો જલ્દીથી ત્યાંથી કૂચ કરી ગયો હશે. તેના આવા શીઘ્ર પ્રયાણને શ્રદ્ધાળુ લોકોએ મહાવીર દેવના માહાત્મ્યથી બનેલું પલાયન માન્યું અને તેથી તે વિષેના આવા ઉલ્લેખો આ ગ્રંથકારો અને ભક્તજનોએ કર્યા છે.

Aho ! Shrutgyanam

મૂર્તિપૂજાનું માહાત્મ્ય

અહિં પ્રસંગથી આપણી મૂર્તિપૂજા અને તેના અંગે થએલા આવા અનિષ્ટ આક્રમણોના વિષયમાં કાંઇકિ વિચારણીય વાતો ઉપર પણ થોડોક ઊહાપોહ કરવાની ઇચ્છા થાય છે. વિચારશીલ જનોને આ વિચારો ખાસ મનનપૂર્વક વાંચવા જેવા છે.

મૂર્તિપૂજાની ભાવનાએ આપણા દેશમાં ઘણાં ઘણાં ઉત્કર્ષો અને અપકર્ષો–બંને ઉપસ્થિત કર્યાં છે. મૂર્તિપૂજાના નિમિત્તે દેશમાં લાખો મંદિરો રચાયાં અને તેથી શિલ્પકળાનો ખૂબ પ્રકર્ષ થયો. મૂર્તિપૂજાએ લોકોમાં વિસ્તૃત ધર્મભાવના ઉત્પન્ન કરી અને તેથી લોકોએ એ નિમિત્તે પોતાની સંપત્તિનો વિનિમય કરી ત્યાગ અને ઉદારતાના ઉંચા ગુણો ખીલવ્યા. મૂર્તિપૂજાના કારણે જનસમાજમાં ભક્તિભાવનો ઇષ્ટ આવિર્ભાવ થયો અને તેના લીધે સાહિત્ય અને સંગીતનો અનેક અંશે ઉચ્ચ વિકાસ થયો. મૂર્તિપૂજાએ ગામેગામ સાર્વજનિક સ્થાનોની સૃષ્ટિ કરી અને તેના યોગે સર્વ સમાનધર્મિઓને, વિનાસંકોચે અને વિનાઆમંત્રણે, એક સ્થાને વારે ઘડીએ ભેગા મળવાનું અને તે દ્વારા પોતાની વિવિધ જીવનપ્રવૃત્તિઓને વ્યવસ્થિત બનાવવાનું સારૂં સાધન મળ્યું. મૂર્તિપૂજાએ નિરાધારોને આધાર અપાવી, અનાથોને સનાથ કરાવી, પાપીઓને પુણ્યાત્મા બનાવી મનુષ્યજાતિને ઘણી શાંતિ અર્પી છે. આમ મૂર્તિપૂજા જ્યારે ઉત્કર્ષક જણાઈ છે ત્યારે બીજી બાજુએ તે અપકર્ષક પણ તેટલી જ થઈ છે. દાખલા તરીકે–મૂર્તિપૂજાના કારણે દેશમાં જે અનેક મોટાં દેવસ્થાનો ઉભાં થયાં તે કાળાંતરે લોકોમાં પરસ્પર કલહના પણ મોટાં સાધનો થઇ પડ્યાં. એ દેવમંદિરોના નિમિત્તે હજારો લડાઇ–ઝઘડા થયા. લાખો કરોડો રૂપીઆના અપવ્યયો થયા. સાધર્મિ સંઘો અને જનસમૂહોમાં જીવલેણ વૈરભાવ સર્જાયા. મૂર્તિપૂજાના બ્હાને દંભ અને દુરાચારને પોષણ મળ્યાં. મૂર્તિપૂજાના આચરણ પાછળ સ્વાર્થ અને અહંકાર પોષાયા. મૂર્તિપૂજાના કાલ્પનિક માહાત્મ્યના લીધે આળસ્ય અને અકર્મણ્યતાને ઉત્તેજનો મળ્યાં. આમ મૂર્તિપૂજાની જમે અને ઉધાર બંને બાજુએ બહુ માંડી શકાય તેમ છે.

મૂર્તિપૂજાને લીધે કયારેક દેશ ઉપર કેવી આપત્તિ આવી પડે છે અને એવે વખતે કલ્પિત મૂર્તિસામર્થ્ય પ્રજાને કેમ કર્તવ્યશૂન્ય બનાવી દે છે એના ઉલ્લેખો ઇતિહાસોમાં ઘણા મળી આવે છે. સોમનાથ અને મહમૂદની સ્વારીને અંગે પણ આવા વિચારો ઇતિહાસકારોને આવ્યા કરે છે અને તે વિદ્વાનોમાં ચર્ચાયા કરે છે. ઉપર્યુક્ત શ્રી ચિંતામણી વિ. વૈદ્ય મહાશયે, પોતાના **मध्ययुगीन भारत** નામના મનનીય મરાઠી ઐતિહાસિક ગ્રંથમાં (ભાગ ૩)માં, 'હિંદુઓની મૂર્તિપૂજા' એ નામનું જે એક સ્વતંત્ર પ્રકરણ પરિશિષ્ટરૂપે લખ્યું છે અને તેમાં જે વિચારો એમણે દર્શાવ્યા છે તે, આ વિષય પરત્વે ખાસ મનન કરવા જેવા હોવાથી અહિં આપીએ છીએ.

વૈદ્યજી લખે છે કે–" સોમનાથ સંબંધી મૂર્તિભંગ અને લૂટની હકીકત ઉપરથી હિંદૂઓની મૂર્તિપૂજા વિષે સૂઝી આવેલા કેટલાક વિચારો ગિબનની માફક ઇતિહાસનો પ્રક્રમ બંધ કરીને વચ્ચે જ ન આપતાં, અહિં પરિશિષ્ટરૂપે અમે આપીએ છીએ. દસમા સૈકાની અંતે મૂર્તિપૂજાની બાબતમાં ઘણું જ ભોળપણ હિંદુસ્થાનમાં વધી ગયું હતું અને તેથી મુસલમાની ધર્મવાળા લોકોને પોતાનો ફાયદો કરી લેવાનું સાધન મળ્યું હતું. મહમૂદની મૂર્તિભંજક ચઢાઇઓ હિંદુ લોકોની આ ભોળપણ ભરેલી આંખો ઉઘાડવા માટે જ થઈ હતી એમ કહી શકાય. પણ આ ચઢાઇઓ પરથી નીકળતો બોધ, દુર્ભાગ્યે હજીયે, હિંદુઓએ લીધો નથી એમ કહેવું પડે છે. મૂર્તિપૂજા વેદોમાં કહેલી છે કે નહિં, અથવા તે બુદ્ધિને પટે છે કે નહિં આ

Aho ! Shrutgyanam

ધાર્મિક પ્રશ્ન અહિં ચર્ચવા માગતા નથી. હાલના હિંદુ ધર્મમાં મૂર્તિપૂજા ચોક્કસ માન્ય છે અને ઇશ્વર-પ્રણિધાનની દૃષ્ટિએ તે યોગ્ય રીતે માન્ય છે એમ કહી શકાય. પણ મૂર્તિપૂજાને લીધે કેટલીક ભ્રમણાઓ મનુષ્યના મનમાં રૂઢ થઈ જાય છે. ખાસ કરીને મૂર્તિમાં જ તે દેવની શક્તિ રહેલી છે આવી ભૂલભરેલી માન્યતા થઈ જાય છે. આ વાત હિંદુઓને જ લાગૂ થાય છે એમ નથી પણ છેક પ્રાચીનકાળથી જ્યાં જ્યાં મૂર્તિપૂજા ચાલૂ હતી ત્યાં ત્યાં આ વાત હતી જ. બૌદ્ધ ધર્મ, પ્રારંભમાં તો, ઇશ્વરનુંયે અસ્તિત્વ છે કે નહિ એ વિષયસુધ્ધાંમાં મૌન હતો. પણ પછી તે ભયંકર રીતે મૂર્તિપૂજાને માનનારો બન્યો અને ચારે બાજુએ બુદ્ધની જ મૂર્તિઓ પૂજાવા લાગી. હ્વેનત્સાંગ કેટલોયે વિદ્વાન્ અને તત્ત્વજ્ઞાની હોવા છતાં, તેને બુદ્ધના શરીરાવશેષમાં અથવા બુદ્ધની મૂર્તિમાં ચમત્કારિક સામર્થ્ય હતું એમ માનતો જોઇને આપણને આશ્ચર્ય થાય છે. હિંદુ લોકોમાં મૂર્તિપૂજા પ્રથમથી જ થોડી ઘણી રૂઢ હતી તે બૌદ્ધ ધર્મનો ઉચ્છેદ થયા પછી તેના અનુકરણરૂપે ખૂબજ અધિક વધી ગઇ. મૂર્તિની પવિત્રતા અને તેનામાં રહેલું અદ્ભુત સામર્થ્ય એ વિષયની ભ્રાંત કલ્પના એટલી બધી વધી પડી કે કનોજના પ્રતિહાર સમ્રાટ્, મુસલમાનો પાસેથી મુલતાન પડાવી લેવા સુસમર્થ હોવા છતાં જ્યારે જ્યારે તેઓ મુલતાન સર કરવા જતા ત્યારે ત્યારે ત્યાંના મુસલમાન અધિકારીઓ 'તમે જો આગળ વધશો તો સૂર્યની અહિં જે પ્રસિદ્ધ મૂર્તિ છે તે અમે તોડી નાંખીશું' એવી ધમકીઓ આપતા અને તેથી તેઓ પાછા ચાલ્યા આવતા. પશ્ચિમના દેશોમાંયે, રોમન અને ગ્રીક લોકો, ઇતર લોકોની અપેક્ષાએ તત્ત્વજ્ઞાનમાં આગળ વધેલા હતા છતાં તેમનો પણ કેટલીક મૂર્તિઓના અદ્ભુત સામર્થ્ય પર વિશ્વાસ હતો. ખ્રીસ્તી ધર્મમાં, શરુઆતમાં નિરાકાર દેવનો ઉપદેશ કરવામાં આવ્યો અને તેનો પ્રસાર મૂર્તિપૂજક રોમન અને ગ્રીક લોકોમાં જે થયો તે મૂર્તિમાં કશું સામર્થ્ય નથી એમ સિદ્ધ કરવાથી જ થયો. સોમનાથના પૂજારીઓની, મૂર્તિભંજક મહમૂદનો નાશ કરવા માટે, સોમનાથની મૂર્તિ આગળ કરાએલી નિરર્થક વીનવણીની પ્રાર્થના વાંચીને, તે પૂર્વે છસો વર્ષે થએલા અલેકઝેંડ્રિયા શહરમાં એ જ પ્રકારના દેખાવનું જે આબેહુબ વર્ણન ગિબને કર્યું છે, તેની આપણને સ્મૃતિ થઈ આવે છે. થિઓડોશિયસ બાદશાહ (ઇ. સ. ૩૮૯)ના હુકમથી અલેકઝેંડ્રિયામાંની સિરૅપિસની વિખ્યાત મૂર્તિ તોડી નાંખવામાં આવી તે વખતના વૃત્તાંતનું વર્ણન કરતાં ગિબન લખે છે કે—

"અલેકઝેંડ્રિયા શહર સિરૅપિસની દેવતાની મૂર્તિના સંરક્ષણ નીચે સુરક્ષિત છે એવી માન્યતા હોવાથી તે શહેરને સિરૅપિસના શહર તરીકે ઓળખાવવામાં તે નગરને માન લાગતું. તેનું મંદિર, રોમના કૅપિટલ ભાગમાં આવેલી ઇમારત કરતાં વિસ્તીર્ણ અને વૈભવશાલી હતું. શહરની સપાટીથી સો ફુટ ઉંચા બનાવેલા એક કૃત્રિમ પણ પ્રશસ્ત ટેકરા પર એ મંદિર બાંધવામાં આવ્યું હતું. થિઓડોશિયસ્ બાદશાહે મૂર્તિ-પૂજકોની પૂજાવિધિ સર્વત્ર બંધ કરી દીધી હોવા છતાં પણ સિરૅપિસના શહરમાં અને મંદિરમાં તે ચાલૂ હતી. કારણ, આવી ભોળપણની બુદ્ધી ખ્રીસ્તી લોકોમાંયે હતી કે—જો આ વિધિ બંધ કરી દેવામાં આવશે તો નાઇલ નદીમાં પૂર આવશે નહિ, ઇજિપ્તમાં પાક થશે નહિ અને કૉન્સ્ટેન્ટિનોપલ રાજધાનીને ખાવાનું મળશે નહિ. પણ છેવટે સિરૅપિસનું મંદિર અને તેમાંની મૂર્તિ તોડી નાંખવા માટે બાદશાહનો સખ્ત હુકમ આવ્યો. જૂદી જૂદી જાતની ધાતુઓનાં અનેક પતરાં એક સાથે ભેગાં જડીને સિરૅપિસની ભવ્ય મૂર્તિ બનાવવામાં આવી હતી. તે એટલી મોટી હતી કે ગભારાની બંને ભીંતોને તે અડકી ગએલી હતી. તેના જમણા હાથમાં, રાક્ષસી સ્વરૂપવાળા એક સર્પનું માથું અને ધડ હતું, જેની પૂંછડીને ત્રણ ફાંટા હોઈ તેમના અંતે સિંહ, સિયાળ અને કુતરાનાં ડોકાં લટકેલાં હતાં. આ મૂર્તિનો ઉપમર્દ કરવા જો કોઇ હાથ ઉઠાવશે તો તરત જ આકાશ અને પૃથ્વી એક થઇને સૃષ્ટિના આરંભકાળ જેવું તોફાન ઊઠશે, આવો બધાનો વિશ્વાસ હતો. એક કાઠી છાતીવાળો સિપાહી હાથમાં કુહાડો લઈ નીસરણી માંડી ઉપર

Aho ! Shrutgyanam

ચઢયો. જોનારા લોકોની મેદિનીમાંથી ખ્રીસ્તી લોકો સુધાં, આ ઉપમર્દના ભયંકર પરિણામની ભીતિથી ગળગળા થઇ રહ્યા હતા. સિરૅપિસની મૂર્તિના ગાલ પર સીપાહીએ એક ખૂબ જોરથી પ્રહાર કર્યો અને તે તુટીને જમીન પર પડયું. પણ આકાશ અને પૃથ્વીમાં કશી જ ગડબડ ન થતાં તે સદાની માફક નિશ્ચલ, શાંત અને વ્યવસ્થિત સ્થિતિમાં જ બન્યાં રહ્યાં. કશુંયે કંઈ થયું નહિ એટલા માટે તે સિપાહી વધારે જોરમાં આવ્યો અને અનેક પ્રહારો કરી કરીને તે મૂર્તિના ટુકડે ટુકડા કરી નાંખ્યા. પછી તે ટુકડાઓને અપમાનકારક રીતે અલેકઝેંડ્રિયા શહરમાં ફેરવવામાં આવ્યા. નાઇલ નદીમાં સદાની માફક જ પાણીનું પૂર આવ્યું અને તેથી ઇજિપ્તના સપાટ પ્રદેશમાં ખૂબ પાક પણ થયો, અને ભાવી ભાખનારાઓનું ભયંકર ભવિષ્ય ખોટું પડયું. ઘણા લોકો, અલેકઝેંડ્રિયાની મૂર્તિમાં આ રીતે કશું જ સામર્થ્ય ન જોઇને ખ્રીસ્તી થયા."

ગિબને આ ઠેકાણે વિષયાંતર કરીને પણ મૂર્તિના અદ્ભૂત સામર્થ્ય પર ધર્મની સત્યાસત્યતા માનવી કેટલી અયોગ્ય છે તે બતાવ્યું છે. મૂર્તિ ધાતુ, પત્થર કે લાકડાની જ બનેલી હોવાથી તેમાં અદ્ભુત સામર્થ્ય હોવાનું કયાં શકય છે? એવું સામર્થ્ય તો આપણી ભક્તિમાં જ રહેલું છે. અસ્તુ. ખ્રીસ્તી ધર્મ પણ બૌદ્ધ ધર્મની માફક પછીથી મૂર્તિપૂજામાં મગ્ન થયો, અને જે ભોળપણનો, પ્રારંભમાં તેણે નિષેધ કર્યો તે જ ભોળપણમાં નિમગ્ન થઈ જિસસ અને મેરીની મૂર્તિઓ પૂજવા લાગ્યો. એના વિરોધી પરિણામે મુસલમાની ધર્મનો ઉદય થયો. આ જ પ્રમાણે, મૂર્તિપૂજાના વિષયમાં રહેલી ભોળપણની સમજણને દૂર કરવા માટે મહમૂદની ચઢાઇઓ થઇ એમ કહી શકાય. બીજીયે એક ભોળપણની સમજ દૂર કરવા માટે આ ચઢાઇઓ થઇ હતી એમ કહી શકીએ. મંદિર અને મૂર્તિપર અતિશય સોનું અને ઝવેરાત લાદવું એ ઘેલછાનો જ એક પ્રકાર છે એમ આ ચઢાઇઓએ લોકોની દૃષ્ટિમાં આણ્યું. કારણ કે, મૂર્તિભંજકોની ધાર્મિક માન્યતાને તે દ્રવ્યવિષયક લોભની વધારે સહાયતા મળી. સંપૂર્ણ સોના-રૂપાની મૂર્તિ બનાવવામાં શો વધારે લાભ છે? અગર તેના પર કિંમતી ઝવેરાત ચઢાવવામાં શું વધુ પુણ્ય છે? કેવળ સોનાની પાંચ હાથની મૂર્તિ ઇશ્વર-પ્રણિધાન કરવામાં કાંઈ વધારે સાધનભૂત થતી નથી. હિંદુધર્મના પ્રાચીન આચાર્યો નાના નાના જૂદી જૂદી સ્થિતિમાં રહેલા પત્થરોને શિવ, વિષ્ણુ, ગણપતિ અને સૂર્યના પ્રતીક માને છે અને વૈદિક ઋષિઓ તો પ્રત્યક્ષ સૂર્ય અને વાયુની ઉપાસના કરતા. પરંતુ સુંદર મૂર્તિ બનાવવી એ મનુષ્યના મનને સહજે પ્રિય લાગે છે, અને તે પર અણમોલું ઝવેરાત ચઢાવવા પણ ઉત્સુક થઇ જાય છે. શિવપૂજામાંયે મુખ્ય લિંગપૂજા એટલે પત્થરની કોઇ સહજ-આકૃતિની પૂજા પ્રશસ્ત માનવામાં આવી છે, પણ ત્યાંયે વૈભવશાલી રાજાઓ સ્વયંભૂત લિંગ ઉપર હીરામાણેકથી જડેલા સોનાના મુગટ ચઢાવે છે, અને તેમ કરી, મૂર્તિભંજક મુસલમાનોને જ નહિ પણ હિંદુ ચોરોને, વધારે શું ભાવી લોભી રાજાઓને અને ખુદ્દ પૂજારીઓને પણ, લોભ ઉત્પન્ન કરાવી તે દેવનું અપમાન કરવા પ્રવૃત્ત કરે છે. હિંદુસ્તાનના ઇતિહાસમાં નવીન મંદિરો બાંધીને તેમને ઘણી કીંમતી ભેટો આપવાના અનેક દાખલાઓ મળી આવે છે. ખાસ કરીને મથુરા, કોટકાંગડા, સોમનાથ અને ઉજ્જયિની વગેરે પુણ્યસ્થાનોમાં સેંકડો વૈભવશાલી રાજાઓ અને હજારો શ્રીમંતગૃહસ્થોએ આપેલી અમૂલ્ય ભેટોથી સંપત્તિ ઉછળી રહી હતી. ઇતિહાસકાર અને શાસનશાસ્ત્રવેત્તાઓ એમ કહી શકે કે આ સંપત્તિનો ઉપયોગ રાજાઓએ સમર્થ સૈન્ય જમાવી રાખવામાં અને શ્રીમંત ગૃહસ્થોએ સમાજની સુસ્થિતિ વધારવામાં કરવો જોઇતો હતો. પણ તે તરફ દુર્લક્ષ્ય રહ્યું ને મંદિર અને મૂર્તિ ઉપર અમાપ સંપત્તિ ભેગી થઈ અને તેના લીધે બંને રીતે દેશની અવનતિને મદત મળી. એક તરફ તો બહારના વિજેતાઓનો લોભ જાગૃત થઇ ને તેમનું આર્થિક સામર્થ્ય વધ્યું અને બીજી બાજુએ આપણા રાજાઓ અને લોકોનું સાંપત્તિક સામર્થ્ય ઓછું થયું. હજીયે આ

Aho ! Shrutgyanam

બંને બાબતો તરફ હિંદુલોકોનું લક્ષ્ય જેટલું ચોંટવું જોઈએ તેટલું ચોંટતું નથી. મૂર્તિપૂજા છોડવાની જરૂર નથી; પણ વિશિષ્ટ મૂર્તિમાં અદ્‌ભુત સામર્થ્ય રહેલું છે એવી ભોળપણની ભાવના ન વધારતાં, આપણી ભાવનામાં જ એવું કાંઇક સામર્થ્ય રહેલું છે એ ભાવના દૃઢ થવાની જરૂર છે. તે જ પ્રમાણે મંદિર અને મૂર્તિ માટે વધારે દ્રવ્ય ખર્ચવાથી વિશેષ પુણ્ય થાય છે એ કલ્પના પણ ઓછી થવી જોઇએ. કારણ કે આવા દ્રવ્યના સંચયથી મહંતો, પૂજારીઓ અને રક્ષકોની નીતિ બગડે છે અને ચોર અગર મૂર્તિભંજકોની, મૂર્તિને ઉપદ્રવ કરવાની ઇચ્છાને ઉત્તેજન મળે છે.

તો પણ, મનુષ્ય સ્વભાવ એક જ રીતે, મનુષ્યને એક જ કૃત્ય કરાવવા પ્રવૃત્ત કરે છે, એ છેવટે કહી દેવા જેવું છે. મૂર્તિભંજક અને મંદિરધ્વંસક મહમૂદને પણ, એજ સ્વભાવની પ્રવૃત્તિએ, ગજનીમાં એક પ્રચંડ મશીદ બાંધી, લૂટી આણેલા સોના અને હીરામાણેક આદિ ઝવેરાત વડે તેની ભીતોને સણગારવાની ઇચ્છા ઉત્પન્ન કરાવી. અને જે લોભે તે પ્રેરાયો હતો તે જ લોભ ભવિષ્યના વિજેતાઓ માટે તેણે સર્જી દીધો. ઐતિહાસિક લેખો પરથી એમ દેખાય છે કે-એ મસીદને, એની અંદર રહેલા મૂલ્યવાન્ સણગારના લોભે, ચીનના મૂર્તિપૂજક પ્રચંડ ટોળાઓએ ઉધ્વસ્ત કરી નાંખી. **જંગિસખાને** બુખારાની જામે મસીદની કરેલી અવમાનના **જુવૈનીના જહાનકુશ** નામના ગ્રંથમાં વર્ણવેલી છે. અને બુખારામાંના તેના એ કૃત્યને, ત્યાંથી નાસી આવેલા એક મુસલમાને, આ નીચે આપેલા નાના સરખા પણ જોરદાર વાક્યમાં વર્ણવેલું છે કે-" મોગલો આવ્યા અને ખોદી, બાળી, કાપી, લૂટીને પાછા ગયા." આ જ જંગિસખાન, જલાલુદ્દીનનો પીછો પકડીને (ઈ. સ. ૧૨૨૬) પાછો ફર્યો ત્યારે તે ગજનીપર આવ્યો હતો. તેણે બધા નગરવાસીઓને બહાર કાઢ્યા અને ગણી લીધા અને તેમાંથી જેટલા કારીગર હતા તેમને બાજુએ રાખી બાકી બધાની કત્તલ કરવાનો હુકમ કર્યો. તેણે શહેરને પણ ઉજ્જડ બનાવી મુકયું અને પછી ઓગતાઇ મરેલાનાં મડદાં દટાવી હિરાત તરફ ચાલી નીકળ્યો (ઇલિયટ ૨, પા. ૩૯૦) બીજા એક ઉતારામાં એમ કહેલું છે કે-ઓગતાઇએ ચાર મહિના સુધી ઘેરો ઘાલીને પછી હલ્લો કરી ગજની શહેર તાબે કર્યું અને તેને પાયા સાથે ખોદી કાઢી તે બાળી મુકયું અને લગભગ બે લાખ માણસોની કત્તલ કરી." (ઇલિયટ. ૨, પા. ૫૬૯)

આ આખા પ્રકરણમાં જણાવેલા વિચારો વર્તમાન જૈન સમાજને પણ બહુ મનન કરવા જેવા છે. મંદિરો અને મૂર્તિઓની પાછળ જૈન કોમનો જે દ્રવ્યવ્યય થઇ રહ્યો છે તેનું કેવું ભવિષ્ય આવે એ કોણ કહી શકે તેમ છે ? એ દ્રવ્યસંચયે જ દેવસ્થાનોને સદા જોખમમાં નાંખ્યા છે. પાલીતાણાનો રાજા જે આજે જૈનોને શત્રુંજયની યાત્રાથી અટકાવી રહ્યો છે તેનું કારણ, આપણા દ્રવ્યસંચયને જોઇને જાગૃત થએલો તેનો દ્રવ્યલોભ જ ખાસ છે, એ દરેક મર્મજ્ઞ સમજી શકે તેમ છે. જૈન કોમે સવેળા ચેતી જવાની જરૂર છે અને દેશકાળને અનુસરતું પોતાનું ધોરણ ઠરાવવાની જરૂર છે.

Aho ! Shrutgyanam

કવિ દીપવિજયજી લિખિત મહાનિશીથ સૂત્ર પરિચય.

મહાનિશીથ સૂત્ર જૈન આગમો પૈકી એક વિશિષ્ટ સૂત્ર છે. એની ગણના છેદ સૂત્રોમાં થાય છે. નંદિસૂત્ર અને પાક્ષિકસૂત્રમાં આ સૂત્રનું નામ આવે છે. પણ આ સૂત્રની માન્યતાના સંબંધમાં કેટલાક ગચ્છોવાળાનો મોટો મતભેદ છે. તપાગચ્છ, ખરતરગચ્છ આદિ ગચ્છાનુયાયીઓ આ સૂત્રને, અન્ય સૂત્રોની માફક જ પૂર્ણ પ્રમાણભૂત ગણે છે ત્યારે અંચલગચ્છ વગેરે ગચ્છોવાળા એને પૂર્ણ પ્રમાણભૂત માનતા નથી. નંદિસૂત્રમાં આનો નિર્દેશ કરેલો હોવા છતાં, સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયવાળા એને સર્વથા માન્ય કરતા નથી. એ સંપ્રદાયને ન માનવાનું કારણ એ છે કે એમાં જિનચૈત્ય અને જિનપ્રતિમાની પૂજા વગેરે કરવા સંબંધે સ્પષ્ટ ઉલ્લેખો થએલા છે. માટે, મૂર્તિપૂજાને ન સ્વીકારનાર એ સંપ્રદાયને, આ સૂત્ર, નંદિસૂત્રમાં જેનો નિર્દેશ છે તે જ આ, અસલ સૂત્ર છે એ રીતે માન્ય નથી. એ સંપ્રદાયનું કહેવું છે કે મૂળ મહાનિશીથ સૂત્ર વ્યુચ્છિન્ન થઇ ગયું છે અને તેના ઠેકાણે ચૈત્યવાસિઓએ આ નવું સૂત્ર રચી કાઢયું છે. અંચળ-ગચ્છાદિવાળાઓ મૂર્તિપૂજક હોવાથી તેમને એ દૃષ્ટિએ તો એમાંની આ હકીકતમાં વાંધો લેવા જેવું નથી; પણ, યતિઓએ ગૃહસ્થોને ઉપધાન વગેરે કરાવવાની બાબતમાં એ ગચ્છવાળાઓનો મતવિરોધ છે, અને એ સૂત્રમાં એ ઉપધાનાદિનો પણ ઉલ્લેખ છે તેથી તેઓ એ દૃષ્ટિએ એને અસલરૂપે ન માનતાં પાછળથી કોઇ આચાર્યદ્વારા પરિવર્તિત થએલું માને છે. આમ આ સૂત્રની માન્યતાના સંબંધમાં ખાસ મતભેદો છે. વળી, આ મતભેદોને પુષ્ટિ આપે એવી કેટલીક ઐતિહાસિક ભાસતી પંક્તિઓ પણ આ સૂત્રની ઉપલબ્ધ સર્વ પ્રતિઓમાં મળી આવે છે જેથી ઐતિહાસિક દ્રષ્ટિએ પણ એની કૃતિના વિષયમાં કેટલીક વિરોધાત્મક વાતો નજરે પડે છે.

આમ છતાં, આ ગ્રંથ બહુ મહત્ત્વનો છે એમાં તો સંશય નથી. આમાં જે વિષયો વર્ણવ્યા છે તે વિશિષ્ટ પ્રકારના હોવાથી, તેમ જ કેટલીક અન્યત્ર અલભ્ય એવી વાતો આવતી હોવાથી, વિદ્વાનોની દૃષ્ટિએ એ એક અભ્યસનીય ગ્રંથ જેવો થઇ પડેલો છે. જર્મનીના વાલ્ટેર શુબ્રીંગ નામના એક સ્કૉલરે એ સૂત્રનો ખૂબ બારીકાઈથી અભ્યાસ કર્યો છે અને તેના પરિણામ રૂપે **'ડસ્ મહાનિસીહસુત્તમ'** એ નામે જર્મન ભાષામાં ઘણું મહત્ત્વનું પુસ્તક લખ્યું છે. જૈન સાધુઓમાં, આજે આ સૂત્રને સમજી શકે એવો કોઈ ભાગ્યે જ હશે. એ સૂત્રમાં શા શા વિષયો આવેલા છે એની પણ કોઇને ખબર નહિ હોય.

લગભગ એક સૈકા પહેલાં વડોદરામાં દીપવિજય નામના એક વિદ્વાન યતિ થઇ ગયા છે. તેઓ સારા કવિ અને પંડિત હતા. વડોદરાના રાજ્યમાં તેમને સારું માન મળતું હતું. ખંડેરાવ મહારાજાએ તેમને "કવિબહાદુર"નો ઇલ્કાબ આપ્યો હતો. સંસ્કૃત અને પ્રાકૃત ભાષાના બહુ સારા અભ્યાસી હતા. તેમને વડોદરાના જ્ઞાનરસિક શ્રાવક ગાંધી દુલ્લભદાસ ઝવેરચંદ, સા. ઝવેરચંદ દેવચંદ, સા. કહાનદાસ નરસીદાસ, નાથુ ગોવિંદજી વગેરે મળીને મહાનિશીથ સૂત્રના વિષયમાં કેટલાક પ્રશ્નો પૂછ્યા અને ટુંકમાં આ આખા સૂત્રમાં શા શા વિષયો આવેલા છે તે જાણવાની જિજ્ઞાસા બતાવી. આથી એ કવિરાજે સંવત્ ૧૮૯૦ની સાલમાં આ નીચે આપેલો એ આખા સૂત્રનો સંક્ષિપ્ત પરિચય લખી કાઢયો.

વડોદરાના જ્ઞાનભંડારમાંથી આ પરિચયની પ્રત મળી આવી હતી જે ઉપરથી તદ્વત્ નકલ ઉતારીને આ પરિચય અહિં આપવામાં આવ્યો છે. ભાષા, અને જોડણી વગેરેમાં પણ કોઇ જાતનો ફેરફાર કર્યા વગર અસલરૂપે જ એ અહિં છાપવામાં આવ્યો છે. આશા છે કે એ સૂત્રના વિષયમાં આ પરિચયમાંથી જિજ્ઞાસુઓને સારૂં જ્ઞાન મળશે.

Aho ! Shrutgyanam

असल परिचय.

શ્રીમન્નૃપતિ વિક્રમ સમયાત્ સંવત ૧૮૯૦, શાકે ૧૭૫૫ પ્રવર્તમાને શ્રી ગુજર્જર દેશ વડોદરા નગર સ્થાઇ, શ્રી તપાગચ્છીય શ્રીવિજયાનંદસૂરિ પક્ષે દીપવિજય કવિરાજ તેમને સુશ્રાવક, પુણ્યપ્રભાવક ગાંધી દુલ્લભદાસ ઝવેરચંદ, સા૦ ઝવેરચંદ દેવચંદ, સા૦ કાહાનદાસ નરસીદાસ, સા૦ નથુ ગોવિંદજી; તેમણે પૂછા કરી જે મહાનિશીથ સૂત્ર કેતલો મોટો ગ્રંથ છે, કેતલા અધ્યયન છે, અધ્યયન અધ્યયન દીઠ સ્યાસ્યા અધિકાર છે. ત૦ શ્રી જિન પ્રતિમાના પાઠ, દ્રવ્યસ્તવ ભાવસ્તવના પાઠ, ત૦ સંઘયાત્રાના પાઠ, દ્વાદશાંગી સૂત્રની આશાતનાના પાઠ તથા શ્રી જિનવચન ઉત્થાપીને મિશ્રભાષા બોલીને અનંતોકાલ રજલ્યા તે સાવદ્યાચાર્યની વાત કિહા અધ્યનમાં છે? એ વાત નાગિલ સુમતિ કુશીલીઆની સંગતે ઘણો કાળ ભમ્યા અને નાગિલે ભાવના ભાવતાં કેવલ જ્ઞાન ઉપજાવ્યું એ કિહા અધ્યયનમાં વાત છે? કામ–લોલુપી દુઃખીયા થયા, તથા નંદીષેણજીયેં વેશ્યાને ઘરે ધર્મલાભ દીધો, વેશ્યાયેં અર્થલાભ કહો. તથા વેશ્યાને ઘરે બારે વરસ રહ્યા. પાછા તર્યા. એ કિહા અધ્યયનમાં વાત છે? તથા પરંપરાગત ઇમ કહે છે જે મહાનિશીથ સૂત્ર સભા મધ્યે વંચાય નહીં તે કારણ સ્યા માટે છે? ઇત્યાદિ પ્રકારે અમારા મનમાં સંશય છે તે મહાનિશીથ સૂત્રને અનુસારે શ્રી જિન આગ્નયા પ્રમાણે જેતલું જાણવામેં આવે તે પ્રમાણે સંદેહ નિવારણ કરોઃ એહવું પ્રશ્ન સંઘ–શ્રાવકે પૂછયું. તેને ઉત્તર શ્રી મહાનિશીથ સૂત્રને અનુસારે કહે છે. પણ પૂછયા પ્રમાણે એ સંશયના ઉત્તર લખ્યા પ્રમાણે સાંભલીને જે કોઇ મનમાં કલ્પના આણસ્યે તે સાવદ્યાચાર્યની પરે ઘણો કાલ રજલસ્યે. માટે સાંભલીનેં એ સૂત્રની ત૦ પ્રતિમાની પ્રતીત રાખવી, શ્રદ્ધા રાખવી.

એ મહાનિશીથ સૂત્ર ગ્રંથ ૪૫૪૪ સાડાચાર હજાર ચોમાલીસ શ્લોક પ્રમાણે છે. અધ્યયન ૬ અને ચૂલીકા દોય છેઃ એવં ૮ છે. ચૌથા બારાવરસી મહાકાલમાં સૂત્રવિચ્છેદ જાતા જાણીને શ્રી વલ્લભીપુર મધ્યે શ્રી દેવર્દ્ધી ગણી ક્ષમાશ્રમણજીઇં સર્વસાધુ ભેલા કરીને મુંહેં સૂત્ર હતાં તે પુસ્તકે લિખ્યાં. લખતાં ૨ સંવત ૫૧૦ ની સાલ માહે શ્રી દેવર્દ્ધી ક્ષમાશ્રમણ પૂજ્યજી સ્વર્ગે ગયા. ત૦ સં. ૫૩૦ ની સાલમાં એક પૂર્વધર સત્યમિત્ર સૂરિજી યુગપ્રધાન સ્વર્ગે ગયા. પાછલથી શ્રી હરિભદ્રસૂરી, શ્રી સિદ્ધસેનસૂરી, વૃદ્ધવાદી, યક્ષસેણ, દેવગુપ્ત, યશવર્ધનગણિ ક્ષમાશ્રમણના શિષ્ય રવિગુપ્તજી, નેમીચંદ્રજી, જિનદાસ ગણી પ્રમુખ મહાપુરુષ ભેલા મલીને એ નિશીથ સૂત્ર પુસ્તક લખ્યું. લખતાં ૨ કેઈ પાઠ આલાવામાં ફેર દીઠા તે કેવલીને ભલાવી ગયા છે. તે ચઉથા અધ્યયનને છેહડે જોઈ લેવું. અને સં૦ ૫૮૫ શ્રી હરિભદ્રસૂરી સ્વર્ગે ગયા. એ પુરુષે વૃદ્ધને ત૦ કેવલીનેં ભલાવ્યું પણ માથે લીધી નહી. એહવા ભવના ભીરૂ. તેણે એ રીતે મહાનિશીથ સૂત્ર લખ્યું છે. અને આજ વર્તમાંન પ્રતિમાની દ્વેષી પ્રતિમાના ઉથાપક તે શ્રી મહાનિશીથમાં પ્રતિમાના પાઠ, સંઘતીર્થ યાત્રાના પાઠ દેખીનેં ઇમ બોલે છે જે મહાનિશીથ સૂત્ર મોટું રત્ન છે, પણ પાછલથી, જતી આચાર્યો

Aho ! Shrutgyanam

મલીનેં શ્રી જિનપ્રતિમાના પાઠ નવા ઘાલીને સૂત્ર ડોહળી નાખ્યું છે. એ રીતે પોતાના છીદ્ર ઉઘાડવાના મતલબ સારૂં મોટા પુરુષ ભવ ભીરૂનેં ચોર ઠેહેરાવે છે, બોલે છે. પણ સાવજ્જાચાર્યની પરે અનંતો કાલ રજલસ્યે. સાવજ્જાચાર્યે એવા વચન મિશ્ર ભાષાઇં બોલી ને તીર્થંકર ગોત્રના દલવાડા વિખેરીનેં અનંતો સંસાર વધાર્યો. તો જે કોઈ મોટાને ચોર ઠરાવીને એ સૂત્રને ઉથાપસ્યે તેહની સી વલી થાસ્યે. તથા વલી કોઇ ઇમ બોલે છે જે મહાનિશીથ સૂત્ર સભા સમક્ષ વંચાય નહીં ઇમ કહે છે. તેહનો ઉત્તર ઇમ જે નોકારના મંત્રાક્ષર છે તે પ્રગટ ન વાંચીયે ન બોલીયે. તે મંત્ર ન વાંચે એને અડકે નહી. તથા ચોથા આરાના સાધુની આવી મોટી આલોયણ છે. તે પાંચમા આરામાં થઇ શકે નહીં. એને પણ અડકે નહીં. તથા વલી બોલે છે જે માંહે અસમંજસ વાતો છે તેથી વંચાયે નહી. પણ એહવી વાત માંહે નથી. નિકેવલ સાવદ્ય આરંભ રહિત મુનિ માર્ગની વાત છે અને આજ વર્તમાનમાં મુનિમાર્ગ પાલી શકાય નહી તેવારે જિનપડિમાનો આધાર ગ્રહીનેં, અનંતો લાભ બહુ લાભ વર્ણવીને, બહુ પૂજા કરીનેં, સાવદ્ય વ્યાપાર આરંભ પોતે આદરી બેઠા. તે કહે છે દેહરા ઉપર ઊપરી રહેવું, તીર્થ ઊપર ઊપરી રેહેવું, પત્થરની ખાંણ કઢાવવી, પત્થર ફોડાવવા, ચૂના છોહની ભઠ્ઠી પકાવવી, ઇંટનો નીવાહ પકાવવો, કાચા પાણીયે છો ગાર કરાવવી, દેહરા ચણાવવાં, ધર્મશાલા ઉપાશ્રય બણાવવાં, જિનપૂજા, દેવદેવીનેં કારણેં ફલફૂલ ચુંટાવવાં, પ્રતિષ્ઠા અંજનસિલાકા દસ દિગપાલના ભૂત બલી રંધાવવા, પૂજા ભણાવવી, સંઘના આગેવાન થઇનેં સાજવું: ઇત્યાદિ સાવદ્ય આરંભ તે બહુ લાભ અનંત લાભ પોકારી ઘણી ઘણી પુષ્ટી કરીનેં આચાર્ય ઉપાધ્યાય સાધુ તેમણેં આરંભ વ્યાપાર અંગીકાર કરીલી०...... ....કરાવે, ધ્વજ કરાવે, ધ્વજ કલસ દંડ સહિત જિનપ્રાસાદ કારવે પણ મુનિ પણાનિ..........એહવી વાત... ....થમાં છે માટે સ.................તાની ઉઘડે અને આજીવીકામંદ થાયે માટે સભા સમક્ષ વાંચવાની ના કહે છે. તે સર્વે હકીગત ત્રીજા ચોથા પાંચમા છઠ્ઠા અધ્યયનમાં છે. મહાનિશીથસૂત્ર મોટો રત્ન છે. એ રત્ન છે પણ જિનપડિમાના દ્વેષીયેં પ્રતિમાના પાઠ માટેં ઉત્થાપ્યું માન્યું નહિ. અને માનનારા તેમણે પોતાની આજીવીકા ઘટે માટે સભાસમક્ષ વંચાયે નહીં એહનો ભરમ ઘાલીનેં વાંચ્યું નહીં. પણ સંઘ શ્રાવકે પૂચ્છયા પ્રમાણે જેહવી વાત એ સૂત્રમાં છે તે પ્રમાણેં લખ્યું છે. સાવજ્જાચાર્યની પરેં અમુક સંસાર વધારવો નથી.

પ્રથમ અધ્યયનનું નામ શલ્ય ઉદ્ધારણ. એ અધ્યયયના પાંના ૭ છે. સલ્યઉદ્ધરણનો અર્થ એ જે જિમ પગમાંહે કાંટો ભાગો તે તેહનું સાલ છે પણ આખા શરીરનેં વેદના કરે તિમ જીવે પાપ કર્યાં હોય તે શલ્ય મોટાની સાખે પ્રગટ કહીને નિંદીને આલોઈને ખમાવીને પાપ રૂપ સ્વ..................કાંટો કાઢીનેં નિરૂગ થઇ ને પરભવ સમારે તેહનું નામ શલ્ય ઉદ્ધરણ કહીયે. એ અધ્યયનમાં જીવનેં અઢાર પાપ બાંધવાના સ્થાનક કહ્યા છે. હવે પ્રથમ શલ્યઉદ્ધરણ થાવાનેં ઉજમાલ થઇને તિથી વાર નક્ષત્ર યોગ કરણ ચંદ્રબલ અઠ્ઠમનો તપ પારણું કરીનેં સર્વ શ્રમણસંઘ મુનિ-

Aho ! Shrutgyanam

રાજને વંદીને સર્વને ખમાવીને, છઠનો તપ, સર્વ મુનિ મંડલને, શ્રી વીતરાગનું દેહરું છે તિહાં પ્રતિમા આગલ જઇનેં સર્વ જિનબિંબને વાંદીને પછે શ્રુતદેવતાનું સમરણ ધારીનેં ક્ષરધારે બોલી....? શ્રુતદેવતાના મંત્રાક્ષરની છે. પછે અક્ષીણમાનશી લબ્ધિ મંત્રાક્ષરની ૧ બોલી છે. પછે વીરના મંત્રાક્ષર છે, તથા સર્વે તીર્થંકરના મંત્રાક્ષર છે. પછે શુદ્ધ સાધુના મંત્રાક્ષર છે. પછે શ્રુતજ્ઞાની અવધિજ્ઞાની મનપર્યવજ્ઞાનીના મંત્રાક્ષર છે. પછે પચીસ જાતના કેવલી ભગવંતને વાંદીને પછે આલોયણ લીયે. તે આલોયણના પાઠ આલાવા ઘણા છે તે પાનાથી જોઇ લેવું. ઇતિ સલ્યઉદ્ધરણ અધ્યયન સમાપ્ત. ૧.

બીજું કર્મવિપાક અધ્યયન પાના ૧૧ છે. એહ અધ્યયનમાં કર્મવિપાકની વાત છે. નિગોદિયા એકેદ્રીથી માંડીને દસ ભુવનપતિ, સોલ વ્યંતર, દસ જોતિષી, વિમાનીક છવીસ, પાંચ થાવર, ત્રિણ વિગલેંદ્રી, તીર્યંચ, મનુષ્ય આદિ ચોવીસ ડંડક, ચોરાસી લાખ જીવાજોનીમેં જીવે જે પાપ કર્યાં હોય તે સંભારીનેં આલોયે નિંદે ગરહે તે ઘણી વાત છે. અધ્યયનનેં છેહડે સામાયક પોસહવ્રતની વાત છે. તિહાં ગૌતમે પ્રશ્ન કર્યું જે–ભગવંત ! શ્રાવક જિનલિંગ આદરીનેં છાંડે તે આરાધક કે વિરાધક ? ઉત્તર–ગૌતમ ! શ્રાવક સંસારી સામાયિક પોસહમાં જિનલિંગ ધરીને બેઠો તે ૨ ઘડી ૪ પહેર ૮ પ્રહર ૧૬ પ્રહર જિનલિંગ તેણે દુવિધ ત્રિવિધ ભાંગે ઉચર્યું છે પણ ત્રિવિધ ત્રિવિધ ભાંગે ઉચર્યું નથી. માટેં તેહના વ્રતનો કાલ પૂરો થાયે તિવારેં પારીનેં ઘરે જાયે. એ આરાધક પણ વિરાધક નહીં. અને મુનિયે ત્રિવિધ ત્રિવિધ ભાંગે વ્રત ઉચર્યાં છે તે જિનલિંગ મુનિપણું આદરીને છાંડે તે વિરાધક કહીયે. ઇત્યાદિ કર્મવિપાકની વાત તો ઘણા પ્રકારની વરણવી છે. તે પાનાથી જોઇ લેવું. ઇતિ બીજું કર્મવિપાક અધ્યયન સ૦ ૨.

અથ ત્રીજું કુશીલ નામ અધ્યયન છે. પાંના ૧૬ છે. મોટું અધ્યયન છે. એ અધ્યયનમાં કુશીલીયાની વાત છે. નોકારના પંચપરમેષ્ઠી નવ પદની વાત છે. તેહમાં ઉપધાનાદિ દિનમાન તપક્રિયાની વાત છે. પંચપરમેષ્ઠીનું જુદું જુદું વર્ણવ બહુમાન ઘણું છે. પછે નોકારના કહેનારા વખાણ કરનારા અનંતા તીર્થંકર. તે તીર્થંકરનું ઘણું વર્ણવ છે. તીર્થંકરનેં દેવેંદ્ર નરેંદ્રે સ્તવના પૂજા કરીનેં દ્રવ્યસ્તવ ૧ ભાવસ્તવ ૨. વલી દ્રવ્યસ્તવ તે જલ ચંદન અક્ષત ધૂપ દીપ ફલ નૈવેદ્ય એ દ્રવ્યપૂજા ૧, અને ભાવસ્તવ તે ગુણગ્રામ અને મુનિરાજપણું ૨. દ્રવ્યપૂજા તે સમકિત વિરતાવિરતી ગુણઠાણું ૧, શ્રાવકની કરણી ૧. અને ભાવપૂજા તે છઠે સાતમેં ગુંણઠાંણે મુનિરાજ ૨. તીર્થંકર ભગવંત તે પૂર્વ ભવથી દશ બોલે ભાવસ્તવ મુનિપણું કેવલ જ્ઞાંન ખજાનો નિકાચીને અવતર્યા છે. તે પોસાપડિકમણાં નોકાર વ્રત પચખાંણ જિનપૂજા ઇત્યાદિ થોડી પૂંજી સામું જોતા નથી. એક ભાવસ્તવ મુનિરાજપણું કર્મક્ષયને અર્થે આદરે–તપ કરે એ વાત છે. સંસારી તીર્થંકર શુદ્ધ સમકીતી, પણ દેશવીરતી વિરતાવીરતી સર્વવિરતી એકેમાં નહીં; ઇછીએ કે કર્મને અર્થે ભાવસ્તવ મુનિપણું આદરે. દ્રવ્યસ્તવ જિનપૂજા આરંભિક છે, ભાવસ્તવપૂજા અનારંભિક છે, એ

Aho ! Shrutgyanam

વાત છે. મેરૂપર્વત જેવડુ સોનાનુ પ્રાસાદ કરાવે, પ્રતિમા ભરાવે, પગથિયાં ધ્વજકલસ દંડ ઘંટા વાજિત્ર તોરણ પ્રમુખ કરાવે, પણ ભાવસ્તવ મુનિરાજપણાને અનંતમે ભાગે નાવે એ વાત છે. વલી દ્રવ્યસ્તવ તે જિનપ્રતિમા પ્રાસાદ પ્રમુખ આરંભિક કામમાં, ભાવસ્તવ મુનિરાજ ઉભા ન રહે અને ઉભા રહે તો અનંત સંસારીક થાય એ વાત છે. ઇત્યાદિ પ્રકારે ઘણી વાત છે તે લેશમાત્ર લખી છે. એ અધ્યયનને ધુરે એ વાત છે જે મહાનિશીથ યોગ્યને ભણાવવો, એ ત્રીજા અધ્યયનમાં છે. એ અધ્યયનના યોગક્રિયાદિકમાં તપની વાત છે, સોલ જાતના કુશીલીયાની વાત છે. આગલ ઓગણત્રીસ જાતની અપ્રશસ્ય કુસીલીયાની વાત છે. વલી બીજા પ્રકારના કુસીલીયાની વાત છે. તથા આઠ પ્રકારે જ્ઞાન કુશીલીયાની વાત છે. નોકાર ઉપધાન વર્ણન છે. તેહમાં દયા વખાણી છે. અનુકંપાનું દયાનું વર્ણવ છે. પછે ગૌતમે નોકાર ઉપધાન વિધિ પૂછી. વીરે કહ્યું તિથી વાર નક્ષત્ર યોગકરણ ચંદ્રબલ મુહૂર્ત જોઇને જિન પ્રાસાદ પ્રતિમા આગલ ક્રીયા કરવી. પાંચ દિનમાં પાંચ પદનું અધ્યયન. ઉપર ચૂલીકાના ચ્યાર પદમાંથી બે બે પદનું અધ્યયન માટે ૨ અધ્યયન ચૂલીકાનાં. એવાં સાત અધ્યયન સાત દિનની ક્રીયા આંબીલ તપની વાત છે. આગલ નોકાર પંચ પરમેષ્ટીનું જુદું જુદું બહુ વર્ણન છે. પછે નોકાર વર્ણન કરનાર તીર્થંકર. તે તીર્થંકરનું પાંચ પાંના લગી વર્ણન છે. તીર્થંકરની દેવનરેંદ્રે પૂજા કરી. તેહના ૨ ભેદ. દ્રવ્યસ્તવ ૧, ભાવસ્તવ ૨. તેહમાં દ્રવ્યસ્તવ તે વિરતાવિરતી, શીલ, પૂજા, સત્કાર, દાન દેવાં, પ્રતિમાપૂજા ઇત્યાદિ ગૃહસ્થને દ્રવ્યપૂજા ભાવપૂજા બેહુ હોય ૧. અને ભાવપૂજા ભાવસ્તવ તે ચારિત્ર તપ જપ ક્રીયા સંજમ અનુષ્ઠાન કરવાં ૨ એ વાત છે. પછેં ગૌતમે વીરને પ્રશ્ન પૂછયો-મુનિઉસન્ન વિહારી સમભાવે કલ્યાણને અર્થે ચારિત્ર લીધાં પછે ઋદ્ધિગારવ-રસગારવે કરીને મહામોહ રાગ દ્વેષ વાળી બુદ્ધિઈ કરીને, ભાવપૂજા-મુનિપણું છાંડીને, નહીં શ્રાવકમાં નહીં સાધુમાં, ઉભય ભ્રષ્ટ, નામ માત્ર લિંગ ધારી, નેં ઇમ બોલે ઇમ કહે, જે અરિહંત ભગવાનની પ્રતિમાની જલ ચંદન અક્ષત ધૂપ દીપ ફલ નૈવેદ્ય પ્રમુખે પૂજા કરીને તીર્થ થાપીયે છીયે. એહવું જે બોલે તે, ગોયમા વણોણ (?) તહત્તિ શ્રમણ કહીઇ. તે અનંતો કાલ ભમસ્યે. એથી વિશેષ અધિકાર પાંચમેં અધ્યયને આવે છે. તે અધ્યયને સાવજ્જાચાર્યની કથા છે તે આગલ લખી છે. વળી પરૂપણા અતીસેં કરે જે જિનપૂજાના ઘણા લાભ છે, એહવી અતી પુષ્ટી કરીને ભદ્રક જીવ અને પોતે, વિવેક રહિત, ઘણા ફુલ ફળના આરંભ કરીને, બેહુ જણને, સમકિત બોધી દુર્લભ હોસ્યે. માટે દ્રવ્ય પૂજાથી ભાવપૂજા અધિક છે. ભાવપૂજાને અનંતમે ભાગે દ્રવ્યપૂજાનું ફલ છે. ભાવપૂજાથી દશાર્ણભદ્ર, ચક્રધર, ભાનુદત્ત, સસિદત્ત, પ્રમુખ અનંતા જીવ સંસારનો પાર પામીને મોક્ષે ગયા, એ વાત છે. આગલ સિદ્ધનું સુખ વર્ણવ્યું છે. ભીલનો તથા રાજાનો દષ્ટાંત વર્ણવ્યો છે. સિદ્ધના સુખ આગલ સંસારી સુખ અનંતમેં ભાગે નથી. પછે ગૌતમે પૃચ્છા કરી જે-દેવ તથા ઇંદ્રિ અવ્રતી ભક્તિયે પૂજા કરે છે? ઉ૦-હા ગૌતમ દેવઇંદ્રને દેશવીરતી વિરતાવીરતી સર્વવિરતીનો વિયોગ છે, માટે અવ્રતી. એ રીતે સંસારી તીર્થંકર તે પણ

Aho ! Shrutgyanam

व्रत पचखांण पोसा पडिकमणा नोकार जिनपूजा रहित, आदर्यो छे कठीन कर्मक्षय करवानें अर्थें भावपूजास्तव संजम चारित्र जेणे, ए वात छे. आगल ए महानिशीथ लखनारा महापुरूषनुं नाम छे. ते आगल, बीजा बार वरसी महादुकालमां पूर्वधर वयर स्वामी-ये नोकार उद्धरीनें मूल सूत्रमां लख्यो, ए वात छे. ते आगल, इरियावही, शक्रस्तव, नामस्तव, चैत्यवंदन प्रमुखनां उपधान वहेवां, तेहना तपदिनमांन, क्रीया विधिनी वात छे. ते आगल, वली, कुशीलीयाना बहु भेद वखाण्यां छे. घणी चर्चा छे. ते पानाथी जोइ लेवुं. एणी रीते त्रीजुं कुशील अध्ययन नामें जाणवुं. ३

चोथा अध्ययनमां नागिल सुमतिनी वात छे. नागिल सावक कुसीलनो संग वरजीनें आराधक थइनें तेही ज भवमां अणुसण करीनें श्रावकपणें हीज मुक्तिं गयो; बीजुं, सुमतिये, कुशीलीया पांच साधुना समुदायमां प्रव्रज्या लइनें मरीनें परमाधामी थयो. तिहांथी अंडगगोली थइनें बार मास वज्रना घरटमां पीलायो. तेवी तेवी २७ वार पीलाइनें, अनंतो संसारमां रजलीनें, पछे मुगते जासे. एम जाणीनें कुशीलनो संग न करवो. इति वात चोथा अध्ययनमां छे. तेथी जाणवुं. ४.

हवे पांचमुं अध्ययन गच्छाचारनुं छे, ते वरणवुं छुं. ते मध्ये गच्छ वरणव छे. सुद्ध आचार्य वरणव, मध्यम आचार्य वर्णव, शुभ ज्ञांन द्वादशांगी वरणव, द्वादशांगी आराधक वरणव, द्वादशांगी विराधक वरणव, श्रुतज्ञांन सूत्रनां वचन उथापीनें सावज्जाचार्य घणो काल रजल्या, ते वरणव. तीर्थयात्रा वरणव. देहरां प्रतिमा पूजी आराधक तथा विराधक वर्णवः इत्यादि वरणव छे. ए अध्ययनना १६ पाना छे. मोटुं अध्ययन छे. ते लेश मात्र लखीये छीये. प्रथम पाना ६ लगे गच्छ वर्णवना, आचार्यना पाठ आलावा छे. ते रत्न सरीखा छे. नवी नवी उपमा नवा नवा अर्थ छे. पाना वांच्ये सांभले घणुं जाणपणुं थाये. पांचमा आराना अंतलगी गच्छ नें, दुप्पसह सूरी आचार्य थासे ए वात छे. छेहला चतुर्विध संघ च्यारना नाम छे. तथा पांचमा आरानें अंते दुप्पसह सूरी लगे चार युग-प्रधान खायक समकित वंत थास्ये, ए वात छे. ए हुंडीनो करनार पं. दीपकविराजने शंका उत्पन्न थई जे शास्त्रोमां बे हजार ने चार युगप्रधान कह्या छे, अने श्री महानिशीथमां चार युगप्रधान कह्या छे. हवे पांचमा आरामां आचार्य शुद्ध तो घणा थास्ये, पण जे एकावतारी, तेहने युगप्रधान कहीए. अने बीजानें एकावतारीनो मेल नही. अने युगप्रधान पण च्यार क्षायकवंत छे. अने २००० क्षयो-पसम समकितवंत तेमने त्रीजे भवे क्षायक थास्ये. एतले श्री गौतमने केवल वेला क्षायक थयुं ते रीते, बे हजारने क्षायक भावे केवल थास्ये. ए परमार्थ जाणवो. आगल सय्यंभवसूरीजीइं, पुत्र मनकनें काजें, श्री दशवैकालिक सूत्र गुंथ्युं; ते पांचमा आराना अंत लगे रहेस्ये, ए वात छे. वली तीर्थ ते तिर्थंकर, वली तीर्थंकर ते चतुर्विध संघ, ते संघमां ज्ञान दर्शन चारित्र छे. ते रत्नत्रयी परमपूज्यनो पूज्य छे, ए वात छे. ते

Aho ! Shrutgyanam

આગલ, ચ્યારસેં નિવાણું ચેલા અને ગુરુ આચાર્ય–તે ૪૯૯ શિષ્ય ગુરુ આણા વિરાધકની કથા છે. તે લેશ માત્ર લખૈ છૈ–જે પાછલ ત્રેવીસમી ચૌવીસી ઉપર ચોવીસમા તીર્થંકરને મોક્ષે ગયા પછે ચરમશરીર આચાર્ય થયા. તેહને ૪૯૯ શિષ્ય હુંતા. એક દિવસે શિષ્યે કહ્યું, જે સ્વાંમિ તુંમારી આજ્ઞા હોય તો ચંદ્રપ્રભ સ્વાંમીનું જે ધર્મચક્ર તેની યાત્રા જઇયેં. આચાર્યે ના કહી, જે સ્વેચ્છાચારી પણેં યાત્રા જાતાં ન ઘટેં, ગુણવંત સાધુને સાથે યાત્રા જાવું. માટે તુમેં અમેં સાથે જાસ્યું. શિષ્યે પૂછયું યાત્રા જાતાં સ્યું થાયે ? ગુરુ કહે, અસંયમી થાયે. મોટો દોષ લાગે. ઘણા ટોલામાં, ઘણા લોકમાં, મુનિધર્મ પલે નહી. હરીકાય બીજ એકેંદ્રી બેઇંદ્રી પ્રમુખ પ્રાણભૂત જીવ હણાયે, ભંડ ઉપગરણ પડિલેહણનું પ્રમાણ રહે નહી, અનેં વિરાધક થાય. એ રીતે નિત્ય કથા કરતા શિષ્ય ૪૯૯ લડી પડયા. ગુરુનેં મુકીનેં સર્વ વિરાધક થઇનેં, સંયમ ભ્રષ્ટ થઇનેં, જાતા રહ્યા. પછે આચાર્ય એક દીવસ થંડિલે જાતાં સાહમો સીહ આવ્યો. તિણેં આચાર્યનેં હણ્યા. આચાર્ય અંતગડ કેવલી થઇનેં, મોક્ષે ગયા. એ કથા છે. ગચ્છ આચાર્ય ઉત્તમ મધ્યમની વાત છે. પછે, દ્વાદશાંગીનું વરણવ છે. તેહ માંહે પાઠ છે, જે देविंदवखाणं દેવેંદ્ર તે ઇંદ્ર તેહનેં વંદનીક તીર્થંકર, તેહનેં વંદનીક દ્વાદશાંગી શ્રુત જ્ઞાંન એટલે नमो सुअस्स नमो तित्थस्स એ ભાવ, તે આગલ, દસ અચ્છેરાની વાત છે. અનેં મિથ્યાદષ્ટી અંગાર મર્દકાચાર્યની વાત છે. તે આગલ, એક વચન મિશ્ર ભાષાઈ બોલીનેં, દ્વાદશાંગી વિરાધક થઇનેં, અનંતો કાલ રજલ્યા, તે સાવજ્જાચાર્યની પાંચ પાનાની મોટી કથા છે. તે લેશ માત્ર લિખે છૈ. ગૌતમ ! વર્તમાંન ઋષભની ચોવીસીથી પાછલ ગઇ અનંતમી ચઉવીસી, તેહમાં સાત અછેરા થયા. તેહમાં સાત હાથ પ્રમાંણે દેહમાંન ચોવીસમો તીર્થંકર મુજ સરીખો ધર્મશ્રી નામેં તીર્થંકર થયા. તે તીર્થંકર મોક્ષે ગયા પછે, કાલ દોષેં કરીનેં, મિથ્યાત્વ ઘણું પ્રવર્ત્યું. અને જિનમતિના આચાર્ય તથા સાધુ ઘણા શિથિલ થઇ ગયા. પોતે પોતાના ગચ્છવાસી થઇનેં, પોતાના પરાક્રમેં દ્રવ્ય મેલવીનેં, ગાડી ઘોડા રથ પાલખી રાખતા થયા. પોતાના દ્રવ્ય વડે પોતાપોતાના ગચ્છના દેહરા પ્રતિમા ઉપાશ્રા બાંધીનેં રહ્યા. પોતાપોતાના ગચ્છના શ્રાવક દષ્ટી રાગીયા થઇ ગયા. આચાર્ય જતી તે જલ ચંદન અક્ષત ધૂપ દીપ નૈવેદ્યાદિકે પોતે જ પૂજારા રૂપે જિનપડિમા પૂજવા લાગ્યા, અનેં વીતરાગના વચન વેગલા મુકયા. તે કહે છે, સર્વે પ્રાણી ભૂત જીવ સત્વ એકેંદ્રીથી પંચેંદ્રી લગે 'સંઘાઇયા સંઘટ્ટીયા ઉદ્દવીયા' પ્રમુખ પર્યાપ્તા અપર્યાપ્તા ત્રિવિધપણેં મનથી વચનથી કાયાથી વેગલા છે જેહનેં; તથા, મૈથુનાદિક સર્વ આરંભાદીકે કરીનેં સદા ભરેલા છે, એહવા લિંગધારી દેહરા પ્રતિમાના પોતે પૂજક થઇનેં કાલ નિગમન કરે છે. ઇહાં ગૌતમેં પ્રશ્ન કર્યું, જે ભગવંત ! સાધુ સાધવી તે દ્રવ્ય પૂજા કરે તેહનેં સ્યો લાભ ? વીર કહે, ગૌતમ ! સાધુ સાધવી મનિ દ્રવ્યસ્તવ જિનપૂજા કરે નહી. ઘટતી વાત નહી. અનેં કરેં તો, અન્ન દેવદ્રવ્ય ભક્ષક, ઉન્માર્ગના ચાલનારા, દુષ્ટાચારી, આણાવિરાધક, અનંત સંસારી કહીયે. એહવા લિંગીયા મઠ દેવલવાસી લિંગીયા થઈ ગયા છે. તે સમયમાં, ઘણા

Aho ! Shrutgyanam

આચાર્ય, મુનિ, ઉત્કૃષ્ટ ગુણના ધારક, રૂડા વ્રતના પાલનાર, શીલ સંતોષી, અત્યંત આસાતનાના ભીરૂ, સાવદ્ય ગોગના ત્યાગી, ઉપસમ સમતા રસના દરીયા, ગયા છે રાગ દ્વેષ મોહ મિથ્યાત્વ જેહના, રૂડા ચારીત્રના ગુણેં કરીનેં તીર્થંકર ગોત્રના દલવાડા મેલવ્યા છે જેણેં, એહવા કમલપ્રભાચાર્ય ગુણ-સમુદ્ર મુનીંદ્ર છે, નેં, ઘણા સાધુના સમુદાય સાથે વિહાર કરતા ગામ, નગર, ખેટ, કબડ, વણુસંડ, દ્રોણમુખ પ્રમુખનેં વિષેં અનેક જીવોને ઉપદેશ કરતા આવ્યા. તે લિંગધારીના ગામનેં વિષે ધર્મ ઉપદેશમાં, મુનિમારગ વખાણ્યો. મુનિરાજ હોય તો સાવદ્ય યોગના ત્યાગી, અનવદ્ય યોગના ભોગી, પાપથી ન્યારા, દેવ દેહરા પ્રતિમાની દ્રવ્યપૂજા સાવદ્ય પ્રવત્તિ આદરે નહીં. પોતે સાવદ્ય કરણ કરે નહીં. શ્રી જિન પ્રાસાદમાં રહે નહીં. હાથે સાવદ્ય આદરે નહીં. શ્રી જિનપડિમા પૂજે નહીં. દ્રવ્ય રાખે નહીં. ઈત્યાદિક મુનિ ધર્મ વખાણ્યો. શ્રાવકે સાંભલીનેં લિંગીયાને પૂછયું. લિંગીયે ઉત્સૂત્ર પ્રરૂપણા કરીનેં, સર્વ લોકનેં, થીર કરીને સર્વ લીંગીયા એકઠા થઇનેં, **સાવજ્જાચાર્ય** એહવો મોટા શબ્દે કરીનેં તાલોટા કુટીનેં કમલપ્રભાચાર્યનું નામ સાવજ્જાચાર્ય કર્યું. તે આચાર્ય ઝાંખા થયા. માંહોમાંહેં લિંગી ચર્ચા કરવા લાગ્યા. પોતાની પુષ્ટી કરવા માંડી જે મુનિ પ્રાસાદમાં રહે, પડયાં આખડયાં સમરાવે, તેહમાં મુનિનેં દોષ નહી. પ્રભુ ભક્તિમાં બહુ લાભ છે. વલી બીજો પુષ્ટી કરવાનેં બોલે જે દેહરા પ્રતિમાની સાર સંભાલ રાખે તેહને મોક્ષ નજીક છે. વલી ત્રીજો બોલ્યોઃ—

ગાથા

जहा णं पासायपडिमापूआसक्कारबलिविहाणाई ।
तित्थुच्छप्पणा चेव मोक्खगमणं जिणा बिंति ॥

અસ્યાર્થઃ પ્રાસાદ પ્રતિમા પૂજા સત્કાર બલિવિધાન તીર્થ થાપનાઃ એ સર્વે કામ મોક્ષ જવાના છે. એ રીતે પુષ્ટી કરીનેં સંઘલોકનેં થીર કરેં. અને કમલપ્રભાચાર્ય બીજું નામ સાવજ્જાચાર્ય, તે લોકના દંભ પાષંડથી ખસિઆંણા પડીનેં વિહાર કર્યો. મનમાં વિચાર કર્યો જે સભા પ્રમાણેં બોલતાં શ્રી જિનઆજ્ઞાભંગ થાય. વલી દ્વાદશાંગી શ્રુત જ્ઞાનની વિરાધક એહવી કલ્પના કરતાં વિહાર કર્યો. તે સાતે મહિને પાછા આવ્યા, ધર્મ ઉપદેશ દીયે, પણ લિંગીયાની શંકા મનમાં રહે. રખે જે વલી તાલોટા વગાડસ્યેં, એહવો ભય રાખેં. એહવે સમે કોઇક આર્યા સાધવી આવી. આ તે લિંગીયા સાધુ પ્રમાણેં લિંગી સાધવીનેં આચાર્યે દીઠી. લિંગીના સંકેતે વાંદવા આવી. સભા સમક્ષ વચ્ચે થઈને આચાર્યના પગ ફરસીને વંદના કરી. તિવારે લિંગી લોકે તથા સંઘ લોકે આચાર્યને પૂછયું, જે મહારાજ ! સાધવીજી પગે અટકીનેં વાંદ્યા એ સંઘટ્ટો થયો કે નહિ. તિવારે આચાર્યજી મિશ્ર ભાષાએં બોલ્યા, જે, થાય ને ન થાય. જિન સિદ્ધાંતમાં બે ભેદ છે. એક ઉત્સર્ગ ૧, બીજો અપવાદ ૨, માટે થાયે ન થાયે. એહવી મિશ્ર ભાષારૂપ ઉત્સૂત્ર બોલ્યા. તેથી તીર્થંકર ગોત્રના દલવાડાં વિખરી ગયાં, અનેં અનંતો સંસાર વધાર્યો, અને

Aho ! Shrutgyanam

લિંગીયા લોકે સાવજ્જા આચાર્ય કહીને તાલી વગાડી. એ સાવજ્જાચાર્ય એક વચન ઉથાપીને સાતસે વરસ, દોય માસ, ચ્યાર દિવસ જીવીને, મરણ પાંમી, વ્યંતરમાં ગયા. તિહાંથી વાસુદેવની પુત્રી, પુરોહિતની સ્ત્રી, તિર્યંચ, મનુષ્ય, સાતમી નરકે, ઇમ ચોરાસી લાખ જીવા જોનીમાં રજલીને, અનંતી ચોવીસી લગે, ચઉદ રાજમાં ભમીને, પછિમ મહા વિદેહમાં, મનુષ્યપણું પામ્યા. એક દિવસ તીર્થંકરને વાંદવા જાતો લોક દેખીને, સાથી જાઇને, ધર્મોપદેશ સાંભલ્યો, અને દીક્ષા લેઇ કેવલ જ્ઞાન પામીને મોક્ષે ગયા. ઇહાં જે સમે શ્રી પારસનાથ સ્વામિ વિચરતા હતા, તે સમે સાવજ્જાચાર્યનો જીવ પચ્છિમમહાવિદેહમાં મોક્ષે ગયો. ઈતિ સાવજ્જાચાર્ય ઉત્સૂત્ર-મિશ્ર-ભાષણ અનંત ચોવીસી ભવ ભ્રમણ સંબંધ.

પુનઃ શ્રી ગૌતમે પૂછ્યું, ભગવંત ! તે સાવજ્જાચાર્યે કિહે સમયે અનંતો સંસાર વધાર્યો ? ઉ૦–હે ગૌતમ ! તે સાધવીએ પગ ફરસ્યાને સંઘે સંઘટ્ટાનું પૂછ્યું અને પોતે બોલ્યા જે ઉત્સર્ગ ૧, અપવાદ ૨, બે માર્ગમાં આગમ છે. એહ વચન કહેતાં અનંતો સંસાર વધાર્યો. ગૌતમ બોલ્યા, ભગવંત ! ઉત્સર્ગ ૧. અપવાદ ૨. એહમાં આગમ કહ્યો એહનો શો અર્થ ? ઉ૦–હે ગૌતમ ! ઉત્સર્ગ ૧, અનેં અપવાદ ૨, એ તે, અનેકાંત ધર્મ. એકાંત પક્ષ નહીં, એ તો પ્રમાંણ છે. પણ અધર્મ કરીને આગમનું નામ કિમ કહીએ. તે સાંભલો, તેઉકાય અપકાય મૈથુન પ્રમુખ સેવ્યું એતલે આણાભંગી થયો. અને આણાભંગી એ અનંત સંસારી. ગૌતમે પૂછ્યું, ભગવંત! તો સાવજ્જાચાર્યે કિહાં મૈથુન સેવ્યું ? ઉ૦–હે ગૌતમ ! सेविया सेवियं णो सेविया असेवियं જે વેલાયે શંકા રાખીને બોલ્યા તે વેલાં મૈથુનનો દોષ લાગ્યો. સૂત્રનો આણાભંગી થયો અનંત સંસાર વધાર્યો. ભગવંત તીર્થંકર ગોત્રના દલવાડાં વિખરી ગયા. હે ગૌતમ ! પોતાના પ્રમાદ દોષે સર્વ કારણ નીપનું. અનંતોકાલ રાજલ્યા. એ રીતે જે કોઇ શ્રી જિનઆણા ભાંગસ્યે તે સાવજ્જાચાર્યની પરે ચૌદે રાજયમાં ભમસ્યે. ઇતિ મહાનિશીથે દ્વાદશાંગીશ્રુતજ્ઞાનસ્ય ણુવણીયસાર તાર પંચમ અધ્યાય સમત્તં. ૫.

છઠું અધ્યયન અગીહત્થ વ્યવહાર નામે પાના ૧૨ છે. એ અધ્યયનમાં વાત એ છે, જે, મુનિ તથા શ્રાવક વિષયલોલપી થઇને, શ્રી જિનઆણા ભાંગીને, ઘણો કાલ ભમ્યા તથા વિષયના લોલપી થઇને પાછે શુદ્ધ આલોયણ લેઇને, પ્રાયશ્ચિત્ત લેઇને, સદ્‌ગતિ પામ્યા, એ વાત, એ અધ્યનનમાં છે. પ્રથમ નંદીષેણજી દીક્ષા લેઈ વ્રત આદરીને, ગોચરીએ વેશ્યાને ઘરે ગયા. ધર્મલાભ કહ્યો. તદા વેશ્યાયે અર્થલાભ કહ્યો. સોનઈયાની વૃષ્ટી થઈ. વેશ્યાને ઘરે રહ્યા. સંયમ ભ્રષ્ટ થયા. નિત્ય દશદશ જણને પ્રતિબોધિને, શ્રી વીરજી પાસે મોકલીને, પછે ભોજન કરે છે, ને છેહલે દિવસે નવ પ્રતિબોધ્યા, દસમો સોની મલ્યો, પ્રતિબોધ ન પામ્યો, તે સમે વેશ્યા આકુલી થઈને બોલી, જે, ભોજન સીતલ થાય છે, દસમા તમો જ. એવું સાંભળીને, ઉઠી ઉભા થયા. ભોગ કર્મ પુરું થયું. ઓઘો મુહપતી લેઇને, મહાતપસ્યા કરી આત્માનિંદા કરી. તેહનું અર્ધું પાનું છે. એતલી ભાવના છે. ગુરુ પાસે આવી, આલોયણ લેઇ, કેવલ જ્ઞાન પામી, મોક્ષે ગયા છે, એ કથા

Aho ! Shrutgyanam

છે. તે આગલ, કોઈક આચાર્યનો શિષ્ય, આષાઢનામે, તેણે કૌતિક નિમિત્તે સંજમ વિરાધીને દુરગતિઈ ગયો, એ કથા છે. આગલ, પ્રાયશ્ચિત્ત કેવા પુરુષને દેવુ અને કેહેવા ગુણવાન પુરુષ પાસે આલોયણ લેવી, તે વાત છે. પ્રાયશ્ચિત્ત લેનાર ધીર વીર સુશીલ પુરુષ ક્ષમાવંત પુરુષ તે ઢુકડા તથા વેગલા કેવલી પાસે પ્રાયશ્ચિત્ત લેવું. તે ન હોય તો, મનપર્યવ અવધિ શ્રુત જ્ઞાની પાસે લેવું. તે ન હોય તો મતિજ્ઞાની મુનિ નિર્મલગુણવંત આચાર-વિચારશીલ ચારિત્રી તપસી પાસે લેવું, એ વાત છે. તથા શ્રાવક શ્રાવિકા પ્રાયશ્ચિત્ત લીઈ, તે શ્રાવક સદાચારશીલ સંતોષી નિર્મલ ગુણવંત આચાર વિચાર તથા સ્વદાર-સંતોષી પરદારત્યાગી ભાવચારિત્રી એહવા હોય તે પ્રાયશ્ચિત્ત લિયે, એ વાત છે. તે આગલ, પ્રાયશ્ચિત્ત લેનાર આરાધક ઉપરે, ભદ્રાચાર્ય પાંચસે મુનિ સહિત, અને બીજો રજ્જ નામે આચાર્ય, એ બેહુની મોટી કથા છે. રજ્જાચાર્ય મહારોગે પીડિત, તે બીજી સાધ્વી પોતાની આત્મનીંદા કરીને કેવલ જ્ઞાન ઉપજ્યું અને તે કેવલીયે મોટો ઉપદેશ દીધો, તે ઉપદેશમાં બહુ વાત છે. બીજી રજ્જા સાધવીની જે ઉંના પાંણીના દોષણ કાઢીયા, તેની વાત છે. તે આગલ, લખમણા રાજપુત્રી, ચોરીમાંથી જ રંડા થઈ, તેણે અવસરે દિક્ષા લીધી, મોટું સંયમ પાલ્યું, એક દિવસ ચકલાચકલીનો મૈથુન દેખીને મનમાં વિષય વાસના આંણી, તેની આલોયણ લીધી નહી. તે વિચારે જે મનુષ્ય ભવ પામીને જન્મરંડાપો થયો, વિષય સુખ દીઠાજ નહીં: એહવો વિચાર કરીને, પાછો જીવાત્માને વાલીને એહવો વિચાર કર્યો, તેહનો પાપ નિવારવાને મહાતપ આચર્યો સ્વચ્છંદથી સોલ માસ પાસ ખમણ અઠાઈ છંઠ અઠમ પ્રમુખ મહાતપ કર્યો. પણ ગુરુ આગલ કહીને આલોયણ લીધી નહીં, લાજને લીધે વાત કહી નહીં. આલોયણ લીધી નહીં [તેથી] પચાસ વરસનો મોટો તપ લેખે આવ્યો નહિં. સાલ સહિત મરણ પાંમીને ઘણો કાલ ભમ્યો. પાછલી ચોરાસીમી ચોવીસીના ચોવીસમા તીર્થંકરનાં વારે એ લખમણાં સાધવી થયાં. તે પદ્મનાભ તિર્થંકરને વારે મોક્ષે જાસ્યે. માટે સલ્ય ઉપર લખમણા સાધવીની કથા છે. તે આગલ, ગર્ભથી તે કેવલ પાંમે તિહાંલગે તીર્થંકરની વાત છે. તે તીર્થંકરે ઉપગારને અર્થે તીર્થ થાપ્યું. ઉપદેશમાં પ્રાયશ્ચિત્ત આલોયણ વરણવી, એ વાત છે. પુડરીક કુંડરીકની હકીગત વર્ણવી. એ વાત છે. ધરમ ઉપદેસની બહુ વાત છે, તે પાનાથી જોઇ લેવું. ઇતિ છઠું અધ્યયન સમાપ્ત. ૬.

પહેલી ચૂલીકાના પાનાં ૧૨ છે. એહમાં પ્રાયશ્ચિત્ત આલોયણ દસ જાતની વરણવી છે. પ્રાયશ્ચિત્ત લેનાર દેનાર પુરુષ વર્ણવ. પ્રાયશ્ચિત્ત લીધે નફો સ્યો થાય, એ વાત છે. પછે, જિનપ્રતિમા આગલ વિધી કરવો, એ વાત છે. પછે નામ ૧ ઠવણ ૨ દ્રવ્ય ૩ ભાવ ૪ એ ચાર આલોયણની કથા છે. આલોયણ વિના મરે એ વાત છે. આલોયણ લેનારને પાપ રહિત મુનિની વાત છે. ઇતિ પ્રથમ ચૂલિકા ૭.

બીજી ચૂલિકાના પાંના ૧૩ છે. એહમાં, આલોયણ, પ્રાયશ્ચિત્ત, આરાધક વિરાધકની વાત છે. પ્રથમ સુસઢ ચરિત્રની મોટી કથા છે. સુસઢ જિનઆણાવિરાધક થઈને સંસાર

Aho ! Shrutgyanam

ભમ્યા, વલી ગોવિંદ બ્રાહ્મણની સ્ત્રી તથા મંજનસિરીની કથા છે. કુલવાલુઆ નારિંદ શ્રમણી કથા છે. કુલવાલુયા નરિંદ શ્રમણી વિરાધક થઈ સંસાર ભમીને ૭-૮ ભવે સિદ્ધિ વરસ્યે, અનેં શિષ્ય સર્વે મોક્ષ ગયા. એ કથા છે. ઈત્યાદિ બહુ વાત છે તે પાનાથી જોઈ લેવું. ઇતિ દ્વિતીય ચૂલિકા સમાપ્તા.

ઇતિ શ્રી મહાનિશીથે ૬ અધ્યયન, ૨ ચૂલિકા-જુમલે ૮ નો લેશ અર્થ વર્ણવ્યો. જે પ્રમાંણે મહાનિશીથ સૂત્ર તે પ્રમાણેં એ હુંડી રૂપ હકીગત લિખી છે. પોતા પોતાના મતલબ નહી સરે અનેં એ સૂત્ર ઉપર દ્વેષ કરસ્યે તે તે સાવજ્જાચાર્યની પરે અનંત ચોવીસી લગેં અનંતો કાલ રજલસ્યેં. અમે તો જેહવું સૂત્ર માંહી દીઠું તે પ્રમાણેં લખ્યું છે. ઠાંણાંગ સૂત્રના અક્ષર ગોપવીનેં દ્વાદશાંગી જિનઆણાના વિરાધક થઈનેં સંસારમાં ભમવો નથી. પ્રત્યક્ષમાં રાજાની દુવાઇ ભાગે છે તે પ્રગટ બંધીખાનું ભોગવે છે, દુઃખ પામે છે, તો જે કોઈ જિનઆણા ભાંગસ્યે તે ભવોભવ વધ બંધન તાડન તર્જન મરણ અનંતો કાલ દુઃખ પાંમસ્યે. આરાધક સિદ્ધિ વરસ્યે.

ઇતિશ્રી તપાગચ્છ વિજયાનંદસૂરિપક્ષે દીપવિજય કવિરાજ ઉદ્ધરિત મહાનિશીથ સૂત્ર લેશમાત્ર ભાવાર્થ સંવત ૧૮૯૦ શાકે ૧૭૫૬ પ્રવર્તમાને, શિષ્ય હસ્તે, પૃચ્છાકારક શ્રાવક અર્થે, શ્રી ગુર્જરદેશમાં વડોદરા નગર મધ્યે એ ગ્રંથ રચ્યો છે, વાંચીને વાકમ થાસ્યૌ. ઇતિ મહાનિશીથના બોલ સમાપ્ત શુભં ભવતુ. ગ્રંથાગ્રં. ૩૦૦.

Aho ! Shrutgyanam

કડુઆ મતની પટ્ટાવલી

થરાદ, રાધનપુર, અમદાવાદ વગેરે સ્થાનોમાં કડુઆમતી શ્રાવકોનાં કેટલાંક ઘરો હજીયે વિદ્યમાન છે. એ કડુઆ મત તે શું અને તેના પ્રવર્તક તે કોણ; એની આજે ભાગ્યે જ કોઇને ખબર હશે. આ પટ્ટાવલી મળ્યા પહેલાં અમને તો તે બરાબર ન હતી જ. આ પટ્ટાવલી પરથી એ લુપ્તપ્રાય કડુઆ મતની કલ્પના આવે છે. આ પટ્ટાવલી કલકત્તા નિવાસી વિદ્વાન્ બાબૂ શ્રી પૂરણચંદજી નાહાર એમ. એ. એલ્, એલ્, બી.ના વિશાલ ગ્રંથ ભંડારમાંથી અમને મળી છે. અસલ કોઈ જૂની પ્રતિ ઉપરથી ઉક્ત બાબુજીએ પોતાની પ્રતિ લખાવી લીધી છે. લખનારે ભાષામાં કેટલોક ફેરફાર કરી દીધો હોય તેમ જણાય છે. કારણ કે મૂળ પટ્ટાવલી પ્રાચીન ગૂજરાતી કે રાજપૂતાની ભાષામાં હોવી જોઇએ. તેના ઠેકાણે લખનારે પોતાની અશુદ્ધ હિંદી એમાં મુકી દીધી છે. આ પટ્ટાવલી, જેમ એના છેવટે જણાવ્યું છે, સંવત્ ૧૬૮૪ માં બનાવેલી છે તેથી તે પછીની એ મતની પટ્ટાવલી મેળવવી બાકી રહે છે. ઇતિહાસ રસિક મુનિઓ કે શ્રાવકો જો આ વિષયમાં પ્રયત્ન કરશે તો તે ઉપયોગી થશે.

કડુઆ મત સા કડુઆએ ચલાવેલો છે, તે આ પટ્ટાવલીથી સ્પષ્ટ જણાય છે. કડુઆ મતના પ્રવર્તકોનું એવું કથન હતું કે હાલના કાળમાં શાસ્ત્રોક્ત નિર્ગ્રંથ આચાર પાળી શકાય તેવા સંયોગો નથી અને જેઓ પોતાને નિર્ગ્રંથ, મુનિ કે સાધુ તરીકે પૂજાવે–વંદાવે છે તે દોષના ભાગી છે. કારણ તેઓમાં એ યથાર્થ સાધુ ધર્મના ગુણો છે જ નહિ. આ કાળમાં સાધુ ધર્મનું પાલન અતિ દુષ્કર હોઈ તે વિચ્છિન્નપ્રાય છે માટે જેના મનમાં ત્યાગ ભાવના થતી હોય તેણે પોતાને "સંવરી" ના નામે ઓળખાવવું અને તેણે સંવરી તરીકે અમુક અમુક નિયમોનું પાલન કરવું, પણ સાધુ તરીકે ઓળખાવવું નહિ.

સા કડુઆના સમયમાં વેષધારી શિથિલાચારીઓનો બહુ પ્રચાર થઈ ગયો હતો અને તેઓ પોતે જે રીતે પોતાનું વર્તન ચલાવે છે તે બધું ભગવાન મહાવીરના શાસ્ત્રને સંમત જ છે એમ લોકોને સમજાવી પોતાની સ્વાર્થસાધના કરી રહ્યા હતા. એવા જમાનામાં સા કડુઆ, અને સા લુંકા જેવા કેટલાક ત્યાગ ભાવનાવાળા મુમુક્ષુ ગૃહસ્થો નીકળ્યા અને તેમણે પોતાના ધ્યેય પ્રમાણે પોતપોતાના નવા સંપ્રદાયો સ્થાપી સમાન વિચારવાળાઓની ચિત્તસમાધિ માટે નવાં સ્થાનકોની યોજના કરી, જૂના વાડામાં ફસાઇ રહેવાથી ટંકાળેલાઓને સ્થાનાંતર કરવાની સગવડ કરી આપી.

જેમ હમેશાં બને છે તેમ, રૂઢ સંપ્રદાયવાળાઓને આ નવા સંપ્રદાયો શત્રુભૂત લાગ્યા અને તેથી તેમણે એમના વિરુદ્ધ પોતાની હીલચાલ શરુ કરી. એ નવા સાંપ્રદાયિકોના વિચારો ઉપર ખંડનાત્મક પ્રહારો ચાલૂ થયા. મોટાં ટોળાઓ ભેગાં મળીને આ અલ્પસંખ્યક નવા હરીફોને સંઘ બહાર નાત બહાર વ્યવહાર બહાર વગેરે અનેક પ્રકારના બહિષ્કારોથી કસવા માંડયા. કેટલાક પ્રખર પંડિતોએ એમની ઉપર તીવ્ર આલોચનાત્મક વાગ્બાણોની વર્ષા ચલાવીને એમને નષ્ટચેતન બનાવવાના પ્રયત્નો કર્યા. એ બધા વિરોધો સામે ટકી રહેવા માટે આ નવા સંપ્રદાયોએ પણ પોતાની સાધન સામગ્રી પ્રમાણે બનતું કર્યું અને એમ કરતાં કરતાં કાળાન્તરે એ પણ જૂના વાડાઓ પાસે પોતાના વાડાઓ બાંધીને 'વાડાઓના સંઘમાં' દાખલ થઈ ગયા.

કડુઆ સાએ ચલાવેલા સંપ્રદાયની માન્યતાના ખંડનમાં તપાગચ્છના કટ્ટર પક્ષપાતી વાદી શ્રી ધર્મસાગરોપાધ્યાયે પોતાના **ઉત્સૂત્ર કંદ કુદ્દાલ ઊર્ફે પ્રવચન પરીક્ષા** નામના મોટા ગ્રંથમાં કેટલુંક લખ્યું છે અને દિગંબર, ખરતર, અંચલ, પાયચંદ વગેરે મતોની માફક જ આ મતને પણ **ઉત્સૂત્રભાષક** બતાવ્યો છે.

કડુઆ સાએ કેટલીક પ્રતિષ્ઠાઓ પણ કરેલી છે અને ગૂજરાતી ભાષામાં કેટલીક રચનાઓ પણ કરેલી છે.

Aho ! Shrutgyanam

कडुआ मतकी पट्टावली

(१) प्रथमतः सा कडुआ नांडोलाइ ग्रामे महं काहानजी भार्या बाइ कनकादे. संवत् १४९५ प्रसूतपुत्र नामतः महं कडुआ वैराग्यवान् आंचलीयाका श्रावक नियागी वेशधरका उपदेशसें वैराग्य हुवा। मातपिताकी आज्ञा न मीलनेसे वहांसे चलकर अमदावाद सं० १५१४में आव्या। रूपपुरमे आगमिआ गच्छका पन्यास हरिकीर्ति पासे शास्त्र पढे। और चैत्यवासीका आचरण जाण्या। दशमा अच्छेरा "संपय दसम अच्छेरए" इत्यादि षष्ठिशतक ग्रंथे, तथा "सेसा हुंडाव०" इत्यादि संवपट्टक ग्रंथे, श्रीमहानिशीथसूत्रमें श्रीवीरे भाष्या है कि मेरेसें १२०० वर्ष पीछे कुगुरुओ पेदा होगा। तब पन्यासे कह्युं कि तुम संवरी श्रावक हो। तबसे संवरी वैरागी बालब्रह्मचारी अकिंचनी अममत्व हो करके ग्रामोग्राम विचरने लगे। बहोत प्राणीओकों प्रबोधे। और इसमुजब प्ररूपणा प्रवृत्ति व्यवहार चलाया—मंदिरमें पाघडी उतारके देव वांदवा १. श्रावककी प्रतिष्ठा २. पुनमकी पाखी ३. पर्युषणा चोथकी ४. मुहपत्ति चरवलो धरणा ५. बहुधा सामायिक करना ६. पर्व शिवाय पोसह लेणा ७. द्विदल टालना ८. मालारोपण नहि ९. स्थापना प्रमाण १०. तीन थुई कहेवी ११. वासी कठोल तजवा १२. पोषध त्रिविहार चोविहार १३. पंचांगी सूत्रानुसार मान्य १४. सामायिक लेके इरियावही करना १५. वीर पंचकल्याणक मान्य १६. बीजुं वांदण बेठेहि देना १७. साधुकृत्यविचार १८. अधिक श्रावणे दुजे श्रावणे पजोसण तथा द्वितीयकार्तिके चोमासी १९. स्त्रीयां प्रभुपूजा करे २०. संप्रति दशमा अच्छेरा चलते है २१. इत्यादि बहोत बोल प्ररूप्या। शास्त्राक्षर मुजब सामायिक पडिक्कमण करणा, और संवरी गृहस्थका १०१ बोल प्ररूप्या। ते इत्थं—संयमार्थी संवरी गृहस्थके वेशमे रहकर दीक्षाका परिणाम रक्खे और इस मुजब वर्ते—नीची दृष्टिसे चले १. रात्रे विना पूंज्या न चले २. स्थंडिल सिवाय राते बहार न जाय ३. मार्गे चालतां बोलना नहि ४. सचित्त भोजन वर्जे ५. दो घडि दिन थके चोविहार ६. अजीठुं जुठुं न छांडे, अतिमात्राए न जिमे, जिमतां न बोले ७. द्विदल टाले ८. हाथसे किसी चीजको फेकना नही ९. किसी चीजको खेंचना नही १०. स्थंडिलकी शुद्धि करना ११. लघुशंका शुद्धि करना १२. मूत्र भाजन भरके न रखना १३. पुंजी प्रमार्जी परठना १४. कठोर भाषा न बोले १५. पूंज्या विना खूजली न खणे १६. पांच स्थावरकी जयणा १७. निवाणसे स्वयं जल नहि लेना १८. अणछाण्या जले वस्त्र प्रक्षालना नहि १९. स्वयं आरंभ न करे २०. वींजणे पवन न ढोले २१. स्वयं हरिकाय न छेदे २२. त्रस जीवको न दूभे २३. त्रीस जीवको न हणे २४. सर्वथा मृषा न बोले २५. अदत्त न लेवे २६. मानुषी ओर पशु स्त्रीका संघट्ट टाले २७. स्वयं परिग्रह न राखे २८. पीछली राते चार घडी पछी न सूवे २९. उघाडे मुखे न बोले ३०. राते प्रथम प्रहरे न सूवे ३१. कारण विना दिवसे

Aho ! Shrutgyanam

न सूवे ३२. नित्य एकासण व्रत ३३. नित्य गंठसहि पचक्खाण करे ३४. देववंदन उभयकालावश्यक पडिलेहणा करे ३५. नित्य चैत्यवंदन ५-७ करे ३६. नित्य १ गाथा अवश्य पडना ३७. नित्यप्रते ५०० गाथा भणना ३८. कुदर्शनीका संग न करणा ३९. नित्य सामायिक बहोत करणा ४०. नित्यप्रते एकहि विगय लेना ४१. नित्य पावसेर घृतसे ज्यादे न लेना ४२. पनर दिनमां अपवास दो करणा ४३. लोगस्स १० तथा १५ नो काउसग्ग करणो ४४. एकवर्षसे ज्यादे एक ठामे न रहेवुं ४५. अपने लीए घर ओर हाट न करणा ४६. वस्त्र धोना नहि, पांच पोतसे ज्यादे न रखना ४७. गदेला तलाइ ओशीका न रखणा ४८. पल्यंग मांचडा खाटले सुना बेठना नहि ४९. चाकला गद्दीपर नहि बेठना ५०. कलशीयो १ कटोरो १ से ज्यादे न रखणा ५१. दर्द हुवे पीछे त्रण दिन पीछेसे दवा करणा ५२. स्त्रीके साथे एकांत न करणा ५३. नववाडे सील पालना ५४. मास पर्यंत एक दिशा रखणा ५५. स्त्रीका एकांत संघट्ट टाले ५६. क्लेश कषाय न करे ५७. कषाय उत्पन्न हुवे तब विगय त्याग करे ५८. अभ्याख्यान न देणा ५९. परनिंदा न करे ६०. तेलादि सुगंध विलेपन न करे ६१. नित्य १३ द्रव्यसे ज्यादे न खाना ६२. पान सोपारी मुखवास न खाना ६३. बहुमूला वस्त्र न लेवे ६४. रेश्मी वस्त्र न लेवे ६५. तैलादि मसलके स्नान न करे ६६. स्वयं रसवती न पकाना ६७. हरिकाय न खाना ६८. चोमासेमें खजूर आदि न लेना ६९. स्त्रीयां सुनते हुवे रागताल न करणा ७०. जेवर नहि पह्नना ७१. दो पुरुषे एक सिज्जामें न सूना ७२. स्त्री सुवे वहां न सूना ७३. लुंकामतीना धान पाणी न खाना ७४. देवद्रव्य होवे उसके घरे न जिमे ७५. एकेली स्त्रीको न पढाना ७६. मंदिरकी भूमिइं न सूना ७७. संबंधीके लीए याचना नही करणा ७८. पारका द्रव्य उसकी मंजुरी सिवाय धर्ममे लगाना नही ७९. दो दिनसे ज्यादे एक घरे न खाना ८०. मिथ्यात्वी जो संवरी होवे तो उसके घरे तीन दिनसे ज्यादे न जिमे ८१. घेवर प्रमुख उत्कट आहार न करे ८२. सींघोडा सूका नीला न खाना ८३. डगला कुडता पहेरवेकी जयणा ८४. परका लडका न लडाना ८५. स्वजन सिवाय जिमे वहां न जिमना ८६. हलवाइकी मिठाइकी जयणा ८७. रात्रिका रांध्या हुवा भोजन न खाना ८८. गृहस्थके घरे बेठके वातां नहि करणा ८९. जुता नहि पहनना ९०. वाहन पर नहि बेठना ९१. मासमें एक दफे नख उतारावना ९२. कुलेर पकवानादि वासी न राखना ९३. मार्गमें स्त्री साथ वाता नहि करना ९४. पंचरंगी वस्त्र न पहेरना ९५. स्त्रीयोंका झुंडमे जाना नहि ९६. गानतान गाना सुनाना नहि ९७. लोकविरुद्ध न करना ९८. पारका घरे जातां खुंकारी करके जाना ९९. इत्यादि बोजा बोल बहोत जानना । तथा सीलपालवा संबंधी १०४ बोल सो अन्यत्रसे जानना । स्त्रीयोंको शील पालवा विषे ११३ बोल छे ते अन्यत्रसे जानना । कडुआ साहे बहोतको संवरी बनाया जैसा के—सा खीमा, सा तेजा, सा कर्मसी, सा राणा, सा कर्मण, सा शवसी, सा पुंजा, सा धीगा, सा वीरा, सा देपा, सा थिरपाल, सा धीरु, सा लींबा, सा सीधर, सा कबा, सा सवगण, सा लुणा, सा मांगजी, सा जसवंत, सा डाया, सा वेला, सा जीवा, पटेल हांसा पशाया, सा रामा, कर्णवधी इत्यादि बहोत साथे पाटण

Aho ! Shrutgyanam

राजनगर खंभात राधनपुर थराद जुनागढ प्रमुखे घणा संवरी थया, ते विस्तार वडी पट्टावलीथी जाणजो । सं० १५२४ थी ते सं० १५६४ लगे विचरी चरम चोमासो पाटण पधार्यो । तत्र सा खीमाने पद स्थापन कीया ओर अणसण २१ दिन पाली दिवंजगाम । दुसरा संवरीए अनशन कीधा । भस्मगृह उतरते सा कडुए धर्म दीपाव्यो। श्रीवीरसे ४७० वर्षे विक्रम अने विक्रमसे १५२४ कडुआ हुवा एवं सा कडुआ १९ वर्ष गृहस्थ पर्याय, १० सामान्य संवरी, ४० वर्ष पटोधर, सर्व आयु ६९. संवत १५६४ दिवंगतः ।

(२) तत्पदे सा खीमा—सो पाटणमे प्रागवाड (पोरवाड) वृद्ध शाखायां सा कर्मचंद भार्या कर्मादे पुत्र खीमा, १६ वर्ष गृहस्थ पर्याय, १४ वर्ष सामान्य संवरी, ७ वर्ष पटोधर पर्याय, सर्वायु वर्ष ४७ परिपाल्य, श्रीवीराने पद स्थापना कर, संव० १५७१ पाटणमे दिवंगतः ।

(३) तत्पदे सा. वीरा—सो नाडोलाइ ग्रामे वृद्ध शाखायां श्री श्रीमाली दोशी कुरपाल भार्या कोडमदे, पुत्र सा वीरा, सा कडुआना वचनथी संवरी थया, १४ वर्ष गृहस्थपर्याय, २५ वर्ष सामान्य संवरी, ३० वर्ष पटोधर, सर्वायु ६९ परिपाल्य, जीवराजने पद स्थापन करी दिन ७ अणसण पाली नंडोलाइ ग्रामे सं० १६०१ दिवंगतः ।

(४) तत्पट्टे सा० जीवराज—सो राजनगरे श्री श्रीमाली परीख जगपाल भार्या सोभीपुत्र सा जीवराज. श्रीवीरानां वचनथी संवरी, १२ वर्ष गृहस्थ पर्याय, ११ वर्ष सामान्य संवरी, ४३ वर्ष पटोधर, सर्वायु ६६ वर्ष । श्रीमाली दोसी रायचंद भार्या कनकाइ पुत्र तेजपाल श्रीजीवराजना वचनथी संवरी थया ते तेजपालने पाटे थापी राजनगरमां दिन ३ अणसण करी दिवंगतः ।

(५) सं० १६४४ में, सा तेजपाल—१३ वर्ष गृहस्थ पर्याय, २१ वर्ष सामान्य संवरी, पटोधर २ वर्ष, सर्वायु ३६ वर्ष । श्रीरत्नपालने पट्ट स्थापी पाटणमें संव० १६४६ दिवंगतः ।

(६) सा रत्नपाल स्थंभतीर्थे समीप कंसारीग्रामे दोसी वस्ता भार्या बाई रीडी पुत्र रत्नपाल. सा जीवराजना वचनथी संवरी थया. १० वर्ष गृहस्थ पर्याय, २१ वर्ष सामान्य संवरी, १५ वर्ष पटोधर सर्वायु ४६. श्री जिनदासने पाटे थापी खंभातमें सं. १६६१ दिवंगतः ।

(७) सा जिनदास स्थिरपद्रे श्रीश्रीमाली बहुरा जेसंग भार्या जमणादे पुत्र जिनदास. सा नरपति सामान्य संवरीना वचनथी संवरी थया. १७ वर्ष गृहस्थ, ३३ वर्ष सामान्य संवरी, ९ वर्ष पटोधर, सर्वायु ५९. अमदावादमे तेजपालने पाटे थापी सं० १६७० दिवंगतः ।

(८) सा तेजपाल थंभतीर्थे श्रीश्रीमाली सोनी वसुपाल भार्या कीकीपुत्र तेजपाल. श्रीजिनदासना वचनथी संवरी हुवा, सं. १६५५ में। १४ वर्ष गृहस्थ, १५ वर्ष सामान्य संवरी, सं० १६७१ पटोधरत्वं आगतं । सांप्रत सं० १६८४ लगे विराजमान अष्टमपदे उद्योतकारक सा कल्याणादि शिष्ययुतेन सुखेन पृथ्व्यां विहरति ।

Aho ! Shrutgyanam

(९) सा कल्याण, सो स्थंभतीर्थे दोसी हर्षा भार्या सहिजलदे सं० १६५२ जन्म, सा मावजीना वचनथी सं. १६६४ मां संवरी थया, सं० १६८३ लगे श्रीतेजपालकी साथे सुखे समाधे विचरते है।

आठपाटनां चतुर्मासा श्रावक प्रभाविक संघप्रतिष्ठा प्रवेशादि अनशन प्रमुख बहोत धर्मक्रियाका विचार हमेरी की हुइ वृद्ध गुरुपट्ट दीपिकासे जाननां ॥ इति कडुआ मति लघु पट्टावली सा० कल्याणेन कृता। सं० वेदवसुकला १६८४ संवत्सरे। यावच्चंद्रसूर्यौ तावत्काल कडुआ मतिनु संघ दीपो। इति कडुआ मतिना गच्छकी लघु पट्टावली।

श्री गौतमाय नमः ॥ १ प्रथम साहा कडुआ, २ तत्पदे सा श्री खीमा, ३ तत्पदे सा श्री वीरा, ४ तत्पदे सा श्री जीवराज, ५ तत्पदे सा श्री तेजपाल, ६ तत्पदे सा श्री रत्नपाल, ७ तत्पदे सा श्री जिनदास, ८ तत्पदे सा श्री तेजपाल—सांप्रतं अष्टमपटे विराजमान सा कल्याणादि शिष्ययुतेन श्रीसंघस्य शुभं भवतु इति ॥

उज्जयिनीना संघनुं विनंतीपत्र

આ નીચે આપેલું વિનંતીપત્ર ઉજ્જયિનીના સંઘ તરફથી તપાગચ્છના આચાર્ય શ્રીવિજયપ્રભસૂરિને મોકલવામાં આવ્યું હતું. આ વિનંતી ચાતુર્માસ એટલે પર્યુષણા પર્વ સંબંધી છે. આગળના વખતમાં દરેક ગામના સંઘો, પર્યુષણ વગેરે ચોમાસાના મુખ્ય પર્વો થઇ રહ્યાં પછી 'ખમતખામણા'ના પત્રો જેવાં વિનંતીપત્રો પોતપોતાના ગચ્છના નાયક આચાર્ય જે ઠેકાણે ચાતુર્માસ રહેલા હોય ત્યાં મોકલતા. એ વિનંતીપત્રો બહુ લાંબાં અને ખૂબ લખાણથી ભરેલાં થતાં. કેટલાકમાં તો અનેક પ્રકારનાં ચિત્રો પણ દોરવવામાં આવતાં. આગ્રાના સંઘે શ્રીવિજયસેનસૂરિને મોકલેલું વિનંતીપત્ર જે જૈન સાહિત્ય સંશોધકના પ્રથમ ખંડમાં પ્રકટ કરેલું છે તેનું ચિત્રકામ એક ઉત્કૃષ્ટ પ્રકારની ચિત્રકળાના નમુના જેવું છે અને ચિત્રવિદ્યામાં પ્રવીણ ગણાતા વિદ્વાનો તેની ખાસ પ્રશંસા કરે છે.* આ વિનંતીપત્રો કેવી વિવિધતાવાળાં લખાતાં હતાં તેનું વર્ણન અમે અમારા विज्ञप्तित्रिवेणी નામના પુસ્તકમાં સવિસ્તર કરેલું છે.

આ નીચે આપેલું વિનંતીપત્ર માત્ર સાદું જ છે અને તે ગૂજરાતીભાષામાં લખાએલું છે. આની ઉપયોગિતા એ છે કે એમાં મહોપાધ્યાય શ્રીવિનયવિજયજીનો ઉલ્લેખ છે. આ મહોપાધ્યાય શ્રીમદ્યશોવિજયજીના સમકાલીન હોઇ તેમના ગાઢમિત્ર હતા. લોકપ્રકાશ નામે જૈનપદાર્થના સર્વસંગ્રહ જેવો મહાન્ ગ્રંથ રચીને એમણે પોતાના પાંડિત્યને અમર બનાવ્યું છે. એમની જ રચેલી કલ્પસૂત્ર ઉપરની સુબોધિકા નામે ટીકાનું વાચન શ્રવણ પ્રાયઃ દરેક તપા-

* શ્રીયુત એન્. સી. મહેતા. આઇ. સી. એસ્. એમણે પોતાના Studies in Indian Painting નામના કિંમતી પુસ્તકમાં એ વિનંતીપત્ર વિષે વિદ્વત્તાભરેલું એક આખું પ્રકરણ લખ્યું છે.

Aho ! Shrutgyanam

ગચ્છીય સંઘમાં દરવર્ષે થાય છે. એ મહોપાધ્યાયના ચાતુર્માસ વખતે જ ઉજ્જયિનીના સંઘે આ પત્ર લખેલું છે. કમનસીબે આમાં સાલ આપેલી નથી તેથી આપણે એ જાણી શકવા નથી પામતા કે કયા વર્ષે શ્રીવિનયવિજયોપાધ્યાય એ નગરીમાં ચાતુર્માસ વિરાજમાન હતા, પણ ગચ્છનાયક તે વખતે વિજયપ્રભસૂરિ હતા તેથી અનુમાન કરી શકાય છે કે સંવત્ ૧૭૧૨ પછી અને ૧૭૩૫ ની વચ્ચેના કોઇ વર્ષે આ ચાતુર્માસ થએલું હતું. ગચ્છનાયક તે વખતે મારવાડમાં આવેલા વગડી ગામે ચોમાસું રહેલા હતા અને તે સમયે મારવાડ ઉપર જસવંતસિંહજીનું રાજ્ય ચાલતું હતું એ પણ આ પત્ર ઉપરથી જણાય છે.

વિનંતી પત્ર

स्वस्ति श्रीभवनं मनोज्ञवचनं त्रैलोक्यलोकावनं,
विद्यावल्लिवनं प्रहृष्टभुवनं सौभाग्यशोभावनं ।
क्लृप्तैनोलवनं शिवाध्वजवनं श्रेयोवनिजीवनं,
सद्धर्मैक[1]निकेतनं सुवदनं पार्श्वं स्तुवे पावनं ॥ १ ॥
स्वस्ति श्रीरमणस्तनोतु सततं प्रीतेः सतां संततिं,
श्रीमत्पार्श्वजिनेश्वरः कमलिनीनेतेव पंकेरुहां ।
भोक्केवायतचक्षुषां मधुरगीर्दातेव वित्तार्थिनां,
छायेवोत्तमभूरुहां पथि चरत् ग्रीष्मार्कतप्तांगिनां ॥२॥

સ્વસ્તિ શ્રી આદિજિનં પ્રણમ્ય, સ્વસ્તિશ્રી શાંતિજિનં પ્રણમ્ય, સ્વસ્તિશ્રી નેમિજિનં પ્રણમ્ય, સ્વસ્તિશ્રી મહાવીરજિનં પ્રણમ્ય; સકલ નગરશિરોમણિ નર સમુદ્ર વાપી કૂપ તડાગ વાડી વનખંડ આરામ સરોવર સુશોભિત શ્રી જિનપ્રાસાદ સુંદર શિખર કનકકલશ ધજ મનોહર ઉપાશ્રય સાધર્મિક જન સ્થાન નિત્યોત્સવ મંડિત વિવિધ વસ્તુ ક્રયાણક સંપૂર્ણ અનેક વ્યાપારી વ્યવહારી વિરાજમાન ચોરાસી ચતુષ્પથ સુશોભીત ન્યાયપ્રવીણ નરપતિ મહારાજાશ્રી **જસવંતસિંહજી** પ્રતિપાલિત શુભસન્નિવેશ **મરૂધરાસીમંતિની** તિલકાયમાન નગર ઉત્તમ શ્રીપૂજ્ય ચરણકમલ ન્યાસપવિત્રિતે શ્રી**વગડી** મહાનગરે શુભસ્થાને પૂજ્યારાધ્ય ઉત્તમોત્તમ પરમ પૂજ્ય અર્ચનીય ચરણ ચારિત્રપાત્રચૂડામણિ કુમતાંધકારનભોમણિ કલિકાલગૌતમાવતાર સરસ્વતીકંઠાભરણ અબોધજીવપ્રતિબોધક સકલશાસ્ત્રપારગામી વાદિવિજય લક્ષ્મીશરણ ચ્યારગતિના દુખના ટાલણહાર વાદીમદગંજન વાદીમુખભંજન વાદીકદલીકૃપાણ વાદીતમભાણ વાદીઘૂકભાસ્કર વાદીસમુદ્ર અગસ્તિ વાદીવૃક્ષઉનમેલનહસ્તિ વાદીસુરઇંદ વાદીગરૂડગોવિંદ વાદીહરિણહરિ વાદીજ્વરધનવંતરિ વાદીયૂથમલ્લ વાદીહૃદયશલ્ય વાદીગોધૂમઘરટ્ટ મર્દીતવાદીમરટ્ટ ઇત્યા અનેક વાદ સરસ્વતીલબ્ધ પ્રસાદ. એકવિધ અસંયમના ટાલણહાર, દ્વિવિધધર્મપરૂપક, ત્રણિ તત્ત્વના જાણ, ચ્યાર ગતિના દુખના ટાલણહાર, પંચમહાવ્રતના પાલણહાર, છકાયના પીહર, સાતભયનિવારક, અષ્ટમદચૂરક, નવવાડિ વિશુદ્ધ બ્રહ્મચર્યધારક, દસવિધસાધુધર્મઆરાધક, એગ્યાર અંગના જાણ, બાર ઉપાંગના પાઠક, તેર કાઠિઆના જીપક, ચઉદ વિદ્યાનિધાન,

१. पापाब्देपवनं गृशानिभुवनं–પાઠાંતર.

પનરભેદ સિદ્ધના જાણ, સોલકલાસંપૂર્ણ સસિવદન, સત્તરભેદ સંયમના આરાધક, અઢારસહસસીલાંગરથના ધારક, ઓગણીસ કાઉસગના દોષનિવારક, વીસવીસી દયાના પાલક, એકવીસ શ્રાવકના ગુણના પ્રરૂપક, બાવીસ પરીસહાના જીપક, ત્રેવીસ સુગડાંગ અધ્યયનના જાણ, ચોવીસ તીર્થંકરની આજ્ઞાના આરાધક, પંચવીસ કિરિઆના નિવારક, છવ્વીસ દસા કલ્પ વ્યવહાર ઉદ્દેસણ કાલના જાણ, સત્તાવીસ સાધુગુણે કરી વિરાજમાન, અઠાવીસલબ્ધિ વિરાજમાન, ઓગણત્રીસ પાપશ્રુત પ્રસંગનિવારક, ત્રીસ મોહણીથાનક નિવારક, એકત્રીસ સિદ્ધના ગુણના દેષાડણહાર, બત્રીસ યોગસંગ્રહધારક, તેત્રીસ આશાતના ગુરૂની તેહના નિવારક, ચોત્રીસ તીર્થંકરના અતિશયના ઉપદેશક, પાંત્રીસ વાણીગુણેં કરી સુશોભિત, છત્રીસ સૂરિગુણેં કરી વિરાજમાન, શ્રી કુંથુનાથનિં સાત્રીસ ગણધરના પ્રરૂપક, શ્રીપાર્શ્વનાથનિં અડત્રીસ હજાર સાધવીના પ્રરૂપક, મનુષ્યક્ષેત્ર માંહિ ઓગણચાલીસ કુલપર્વતના પ્રરૂપક, શ્રીમેરૂપર્વતની ચૂલિકા ચ્યાલીસ જોયણ ઉન્નત તેહના પ્રરૂપક, શ્રીનમિનાથનિં એકતાલીસ હજાર સાધવીના પ્રરૂપક, શ્રીમહાવીરઈ બઈતાલીસ વરસ સાધુપણું પાલું તેહના ઉપદેશક, ત્રઈતાલીસ કર્મવિપાક અધ્યયનનાં જાણ, ધરણેંદ્રનિં ચઉઆલીસ લાખભુવનના પ્રરૂપક, શ્રીધર્મનાથ પઈતાલીસ ધનુષ ઉન્નત તેહના પ્રરૂપક, દષ્ટિવાદનાં છઇતાલીસ માત્રિકાપદ તેહના જ્ઞાપક, શ્રીઅગ્નિભૂતિ ગણધરનિ સડતાલીસ વરસ ગૃહસ્થ પર્યાયના જાણ, અડતાલીસ હજાર પાટણના સ્વામી શ્રીચક્રવર્ત્તિ તેહનિ પૂજ્યનીક, ત્રઇંદ્રીનૂં ઉત્કૃષ્ટું ઓગણપચાસ દિવસનૂં આઉષુ તેહના પ્રરૂપક, શ્રીમુનિસુવ્રતસ્વામિનિં પંચાસ ધનુષનૂં શરીરમાન તેહના પ્રરૂપક, સુપ્રભનામિ બલદેવ તેહનૂં એકાવન્નલાષ વરસનૂં આઉષુ તેહના જાણ, મોહનીકર્મના બાવન નામ તેહના જાણ, સમૂર્છિમ ઊરપરિસર્પનૂં ૫૩ હજાર વરસનૂં ઉત્કષ્ટું આઉષુ તેહના જાણ, શ્રીનેમિનાથના ચઉપ્પન દિવસ છદ્મસ્થ પર્યાયના જાણ, શ્રીમહાવીરદેવઈ પંચાવન અધ્યયન કલ્યાણફલવિપાકીઆં છેલિ રાત્રે પ્રરૂપ્યાં તેહના જાણ, જંબૂદ્વીપનિં વિષઈ છપ્પન નક્ષત્રના જાણ, મલ્લિનાથનિં સત્તાવન મનપર્યાય જ્ઞાનીના જાણ, પહિલિ બીજી પાંચમી ત્રણિ પૃથિવી મલિનિં અઠાવન લાખ નરકાવાસાના જાણ, શ્રીમલ્લિનાથનિં ઓગણસઠિસઈ અવધિજ્ઞાનીના જાણ, એક અહોરાત્રિનિ સાઠિ ઘડી તેહના જાણ, મેરૂપર્વતનૂ પહિલૂ કાંડ એકસઠિહજાર જોયણ ઉન્નત તેહના જાણ, એકયુગનિ વિષેં બાસઠિ પૂનિમ તેહના જાણ, શ્રી ઋષભદેવ પ્રભુઇ ત્રિસઠિલાષ પૂર્વ વરસ રાજ્ય પાલૂ તેહના જ્ઞાપક, ચમરેંદ્રનેં ચોસઠિ હજાર સામાનિક દેવતાના જાણ, જંબૂદ્વીપનિં વિષઇ પાસઠિ સૂર્યમાંડલીના જાણ, શ્રેયાંસનાથનિં છાસઠિં ગણધરના જાણ, એક યુગનિં વિષેં સડસઠિં નક્ષત્રમાસના જાણ, ધાતકીખંડનિં વિષેં અડસઠિ રાજધાનીના જાણ, મનુષ્યક્ષેત્રનિં વિષેં મેરૂવિના ઓગણોત્તર વર્ષધર પર્વતના જાણ, શ્રીપાર્શ્વનાથેં સિત્તરિ વરસ સાધુપર્યાય પાલો તેહના જાણ, વીર્યપ્રવાદપૂર્વના એકોત્તરિ પાહુડાના જાણ, બોહોત્તરિ કલા પુરૂષની તેહના જાણ, વિજય બલદેવનૂં ત્રહોત્તરિ લાષ વરસનૂં આઉષું તેહના જાણ, અગ્નિભૂત ગણધરનૂં ચઊત્તેર વરસનૂં આઉષું તેહના જાણ, શ્રીશાંતિનાથ પંચોત્તરિ હજાર વરસ ગૃહસ્થપણાઈ રહ્યા તેહના જાણ, છહોત્તરિલાષ વિદ્યુત્કુમારના ભુવનના જાણ, એક મૂહુર્ત્તના સત્તોતરિ લવના જાણ, અકંપિત ગણધર અઠોત્તરિ વરસનૂં આયુષું પાલ્યું તેહના જાણ, જંબૂદ્વીપના એક દ્વારથી બીજા દ્વારનૂં ઓગણાસી હજાર જોયણનૂં આંતરુ તેહના જાણ, અચલ બલદેવ અસી ધનુષ ઉન્નત તેહના જાણ, કુંથુનાથનિં એકાસી સત મનપર્યાય જ્ઞાનીના જાણ, શ્રીમહાવીરદેવ બ્યાસી અહોરાત્ર દેવાનંદા બ્રાહ્મણીનિં કુંખઇ વસ્યા તેહના જાણ, શ્રીશીતલનાથના ત્રાસી ગણધરના જાણ, શ્રીઋષભદેવનૂં ચોરાસીલાખપૂર્વનું આઉષું તેહના જાણ, ધાતકીખંડના મેરુપર્વત પંચ્યાસી હજાર જોયણ ઉન્નત તેહના જાણ, શ્રીસુવિધિનાથનિં છાસી ગણધરના જાણ, મેરુપર્વતથી ગોસ્તુપઆવાસપર્વત સત્યાસી હજાર જોયણ આતરું હોઈ તેહના જાણ, એક ચંદ્રમાનિં અઠાસીગ્રહનો પરિવાર તેહનાં જાણ,

Aho ! Shrutgyanam

શ્રીઋષભદેવ ત્રીજા આરાના નવ્યાસી પષવાડા થાકતેં મુગતિ પધાર્યાં તેહના જાણ, શ્રીશીતલનાથ નેઉ ધનુષ ઉન્નત તેહના જાણ, કુંથુનાથનિં એકાણું અવધિજ્ઞાનીના જાણ, શ્રીગૌતમસ્વામિનૂં બાણું વરસ આઉષું તેહના જાણ, શ્રીચંદ્રપ્રભસ્વામિના ત્ર્યાણું ગણધર તેહના જાણ, શ્રીઅજીતનાથના ચોરાણું શત અવધિજ્ઞાનીના જાણ, લવણસમુદ્રના બેહુપાસેં પંચાણું પંચાણું હજાર જોયણ અતિક્રમિનિ મહાપાતાલ કલશ છે તેહના જાણ, છનુ કોડી ગામના સ્વામી ચક્રવર્ત્તિ તેહનેં પૂજ્યનીક, હરિષેણ ચક્રવર્ત્તિ સત્તાણુસઇ વરસ ગૃહસ્થાવાસેં રહી દીક્ષા લીધી તેહના જાણ, નંદનવનથી પંડકવન અઠાણું હજાર જોયણનું આંતરું તેહના જાણ, મેરુપર્વત નવાણું હજાર જોયણ ઉન્નત તેહના જાણ, જંબૂદ્દ્વીપ સો હજાર જોયણ આયામખિક્કંભ તેહના જાણ, એકોત્તરિઆના કુલદીપક કુલમંડન કુલઉદ્યોતકારક, જાઇસંપન્ને કુલસંપન્ને બલસંપન્ને રૂપસંપન્ને દંસણસંપન્ને ચરિત્તસંપન્ને લજ્જાલાઘવસંપન્ને ઓયંસિ તેયંસિ વચ્ચંસિ જસંસિ, જીયકોહે જીયમાણે જીયમાએ જીયલોહે જીઇંદિએ જીયપરીસહે જીવિઆસમરણભયવિપ્પમુક્કે, સમુદ્રનિંપરિં ગંભીર મેરૂની પરિ ધીર, ભારંડ પંખીનિંપરિં અપ્રમત્ત, સૂર્યનિં પરિં પ્રતાપવંત, ચંદ્રમાનિં પરિ સૌમ્ય, સીહનિં પરિ સૂરવીર, પરદેશપંચાયણ, વાચા અવિચલ, ગંગાજલપરિ નિર્મ્મલ, મહિમા સમુદ્ર, મહાસોભાગી, મહાવઇરાગી, મહાગુણરાગી, મહાત્યાગી, મહાજ્ઞાની, મહાધ્યાની, મહાદાની, મહાતપસ્વી, મહાયશસ્વી, મહાવચસ્વી, ધન્યતે દેશ ધન્ય તે ગામ ધન્યતે નગર જિહાં શ્રીપૂજ્યજી વિહાર કરિં, ધન્ય તે રાજા ધન્ય તે પ્રજા ધન્ય તે માડંબિ કોડંબિ સેઠ સેનાપતિ ઇભ્ય વ્યવહારિઆ, ધન્ય તે શ્રાવક ધન્ય તી શ્રાવિકા જે પ્રાતઃકાલે શ્રીપૂજ્યજીના ચરણકમલ વાંદે, અનિ શ્રીપૂજ્યજીનિ અમૃતમય દેસના સાંભલેં, શ્રીપૂજ્યજીનઈ મુહડઇ પોસહ–સામાયિક વ્રતપચ્ચખાણ કરેં સંસારસમુદ્ર તરેં પુણ્યલક્ષ્મી વરેં પુણ્યભંડાર ભરેં મનુષાવતાર સફલ કરેં, શ્રીપૂજ્યજીના ગુણ અનંત મેં એકે જીભેં કિમ વર્ણવ્યા જાઇ.

દૂહા

ગયણંગણ કાગલ કરૂં, લેખણ કરૂં વનરાય,
સાયર ધોલિ મસિ કરૂં, તુમ્હ ગુણ લિખ્યા ન જાય. ૧
અમ હીયડૂં દાડિમ કલી, ભરિઓ તુમ્હ ગુણેણ;
અવગુણ એક ન સંભરઈ, વિસારા જે સેણ. ૨
કિહાં કોઇલ કિહાં અંબવન, કિહા મોરા કિહાં મેહ,
વિસારા નવિ વિસરેં, ગીરૂઆ તણા સનેહ. ૩
સમય સમય નિત સાંભરેં, માસ માંહિ સો વાર,
તે સુહગુરૂ કિમ વીસરેં, જસ ગુણનો નહીં પાર. ૪
દોય નારિ અતિ સાંમલી, પાણિમાંહિ વસંત,
તે તુમ્હ દરિસણ દેખવા, અલજો અતિહિ કરંત. ૫
મન પસરિ જિમ માહરું, તિમ જો કર પસરંત,
ચરણ ગ્રહી સરણેં રહી, અમૃતવાણિ સુણિંત. ૬
चित्तं तुह पासत्थं तुह गुणसुणणेण सवणसंतोसो,
जीहा नामग्गहणे एकागी दिट्ठि तडप्फडई। ७
यथा स्मरति गोवच्छं चक्रवाकी दिवाकरं,
सती स्मरति भर्तारं तथाहं तव दर्शनं। ८

भरमज्झंमि जे वसे आगलि कन्न ठविज्ज ।
ए दोइं अक्षर जोडि करि अह्म ऊपरिं चिंतिज्ज. ९

ઇત્યાદિક શ્રીપૂજ્યજીના ગુણ કિમ વર્ણવ્યા જાઈ. यतः—

यदि त्रिलोकी गणनापरा स्यात्
तस्याः समाप्तिर्यदि नायुषः स्यात् ।
पारे परार्द्धं गणितं यदि स्यात्
भवद्गुणानां गणना तदा स्यात् ॥ १०

ઇત્યાદિ સર્વ ઉપમાયોગ્ય ભટ્ટારક શ્રીશ્રીશ્રીશ્રીશ્રી **વિજયપ્રભસૂરીસર** ચરણાનકમલાન્ શ્રી **ઉજેણિ નગરાત્** સદા આદેશકારી ચરણસેવક દાસાનુદાસ પાવરજરેણુ સમાન, સેવક સં. **જયતસિંહ** પ્રમુખ સમસ્તસંઘકેન ત્રિકાલવંદના અવધારવી. યત ઇહિાં શ્રીપૂજ્યજીનિં પ્રસાદઈ કરી ધર્મકાર્ય સુખદ પ્રવર્ત્તઈ છિ. શ્રીપૂજ્યજીના સુખસંયમ નિરાબાધપણાના લેખ પ્રાસાદ કરી સેવકનિં સંતોષ ઉપજાવવો. તથા શ્રી પૂજ્યજીનઈ આદેશઇ ઉપાધ્યાય શ્રી**વિનયવિજયગણિ** ઇહાં ચોમાસું પધાર્યા. શ્રી ઉપાધ્યાયજી ઘણું બહુશ્રુત ઘણું સંવેગી ઘણું ગુણવંત કિરિઆપાત્ર જેહવા શ્રીપૂજ્યજીના ગીતાર્થ જોઇઈ તેહવા છે. અનિં શ્રીઉપાધ્યાયજીનો સંઘાડાપતિ પં. **ઋદ્ધિવિજય** પ્રમુખ સર્વ યતી ઘણું સંવેગી કિરિઆપાત્ર ભલા સાધ છે. તે દેખી સંઘનેં ઘણી શાંતી ઉપની છે. સંઘ ઘણું અનુમોદન કરે છે. શ્રી ઉપાધ્યાયજી ઇહાં પધારતાં ઘણાં શ્રાવકશ્રાવિકાના બોધિબીજ નિર્મ્મલાં થયાં છે. શ્રીઉપાધ્યાયજીની દેશનાં સાંભલીનિં ઘણેં શ્રાવકે વ્રત-પચ્ચક્ખાણ સંવર કીધા છે. અનિ ઘણા શ્રાવક નિત્ય પ્રતિ દેશના સાંભલિં છિ તથા પર્યુસણપર્વ મહા-મોહોત્સવપૂર્વક નિર્વિઘ્નપણેં થયાં છિ. આ સમય માંહિં પણિ માછી કસાબ ધોબી સોનાર લુહાર ઘાંચી મોચિ ભાડભુંજા પ્રમુખ સર્વ જીવની અમારી પલી છે. તથા નવ વખાણ પજૂસણના મહામોહોત્સવ મહા આડંબર પૂર્વક પણેં સુખશાંતિ થયાં છિ. પાસ ખમણ અઠાઇ અઠમ છઠ પ્રમૂખ વિશેષ તપ થયાં છિ તથા સાહમીવત્સલ પારણાં પ્રભાવના પ્રમુખ વિશેષ ઉત્સવ થયા છે. સંવત્સરી દાન પણિ વીશેષથી દેવાણાં છે. બીજાં પણિ ઉપધાન માલારોપણિ વ્રતઉચ્ચાર પ્રમુખ ધર્મકાર્ય થયાં તથા થાઈ છે. પાખીપાખીઇ પોસહતિનેં તે બોલ દેવાઇ છે. તથા ઉપાધ્યાય શ્રી વિનયવિજયગ. પં. **ઋદ્ધિ**વિજય ગ. પં. **મ**તિવિજય ગ. પં. **મા**નવિજય. પં. **હ**ર્ષવિજય, ઋ. **ભા**ણજી. મુ. **ભા**ણવિજય, મુ. **કે**સરવિજય, મુ. પુણ્યવિજય; સાધ્વી **સહજશ્રી** પ્રમુખ સમસ્ત સંઘાડાની વંદના અવધારવી. પંડિત શ્રી **હે**મવિજય ગ., પંડિત શ્રી **વિ**મલવિજય, પંડિત શ્રીઉદયવિજય, પં. **સ**ત્યવિજય, ગ. **પ્ર**તાપવિજય પ્રમુખ સર્વ શ્રીપૂજ્યજીના પરિ-વારનિં સંઘની વંદના અવધરાવવી. તથા શ્રીઉપાધ્યાયજી વખાણમાંહિં શ્રીપૂજ્યજીના ગુણ ઘણા વર્ણઈ છે તેણે કરી અત્રના સંઘનિં શ્રીપૂજ્યજીના ચરણકમલ ભેટવાની ઘણી ઉત્કંઠા ઉપની છે. તે માટિં શ્રી પૂજ્યજીઇ ઊજેણિના સંઘ ઊપરિ કૃપા અવધારીનિ શ્રી **મગસીપાર્શ્વનાથ** જુહારવા સારુ પધારવું. **માલવો** દેશ પાવન કરવો. જિમ શ્રીપૂજ્યજીનેં વાંદવાનાં મનોરથ સફલ થાઇ. શ્રીપૂજ્યજી મેઘની પરિં ઉપગારી છો. તે માટે કૃપા કરીનિ ઇહાં અવશ્ય પધારવું. જિમ સંઘના મનોરથ સફલ થાઈ તિમ અવ-ધારવુંજી. સેવક સરીષાં કાર્ય કામ પ્રસાદ કરવાં. તીર્થયાત્રાઇ સેવકનિં સંભારવા.

Aho ! Shrutgyanam

અધ્યાપક હર્મન યાકોબી લિખિત

समराइच्च कहानी प्रस्तावना

[અનુવાદક-શ્રીયુત ચીમનલાલ જેચંદ શાહા. બી. એ.]

કલકત્તાની એશિયાટિક સોસાયટી ઑફ બેંગાલ તરફથી, આચાર્યવર્ય શ્રીહરિભદ્રસૂરિ-રચિત समराइच्च कहा નામની સુપ્રસિદ્ધ જૈનકથા જર્મનીના પ્રખ્યાત પ્રો. ડૉ. હર્મન યાકોબીના હાથે સંપાદિત થઈને થોડા જ સમય ઉપર સંપૂર્ણરૂપે પ્રકટ થઈ છે. એ કથાની પ્રસ્તાવના તરીકે ગ્રંથના પ્રારંભમાં ઉક્ત અધ્યાપકે લગભગ ૩૦ પાના જેટલી 'ઈન્ટ્રોડક્શન' લખી છે જેમાં—૧ હરિભદ્રનો સમય, ૨ હરિભદ્રનું જીવન, ૩ હરિભદ્રની કૃતિઓ, અને ૪ સમરાઇચ્ચકહાઃ આ ૪ મુદ્દાઓ ઉપર એમણે ઉપયોગી ઉહાપોહ કર્યો છે. એમાંના પ્રથમના ત્રણ મુદ્દાઓ ઉપરના લખાણનું આ સંપૂર્ણ ભાષાંતર છે.

હરિભદ્રસૂરિના સમયનિર્ણયના વિષયમાં ડૉ. યાકોબીનો ખાસ સ્વતંત્ર અને દૃઢ ભિન્ન મત હતો. એ ભિન્ન મતના સંબંધમાં એમની સાથે શ્રીયુત મોતીચંદ ગિરધર કાપડીઆ વગેરે વિદ્વાનોએ ખૂબ ચર્ચા પણ ચલાવેલી હતી પરંતુ તેથી એમને સંતોષ થયો ન હતો અને એ પોતાના મતને દૃઢ રીતે વળગી રહ્યા હતા. પરંતુ ૧૯૧૯ માં પૂના ખાતે ભરાએલી ભારતની 'પ્રથમ પ્રાચ્યવિદ્યાવિદ્વત્પરિષદ્' આગળ 'हरिभद्राचार्यस्य समयनिर्णयः' એ વિષેનો જે સંસ્કૃત નિબંધ અમે વાંચ્યો હતો અને એ નિબંધમાં હરિભદ્ર સૂરિનો જે સમય અમે નિશ્ચિત કર્યો હતો, તે વાંચીને એ સમર્થ સત્યસંશોધક વિદ્વાને પોતાનો પૂર્વમત ઝટ લઈને બદલી નાંખ્યો અને અમારા કરેલા નિર્ણયને સર્વથા સહમત થઈ તેનો સાદર સ્વીકાર કર્યો. એમના એ સ્વીકારનો સ્પષ્ટ ઉલ્લેખ આ નીચે આપેલી પ્રસ્તાવનાના પ્રારંભમાં જ વાંચકોને મળી આવશે. યુરોપના એક મહાન્ અભ્યાસી અને બહુશ્રુત વિદ્વાન્‌ને જ્યારે આ રીતે સત્ય જણાઈ આવે છે ત્યારે તે તુરત પોતાના મતને તદનુકૂળ બનાવી લેવાની અને પોતાની ભૂલને સુધારી લેવાની કેટલી કાળજી રાખે છે તેનો આ એક ઉદાહરણભૂત દાખલો છે. જ્યારે આપણા દેશના લેભાગુ પંડિતંમન્યો, કશું સમજ્યા વગર, સમજવાની જરાએ ઇચ્છા રાખ્યા વગર, પકડયું 'તે પકડયું' કરીને પોતાના નિર્માલ્ય મતને પણ આખર સુધી જોવા–તપાસવાની દરકાર કરતા નથી. હરિભદ્રસૂરિ યથાર્થ જ કહે છે કે—

आग्रही बत निनीषति युक्तिं यत्र तत्र मतिरस्य निविष्टा ।
पक्षपातरहितस्य तु युक्तिर्यत्र तत्र मतिरेति निवेशम् ॥

*સંપાદક.

* હરિભદ્રસૂરિના સંબંધમાં એક જૂનામાં જૂનો પ્રાકૃત પ્રબંધ જે ભદ્રેશ્વરસૂરિના કથાવલી નામના ગ્રંથમાં આવેલો છે તે અને બીજી પણ કેટલીક નવી વિગતો આ પછીના અંકમાં આપવાનો અમારો વિચાર છે.—સંપાદક.

Aho ! Shrutgyanam

૧. હરિભદ્રનો સમય.

સમરાઇચ્ચકહાના કર્તા હરિભદ્ર જૈન પરંપરા પ્રમાણે વિક્રમ સંવત ૫૮૫ માં અથવા વીર સંવત ૧૦૫૫ માં એટલે ઈ. સ. ૫૨૯ માં [૧]કાળ પામ્યા. આવી જૈન માન્યતા ઇ. સ. ના ૧૩ માં સૈકાની શરૂઆતથી નજરે પડે છે. છતાં આ તારીખ ખોટી ઠરાવવામાં આવી હતી;[૨] કારણ કે ઇ. સ. ૬૫૦ માં થએલા ધર્મકીર્તિના તાત્ત્વિક વિચારોથી હરિભદ્ર પરિચિત હતા. એ વખતે નીચેની બાબત ઉપરથી ચર્ચા ઉભી થઇ હતી. સિદ્ધર્ષિ કે જેણે ઉપમિતિભવપ્રપંચા કથા ઇ. સ. ૯૦૬ ના મે માસની ૧ લી તારીખે પૂર્ણ કરેલી તે ગ્રંથની પ્રશસ્તિમાં હરિભદ્રને "धर्मबोधकरो गुरुः" એમ સંબોધે છે. હવે સવાલ એ ઉદ્‌ભવ્યો કે હરિભદ્ર સિદ્ધર્ષિના સાક્ષાત્ ધર્મગુરુ હતા કે परंपरा गुरु હતા. આ બાબતમાં મેં જે અભિપ્રાય બાંધ્યો હતો તે ભૂલભરેલો હતો.[૩] આ અરસામાં જૈનોએ હરિભદ્રના સંખ્યાબંધ ગ્રંથો પ્રકાશિત કર્યા, અને એ દ્વારા કેટલીક ઉપયોગી બાબત બહાર આવી.[૪] પણ જે પુરાવાએ હરિભદ્રની તારીખ છેવટે નક્કી કરી આપી તે પુરાવો, એમના ગ્રંથોએ નહિ, પરંતુ ઉદ્યોતનના કુવલયમાલા નામના પ્રાકૃત ગ્રંથે પુરો પાડેલો. આ ગ્રંથ શક સંવત્ ૭૦૦ ના છેલ્લા દિવસે[૫] એટલે ઇ. સ. ૭૭૯ ના માર્ચની ૨૧ મી તારીખે પુરો કરવામાં આવ્યો હતો. આ ગ્રંથની પ્રશસ્તિમાં ઉદ્યોતન હરિભદ્રને પોતાના દર્શનશાસ્ત્રના ગુરુ તરીકે જણાવે છે, અને ઘણા ગ્રંથોના કર્તા તરીકે વર્ણવે છે; આ બીજી બાબત ઉપરથી એ તો

---

૧ હરિભદ્રકૃત લઘુ ક્ષેત્રસમાસવૃત્તિની જેસલમેર ખાતેની એક પુરાણી હસ્તલિખિત પ્રતના અંતે, એ ગ્રંથ પૂર્ણ કર્યાની મિતિ વિષે બે કડીઓ આવેલી છે. તેમાં એ 'વિક્રમ ૫૭૫, જ્યેષ્ઠ સુદી ૫, શુક્રવાર, પુષ્ય નક્ષત્ર' હોવાનું જણાવેલું છે; આ મિતિ ઇ. સ. ૫૨૮ની ૯મી મેને મંગળવાર અથવા તો ઇ. સ. ૫૨૯ ની ૨૮મી એપ્રીલને વાર શનિ સાથે મળતી આવે છે. પહેલા દાખલામાં પુષ્ય નક્ષત્ર ચાલતું હતું અને બીજામાં પુનર્વસુ ચાલતું હતું. બન્ને દાખલાઓમાં વાર ખોટો નીકળતો હોવાથી એ મિતિ બનાવટી છે એમ માનવું જોઇએ. નક્ષત્રનું પ્રમાણ ઓછી વજુદવાળું લેખાય, કારણ ચાંદ્રવર્ષના પ્રત્યેક દિને સામાન્યતઃ કેવળ ત્રણ નક્ષત્રોમાંનું એક ચાલતું હોય છે અને એ પહેલીથી પણ નક્કી કરી લેવાય છે.

૨ उपमितिभवप्रपंचकथानी મારી આવૃત્તિ જુઓ (બીબ્લીઓથિકા ઇન્ડીકા) પ્રસ્તાવના પૃ. ૮

૩ જુઓ એ જ ગ્રંથની પ્રસ્તાવના પાનું ૫.

૪ હરિભદ્રના ગ્રંથો, તેના ટીકાકારો અને તે ટીકાકારોના સમય વિષેની તમામ વિગતોની પૂર્ણ માહિતી માટે જુઓ મુનિ કલ્યાણવિજય સંપાદિત હરિભદ્રની ધર્મ સંગ્રહિણીની આવૃત્તિમાંનો ग्रंथकारपरिचय (દેવચંદ લાલભાઇનું જૈનપુસ્તકોદ્ધાર ક્રમાંક ૪૨; મુંબઇ. ૧૯૧૮)

૫ चोद्दसीए चित्तस्स किण्हपक्खम्मि અર્થાત્ ચૈત્ર વદી ૧૪. આ મિતિ પંચાંગના દૃષ્ટિબિંદુથી રસ પડે એવી છે. ચૈત્રાદિ વર્ષ હમેશાં ચૈત્રના શુકલ પક્ષથી શરૂ થાય છે. એથી કરીને ઉક્ત મિતિ પૂર્ણિમાન્त યોજના જેમાં કૃષ્ણપક્ષ શુકલપક્ષની પૂર્વે આવે છે, તેને અનુસરીને નોંધાયલી જણાશે. પરંતુ કિલહોર્ને (ઇન્ડીઅન એન્ટીકવરી. ૧૮૯૬ પૃ. ૨૭૧ અને તે પછી) લેખપત્રોમાંની મિતિઓ ઉપરથી બતાવ્યું છે તે પ્રમાણે શક વર્ષોના સંબંધમાં લગભગ હમેશાં અમાન્ત મહીનાઓનો પ્રયોગ થાય છે. તેથી કરીને ઉક્ત મિતિનો પ્રથમ દશાને જણાતો અર્થ અત્યંત શંકાસ્પદ બને છે. એમ છતાં, ચર્ચાતા વર્ષમાં નિજ માસની પૂર્વે આવતો અધિક ચૈત્ર હતો એથી કરીને આ દાખલામાં બનવું જોઇએ તે પ્રમાણે જો વર્ષ નિજ ચૈત્રથી શરૂ થયું હોય તો અધિક ચૈત્ર વદી ૧૪ એ વીતી ગયેલા વર્ષનો છેલ્લાની પહેલો દિવસ હોવો જોઇએ. કારણ ખરા ચૈત્રનો આરંભ કરતો પડવાનો ચંદ્ર મેષ સંક્રાન્તિની લગોલગ પૂર્વે હતો. એટલા માટે હું માનું છું કે સ્વામી કન્નુપિલ્લાઇ જે એમ કહે છે કે (અધિક ચૈત્ર હોય ત્યારે વર્ષ તેનાથી માંડીને ગણાય છે) એ કેવળ આધુનિક રિવાજને જ લાગુ પડે છે.

Aho ! Shrutgyanam

નિઃસંદેહ જેવું છે કે આમાં એ મહાન્ હરિભદ્રનો જ ઉલ્લેખ કર્યો છે.[૬] આ ફકરો તેમ જ એમાં રહેલી સમયને લગતી બાબત જો કોઇ પ્રથમ બરાબર સમજ્યા હોય તો તે મુનિરાજ શ્રીજિનવિજય છે. તેમણે ૧૯૧૯ ના નવેંબરમાં, પૂનામાં ભરાએલી પ્રથમ ઓરિયન્ટલ કોન્ફરન્સમાં વાંચેલા અને જૈન સાહિત્ય સંશોધક ગ્રંથમાલા, પૂના, એમાં "श्री हरिभद्राचार्यस्य समयनिर्णय" એ મથાળા હેઠળ છપાયેલા, "હરિભદ્રનો સમય" એ નામના પોતાના લેખમાં આ આખો પ્રશ્ન સારીપેઠે ચર્ચ્યો છે, પુરાવા તપાસ્યા છે, અને તદ્દન સ્પષ્ટ રીતે પોતાની બાબત રજુ કરી છે. નીચેની હકીકત, ઘણું કરીને, એમના એ નિબંધને આધારે જ આપેલી છે.

જ્યારે ઉદ્યોતને પોતાનો ગ્રંથ લખ્યો ત્યારે હરિભદ્ર જીવતા હતા કે નહિ તે આપણે એના કહેવા ઉપરથી કળી શકતા નથી, પરંતુ એટલું તો ખરૂં કે એની પહેલાં વીશ કે ત્રીશ વર્ષ ઉપર તો એઓ ઉદ્યોતનના ગુરૂ હશે જ. આ ઉપરથી આપણે એ સમય, અગર ઇ. સ. ૭૫૦ કે તે પછીનો સમય એમના સાક્ષરજીવન તરીકે લઇ શકીએ; અને સંખ્યાબંધ પ્રકરણો જે એમણે તૈયાર કર્યા તે ઉપરથી આ સમય ઓછામાં ઓછો વીશ કરતાં વધારે વર્ષનો જરૂર મૂકી શકીએ. પોતાના ગ્રંથોમાં એ ઘણા બ્રાહ્મણ, બૌદ્ધ તથા જૈન ગ્રંથકારોનો ઉલ્લેખ કરે છે. જિનવિજયજીએ એમાંના ત્રીસ નામોની એક યાદી તારવી કાઢી છે એમાંથી દિગ્નાગ, ધર્મકીર્તિ, ભર્તૃહરી (વાક્યપદીયના કર્તા, આશરે ઇ. સ. ૬૫૦) અને કુમારિલને આપણે કાળક્રમની દ્રષ્ટિએ મહત્ત્વના ગણી શકીએ. હરિભદ્ર પોતાના નન્દીસૂત્રના વિવરણમાં, જિનદાસ ગણિ મહત્તરનું નામ આપ્યા સિવાય તેમની કરેલી એ સૂત્રની ચૂર્ણિમાંથી કેટલાક ભાગોનો ઉતારો કરે છે. એ ચૂર્ણિ શક વર્ષ ૫૯૮ માં એટલે ઇ. સ. ૬૭૭ માં તૈયાર થઈ હતી. વળી સિદ્ધસેન દિવાકર કે જેમનો ઉલ્લેખ હરિભદ્ર કરે છે તે પણ લગભગ આજ અરસામાં થએલા હતા. કારણ કે, જો કે તેઓ ધર્મકીર્તિનું નામ સ્પષ્ટ રીતે નથી આપતા; પરંતુ એના વિચારોનો તેઓ ઉપયોગ કરે છે.[૭] આ ઉપરથી આપણે જોઇ શકીએ છીએ કે હરિભદ્રે પોતાથી આગલી સદીમાં થએલા કેટલાએ પ્રસિદ્ધ વિદ્વાનોનો

---

૬ છંદ દર્શાવે છે એમ હરિભદ્રના ઉલ્લેખવાળો ફકરો ભ્રષ્ટ પાઠવાળો છે. ડેક્કન કોલેજની હસ્તપ્રત જેના સિવાય અન્ય કોઇ પ્રત પ્રાપ્ય હોય એમ જણાતું નથી તેમાં એ આમ છેઃ सो सिद्धंतगुरु पमाणनाएण जस्स हरिभद्दो । बहुग्गंथसत्थवित्थरपयडसच्चत्था ॥ મુનિરાજ જિનવિજયે આ પાઠ સંતોષકારક રીતે સુધાર્યો છે અને ખુટતા અક્ષરો નીચે મુજબ પૂર્યા છેઃ सो सिद्धन्तम्मि गुरूः प्रमाणनाए य जस्स हारिभद्दो । बहुगन्थसत्थवित्थरपयडसमत्तसुयसच्चत्थो ॥ પ્રથમ પાદ, ઉદ્યોતનના ગુરુ વીરભદ્રની પ્રસંસા કરતી આગલી કડી સાથે સંબંધ ધરાવે છે; અને આની પછીની કડીમાં તેના પિતાનું નામ વટેશ્વર હોવાનું જણાવેલું છે. વટેશ્વર ક્ષત્રિયજાતિનો હતો અને ક્ષમાશ્રમણ બન્યો હતો.

૭ ધર્મકીર્તિ માત્ર પ્રત્યક્ષને જ અભ્રાંત કહે છે (અને ધર્મોત્તર સ્પષ્ટ કહે છે भ्रान्तं हि अनुमानम्) જ્યારે સિદ્ધસેન દિવાકર ન્યાયાવતારમાં (S ff) પ્રત્યક્ષ તેમ જ અનુમાન બન્નેને અભ્રાંત કહેવાનો દાવો કરે છે; એ જ પ્રમાણે એ સ્વાર્થ અને પરાર્થનો ભેદ જે ખરી રીતે કેવળ અનુમાનને લાગુ પડે છે તેને વિસ્તારીને એ પ્રત્યક્ષને પણ લાગુ પાડે છે (તે જ ગ્રંથ ૧૨ f). દેખીતી રીતે, સૂક્ષ્મ ભેદોને એકે એકને ઉઠાવી આમ સર્વ સામાન્યનું રૂપ આપીને એણે ધર્મકીર્તિમાં સુધારો કરવાનો વિચાર કરેલો ! એ તત્ત્વાર્થવૃત્તિના કર્તા સિદ્ધસેન ગણિથી ભિન્ન વ્યક્તિ છે. કારણ સિદ્ધસેનગણિ હરિભદ્રની નંદીસૂત્ર ઉપરની ટીકામાંથી ઉતારો ટાંકે છે ad. II,25, જુઓ કલ્યાણવિજય l. c. પૃ. ૨૯; આથી કરીને હરિભદ્ર બન્ને સિદ્ધસેનોના વચ્ચેના ગાળામાં થઇ ગયા. એ પણ નોંધવા જેવું ગણાય કે લઘુ સિદ્ધસેન, આર્ય સિદ્ધસેન જે સિદ્ધસેન દિવાકર હોય વા ન પણ હોય, તેની એક કડીનો ઉતારો કરે છે. ad. I. 10.

Aho ! Shrutgyanam

ઉલ્લેખ કર્યો છે. જયારે બીજી બાજુ શંકરનો તેઓ કંઇ જ ઉલ્લેખ કરતા નથી. શંકર પોતાના વખતના વિદ્વાનોમાં એટલા તો પ્રખ્યાત અવશ્ય થઇ ગયા હતા કે જેથી હરિભદ્ર જો એમના સમયના કે એમના પછીના હોત તો એમને ભૂલી શકયા નહોત. આ ઉપરથી આપણે એટલું કહી શકીએ છીએ કે શંકરના અનુયાયીઓ જે તેમને ઇ. સ. ૭૮૮ થી ૮૨૦ ના ગાળામાં મૂકવાની માન્યતા ધરાવે છે તે ખરી છે, અગર તો છેવટે તદ્દન ખોટી નથી. વળી જિનવિજયજીના કહેવા મુજબ હરિભદ્ર માયાવાદ વિષે કશીએ ચર્ચા કરતા નથી. જોકે તેઓ અદ્વૈત વાદને જાણે છે અને પોતાના શાસ્ત્રવાર્તા સમુચ્ચયમાં એની કેટલીક શાખાઓનું ખંડન પણ કરે છે,[૮] પરંતુ આમાંની એક પણ માયાવાદને મળતી નથી જણાતી. આ બાબત પણ ઠીક ઉપયોગી છે; કારણ કે એ ઉપરથી એમ ફલિત થાય છે કે, શંકર પહેલાં, ઔપનિષદોની બહાર માયાવાદ લગભગ અજ્ઞાત જેવો જ હતો. અલબત્ત શંકરના ગુરુના ગુરુ ગૌડપાદે, એ પૂર્વે ઔપનિષદોમાં તો એનું પ્રતિપાદન કર્યું હતું; પણ કોઇપણ સંપ્રદાયે પોતામાં રહેલી વસ્તુના આધારે યા પોતાના શિક્ષણની નૂતનતાને લીધે આખાય હિંદુસ્તાનમાં એમને એમ પ્રસિદ્ધિ નથી મેળવી, સિવાય કે કોઇ ગ્રંથકાર એ વસ્તુનો પદ્ધતિસર સવિશેષ પ્રચાર કરે અને દરેક વિરોધી પ્રવાહની સામે એને બરાબર ટકાવી રાખે. આવા ગ્રંથકારની કીર્તિ ઘણું કરીને મૂળ વિચારક કે જેની શક્તિ સ્વાભાવિક રીતે જ ભૂલાઇ જવાય છે, તેના કરતાં પણ વધુ વિસ્તાર પામે છે.[૯]

૨. હરિભદ્રનું જીવન.

હરિભદ્રના જીવન વિષે એમના પોતાના શબ્દોમાં આપણને ભાગ્યે જ કંઇ જાણવા મળે છે. એમના લખેલા ગ્રંથોમાંથી એમના વિષે જે કાંઇ આપણે જાણી શકીએ તેમાં નીચેની હકીકતો ગણાવી શકીએ તેમ છીએઃ–(૧) તેઓ સિતામ્બરો (શ્વેતામ્બરો) ના આચાર્ય જિનભટની આજ્ઞા માનતા હતા, (૨) વિદ્યાધર કુલ (ગચ્છ) ના શણગાર રૂપ આચાર્ય જિનદત્તના શિષ્ય થતા હતા, અને (૩) સાધ્વી યાકિની મહત્તરાના ધર્મપુત્ર કહેવાતા હતા.[૧૦]

આ ઉપરાંત જે કેટલીક બીજી બાબતો હરિભદ્રના પુસ્તકો ઉપરથી સીધી જણાઈ આવે છે તે આ છેઃ— (૪) પોતાના લગભગ ઘણાખરા ગ્રંથોના છેલ્લા શ્લોકમાં એમણે '**વિરહ**' શબ્દનો ઉપયોગ કર્યો છે, અને તે એમના જીવનની કોઇ ખાસ બાબતને સૂચવતો હોય તેમ લાગે છે; (૫) કેવળ જૈનધર્મ વિષેનું જ નહિ, પરંતુ બીજા સંપ્રદાયો વિષેનું પણ એમનું ચોક્કસ જ્ઞાન એમના અનેકાન્ત–જયપતાકા અને તેની ટીકામાં, તેમ જ દિગ્નાગકૃત ન્યાયપ્રવેશ ઉપરના તેમના ટિપ્પણમાં જણાઈ આવે છે; (૬) એમના લખેલા ગ્રંથોની સંખ્યા ઘણી મોટી હતી.

---

૮ આ ગ્રંથમાં હરિભદ્ર આપે છે તેના કરતાં વિશેષ વિગતો જાણવાનું આપણને આવશ્યક લાગે છે; કદાચ ચર્ચિત ફકરા વિષે પોતાની સ્વોપજ્ઞવૃત્તિમાં એમણે એ આપી પણ હોય. પરંતુ આ વૃત્તિ મને અપ્રાપ્ય છે.

૯ આ પ્રમાણે જ્યાંસુધી કારિકાઓમાંના કોઇ અજ્ઞાત કર્તાના મૂળ પ્રબંધ (treatise) ઉપર આનંદવર્ધને ધ્વન્યાલોક નામની ટીકા નહોતી રચી અને એમ કરીને ધ્વનિવાદને એટલો બધો સુવ્યક્ત નહોતો કર્યો કે એની પછીના પ્રાયઃ સર્વ અલંકારશાસ્ત્રીઓ એનો સ્વીકાર કરે ત્યાંસુધી એ વાદની પણ અવગણના જ થઇ જણાય છે. એથી કરીને હું એમ સમજવાને પ્રેરાઉં છું કે પૂર્વકાલીન બૌદ્ધધર્મમાં શૂન્યવાદી નાગાર્જુન અને વસુબંધુએ તે તે મતોને શાસ્ત્રીય પદ્ધતિએ સુપ્રકાશિત ન કર્યાં ત્યાંસુધી તે મતો અણદીઠ રહ્યા અને એની સામે કંઇ પ્રતિરોધ જાગ્યો નહિ.

૧૦ ઉપર્યુક્ત તમામ વિગતો આવશ્યક સૂત્ર ઉપરની શિષ્યહિતા નામની એમની ટીકાના અંતભાગમાં આપેલી છે; અન્ય સ્થળોએ માત્ર એક વા બીજી વિગતનો જ ઉલ્લેખ હોય છે.

Aho ! Shrutgyanam

એ તો વગર કહે સમજાય તેમ છે કે હરિભદ્રના સમકાલીન લોકો તેમના વિષે ઉપરની ૭ બાબતોમાં જે લખ્યું છે તેના કરતાં ઘણું વધારે જાણતા હોવા જોઇએ; પરંતુ તેની સાથે એ પણ એટલું જ સાચુ' છે કે ઐતિહાસિક વિગત ધીમે ધીમે દંતકથાઓની વાર્તાનું રૂપ લઇ લે છે, અને કાળાંતરે સાચી તેમ જ બનાવટી બાબતોનો એકવિચિત્ર શંભુમેળો થઇ જાય છે કે જેથી એમાંથી અમુક જ વિગત, મર્યાદિત સત્યની દૃષ્ટિએ એકમેકથી જુદી પાડવી સરલ હોઇ શકે છે. બાકી કેટલીએ ચાલી આવતી બાબતો બીલકુલ બનાવટી અને એના મૂળનાયકથી તદ્દન અસંબદ્ધ જેવી હોય છે. આ પ્રમાણે જોતાં હરિભદ્રને લગતી જે ૪થી બાબત છે તે વિષે લોકોને કાંઇક સહજ કુતૂહલ થયું હશે અને તેથી તેને સંતોષવા જતાં હરિભદ્રના જીવનને લગતી કેટલીક અમૂલક વાતોમાં ઘણી વિચિત્ર અને સાવ પાયાવગરની હકીકતોનો ઉમેરો થયો હશે. એમના જીવન વિષેની બીજી બધી વાતો કરતાં આ બાબતનો ઉમેરો જ વધુ વધી જાય છે, કે જેનો જુના ગ્રંથોમાં કંઇયે નિર્દેશ નથી મળતો.

હરિભદ્ર વિષેની કિંવદંતીઓનું પૃથક્કરણ કરૂં તે પહેલાં એના મૂળભૂત સાધનોનો ઉલ્લેખ કરવા ઇચ્છું છું.

(૧) હરિભદ્રના ઉપદેશપદની મુનિચંદ્રની ટીકાના અંતનો એક નાનો પારેગ્રાફ. આ ટીકા વિક્રમ સંવત ૧૧૭૪ એટલે ઇ. સ. ૧૧૧૮ માં પુરી થઇ હતી; આ ભાગ કલ્યાણવિજય અને જિનવિજયે છાપ્યો છે.

(૨) સંવત ૧૧૬૯ અને ૧૨૧૧ અથવા ઇ. સ. ૧૧૧૨ અને ૧૧૫૪ની વચમાં લખાયેલા જિનદત્તના ગણધરસાર્દ્ધશતકની આઠ ગાથાઓ (૫૨–૫૯) મૂળ ગ્રંથ A. Weber ની Verzeichniss der Sanskrit und Prakit Handschriften II p. 982 માં છપાયો છે.

(૩) સંવત્ ૧૩૩૪ યા ઇ. સ. ૧૨૭૮ માં પ્રભાચંદ્રે રચેલા પ્રભાવક ચરિતનો નવમો શૃંગ. (૧૯૦૯ ની એન્. એસ્. આવૃત્તિમાં ગ્રંથકર્તાનું નામ ભૂલથી ચંદ્રપ્રભ આપ્યું છે)

(૪) સંવત્ ૧૪૦૫ યા ઇ. સ. ૧૩૪૯ માં લખાએલો રાજશેખરનો પ્રબંધકોશ. કલ્યાણવિજયે આમાંના થોડા ફકરા આપ્યાનું હું જાણું છું.

(૫) સંવત્ ૧૨૯૫ યા ઇ. સ. ૧૨૩૯ માં પૂર્ણ થએલ સુમતિગણિની ગણધરસાર્દ્ધ શતકની વૃત્તિ. (જુઓ ૨) સુમતિગણિની હકીકત સર્વરાજગણિની લઘુવૃત્તિમાં ટુંકાણમાં આપી છે.

(૬) ભદ્રેશ્વરની કથાવલી, સમય હજુ જણાયો નથી; જિનવિજયજીના લખાણો ઉપરથી આ વાત હું જાણી શકયો છું, બીજી રીતે મને તેની ખબર નથી.

હવે હું હરિભદ્રના જીવનને લગતી કેટલીક કિંવદન્તીઓ કે જે, ખરેખર સાચી પણ માની શકાય, તે બાબત ચર્ચા કરીશ.

૧, ૩, ૪ અને ૫ મા લખ્યા મુજબ હરિભદ્રનું જન્મસ્થાન ચિત્રકૂટ એટલે હાલનું ચિતોડ હતું. લગભગ ૭ મી સદીથી માંડીને ૧૫૬૭ સુધી આ પર્વતના શિખર[૧૧] ઉપરના જુના કિલ્લામાં મેવાડની રાજ્યધાની હતી, અને ત્યારબાદ ઉદેપુર એ રાજ્યનું મુખ્ય મથક થયું. પોતે દીક્ષા લીધી ત્યાંસુધી હરિભદ્ર ઘણું કરીને ચિતોડમાં હતા, પરંતુ ત્યારપછી સાધુ તરીકેનું એમનું જીવન ઘણુંખરૂં રાજપૂતાનાના આસપાસના સ્થળોમાં અને ગુજરાતના પ્રદેશમાં પસાર થયું હોય તેમ લાગે છે. કારણ, એ પ્રદેશમાં વસતા ઉદ્યોતનના તેઓ ગુરૂ થતા હતા.[૧૨] હરિભદ્રના ગુજરાતના કાર્યપ્રદેશની બીજી સાબીતી જૈન

૧૧ ૪માંની ઉક્તિ અર્થાત્ श्री चित्रकूटाचलनिवासिनो સ્પષ્ટતયા પર્વત ઉપરના એ પ્રાચીન નગરને ઉદ્દેશીને છે.

૧૨ કુવલયમાલામાંથી શ્રી જિનવિજયજીએ (I. c., પૃ. ૫૫) ટાંકેલા ફકરાની ચોથી અને છઠ્ઠી કડીઓ સાબીત કરે છે કે ઉદ્યોતન ગુજરાતમાં પાંગરેલી યતિ પરંપરામાંના હતા.

Aho ! Shrutgyanam

કુટુંબોની વંશાવળીમાં મળી આવે છે. કારણ કે કલ્યાણવિજયજીના કહેવા મુજબ હરિભદ્રે પોરવાલોની (પોરવાડ, પ્રાગ્વાટ) જાતિને સંગઠિત કરી, અને એમને જૈન બનાવ્યા. હવે, नेमिनाहचरियं[13]માંથી આપણને એમ જાણવા મળે છે કે પોરવાલ જાતિ પ્રથમ [14]શ્રીમાલમાં ઉત્પન્ન થઈ હતી, અને એ જાતિના નિમય નામના એક સૈનિક માણસને વનરાજે (ઇ. સ. ૭૪૬–૮૦૬) પોતાની નવી રાજ્યધાની અણહિલ્લપાટણમાં વસવા માટે આમંત્ર્યો અને ત્યાં તેણે વિદ્યાધરગચ્છ માટે ઋષભદેવનું મંદિર બંધાવ્યું. પોરવાલની જાતિને સંગઠિત કરનાર હરિભદ્ર વિદ્યાધર ગચ્છના જ[15] હતા એટલે સંભવ છે કે એ જાતિ આ ગચ્છ તરફ કોઇક પ્રકારની વફાદારી ધરાવતી હોય, અને નેમિનાહચરિયંની એ હકીકત આ બાબતની સાબીતી પુરી પાડતી હોય તેમ લાગે છે. જો કે હરિભદ્ર જીવનના મોટા ભાગમાં ગુજરાતમાં અને તેની બાજુના રાજપૂતાનાના પ્રદેશમાં રહ્યા હોય, પરંતુ એક સાધુ તરીકે તેઓ હિંદુસ્તાનના દૂર દેશાવરોમાં પણ જરૂર ફર્યા હશે. સમરાઇચ્ચકહામાંથી એમના હિંદુસ્તાનના જ્ઞાન બાબત કેટલીક હકીકત મેળવી શકાય તેમ છે. આ બાબતમાં ખાસ વિચારવા જેવું એ છે કે તેઓ પોતાની કોઇપણ કથાની ઘટનાનું ક્ષેત્ર ડેક્કન યા દક્ષિણ હિંદુસ્તાનના એકાદ જાણીતા શહેરમાં કલ્પતા નથી.[16] પરંતુ જે જે શહેરો જાણી શકાય તેવા છે[17] તે બધા ઉત્તર હિંદસ્તાનમાં હસ્તિનાપુરથી તામ્રલિપ્ત સુધીમાં આવેલા છે. અયોધ્યા અને ચંપા વચ્ચેના પૂર્વ હિંદુસ્તાનથી તેઓ વિશેષ પરિચિત દેખાય છે; આ પ્રદેશોમાં ત્યારે બૌદ્ધધર્મ પ્રચલિત હતો, અને તેથી એવો સંભવ છે કે હરિભદ્રે ત્યાં બૌદ્ધધર્મ વિષે ચોક્કસ જ્ઞાન મેળવ્યું હોય, જો કે ખાસ કરીને તો દિગ્નાગ અને ધર્મકીર્તિએ જે પ્રતિપાદન કરેલું છે તેને જ આધારે તેઓએ એ વિષયનું જ્ઞાન મેળવેલું લાગે છે.

૫ માં એમ બતાવવામાં આવ્યું છે કે હરિભદ્ર જાતે બ્રાહ્મણ હતા,[18] અને ૩ માં પણ એ જ વાત કહેલી છે. ત્યાં એમ કહ્યું છે કે તેઓ રાજા જિતારિના[19] પુરોહિત હતા, જો કે ૧ અને ૨ માં આવું કંઇ નથી, પરંતુ મને આના સાચાપણા વિષે કંઇ શંકા નથી લાગતી. હરિભદ્રનું જૈનધર્મ બાબતનું બહુ-વ્યાપીજ્ઞાન આપણે બાજુએ મૂકીએ તોપણ એમનું અન્યાન્ય વિષયનું જ્ઞાન એવા પ્રકારનું છે કે જે બ્રાહ્મણને જ સ્વાભાવિક હોય છે. પરંતુ જૈનસાહિત્યને બ્રાહ્મણવિદ્યાની એક નવીન પ્રેરણા મળી તે પહેલાં

---

૧૩ જુઓ Abhandlungen der Bayerischen Akademie der Wissenschaften, Munchen 1921 માંની સનત્કુમાર ચરિતની મારી આવૃત્તિ પૃ. ૧૫૨, ૮ ૯. અને એજ ગ્રંથના પૃ. ૬ઠ્ઠાની વધારાની નોંધ.

૧૪ મારવાડની અત્યંત દક્ષિણે આવેલું આધુનિક ભીન્માલ ઉદ્યોતનસૂરિ l. c., એ નગરનું નામ સિરિભિલ્લ-માલ હોવાનું જણાવે છે. પ્રથમ ચાપોત્કટ વા ચાવડા રાજા વનરાજે અનહિલ્લ પાટકની સ્થાપના કરી તે પહેલાં એ ગુજરાતનું પાટનગર હતું.

૧૫ કારણ, એ પોતાના ગુરુ જિનદત્તને વિદ્યાધર ગચ્છનું એક ભૂષણ કહે છે. હર્ષનંદનગણિ (૧૬૧૬ ઇ. સ.)ના કહેવા પ્રમાણે એ વૃદ્ધગચ્છીય હતા. જુઓ કલ્યાણવિજય l. c., પૃ. ૧૧ b,

૧૬ દક્ષિણભારત વિષેના પરિચયની એમની ઉણપનું કારણ, કદાચ, એ હતું કે એમના સમયમાં તાપીની દક્ષિણે જો શ્વેતાંબર સમાજ કોઇ ઠેકાણે વસતો હશે તો તેની સંખ્યા નહિં જેવી જ હશે.

૧૭ કથાનકવર્ણિત અપર વિદેહના દેશોમાંનાં નગરો સાથે, અલબત્ત આપણે કંઇ લેવાદેવા નથી.

૧૮ l. c., પૃ. ૫ a, નોંધ કલ્યાણવિજય.

૧૯ સ્પષ્ટ રીતે, જૈનોની અસંખ્ય આખ્યાયિકાઓ અને કથાઓમાં આવતા જિતશત્રુ નામના રાજાનું બનાવટી નામ. આ રાજા, હું જાણું છું ત્યાં સુધી કોઇપણ ઐતિહાસિક દસ્તાવેજ, લેખપત્ર ઈત્યાદિમાં કદિ જોવામાં આવેલો નથી. મેવાડના ગુહિલ રાજાઓની યાદીમાં પણ આ નામ આવતું નથી. જુઓ મેબેલ ડફની ક્રોનોલોજી ઓફ એન્શન્ટ ઇન્ડીઆ. પૃ. ૨૯૨.

Aho ! Shrutgyanam

બીજા કોઇના વિષે આવી યોગ્યતા તદ્દન અપવાદ રૂપ જ કહી શકાય. મુનિચંદ્ર (૫) હરિભદ્રને જે "આઠ વ્યાકરણોના અભ્યાસી તરિકે, અને સમગ્ર દર્શનશાસ્ત્રોને લગતી ચર્ચાઓ કરી સ્થિરબુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરનારાઓના આગેવાન તરિકે" વર્ણવે છે, તે સત્ય છે. હવે પછીના પારેગ્રાફમાં કહેવામાં આવશે તે મુજબ મુખ્યત્વે હરિભદ્રને લીધે જ શ્વેતાંબરોની સંસ્કૃત એ અભ્યાસ ભાષા થઇ; અને એમના સાહિત્યના કેટલાક વિભાગોમાં પ્રાકૃતનું સ્થાન એણે લીધું. જો એમનો સંસ્કૃત ઉપર પૂરેપૂરો કાબુ ન હોત તો એમની આટલી અસર ન પડત, અને આવી સિદ્ધિમાટે ચાલી આવતી બ્રાહ્મણવિદ્યાની જ જરૂર રહે છે. સંસ્કૃતમાં ચાલતી દાર્શનિક ચર્ચા બાબતનું એમનું આધિપત્ય એવા પ્રકારનું છે કે એમની ટીકાવાળી અનેકાન્તજયપતાકા, એ સમયના દાર્શનિક વિષયને લગતા કોઇપણ પુસ્તકની સાથે સારી રીતે સરસાઇમાં ઉતરી શકે તેમ છે.[૨૦] આમાં એટલું એ પણ ઉમેરી શકાય કે હરિભદ્રના ધર્મપરિવર્તન બાબતની કથા કે જેની મુખ્ય હકીકત આપણા જુનામાં જુના મૂળમાં (૧) સમાયેલી છે તેથી પણ એજ નિર્ણય થાય છે કે તેઓ જાતિએ બ્રાહ્મણ હતા.

હરિભદ્ર યાકિની સાધ્વીને પોતાની ધર્મમાતા (धर्मतो याकिनीमहत्तरासूनुः) તરીકે સ્વીકારી તેણીને લીધે પોતાનું 'સાચા ધર્મ'માં પરિવર્તન થયું એમ કહેવા માગે છે. આ એક જાતનું પુનર્જન્મ જ કહી શકાય. આ પરિવર્તન કેમ બનવા પામ્યું તે જો કે ચાલી આવતી કિંવદંતીઓ ઉપરથી લખવામાં આવ્યું છે, પરંતુ એ ઘણા ભાગે વિશ્વાસપાત્ર છે. હરિભદ્રના જીવનના આ પરિવર્તનને લગતું પ્રભાવક ચરિતમાં આપેલું કેટલુંક વર્ણન હું અહિં આપીશ અને પછી તેની ચર્ચા કરીશ.

"ચિત્રકૂટ શહેરમાં હરિભદ્ર જિતારિ રાજાના પુરોહિત હતા. પોતાના જ્ઞાન માટે એમને એટલું અભિમાન હતું કે તેઓએ જાહેર કરેલું કે જેનો પક્ષ પોતે નહિ સમજી શકે તેના તેઓ શિષ્ય થઈ જશે, અને આ પ્રતિજ્ઞા એક સોનાના પતરા ઉપર કોતરાવી કાઢી હતી ને તેને તેઓ પોતાના પેટ ઉપર બાંધી રાખતા હતા. એક વખત એક નાસી છુટેલો મસ્ત હાથી જ્યારે રસ્તાઓમાં કેર વર્તાવી રહ્યો હતો ત્યારે હરિભદ્ર એની આગળ થઇને નાઠા, અને એક જૈનમંદિર ઉપર ચઢી જઈ પોતાનો બચાવ કર્યો. ત્યાંથી અંદર જઈ એમણે એક તીર્થંકરની પ્રતિમા જોઈ, અને એક શ્લોકમાં એની હાંસી કરી. (वपुरेव तवाचष्टे इत्यादि) બીજે દિવસે જ્યારે તેઓ ઘરે ગયા ત્યારે એક વૃદ્ધ સાધ્વીને એક ગાથા[૨૧] ઉચ્ચારતી સાંભળી જે એમને બીલ્કુલ સમજાઈ નહિ. એ સાધ્વીને એમણે એ ગાથા સમજાવવા કહ્યું, પરંતુ તેણીએ એમને પોતાના ગુરુ પાસે જવાની સૂચના કરી. આથી બીજે દિવસે તેઓ તેમની પાસે ગયા. રસ્તે જતા પેલા મંદિર પાસે થઇને નીકળ્યા, અને પોતાનો પ્રથમનો જ શ્લોક બોલ્યા, પરંતુ તેમાં એક શબ્દનો એવો ફેરફાર કર્યો કે જેને લીધે જિનની સ્તુતિ થઈ. ત્યાં તેમણે જિનભટ સૂરીને જોયા કે જેમણે હરિભદ્રને સાધુ થયા પછી શીખવવાનું વચન આપ્યું. તેઓ કબુલ થયા અને મહત્તરા યાકિનીને પોતાની ધર્મમાતા તરીકે સ્વિકારી તેઓ જૈનશાસ્ત્રોમાં એટલા બધા નિપુણ થયા અને એમનું ચારિત્ર એવા પ્રકારનું બન્યું કે ગુરૂએ એમને પોતાના ગાદીધર બનાવ્યા. આ પ્રમાણે હરિભદ્ર યુગપ્રધાન બન્યા."

---

૨૦ એ સાચું છે કે આવા જ વર્ણનના ઘણા પ્રાચીન ગ્રંથો બૌદ્ધોની પાસે હતા. પરંતુ બૌદ્ધો, તત્વજ્ઞાની બ્રાહ્મણસંપ્રદાયોની તાત્વિક ચર્ચાના સંબંધમાં ઘણા પૂર્વેના સમયથી જ આવ્યા હતા. અને એમના ઘણા મહાન ગ્રંથકારો સ્વયં પ્રસિદ્ધરીતે બ્રાહ્મણ જાતિના હતા.

૨૧ આ ગાથા આવશ્યક નિર્યુક્તિમાં આવે છે.

Aho ! Shrutgyanam

હવે આ હકીકતમાંની મુખ્ય મુખ્ય બધી બાબતો, ઉપર જણાવેલા મુનિચંદ્રના સંક્ષિપ્ત ઉલ્લેખમાં[22] આપેલી છે. ફક્ત મસ્ત હાથીનો બનાવ અને હરિભદ્રનું જિતારિ રાજાનું પુરોહિત હોવું એ બે એમાં નથી. ત્યાં પણ એ જ ગાથા અને એ જ શ્લોક આપેલા છે, પણ ગુરુનું નામ જિનભટને[23] બદલે જિનભદ્ર આપેલું છે જે ભૂલથી લખાયું હોય તેમ લાગે છે. અલંકારરૂપે કહી શકાય એવી કેટલીક વિસ્તૃત બાબતો એમાંથી ઉડાવી દીધી છે. આ વાત ઘણે ભાગે જુની છે, અને એમાં ખાસ કંઈ વધારો પડતું કે ન મનાય તેવું નથી, એટલે આપણે એને લગભગ સત્ય તરીકે ગણી શકીએ છીએ.

ગણધર સાર્દ્ધશતકમાં આપેલી એક વિચિત્ર બાબત કહેવાની રહે છે: "કેટલાકે નામની સમાનતાને લઇને હરિભદ્રને ચૈત્યવાસિ સાધુ કહેલા છે જે ખોટી રીતે કહેવામાં આવ્યું છે." ચૈત્યવાસિઓ એવા સાધુઓ હતા કે જેઓ મંદિરમાં રહેતા હતા, જ્યારે તેમના પ્રતિસ્પર્ધિઓ વસ્તિનિવાસી એટલે કે ગૃહસ્થોના ઘરોમાં (પરગૃહ) રહેવાનું પ્રતિપાદન કરતા હતા. બંને પક્ષો થોડો વખત સાથે ચાલ્યા હોય તેમ લાગે છે, અને વિરોધીરૂપે બાહેર ન પડયા હોય તેમ જણાય છે. શીલાંક[24] એક ચૈત્યવાસી હતા એમ કહેવામાં આવે છે. પરંતુ છેવટે તો ચૈત્યવાસ લુપ્ત થઈ ગએલો અને ખરતરગચ્છના સ્થાપક જિનેશ્વરસૂરિએ પોતાના અનુયાયીઓ માટે સંવત્ ૧૦૮૦ યા ઈ. સ. ૧૦૨૪માં વસ્તિનિવાસ સ્થિર કરેલો.

એવો સંભવ છે કે જ્યારે આ બન્ને પક્ષો વચ્ચે પૂર જોસમાં શત્રુતા હશે ત્યારે ચૈત્યવસિઓએ જાણીતા હરિભદ્રને પોતાના તરીકે ગણાવ્યાં હોય, અને સામાવાળાઓએ એમના એ દાવાને તદ્દન પાયા વગરનો અને નકામો ઠેરવ્યો હોય. પરંતુ આ પણ એટલું જ ચોક્કસ છે કે, જો હરિભદ્રના વખતમાં સાધુઓનું નિવાસસ્થાન એ જ મતભેદનો એક મુખ્ય વિષય થવા પામ્યો હોય, તો હરિભદ્રે કયો પક્ષ સ્વિકાર્યો હશે તે બાબતમાં કંઈ શંકા જેવું રહે તેમ નથી, સમરાઇચ્ચિ કહામાં સાધુજીવનનાં જે વર્ણનો આપ્યાં છે તે એમના વખતના સાધુઓની રીતભાતનું યા જે તેમને પોતાને સંમત હતું તેનું ચિત્ર પુરૂં પાડે છે. તે કથા પ્રમાણે તો સાધુઓ શહેર નજીકના ઉદ્યાનમાં રહેતા, અને એમના અનુયાયીઓ તથા એમના દર્શન માટે ઉત્સુક એવા માણસો ત્યાં જતા. એ વર્ણનમાં એ કાંઈ સ્પષ્ટ કહ્યું નથી કે સાધુઓ ત્યાં મંદિરમાં જ રહેતા, પરંતુ હરિભદ્ર સાધુઓને ગૃહસ્થોના, યા લોકોએ તૈયાર કરાવી આપેલા તેમના માટેના મકાનોમાં રહેવાનું યોગ્ય ધારતા તે એમાંથી કાઢી નાંખ્યું હોય તેમ લાગે છે.

૩. હરિભદ્રની કૃતિઓ.

હરિભદ્રની યુગપ્રધાન તરીકેની ખ્યાતિ એમણે જૈન ધર્મને ખાતર કરેલી સાહિત્યસેવા ઉપર

---

૨૨ ગણધર સાર્ધશતકની લઘુવૃત્તિ ૬. ૫૬, પૃ. ૬ માંનો અતિસંક્ષિપ્ત ઉલ્લેખ આની સાથે મળતો આવે છે. તદુપરાંત હ૦ પોતાના પેટ ઉપર જે સોનાનું પત્રું બાંધતા તેનો તેમાં ઉલ્લેખ છે.

૨૩ ઉપરની નોંધમાં દર્શાવેલી લઘુવૃત્તિમાં એ નામનું એ જ રૂપ આપેલું છે.

૨૪ લઘુવૃત્તિમાંના ૬. ૬૦ એ આધાર પ્રમાણે અને ખરતરગચ્છની પટ્ટાવલીના કથન પ્રમાણે શીલાંક હરિભદ્રના ઉત્તરાધિકારી હતા. પરંતુ એ અસંભવિત છે, કારણ એમની આચારાંગ ટીકાની સાલ શક ૭૯૮=ઈ. સ. ૮૭૨ની હોવાનું અર્થાત્ હરિભદ્ર પછી એક સૈકા કરતાં વધારે હોવાનું કહેવાય છે. એ જ આધાર પ્રમાણે શીલાંકના ઉત્તરાધિકારી તે ઉદ્યોતનસૂરિ જે જિનેશ્વરના ગુરુ અને પુરોગામી એવા વર્ધમાનસૂરિના પુરોગામી હતા. નિશંકપણે આ લખાણો કપોલકલ્પિત અને છેક ખોટાં છે. કારણ ઉદ્યોતનસૂરિ જેમણે પોતાનો મહાન્ ગ્રંથ ઇ. સ. ૭૭૯માં રચ્યો તે, જિનેશ્વરસૂરિ જેઓ ત્યારબાદ બે સૈકા કરતાં વધારે પાછળના કાળમાં થઇ ગયા. તેમની અને ઉદ્યોતનસૂરિની વચ્ચે એક જ ગુરુ થયા જેટલો ગાળો હોય એ ન બની શકે એવી વાત છે. દેખીતી રીતે, ખરતરગચ્છની સ્થાપનાની પૂર્વેના સમય સંબંધી જો કોઇ પણ પરંપરા ચાલુ હોય તો તે વજુદવાળી નહોતી.

Aho ! Shrutgyanam

અવલંબે છે. જૈનસાહિત્યમાં એમણે જેટલાં પુસ્તકો લખ્યાં, અને જુદા જુદા જે વિષયો હાથ ધર્યા તે જોતાં તેઓ મહાન લેખકોમાંના એક કહી શકાય. જિનવિજય હરિભદ્રના ૨૮ ગ્રંથોને ખાસ પ્રસિદ્ધ તરીકે ગણાવે છે, અને તેમાંના વીસ છપાઈ ચૂકેલા છે, જ્યારે કલ્યાણવિજયે ખાસ સચવાઈ રહેલા છે તેમાંથી, અને ઉતારાઓ ઉપરથી એમના બધાય ગ્રંથોની એક યાદી તૈયાર કરી છે, અને તેમાં ૮૮ નામોનો સમાવેશ કરેલો છે. જો કે આમ તો આ સંખ્યા જ ખાસી મોટી છે, પરંતુ ૧૪૦૦ પ્રકરણોની ચાલી આવતી વાત માનીએ તો તેનો આ એક અલ્પાંશ જ લાગશે.[૨૫] હરિભદ્રના જીવનને લાગતા આપણા જુનામાં જુના ગ્રંથોમાં (૧ અને ૨) પણ એ ગ્રંથ સંખ્યાની વાત છે, અને ત્યારબાદ ઈ. સ. ૧૦૬૮માં તૈયાર થયેલી અભયદેવની હરિભદ્રના પંચાશક ઉપરની ટીકામાં પણ એ જ હકીકત વધારે સ્પષ્ટ રીતે જોવામાં આવે છે. પણ આ બધું તદ્દન બીન પાયાદાર હોય તેમ લાગે છે? કે જૈનોની એટલી બધી બેદરકારી સૂચવે છે કે તેઓ પોતાના એક જાણીતા ગ્રંથકારના પુસ્તકોના મોટા ભાગના નામો પણ એની પછી થોડી સદીઓમાં ભૂલી ગયા હશે? બીજી બાજુએ જ્યારે તત્ત્વાર્થ લઘુવૃત્તિ અને પિણ્ડ-નિર્યુક્તિ એ હરિભદ્રના બે અધૂરા રહેલા ગ્રંથો પણ સચવાઈ રહેલા મળી આવે છે. આથી કાં તો ૧૪૦૦ની સંખ્યા અતિશયોક્તિ ભરેલી યા અર્થ વગરની હોય, અથવા આપણે માની લેવું જોઇએ કે આ બાબતમાં પ્રકરણ એ પદ્ધતિસર તૈયાર કરેલો જુદો ગ્રંથ નહોય, પરંતુ પંચાશકના ૫૦ પ્રકરણો, અષ્ટકના ૩૨, ષોડશકના ૧૬, વિગેરે એવા મર્યાદિત અર્થમાં એનો ઉપયોગ થયો હોય. પણ તેમના બીજા ગ્રંથોમાં શા ધોરણે આટલા બધા પ્રકરણો પાડવા તે સમજી શકાતું નથી.

હરિભદ્રે મોટા ભાગે જૈન માન્યતાની પૂર્તિને ખાતર સંસ્કૃત અને પ્રાકૃતમાં તેમ જ ગદ્ય અને પદ્યમાં લખ્યું છે. એમના સાક્ષર જીવનની બે પ્રવૃત્તિઓ ખાસ નોંધવા જેવી છે. એક તો આગમ ગ્રંથો ઉપરની એમની સંસ્કૃત ટીકાઓ અને બીજી બ્રાહ્મણો અને બૌદ્ધોના સિદ્ધાંતો ઉપરની એમની તલસ્પર્શી ચર્ચાઓ.

આગમ ગ્રંથો ઉપરના જૂના ટીકા ગ્રંથો જેવા કે નિર્યુક્તિઓ, ચૂર્ણિઓ અને ભાષ્યો એ બધા જ પ્રાકૃતમાં છે.[૨૬] ઉપર કહ્યું તે મુજબ નન્દીસૂત્ર ઉપરની જિનદાસગણિની ચૂર્ણિ ઈ. સ. ૬૭૭માં પૂર્ણ થઇ, અને તે પણ પ્રાકૃતમાં જ લખાયેલી છે. પોતાના પૂર્વગામીના લખાણનો ઉપયોગ કરી હરિભદ્રે એ જ ગ્રંથો ઉપર નવી ટીકા લખી, અને તે સંસ્કૃતમાં લખી. તેમ જ એમણે બીજા સૂત્રો ઉપરની ટીકાની બાબતમાં પણ તેમ જ કર્યું. શ્વેતાંબર સાહિત્યમાં આપણે એથી વધારે કોઈ જૂની સંસ્કૃત ટીકાના વિષયમાં જાણતા નથી એટલે કહી શકાય કે આ ફેરફાર હરિભદ્રથી જ થયો હતો, અને છેવટે એટલું તો ચોક્કસ છે જ કે આ નવી પદ્ધતિને એમણે વ્યવસ્થિત રૂપ આપ્યું હતું. જો કે પાછળથી તો એમાં પણ પ્રગતિ થયેલી છે. પ્રોફેસર લૉયમેનના કહેવા મુજબ હરિભદ્ર મૂળ ગ્રંથ ઉપર સંસ્કૃતમાં ટીકા લખતા, પરંતુ કથાનકોને અને ચૂર્ણિના અમુક ઉતારાઓને મૂળ પ્રાકૃતમાં જ રહેવા દેતા, જ્યારે શીલાંક કે જે એમના પછી એક સદી બાદ થયા તે પોતાની ટીકામાં આવાં પ્રાકૃત અવતરણો ન આપતાં તેમનો સંસ્કૃત અનુવાદ જ આપે છે.

---

૨૫ રાજશેખર (૧૩૪૯ ઈ. સ.) કહે છે કે એમણે ૧૪૪૦ પ્રકરણો રચ્યાં અને (૧૫-૧૮ સૈકાઓ વચ્ચેના) ચાર ગ્રંથકારો કહે છે કે એમણે ૧૪૪૪ પ્રકરણો રચ્યાં. જુઓ કલ્યાણવિજય 1. c., પૃ. ૧૧ b, ૧૨ a

૨૬ જુઓ પ્રોફેસર લૉયમેનનો દશવૈકાલિક સૂત્ર અને નિર્યુક્તિ વિષેનો વિદ્વત્તાભર્યો નિબંધ. ઝેડ્. ડી. એમ્. જી. વો. ૪૬ પૃ. ૫૮૧ ff.

Aho ! Shrutgyanam

પારિભાષિક અર્થમાં જોઇએ તો આપણે ખાસ કહેવું જોઇએ કે હરિભદ્ર પ્રકરણોના જ કર્તા છે. પદ્ધતિસર શાસ્ત્રીય રૂપમાં જે ગોઠવાયેલું હોય તે પ્રકરણ કહેવાય છે. ગમે તેમ લખાયેલા અને આડી અવળી કથાઓથી ભરપૂર એવા આગમોથી આ તદ્દન નિરાળી વસ્તુ છે. આ પ્રમાણે લખવાની પદ્ધતિ મૂળ તો બ્રાહ્મણોથી શરૂ થઈ, અને એમનું આવું કેટલુંક જૂનું સાહિત્ય જોવામાં આવે છે. ઉમાસ્વાતિનું યા ઉમાસ્વામિનું તત્ત્વાર્થાધિગમ સૂત્ર એ જૈન સાહિત્યમાં આ પ્રકારનો પહેલો દાખલો છે, અને શ્વેતાંબર તેમ જ દિગંબર બંને આ ગ્રંથ પોતાનો હોવાનો દાવો કરે છે. દિગંબરો કે જેઓ સિદ્ધાંતને માનતા નથી તેઓનું જૂનું સાહિત્ય બહુધા સંસ્કૃત તેમ જ પ્રાકૃતમાં લખાયેલાં પ્રકરણોનું જ બનેલું છે; પરંતુ શ્વેતાંબરોમાં આપણે પ્રકરણોના પહેલા લેખક તરીકે સિદ્ધસેન દિવાકરને નિઃશંકપણે ગણાવી શકીએ. હરિભદ્ર કે જેઓ એમનાથી, ઉપર બતાવ્યું તેમ, વધારેમાં વધારે બે ત્રણ જમાનાજ દૂર કહી શકાય તેમણે શ્વેતાંબરોના સાહિત્યને પૂર્ણતાની ઉંચી ટોચે પહોંચાડયું, જો કે એમના ગ્રંથોમાંના કેટલાક પ્રાકૃતમાં છે, પરંતુ ઘણા ખરા તો સંસ્કૃતમાં જ છે. આમાં જૈન સંપ્રદાયના પદાર્થવર્ણન ઉપરાંત વિરોધી મતવાળા બ્રાહ્મણો તેમ જ બૌદ્ધોના સાંપ્રદાયિક ધોરણો બાબત એક ટુંકો ખ્યાલ, અને કેટલીક ચર્ચા તથા એનાં ખંડનો પણ છે. આ જાતના ગ્રંથોમાં હરિભદ્રની દિગ્નાગના ન્યાયપ્રવેશ ઉપરની ટીકા, જો કે તે એક પ્રકરણ નથી, બહુ ઉપયોગી અને મહત્ત્વની છે. જૈનોને પ્રમાણનિરૂપણનો કોઈ ગ્રંથ પુરો પાડવાના ઇરાદાથી સિદ્ધસેન દિવાકરે ન્યાયાવતાર નામનો ગ્રંથ કે જે બાહ્યરૂપે પ્રાયઃ ધર્મકીર્તિના ન્યાયબિન્દુની છાયા જણાય છે, તે રચ્યો હતો. જો કે ધર્મકીર્તિના ઉક્ત સર્વોત્કૃષ્ટ ગ્રંથની જગ્યા લેવા તે રચાયો હતો, પરંતુ નિઃસંદેહ તે તેનાથી તો ઉતરતી કક્ષાનો છે. પ્રમાણની બાબતમાં પણ જૈન સિદ્ધાંત સ્થાપવાને બદલે હરિભદ્રે દિગ્નાગ ઉપર ટીકા લખીને જૈનોને બૌદ્ધ પ્રમાણ શાસ્ત્રીઓના ગ્રંથોનું અધ્યયન કરવાની પ્રેરણા કરી. આ રીતે દેખાવમાં તો એમણે એ લોકોની ભારે મહત્તા સ્વિકારી, પરંતુ પોતાના અનેકાંતજયપતાકા ગ્રંથમાં ધર્મકીર્તિના પ્રમાણ વિષેના કેટલાક સિદ્ધાંતોનું સારૂં ખંડન પણ કર્યું. એમના પછી ઘણા વર્ષો સુધી જૈનોને બૌદ્ધોના પ્રમાણ નિરૂપણમાં રસ રહ્યો હતો. અને એને લીધે જ અત્યારે આપણે ધર્મકીર્તિનું ન્યાયબિન્દુ અને ધર્મોત્તરની ન્યાયબિન્દુ ટીકા ઉપલબ્ધ કરી શકયા છીએ. કારણ કે આ ગ્રંથોની જૂનામાં જૂની પ્રતો અને બીજા ગ્રંથ ઉપરની ટીકાનો અમુક ભાગ આપણને જૈન ભંડારોમાંથી જ મળેલા છે.

સિદ્ધસેન દિવાકર તથા હરિભદ્ર જેવા મહાન આચાર્યોના, હિંદુસ્તાનની બૌદ્ધિક સંસ્કૃતિની ઉંચી પાયરીએ શ્વેતાંબર સાહિત્યને લાવવાના પ્રયત્નોનો ઉત્કર્ષક પર્યવસાન હેમચંદ્રના જીવનથી થયું. હેમચંદ્રે પોતાના ધર્મને લગતા ખાસ ગ્રંથો તૈયાર કરવા ઉપરાંત ભારતીય મુખ્ય મુખ્ય શાસ્ત્રોને લગતા બીજા પણ કેટલાક પ્રશંસનીય ગ્રંથો રચીને તૈયાર કર્યા. આ પ્રમાણે શ્વેતાંબરો કે જે બીજાઓની સાથે સરખાવતાં અત્યાર સુધી એકલવાયા તરીકે અંધારામાં હતા તે સાતમી સદીમાં બહાર આવ્યા, અને છેવટે ગૂજરાત તથા તેના બાજુના પ્રદેશોમાં તેઓ એક જબરી લાગવગવાળી ધાર્મિક કોમ તરીકે જાહેર થયા, અને તે એટલે સુધી કે કુમારપાલના વખતમાં એક રાજ્યધર્મ તરીકે જૈનધર્મ સ્વીકારાયો.

વળી, હરિભદ્રના ગ્રંથો તરફ નજર નાંખતા આપણે જોઇ શકીએ છીએ કે તેઓ દરેકના છેલ્લા શ્લોકમાં "વિરહ" શબ્દ વાપરે છે, જે એમના એક ચિન્હ તરીકે જાણીતો છે. જયાં જયાં આ ચિન્હનો ઉપયોગ થયો છે તે તે વિભાગો કલ્યાણવિજયે પુરેપુરા ટાંકયા છે. તેઓ દશવૈકાલિક, આવશ્યક તથા પ્રજ્ઞાપન વિગેરે સૂત્રોની ટીકાઓને, અને સમરાદિત્ય કથા, ષડ્દર્શન સમુચ્ચય તથા લોકતત્ત્વનિર્ણય

Aho ! Shrutgyanam

વિગેરેને અપવાદ તરીકે ગણાવે છે. સમરાદિત્ય કથાને અપવાદરૂપ ગણવી કે કેમ તે શંકાસ્પદ છે, કારણ કે ત્રણ પ્રતોમાં "વિરહ" શબ્દ છેલ્લા શ્લોકમાં છે. કિંવદંતી પ્રમાણે આ 'વિરહ' ચિન્હનું કારણ હરિભદ્રના ભાણેજ અને શિષ્યો હંસ અને પરમહંસનું મરણ છે; જો કે આ બાબત એમના પોતાના કોઇ લખાણમાં જોવામાં આવતી નથી. આ વાતમાં વખતે કંઇક સત્ય પણ હોય, પરંતુ આને જો એક બનેલી હકીકત કહી શકતા હોઇએ તો આ સામાન્ય બાબતમાંથી એક વિચિત્ર બનાવોથી ભરપૂર એવી એક લાંબી કથા ઉદ્‌ભવી, અને તેણે હરિભદ્રના જીવનને લગતી ચાલતી વાતોમાં એક મોટો ભાગ ભજવ્યો છે. પ્રભાવકચરિતમાં આપ્યું છે તે મુજબ એમાંનો એક ભાગ અહિંયા હું ટાંકુ છું.

"એમની બ્હેનના પુત્રો હંસ અને પરમહંસે કંટાળીને પોતાના બાપનું ઘર છોડયું, અને એમના શિષ્યો થઇ એમની પાસે પ્રમાણવિદ્યા શીખવા લાગ્યા. તેઓ બૌદ્ધોના કોઇ શહેરમાં એ લોકોના શાસ્ત્રો શીખવા ઇચ્છતા હતા, પરંતુ હરિભદ્રને એમાં આપત્તિ દેખાવાથી એમને ન જવા સમજાવ્યું. છતાં પણ તેઓએ હઠ પકડી અને વેશ બદલી ત્યાં ગયા અને કોઈ બૌદ્ધ ભિક્ષુ પાસે અભ્યાસ કર્યો. જૈન ધર્મ સામેના બૌદ્ધ ધર્મના વાંધાઓ બરાબર સમજી લઇ તેઓએ કેટલાક પાંનાઓ ઉપર બધાનું ખંડન લખ્યું. પવનના ઝપાટાથી એ પાનાં પેલા ભિક્ષુ પાસે ઉડીને ગયાં, તેથી એને લાગ્યું કે પોતાના શિષ્યોમાં કોઇ જૈન યતિ છે. આ શોધી કાઢવા માટે તેણે દરવાજાની વચમાં જિનની એક મૂર્તિ મૂકાવી કે જેથી દરેકને તેના ઉપર થઇને ચાલવું પડે, પરંતુ પેલા બે ભાઇઓએ મૂર્તિની છાતી ઉપર ચાકવડે યજ્ઞોપવીત ચીતર્યું એટલે પછી એના ઉપર પગ મૂકવાનો એમને કંઇ વાંધો ન રહ્યો. હવે બૌદ્ધ ભિક્ષુએ બીજી યુક્તિ કરી. ઉપરના કોઇ ઓરડામાં એણે બધાય શિષ્યોને પુરી એમની પાસે ચોકીયાત ગોઠવ્યા, અને જ્યારે બધા સુઇ ગયા ત્યારે તેમણે મકાનની ઉપરના ભાગ ઉપરથી માટીના ઘડા ગગડાવવા માંડયા. ઉંઘતા શિષ્યો ભયમાં એકદમ ઝબકી ઊઠ્યા, અને પોતપોતાના ઇષ્ટ દેવતાઓની પ્રાર્થના કરવા લાગ્યા. આ પ્રમાણે જિનની પ્રાર્થના કરતા પેલા બે ભાઇઓ પકડાઇ ગયા, પરંતુ તે બંનેએ બે છત્રીઓ લીધી અને બારીમાંથી બહાર કુદી પડયા. બીલ્કુલ ઇજા વગર તેઓ નીચે આવ્યા, અને ત્યાંથી જોસભેર નાઠા. બૌદ્ધ સૈનિકો એમની પાછળ પડયા, અને જ્યારે નજદીકમાં આવ્યા ત્યારે હંસે પોતાના ભાઇને પાસેના શહેરના સુરપાલ રાજાનું રક્ષણ લેવાની સૂચના કરી, કે જે તેને રક્ષણ આપે તેમ હતું. એ પછી હંસે પોતાના શત્રુ સાથે લઢી, ઘણાઓનો સંહાર કર્યો, અને છેવટે મરણ પામ્યો. પરમહંસ સુરપાલ પાસે રક્ષણ માટે પહોંચ્યો કે થોડા વખતમાં પાછળ પડેલા સૈનિકો ત્યાં આવી લાગ્યા, અને સુરપાલ પાસે એની માગણી કરી. પરંતુ રાજાએ પોતાને આશ્રે આવેલાને સોંપવાનો ઇન્કાર કર્યો, અને કહ્યું કે એક વાદ ગોઠવવો જોઇએ, અને એમાં એ જો હારી જાય તો પછી એ સ્થિતિમાં મને જેમ યોગ્ય લાગશે તેમ હું એની સાથે વર્તીશ. બૌદ્ધો કબુલ થયા, પરંતુ એક શરતે કે એમની સામીવાળાએ પડદા પાછળ રહેવું કે જેથી એવા હલકા માણસનું મુખ એમને જોવું ન પડે. જે વાદવિવાદ ચાલ્યો તેમાં બૌદ્ધો તરફથી એમની શાસનદેવતા હતી, કે જે અદશ્ય હતી, પરંતુ કોઇ ઘડાના મુખમાંથી બોલતી હતી. જ્યારે વિવાદ આમ થોડા દિવસ ચાલ્યો ત્યારે પરમહંસ કંટાળ્યો અને એના ગણની શાસનદેવી અમ્બાને પ્રાર્થના કરી. તેણીએ તેની સામે કોણ હતું તે કહ્યું અને વિવાદ કેમ આગળ ચલાવવો તે સમજાવ્યું. આ પ્રમાણે પરમહંસે પોતાના વિરોધીઓને હરાવ્યા, અને પછી પડદો ઉંચો કરી ઘડાના ચુરેચુરા કરી નાંખી બૌદ્ધો ઉપર કપટાઇ ભર્યા વર્તનનું આળ પણ મૂકયું. રાજા બૌદ્ધોની દુષ્ટ વૃત્તિ સમજી ગયો હતો, એટલે એણે કહ્યું કે જે એને હરાવ્યા પછી પકડશે તે તેમ વગર વાંધે કરી શકશે. પછી તેણે પરમહંસને ઇશારો કર્યો, અને એ એનો અર્થ સમજી તુર્ત ત્યાંથી જેમ બને

Aho ! Shrutgyanam

તેમ જલ્દી નાઠો. આમ છતાં ઘોડેસ્વારો એની બહુ જ નજદીક આવી પહોંચ્યા અને એમાંથી એ નીચેની યુક્તિ કરી છુટયો. એક ધોબીને કામ કરતો જોઇ પરમહંસે એને એક ઓચીંતી ચઢાઈ આવે છે એમ કહી ત્યાંથી નાસી જવા સમજાવ્યો અને પોતે એનું કામ કરવું શરૂ કર્યું.[२७] જ્યારે એક ઘોડેસ્વારે એને, કોઇને એ રસ્તે જતો જોયાનું પૂછયું ત્યારે એણે લાંબે દૂર જતા પહેલા ધોબીને બતાવ્યો. સૈનિકોએ ધોબીને પકડયો અને પાછા ફર્યા. આ પ્રમાણે પોતાની પાછળ પડેલાઓથી છુટયા પછી પરમહંસ થોડા દિવસો બાદ ચિત્રકૂટ પહોંચ્યો અને હરિભદ્રને મળ્યો. પોતે અને હંસે શું કર્યું હતું તે બધું તેણે એમને કહ્યું, અને જ્યારે પોતાના ભાઈની મૃત્યુની વાત કરી ત્યારે શોકથી એની છાતી એટલી બધી ભરાઇ ગઇ કે એ ત્યાં જ મરણ પામ્યો. આ પ્રમાણે પોતાના ભાણેજ શિષ્યોના મરણથી હરિભદ્રને બહુ જ દુઃખ લાગ્યું. એમને બૌદ્ધો પ્રત્યે અત્યંત તિરસ્કાર થયો, અને એમનો નાશ કરવાનો એમણે નિશ્ચય કર્યો. તેઓ ત્યારબાદ સુરપાલ પાસે ગયા અને એને પોતાનો ઇરાદો જણાવ્યો. રાજાને ખાત્રી હતી કે હરિભદ્ર એના વિરોધીઓને હરાવશે એટલે એણે બૌદ્ધોના શહેરમાં દૂતને મોકલાવ્યો, અને એ લોકોના ઉપરીને સમજાવી નક્કી કર્યું કે વિવાદમાં જે હારી જાય તેણે ઉકળતા તેલના તાવડામાં ડુબી જવું. બૌદ્ધોને માનીતા ક્ષણ ભંગૂરતાના સિદ્ધાંત ઉપર જ ચર્ચા ચાલી. હરિભદ્રના રદિયાઓનો જવાબ ન આપી શકવાથી સામે વાળા બૌદ્ધને નક્કી કરેલી શીક્ષા સહન કરવી પડી. બીજા કેટલાક બૌદ્ધોએ પણ વિવાદમાં તે જ શીક્ષા સહન કરી. પોતાને મદદ ન આપવા અને હરાવવા બદલ બૌદ્ધોએ તારાદેવીની ખુબ નિન્દા કરી, અને દેવીએ એમને સમજાવ્યું કે હંસ અને પરમહંસને મારી નાંખ્યા તેનું તેજ વ્યાજબી ફળ હતું.

જિનભટે જ્યારે હરિભદ્રે આ પ્રમાણે ઘાતકી વેર લીધાનું સાંભળ્યું ત્યારે એમણે બે ભિક્ષુઓ દ્વારા સમરાદિત્ય કથાના સૂચનવાળી ત્રણ ગાથાઓ એમને મોકલી. હરિભદ્ર આનો અર્થ સમજી ગયા. જેમ અગ્નિશર્માનો ક્રોધ નવ જન્મો પર્યંત ચાલ્યો તેમ એમની બૌદ્ધો તરફની શત્રુતાએ પણ એમને માટે એવું ભયંકર રૂપ પકડયું હોત. તેથી તેઓએ એકદમ રાજાની રજા લીધી, અને પોતાના ગુરુ પાસે ગયા. ખુબ ગ્લાનિપૂર્વક એમણે એમની માફી માગી, અને ગુરુના કહ્યા પ્રમાણે તપશ્ચર્યા કરી. અમ્બાદેવીએ એમને પોતાના દુઃખ માટે હજુ પણ શોક કરવા બદલ ઠપકો આપ્યો. પોતાની પાછળ શિષ્યોની પરંપરા તરીકે પોતે કોઇને ન મૂકી શકયા તે તો એમના કર્મને આધીન હતું. એના બદલામાં એમના પુસ્તકો તેઓનું સ્થાન લેશે. પોતાના ગુરુએ મોકલાવેલી ત્રણ ગાથાના આધારે એમણે સમરાદિત્ય કથા તૈયાર કરી, અને ૧૪૦૦ પ્રકરણો લખ્યા. તે બધામાં પોતાના ભાણેજ શિષ્યોની સ્મૃતિ માટે " વિરહ " ચિહ્ન જોવામાં આવે છે."

પ્રભાવક ચરિતની આ કથા ટુંકામાં કાવ્યની તદ્દન નવી જ શૈલીમાં લખાયેલી છે, અને કેટલીક જગ્યાએ મૂળ પાઠ બરાબર ન સચવાયો હોવાથી કેટલુંક સમજાતું પણ નથી. એક જાતના રાસને લગતી કોઈ જાણીતી વાત ઉપરથી એ રચાયેલી લાગે છે. આને લગતી બીજી એક વાત પણ આપણને રાજશેખરના કથાકોષના અમુક વિભાગના આલેખન ઉપરથી મળે છે. એ વાત તે ઉપર કહી તેને લગભગ મળતી જ છે, પરંતુ કેટલીક વિસ્તૃત બાબતોમાં ફેરફાર પણ છે. કલ્યાણવિજયે એમાનો કેટલોક ભાગ આપ્યો છે તે નીચે મુજબ છે:

" હંસ અને પરમહંસે જિનની મૂર્તિ ઉપર ત્રણ રેખાઓ કરી અને બૌદ્ધની મૂર્તિમાં તેનું પરિવર્તન

૨૭ આ જગ્યાએ મૂળપાઠ ભ્રષ્ટ થયેલા છે. પરિશિષ્ટ પર્વ Viii, 275 ff

Aho ! Shrutgyanam

કર્યું. આ જોતા બૌદ્ધ ગુરુને શંકા પડી, પરંતુ તેઓએ માંદા પડયાનો ઢોંગ કરી બૌદ્ધને લગતી કંઈ નિશાની લઈ ત્યાંથી નાસી છુટયા. એ નિશાની પાછી મેળવવા રાજાએ એમની પાછળ સૈન્ય મોકલ્યું, પરંતુ હંસ અને પરમહંસ સહસ્ર યોદ્ધાઓ[२८] હતા એટલે એમને હરાવ્યા. ત્યારબાદ રાજાએ એક મોટું લશ્કર મોકલ્યું, અને તેની સાથે હંસ લઢવામાં રહ્યો, જ્યારે પરમહંસ પેલી નીશાની લઈ ત્યાંથી નાઠો. શત્રુઓના સંખ્યાબળને લીધે હંસ હારી ગયો, અને તે લોકોએ એનું માથું કાપી લઈ રાજા પાસે રજુ કર્યું, પરંતુ ગુરુએ નિશાની મેળવવાની હઠ પકડી, તેથી સૈનિકો પરમહંસની સોધમાં પાછા નીકળ્યા, અને એને ચિત્રકૂટના દરવાજા આગળ સૂતો જોઈ એનું માથું કાપી લઈ ગયા. હરિભદ્રે જ્યારે એમના ભાણેજ શિષ્યનું શબ જોયું ત્યારે એમને ભયંકર ક્રોધ થયો. તેમણે ઉકળતા તેલના તાવડા તૈયાર કર્યા અને મંત્રવડે ૧૪૪૦ બૌદ્ધોને[२९] આકાશ માર્ગે આકર્ષી એમનું બલિદાન કરવા આરંભ્યું. એટલામાં એમના ગુરુએ ત્રણ ગાથાઓ મોકલી જેથી હરિભદ્રનો ક્રોધ શાંત પડયો, અને પોતાના વિકાર અને પાપના નિવારણ માટે એમણે ૧૪૪૦ ગ્રંથો બનાવ્યા."

જેને દંતકથાઓની પ્રગતિ વિષે કંઈ જાણવું હોય તેને આગળ કહી તે કથા અને આ કથાની સરખામણી ભલે રસપ્રદ થાય, પરંતુ ઝીણવટથી જોનાર અભ્યાસી, આ બંનેને હરિભદ્રના જીવનના ઐતિહાસિક મૂળ તરીકે બીલ્કુલ નહિ સ્વીકારે. હરિભદ્રને હંસ અને પરમહંસ નામના બે ભાણેજ શિષ્યો હતા, અને તેઓ બૌદ્ધ સિદ્ધાંત ચોરી છુપીથી શીખવા જતા મરણ પામ્યા તે આ દંતકથાનો મૂળ પાયો કહેવાય, અને આમાં કંઈ ખાસ ન મનાય તેવું નથી, પરંતુ એટલું પણ બહુ જ સાવચેતીપૂર્વક સ્વીકારવું જોઈએ. હરિભદ્રે સમરાઇચ્ચિકહા તૈયાર કર્યા બાબતની દંતકથાને આપણે બીજા પ્રકરણમાં ચર્ચીશું.

પ્રભાવક ચરિતમાં બીજી પણ કેટલીક બાબતો નોંધવા જેવી છે. તેથી હું એ ગ્રંથના ૯ મા શૃંગના છેવટના વિભાગનો અમુક ભાગ અહિં ઉમેરૂં છું.

"હરિભદ્રે કાર્પાસિકને એના ભારત અને ઇતિહાસ તરફના મોહમાંથી દૂર કર્યો, અને ધૂર્તોની પાંચ કથાઓ[३०] કહી એને જૈનધર્મ તરફ આકર્ષ્યો. એમણે એના પોતાના ગ્રંથોની એક નકલ કરાવીને યતિ લોકોમાં તે વ્હેંચવાનો આદેશ કર્યો. બીજા લોકો પાસે એમણે ૮૪ મંદિરો એક પીઠ ઉપર કરાવરાવ્યા. એક જીર્ણ પ્રત ઉપરથી એમણે મહનિશીથ સૂત્ર રચ્યું. છેવટે અનશન કરી પોતાના જીવનનો અંત આણી હારિભદ્ર સ્વર્ગે ગયા."

---

૨૮ યુદ્ધપૂર્વે એમના दृष्टिमेलापक નો ઉલ્લેખ છે જેનો અર્થ સ્પષ્ટ નથી.

૨૯ આ વિગત મહાભારતમાં (અધ્યાય ૧, શ્લોક ૫૧)માં આવતા જન્મેજયના સર્પસત્રનું રૂપાંતર છે.

૩૦ આમાં સ્પષ્ટ રીતે એમના પ્રાકૃત ગ્રંથ ધૂર્તાખ્યાનનો ઉલ્લેખ છે.

Aho ! Shrutgyanam

મહાકવિ ધનપાલ વિરચિત વિરોધા ભાસાલંકારમય

श्री महावीर स्तुति

[વિવેચક-પં. શ્રી બેચરદાસ જીવરાજ]

સંપાદકશ્રીએ મહાકવિ ધનપાલનો પરિચય આગળ આપેલો છે, મારે તો માત્ર એમની કવિત્વપૂર્ણ સ્તુતિઓ, સ્તુતિઓની ભાષાનો ચમત્કાર, પ્રાકૃતભાષાનું ગાંભીર્ય એ વિષે થોડુંક સૂચવવાનું છે.

આ સ્તુતિઓ મહાકવિ ધનપાલની છે એ તો સ્તુતિઓના અંતિમ કાવ્યમાં કવિએ પોતાનો નામનિર્દેશ ભંગ્યંતરથી કરેલો છે તે દ્વારા જાણી શકાય છે. પણ ધનપાલ નામના કવિઓ એકકરતાં વધારે થયા છે એટલે એમ સંદેહ થાય કે, આ સ્તુતિઓ કયા ધનપાલની છે? તિલકમંજરીના પ્રણેતા ધનપાલ કવિની છે કે બીજા કોઇ ધનપાલની? એ પ્રશ્નનું નિરાકરણ પણ પ્રભાવકચરિત્રના ઉલ્લેખથી થઇ જાય છે. પ્રભાવકચરિત્રના પ્રણેતા પ્રભાચંદ્રસૂરિએ મહેન્દ્રસૂરિના પ્રબંધમાં જ્યાં ધનપાલના ચરિતનું વર્ણન છે ત્યાં જણાવ્યું છે કે, શોભનમુનિના ભાઇ અને તિલકમંજરીના પ્રણેતા ધનપાલ મહાકવિએ ભગવાન મહાવીરની વિરોધાભાસ અલંકારથી અલંકૃત એવી મનોરમ સ્તુતિઓ બનાવેલી છે. આ ઉપરથી હવે એ શંકાને સ્થાન જ નથી કે 'આ સ્તુતિઓ કયા ધનપાલની છે'?

ભગવાન મહાવીરમાં સ્તુતિકારની શ્રદ્ધા અચલ અને ભક્તિ અતિશયિત છે એ તો સ્તુતિઓ વાંચતાં જ સમજાઇ જાય છે. સ્તુતિઓમાં કવિત્વ તો પદે પદે મ્હેંકી રહ્યું છે. સ્તુતિઓની ભાષા પ્રાકૃત છે, મહાકવિ ધનપાલનો પ્રાકૃતભાષા ઉપરનો અંકુશ પણ અસાધારણ દેખાય છે. કહેવાય છે કે, પ્રાકૃત-ભાષા જેવી કોમલ છે તેવી ગંભીર પણ છે. આ સ્તુતિઓને વાંચનાર એ હકીકતને સ્પષ્ટપણે સમજી શકે એમ છે. એકએક પ્રાકૃત શબ્દનું મૂળ સંસ્કૃત કેવી કેવી વિલક્ષણ રીતે ઉદ્ભવે છે એ તો આ સ્તુતિઓ દ્વારા કૌતૂકપૂર્વક વાંચનાર જોઇ શકશે. પ્રાકૃતભાષાના આવા વિલક્ષણ ગાંભીર્યને લીધે જ કદાચ એમ કહેવામાં આવ્યું હોય **एगस्स सद्दस्स अणंतो अत्थो.**

આ બધા શ્લેષવાળી સ્તુતિઓમાં ક્યાંય શબ્દથી અને ક્યાંય અર્થથી એમ બન્ને રીતે વિરોધાભા-સને ગોઠવવામાં આવ્યો છે. એ બન્ને અલંકારોને સમજાવવાનું આ સ્થાન નથી પણ આચાર્ય હેમચંદ્રે પોતાના કાવ્યાનુશાસનમાં શ્લેષ અને વિરોધાભાસનાં જે લક્ષણો આપ્યાં છે તેને જ અહીં દર્શાવી દઉં છું:—

अर्थभेदभिन्नानां भंगाभंगाभ्यां युगपदुक्तिः श्लेषः ।

કાવ્યાનુશાસન-અ. ૫. પૃ. ૨૨૭.

अर्थानां विरोधाभासो विरोधः ।

કાવ્યાનુશાસન-અ. ૬. પૃ. ૨૬૯.

આ સ્તુતિનો અનુવાદ કરતાં અનુવાદકના ચિત્ત ઉપર મહાકવિ ધનપાલની જ્વલંત ભક્તિની ઉંડી છાપ પડી છે અને એમ પણ થઇ આવ્યું કે, જો સંતો પ્રત્યે આવી ભક્તિ પ્રકટે, હૃદયમાં ઉતરે તો આ કલિયુગમાં પણ જીવનવિકાસ વિશેષ દૂર ન રહે. શાસનદેવ એવી ભક્તિ તરફ સૌને પ્રેરો.

[પં. સુખલાલજી પુરાતત્ત્વ મંદિરને કામે પાટણ ગયેલા તે સમયે તેઓ ત્યાં રહેલા મુનિરાજો પાસે પણ ગયેલા. ત્યાં એક મુનિશ્રી પાસે એમણે પોતે કોઇ અસલ પ્રત ઉપરથી ઉતારેલું આ સ્તુતિ-

Aho ! Shrutgyanam

ઓનું પાનું હતું, તે પાનાને પંડિતજી પાછા ફર્યા ત્યારે સાથે લાવેલા અને એ ઉપરથી જ આ અનુવાદ થએલો છે. મુનિશ્રીએ પોતાના નામને પ્રકટવાની અનિચ્છા દર્શાવેલી તેથી તેઓનું નામ અહીં નથી આપી શકતો પણ તેમને ધન્યવાદ તો જરૂર આપું છું.]

હવે નીચે મૂળસાથે સ્તુતિઓનો અનુવાદ આપવામાં આવે છેઃ-

निम्मलणहे वि अणहे जिणाण चलणुप्पले पणमिऊण ।
वीरमविरुद्धवयणं थुणामि स-विरुद्धवयणमहं ॥ १ ॥

ભાવાર્થ—તે હું શ્રીજિનોના ચરણોને પ્રણમીને શ્રીવીરની સ્તુતિ કરૂં છું.

કેવા છે શ્રી વીરના ચરણો ?–'નિમલણહ' યુક્ત છતાંય 'અણહ'.

કેવા છે શ્રી વીર ?–'અવિરૂદ્ધવયણ' છતાંય 'સવિરૂદ્ધવયણ'.

સ્પષ્ટીકરણ—निम्मलणह. अणह.—'નખ' શબ્દનું પ્રાકૃતરૂપ 'ણહ' થાય છે એથી 'નિમ્મલણહ' યુક્ત એટલે નિર્મલ નખવાળા. આવા છતાંય એ ચરણો 'અણહ' એટલે નખવિનાના (અ = નહિ, ણહ = નખ)–જે ચરણો નિર્મલ નખયુક્ત હોય તે અનખ કેમ હોય ? આ રીતે તો આ કથનમાં વિરોધ થાય છે.

તેનો પરિહાર આ પ્રમાણે કરવો–

'અણહ' એ પ્રાકૃતરૂપનાં સંસ્કૃત બે રૂપો થાય છે. અનખ અને અનઘ. 'અનખ' તો ઉપર વિરોધી અર્થમાં આવી ગયું. 'અનઘ' એટલે નિષ્પાપ–પવિત્ર (અ = નહિ, અઘ = પાપ) અર્થાત્ એ ચરણો નિર્મલ નખવાળા છે અને અનઘ–નિષ્પાપ–પવિત્ર–છે આ રીતે વિરોધનો પરિહાર થયો.

अविरुद्धवयणं. सविरुद्धवयणमहं.—જેનું વચન પરસ્પર અવિરૂદ્ધ છે એવા વીર ભગવાન્. વળી કેવા ? તો કહે છે કે, એ વીર અવિરૂદ્ધ વચન છતાંય સવિરૂદ્ધ વયણ–સવિરૂદ્ધ વચન–છે. અહિં જે વીર અવિરૂદ્ધવચન હોય તે સવિરૂદ્ધવચન કેમ હોઈ શકે ? એ વિરોધ થયો.

सविरुद्धवयणमहं.—આ શબ્દનું 'સવિરૂદ્ધ-વચનમથમ્' એવું પણ સંસ્કૃત રૂપ થાય છે. એનો અર્થ સવિરૂદ્ધવચનોને મથનાર અર્થાત્ જેઓ પરસ્પર વિરૂદ્ધવચનોવાળા છે–એકાંતવાદીઓ છે–કદાગ્રહશીલ છે તેઓને મથનાર–તેવા ઉપર વિજય મેળવનાર એવા વીર સ્વામી છે. આ પક્ષમાં 'અહમ્' શબ્દને '**थुणामि**' ઉપરથી અધ્યાહૃત સમજવો.

કેટલાક સ્તુતિકારો '**सः**' અને '**अहम्**' એ બન્ને સર્વનામોને એક જ સાથે પ્રયોજે છે. સરખાવો–
"**सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश**"
ભક્તામર સ્તોત્ર. શ્લો. ૫.

'**सः**' સર્વનામમાં પરોક્ષતાનો અને '**अहम्**' સર્વનામમાં પ્રત્યક્ષતાનો ભાવ છે અર્થાત્ તે એવો હું–પરોક્ષ એવો હું–અપ્રસિદ્ધ એવો હું. આ ઉપરથી એમ જણાય છે કે, '**सः**' અને '**अहम्**'નો પ્રયોગ સાથે મૂકવાથી પ્રયોગ કરનાર પોતાની જાતનો નિર-ભિમાનભાવ સૂચવે છે. આ સ્તોત્રનો રચયિતા ધનપાલ પણ આ ગાથામાં એકપક્ષે '**सः**' અને '**अहम्**'ને સાથે મૂકીને પોતાની નમ્રતા દર્શાવે છે.

अणह ઉપરથી अनख, अनघ.

सविरुध्धवयणमहं ઉપરથી सविरुध्धवचनम् अहम्
—सविरुध्धवचनमथम्

જુઓ ૮–૧–૧૮૭ તથા ૮–૧–૧૭૭ હૈમ-પ્રાકૃત વ્યાકરણ.

(અહીં જે સૂત્રો આપવામાં આવ્યાં છે તે હૈમ પ્રાકૃત વ્યાકરણના જ જાણવા.)

પ્રાકૃત સૂત્રોમાં બહુલાધિકારની પ્રધાનતા છે એ વાત કોઈ પણ પ્રાકૃતપ્રયોગની સિદ્ધિ કરતાં ભૂલવી જોઈતી નથી.

Aho ! Shrutgyanam

खवियकसायचउक्को वि नो कसायक्खयं कह करेसि ।
कह नट्ठनाम-गुत्तो जयगुरू जयपायडो होसि ? ॥ २ ॥

સ્તુતિકાર ધનપાળ કહે છે કે—

હે ભગવાન ! તમે તો ચારે કષાયોનો–ક્રોધ માન માયા લોભનો–સમૂળ નાશ કરેલો છે. છતાંયે તમે અમારા એ કષાયોનો ક્ષય શી રીતે કરી શકો છો ?

કોઇનો ક્ષય કરવા માટે ક્ષય કરનારમાં ક્રોધ વગેરેની વૃત્તિઓ હોય છે એ લોકપ્રતીત છે. એ ઉપરથી જ કવિ કહે છે કે તમે તો ક્રોધ વગેરેની વૃત્તિથી તદ્દન ઉપરત છો છતાં અમારી એ ક્રોધ વગેરેની વૃત્તિઓનો ક્ષય કરી શકો છો એ આશ્ચર્ય કહેવાય.

કલ્યાણમંદિરના પ્રણેતા સન્મતિ સિદ્ધસેન પણ એ જ કહે છે કે—

क्रोधस्त्वया यदि विभो प्रथमं निरस्तो,
ध्वस्तास्तदा बत कथं किल कर्मचौराः । श्लो. १३

હે ભગવન્ ! તમે સૌથી પ્રથમ ક્રોધને ભગાડી મૂકયો. તો પછી જે કર્મચૌરો શેષ રહેલા હતા તેને શી રીતે ભગાડયા ? ચૌરોને ભગાડવા માટે તો ક્રોધની જરૂર છે.

આ વિરોધના સમાધાનમાં મહાકવિ ધનપાળ કહે છે કે, જેમ કેટલીક વાર ભગાડવામાં ક્રોધની વૃત્તિ અપેક્ષિત હોય છે પણ એ તો સાધારણ મનુષ્યોમાં તેમ હોય, આ મહાપુરુષ તો અસાધારણ કોટિના છે એટલે એમણે પ્રથમ ક્રોધનો ધ્વંસ કરી પોતાની વૃત્તિમાં અત્યંત શીતળતા ભરી દીધી, અને એ શીતળતા દ્વારા જ એમણે બાકીના કર્મચૌરોને નસાડી મૂકયા. અત્યંત શીતળ હિમ પડવાથી પણ હજારો ક્ષેત્રો બળીને ભસ્મ થઈ જાય છે એ વાત કાંઈ અપ્રસિદ્ધ નથી. અર્થાત શીતળતા પણ એક જાતનું ધ્વંસક શસ્ત્ર છે. એ જ પ્રમાણે ભગવાને પોતાના ચારે કષાયોને ખપાવી નાખ્યા છે. છતાં જે એમના પ્રભાવથી અમારા એ કષાયો મટી જાય છે એ કાંઈ આશ્ચર્ય નથી એ તો એમની શીતળતાનો જ પ્રભાવ છે.

સરખાવો—

नहि वेरेन वेरानि सम्मन्तीध कुदाचनं ।
अवेरेन च सम्मंति एसधम्मो सनंतनो ॥
धम्मपद, यमकवर्ग श्लो. ५

कृतापराधेऽपि जने कृपामन्थरतारयोः ।
ईषद्बाष्पार्द्रयोर्भद्रं श्रीवीरजिननेत्रयोः ॥
આચાર્ય હેમચંદ્ર, સકલાર્હતસ્તોત્ર શ્લો. ૨૭

पन्नगे च सुरेन्द्रे च कौशिके पादसंस्पृशि ।
निर्विशेषमनस्काय श्री वीरस्वामिने नमः ॥
યોગશાસ્ત્ર, પ્રારંભમાં જ.

એ તો થયું પૂર્વાર્ધ હવે ઉત્તરાર્ધ લઇએ—

મહાકવિ ધનપાળ કહે છે કે,—હે ભગવન્ ? જેમનાં નામ અને ગોત્રો પ્રસિદ્ધ હોય છે તે જ સંસારમાં પ્રકટ પુરુષ તરીકે અને માન્ય તરીકે ઓળખાય છે. પણ તું તો નામ અને ગોત્રનો નાશ કરીને જ જગતમાં પ્રકટ થયો છે અને જગદ્ગુરુ તરીકે પૂજાય છે એ શું આશ્ચર્ય નથી ?

એ આશ્ચર્યના સમાધાન માટે નીચે પ્રમાણે સમજવાનું છે.

'નામ' અને 'ગોત્ર' શબ્દના બે અર્થ છે. એક અર્થ તો જે પ્રસિદ્ધ છે તે અને બીજો અર્થ નામ એટલે નામકર્મ (નામ સંસ્કાર પોષક કર્મ) ગોત્ર એટલે ગોત્રકર્મ (ગોત્ર સંસ્કારપોષકકર્મ) અર્થાત્ જૈનયોગીઓનો એ આત્મ-અનુભવ છે કે, જ્યાં સુધી નામકર્મ અને ગોત્રકર્મનો નાશ ન થાય ત્યાં સુધી કોઇ પુરુષને પરમપૂર્ણતાએ પહોંચેલ સુપ્રસિદ્ધ કે જગદ્ગુરુ તરીકે ન માની શકાય. જૈનેતર ભાષામાં કહીએ તો નામાતીત અને ગોત્રાતીત થયા સિવાય પરમપૂર્ણતાએ પહોંચાતું નથી–અમુક નામ કે અમુક ગોત્ર એ પણ એક પ્રકારની સંકીર્ણતા છે. અર્થાત્ નામ અને ગોત્ર નષ્ટ થવાથી જ ભગવાન્ સુપ્રસિદ્ધ અને જગદ્ગુરુ છે. એમાં કાંઈ આશ્ચર્ય નથી પણ

Aho ! Shrutgyanam

એ તો બરાબર બંધબેસતું છે. આ હકીકતમાં રહેલી અત્યંત વિશાળતા કાંઈ અજાણી રહે એવી નથી.

આ ગાથામાં શબ્દનો વિરોધ થતો નથી. પણ ભાવનો વિરોધ થાય છે.

कह नायकुलुप्पण्णो वि नाह सुरसंपयं न पत्थेसि ।
उव्वहसि मोहनिद्दारओ वि कह सासयं बोहं ? ॥ ३ ॥

આ ગાથામાં પહેલી ગાથાની જેમ શબ્દચ્છલ છે.

नायकुलुप्पण्णो. सुरसंपयं—હે નાથ! જે મનુષ્ય 'નાય' (નાગ) કુલમાં જન્મેલો હોય તે તો સરસ દુગ્ધપાનની જ ઇચ્છા રાખે. પણ તું તો નાય (જ્ઞાત) કુલમાં જન્મેલો છતાં સુરસ દુગ્ધપાનને કેમ નથી ઇચ્છતો ?

અથવા **सुरसंपयं**-હે નાથ! જે મનુષ્ય નાય (જ્ઞાત) કુલમાં એટલે સુપ્રસિદ્ધ કુલમાં જન્મેલો હોય તે તો સુરસંપદાની અભ્યર્થના કરે અર્થાત્ પોતે જે પ્રસિદ્ધ કુળવટ ભોગવતો હોય તે કરતાં અધિક સમૃદ્ધિને ઇચ્છે પણ તું તો એવો છતાંય સુરસંપદાને નથી વાંછતો એ કેવું આશ્ચર્ય ?

मोहनिद्दारअ—વળી, હે નાથ! તું મોહ-નિદ્દારઅ (મોહનિદ્રામાં રત) છતાં ય શાશ્વત બોધને ધારણ કરી શકે છે. જે લોકો મોહનિદ્રામાં રત હોય છે તેઓને તો કશું ભાન જ નથી હોતું, પણ તું તો તેવો છતાં ય તેથી વિપરીત છે એ કેવું વિચિત્ર ?

પૂર્વાર્ધના વિરોધનો પરિહાર આ પ્રમાણે છેઃ—

सुरसं पयं नाऽह न पत्थेसि—ભગવન્! તું જ્ઞાત નામના કુલમાં જન્મેલો છે એથી જ સુરસ પદને એટલે સારા રસવાળા સ્થાનને અર્થાત્ અચળ સ્થાનને નથી ઇચ્છતા એવું નથી અર્થાત્ ઇચ્છે જ છે.

ઉત્તરાર્ધના વિરોધનો પરિહાર—

ભગવન્! તું **मोह निद्दारअ** (મોહ નિર્દારક) એટલે મોહનો નાશ કરનારો હોવાથી જ શાશ્વત બોધને ધારણ કરે છે-શાશ્વત બોધની પ્રાપ્તિ તેને જ સંભવે જેણે મોહનો નાશ કરેલો હોય.

આ ઉત્તરાર્ધ સાથે સરખાવો—

अज्ञानवत्यपि सदैव कथंचिदेव
ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्वविकाशहेतुः ।

કલ્યાણમંદિરસ્તોત્ર, શ્લો. ૩૦

अज्ञानवति-એ એક અખંડ સપ્તમ્યંત પદ અને **अज्ञान् अवति** આ બે પદ-એક કર્મ અને બીજું ક્રિયાપદ.

કલ્યાણમંદિરસ્તોત્રના આ શ્લોકમાં જેમ પદ-ચ્છેદના વૈચિત્ર્યને લીધે જે વિરોધી અને અવિરોધી ભાવ નિષ્પન્ન થાય છે તેમ એ જ બન્ને ભાવ, આ ઉત્તરાર્દ્ધમાં '**मोहनिद्दारअ**' શબ્દનાં 'મોહનિદ્રા રત' અને 'મોહનિર્દારક' એવાં બે સંસ્કૃતરૂપો દ્વારા પ્રકટ થાય છે.

'**नाय**' ઉપરથી 'જ્ઞાત' અને 'નાગ' માટે જૂઓ ८-१-१७७ ।

त्न ज्ञो णः— ८-२-४२ ।

सुरसंपयं (**सुरसं पयः**)
" (**सुरसं पदम्**)
" (**सुरसंपदम्**)

'**नाथ, न अथ**,' '**सुरसं पयं, सुरसंपयं**' આ બન્ને પદોમાં તો પદચ્છેદની વિચિત્રતા છે. पयं ઉપરથી पयः અને पद માટે જૂઓ ८-१-१७७

'**मोहनिद्दारअ**' ઉપરથી મોહનિદ્રારત તથા મોહનિર્દારક એ બન્ને માટે જૂઓ

८-१-१७७, ८-२-७९

न + अथ = नाथ = नाह માટે જૂઓ ८-१-१८७

अरिहसि न मुत्तिअग्घं कह तं गयरायमत्थयमणी वि ।
कह पहु ! पहूअरयणासओ वि रयणत्तयं वहसि ? ॥ ४ ॥

Aho ! Shrutgyanam

આ ગાથામાં પણ માત્ર શાબ્દિક વિરોધ છે.

न मुत्तिअग्घं गयरायमत्थयमणी.–હે પ્રભો! તું મોતીના અર્ધ્યને યોગ્ય નથી. તો પછી ગજરાજના મસ્તકમાં જે ઉત્તમ મણિઓ છે તેના અર્ધ્યને તો કેમ યોગ્ય હો અર્થાત્ ન જ હો છતાં એ યોગ્યતા તારામાં લાગે છે. એ પહેલો વિરોધ.

पभूअरयणाऽऽसओ रयणत्तयं–વળી, તું ઘણા રત્નોનો આશ્રયરૂપ છો અર્થાત તારી પાસે તો રત્નોનો ભંડાર છે છતાં તું ત્રણ જ રત્નને કેમ ધારણ કરે છે? એ બીજો વિરોધ.

नमु त्ति अग्घं, गयरायमत्थयमणी.–હે પ્રભો! તું ગતરાગમસ્તકમણિ છો એટલે વીતરાગોમાં શ્રેષ્ઠ છો માટે જ તું '**नमः**' એ જાતના અર્ધ્યને યોગ્ય છો એ પહેલા વિરોધનો પરિહાર.

पहूअरयणासओ. रयणत्तयं–હે પ્રભો! તું પ્રભૂત-પુષ્કલ રજો એટલે પાપોનો નાશક છો માટે જ રત્નત્રયને-પરાકાષ્ઠાપ્રાપ્ત સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રનો ધારક છો. જે મહાપુરુષ સમસ્ત પાપોનો નાશક હોય તે જ ઉત્તમકોટિ પ્રાપ્ત એ સમ્યગ્દર્શનાદિને ધારણ કરી શકે છે એ વાત જૈન શાસ્ત્ર સંમત છે.

અથવા **पहूअरयणाऽऽसओ रयणत्तयं**–હે પ્રભો! તું અનેક પ્રકારની શાસ્ત્રરચનાનો આશ્રય છો અર્થાત્ સમસ્ત દ્વાદશાંગગણિપિટક તારી ત્રણ શબ્દ રચનામાંથી જ–'**उप्पन्नेइ वा, विगमेइ वा, धुवेइ वा**' એ ત્રિપદીમાંથી જ–વિસ્તર્યું છે એથી તું રચનાત્રયનો ધારક છો એ વ્યાજબી જ છે. એ બન્ને ભાવથી બીજા વિરોધનો પરિહાર.

न मुत्तिअग्घं = न मौक्तिकार्घम् ।
नमु त्ति अग्घं = नम इति अर्घम् ।
गयरायमत्थयमणी = गजराजमस्तकमणीन् ।
અથવા गतरागमस्तकमणिः ।
पहूअरयणाऽऽसओ = प्रभूतरत्नाश्रयः ।
पहूअरय-णासओ = प्रभूतरजोनाशकः ।
पहूअरयणाऽऽसओ = प्रभूतरचनाश्रयः ।
रयणत्तयं = रत्नत्रयम्
અથવા रचनात्रयम् ।

रत्न ઉપરથી **रयण** માટે જૂઓ ૮-૨-૧૦૧

ભગવાન બહુરત્નવાળા છે છતાં માત્ર ત્રણ રત્નો જ ધારણ કરે છે એ વિરોધી ભાવ સાથે સરખાવો.

विश्वेश्वरोऽपि जनपालक ! दुर्गतस्त्वम् ।

કલ્યાણમંદિર શ્લો. ૩૦

હે જનપાલક ભગવાન્! તું વિશ્વનો ઇશ્વર છતાં ય દુર્ગત છો એટલે તને કોઇ જાણતું પણ નથી. (દુર્ગતના બે અર્થ 'દરિદ્ર' અને 'દુર્ગમ્ય')

कह गयकलहो वि भवोअहिम्मि पोओसि समणसीहाणं ।
एणारी वि महायस ! कह देसि सुहं सुहत्थीणं ? ॥ ५ ॥

गयकलहो. समणसीहाणं. पोओ.–હે મહાયશસ્વી મહાવીર! તું **હાથીના બચ્ચા જેવો** છતાંય સંસારસમુદ્રમાં ફરતા **મનસ્વી સિંહોના પોત** (બચ્ચા) જેવો છે એ કેમ બની શકે?–જે હાથીનું બચ્ચું હોય તે સિંહશાવક કેમ હોઈ શકે?–

एणारी. सुहत्थीणं.–વળી, હે ભગવન્! તું **એણારિ** (મૃગોનો શત્રુ અર્થાત્ સિંહ) છતાંય **સુહસ્તિઓને** સુખ કેમ આપી શકે?–સિંહ હસ્તિઓને સુખ આપે એવું તો ક્યાંય જાણ્યું નથી.

વિરોધનો પરિહાર—

गयकलहो. समणसीहाणं. पोओ–હે મહાયશવાળા વીર! તું **કલહરહિત** છો માટે જ ભવસમુદ્રમાં ફરતા **શ્રમણસિંહોને પોત** (વહાણ) સમાન છો અને **एणारो सुहत्थीणं** તું **એણારી** (પાપનો શત્રુ) છો માટે જ **સુખાર્થિઓને** સુખ આપી શકે છે.

આ ગાથામાં પણ શબ્દ ચમત્કાર જ છે.

Aho ! Shrutgyanam

कलह ઉપરથી **કલભ** અને **કલહ** માટે જૂઓ. ૮-૧

पोत એટલે બાળક તથા વહાણ.

" पोतः शिशौ प्रवहणे "

હૈમ-અનેકાર્થ સં૦ ૨, ૧૭૮.

समण ઉપરથી **સમનસ્** તથા **શ્રમણ**

पणारि ઉપરથી **पण + अरि पणारि** અને

पनोऽरि पनस् + अरि = पणस् + अरि જૂઓ **नो णः** ८-१-२२८

पण + अरि = अन्त्यव्यञ्जनस्य ८-१-११

पणारि = समानानां तेन दीर्घः १-२-१

એનસ્ એટલે પાપ.

" वृजिनं कलिनमेनो दुष्कृतम् "

ધનંજયનામમાલા. ૧૩૨

सुहत्थी ઉપરથી **सुहस्ती** અને સુખાર્થી માટે જૂઓ—૮-૨-૪૫ स्त=थ
८-१-१८७ **ख=ह**
८-२-७९ **रेफलोप**
८-२-८९ 'थ'નો **द्विर्भाव**

परिणयवयं सुराऽऽवज्जियं पि संतावयं पि नयणसुहं ।
कह सत्तहत्थमाणं पि वहसि नवहत्थमप्पाणं ॥ ६ ॥

હે ભગવન્! તું સાત હાથના દેહને ધારણ કરે છે, એ દેહ કેવો છે? તો કહે છે કે,

सुराऽऽवज्जियं पि परिणयवयं,-એ દેહ સુરાથી (મદિરાથી) આવર્જિત છે છતાંય પરિપક્વ વ્રતવાળો કે પરિપક્વ વચનવાળો છે. ખરી રીતે તો દારૂડિયાના દેહમાં નથી હોતું પરિપક્વ વ્રત કે તેવું વચન. તું તો તેવો છતાંય વળી વ્રતમાં અને વચનમાં પરિપક્વતા ધરાવે છે એ આશ્ચર્ય છે.

संतावयं-વળી, તારો દેહ સંતાપક (સંતાપ દેનારો) છતાંય નયનોને સુખરૂપ લાગે છે.-જે વસ્તુ સંતાપ દેતી હોય તે આંખને સુખરૂપ કેમ હોઇ શકે?

सत्तहत्थमाणं पि नवहत्थमप्पाणं-વળી, એ દેહ કેવો છે? તો કહે છે કે, દેહ તો સાત હાથનો છે છતાંય નવ હાથનો છે એ કેવી વાત? જે સાત હાથ ઉંચું હોય તે નવ હાથ ઉંચું કેમ હોઇ શકે?

વિરોધનો પરિહાર—

सुराऽऽवज्जियं,-હે ભગવન્! તારી આસપાસ સુરો (દિવ્યપુરૂષો, યોગીઓ, અનુભવીઓ અને જ્ઞાનીઓ) વિંટળાઇ રહેલા છે તેથી જ એમ જણાય છે કે, તારૂં વ્રત અને વચન પરિણત-પરિપક્વ-છે અથવા હે ભગવન્! તારો આત્મા **સુરાવર્જિજય** (શૌર્યથી આવર્જિત) છે તેથી જ તારા વ્રતમાં અને વચનમાં પરિપક્વતા છે. (અહીં 'શૂર' શબ્દ ભાવપરક-શૌર્યપરક ઘટાવવો).

संतावयं,-તથા તારો દેહ શાંતાપદ (આપત્તિ-ઓથી મુક્ત) છે એથી જ આંખોને પ્રિય લાગે છે.

न वहत्थं अप्पाणं,-અને તું તારી જાતનો ઉપયોગ કોઇના વધ માટે નથી જ કરતો, એ પણ પ્રિયતાનું બીજું કારણ છે.

परिणयवयं ઉપરથી પરિણતવ્રત અને પરિ-ણતવચસ્-

संतावयं ઉપરથી સંતાપકં અને શાંતાપદમ્--

सुराऽऽवज्जियं ઉપરથી **सुरा + आवर्जित**
सुर + आवर्जित
शूर + आवर्जित

'**शूर**'નું પ્રાકૃત '**सूर**' થાય છે. શ્લેષ કાવ્યોમાં હ્રસ્વદીર્ઘનો ભેદ નથી ગણાતો તેથી જ મૂલના હ્રસ્વ '**सुर**'ને દીર્ઘ '**सूर**' માનીને પણ અર્થયોજના કરેલી છે.

नवहत्थ ઉપરથી **नवहस्त** અને **न वधार्थ**.

'**नवहस्त**' સમજતી વખતે એ એક અખંડ પદ છે અને '**न वधार्थ** સમજતી વખતે એ બે પદ છે-એક નિષેધાર્થક '**न**' અને બીજું **वधार्थ**.

Aho ! Shrutgyanam

गयागारवं पि गरुअं नयणाण महूसवं पि सिसिरमहं ।
तं विंति खीणमोहं पि कह णु पढमं गुणट्ठाणं ॥ ७ ॥

गयगारवं. गरुअं.–હે ભગવન્! તું ગતગૌરવ છતાંય તને લોકો ગુરુરૂપ કહે છે–ગુરુરૂપ તો તે જ હોઈ શકે જે ગૌરવયુક્ત હોય ત્યારે તું તો ગૌરવરહિત છતાંય ગુરુરૂપ છે એ આશ્ચર્ય છે.

महूसवं. सिसिरमहं.–વળી તું, નેત્રોની પ્રસન્નતાને માટે મધૂત્સવરૂપ છતાંય તને લોકો શિશિરોત્સવરૂપ જાણે છે–મધૂત્સવ ચૈત્ર માસમાં હોય છે અને શિશિરોત્સવ કાર્તિક–માગશર માસમાં હોય છે એથી જે મધૂત્સવરૂપ હોય તે શિશિરોત્સવરૂપ કેમ હોઇ શકે?

खीणमोहं. पढमं गुणट्ठाणं.–તું ક્ષીણ મોહ છતાંય તને લોકો પ્રથમ ગુણસ્થાનરૂપ સમજે છે. (જૈનપરિભાષામાં આત્મવિકાસની ચૌદ શ્રેણીઓ દર્શાવવામાં આવી છે. તેમાં પહેલી શ્રેણીનું નામ 'પ્રથમ ગુણસ્થાન' છે અને છેલ્લી શ્રેણીનું નામ 'ક્ષીણમોહ' છે.) તો હે ભગવન્! તું ક્ષીણમોહ-નામક છેલ્લી શ્રેણીએ પહોંચેલો છે છતાંય તને લોકો પ્રથમ ગુણસ્થાનરૂપ સમજે છે એ તો મોટો વિરોધ થયો.

गयगारवं. गरुअं.–'ગૌરવ' શબ્દનો એક અર્થ તો 'ગુરુત્વ' થાય છે; અને બીજો અર્થ ઋદ્ધિ, રસ અને સુખની લોલુપતા છે. આ બીજો અર્થ માત્ર જૈનપરિભાષામાં જ પ્રસિદ્ધ છે.

વિરોધીભાવ સમજતી વખતે પહેલો અર્થ યોજવાનો છે અને પરિહાર કરતી વખતે આ બીજો અર્થ ઘટાવવાનો છે. અર્થાત્–હે ભગવન્! તું 'ગતગારવ' એટલે ધનાકાંક્ષા, સ્વાદાકાંક્ષા અને સુખલોલુપતા રહિત છો માટે જ લોકો તને ગુરુરૂપે સમજે એ ઉચિત છે. વળી,

महूसवं. सिसिरमहं.–તું આંખોની પ્રસન્નતા સારૂ મહોત્સવરૂપ છો માટે જ તને શીતળરૂપ સમજવો એ અવિરૂદ્ધ વાત છે. અથવા તું મહોત્સવરૂપ છો અને જડતાનો જડમૂળથી મથક–નાશક–છો માટે જ તને મહોત્સવરૂપે અને 'શિશિરમથ'રૂપે માનવો વ્યાજબી છે. તથા,

खीणमोहं. पढमं गुणट्ठाणं.–તું ક્ષીણમોહ છો માટે જ લોકો તને ગુણના પ્રથમસ્થાનરૂપે સમજે એ પણ ઉચિત છે. જે ક્ષીણમોહ–વીતરાગ–હોય તે જ ગુણોના આદ્યસ્થાનરૂપે હોઈ શકે, બીજો એવો કેમ હોઈ શકે?

વિરોધી ભાવ સમજવા માટે **पढमं गुणट्ठाणं** ના પૂર્વોક્ત જૈનપારિભાષિક અર્થની ભાવના કરવી અને તેના પરિહાર માટે એ શબ્દ ઉપરથી જ નીકળતા સાદા ભાવને લક્ષ્યમાં રાખવો.

અથવા **नयणाण महूसवं सिसिरमहं.**–હે ભગવન! તું નયણ એટલે નગ્ન લોકોને અર્થાત્ જે લોકો અચેલક છે–ગમે તેવો હિમ પડતો હોય તો પણ એક ચિથરૂં પણ રાખતા નથી; તેવા તપસ્વીઓને માટે મહોત્સવરૂપ છો છતાં તેઓને સારૂ એક (ભયંકર) શીયાળા જેવો છે. અર્થાત્ તું એ તપસ્વીઓને સારૂ મહોત્સ્વરૂપ હોવાથી 'શિશિરમહરૂપ' કેમ હોઇ શકે?

વિરોધપરિહાર—

હે ભગવન્! તું 'શિશિરમહ' એટલે જડતાનો નાશક હોવાથી એ નગ્ન તપસ્વીઓને મહોત્સવરૂપે છો એ બરાબર યુક્તિયુક્ત છે.

'गारव'નું સંસ્કૃત ગૌરવ, તેના બે અર્થ સમજવા–એક જૈનપારિભાષિક અને બીજો વિશ્રુત.

'नयणाण'નું **'नयनानाम्'** એ એકરૂપ અને બીજું **'नग्नानाम्'** રૂપ. **'नग्न'** શબ્દનું **'नगिण'** અને **'नगन'** એવાં બે પ્રાકૃત રૂપો થાય છે. તેમાંના **'नगन'** ઉપરથી અર્વાચીન પ્રાકૃતમાં **'नयण'** પણ થઈ શકે.

'महसव' ઉપરથી **'मधूत्सव'** અને મહોત્સવ એવાં બે રૂપો થાય છે.

Aho ! Shrutgyanam

'**सिसिरमह**' ઉપરથી શિશિરમહ અને શિશિરમથ "**શિશિરો: જડ: તુષાર: શીતલ:**"– અમર૦ ૧, ૧૯

અહીં 'શિશિર' શબ્દ ભાવવાચક એટલે જડતાને સૂચક છે.

'**खीणमोह**' અને '**पढमगुणट्ठाण**' એ બન્ને શબ્દના બબ્બે અર્થ સમજવા–એ પણ એક જૈન-પારિભાષિક અને બીજો પ્રસિદ્ધ.

वरधम्मधरो वि अ-मग्गणासणो गुणनिही वि गयगव्वो ।
कह निक्कारणमित्तो वि होइ भुवणस्स अवयंसो ॥ ८ ॥

वरधम्मधरो. अ-मग्गणासणो.–હે ભગવન્! તું વરધર્મધર એટલે ઉત્તમ ધનુર્ધર છતાંય અમાર્ગણાસન છે–જે ધનુર્ધર હોય તે તો માર્ગણોનો–બાણોનો અસન–ફેંકનારો હોય, ત્યારે તું તો ઉત્તમધર્મ-ધનુષ્યનો ધરનારો છતાંય માર્ગણોનો ફેંકનાર નથી એ એક વિરોધ.

વળી, જે ઉત્તમધનુર્ધર હોય તે તો માર્ગોનો–મૃગના–હરણના સમૂહનો નાશક હોય છે ત્યારે તું તો ઉત્તમ ધનુર્ધર છતાંય માર્ગોનો નાશક નથી, એ બીજો વિરોધ.

अ मग्गणासणो—વળી, જે ઉત્તમ ધર્મનો ધારક હોય તે તો માર્ગનો પોષક હોય ત્યારે તું તો ધર્મનો ધારક છતાંય માર્ગનો નાશક છે, એ ત્રીજો વિરોધ.

गुणनिही. गयगव्वो—વળી, તું ગુણનિધિ છતાંય ગજગર્વ છે.–જે ગુણનિધિ હોય તે તો ગજવત્ ગર્વને ધરાવનાર ન હોય.

निक्कारणमित्तो अवयंसो.—તથા હે નાથ! તું જગતનો નિષ્કારણ મિત્ર છતાંય અવયંસ (અવયસ્ય) અમિત્ર છો એ કેવી વાત?

વિરોધનો પરિહાર—

वरधम्मरो. अ–मग्गणासणो—હે ભગવન્! તું વર ધર્મધર–ઉત્તમ ધર્મનો ધારક છો એથી જ અમાર્ગનો (હિંસાદિ કુમાર્ગનો) નાશક છો–જે ઉત્તમધર્મનો ધારક હોય તે જ કુમાર્ગનો નાશ કરી શકે છે. અથવા,

वरधम्मधरो अ मग्गणासणो—હે ભગવન્! તું ઉત્તમ એવા દાનધર્મનો ધારક છો માટે જ માર્ગણોને–ભિક્ષુકોને–યાચકોને આશન–ભોજન આપનારો છો. ભગવાને પોતે વાર્ષિક દાનને સમયે અનેક આજન્મ દરિદ્રીઓનાં દારિદ્રય ફેડ્યાં છે એ વાત સુવિખ્યાત છે. અને,

गयगव्वो–ગુણનો નિધિ છતાંય ગર્વિષ્ઠ નથી–ગત-ગર્વ છો. વળી,

अवयंसो–જગતનો નિષ્કારણમિત્ર છો માટે જ જગતમાં અવતંસરૂપ છો–શિખરાયમાણ છો એ બરાબર છે.

ધર્મ એટલે અહિંસાદિ ધર્મ. અથવા દાનાદિ. બીજો અર્થ ધર્મ એટલે ધનુષ.

धर्मो यमोपमापुण्यस्वभावाचारधन्वसु ।

હૈમ–અનેકાર્થ૦ ૨,૩૧૯

अमग्गणासणो એ પદનો પદચ્છેદ આ રીતે કરવોઃ—

अमग्गण + असण = બાણોનો ફેંકનારો નહિ.

अमग्ग + णासण = મૃગના સમૂહનો નાશ કરનારો નહિ.

अ **मग्ग + णासण** = 'અ' એટલે 'ચ' અને માર્ગનો નાશ કરનારો.

अमग्ग + णासण = અમાર્ગનો–કુમાર્ગનો–નાશક.

अ मग्गण + आसण = 'અ' એટલે 'ચ' અને માર્ગણોને યાચકોને આશન–ખવડાવનારો.

मार्गणौघः समभ्येति गुणो याति दिगन्तरम् ।

—પ્રભાવક ચરિત્ર.

मार्गणं याचनेऽन्वेषे मार्गणस्तु शरोऽर्थिनि ।

હૈમ–અનેકાર્થ સં૦ ૩,૨૧૦

गयगव्वो ઉપરથી **ગજગર્વ** અને **ગતગર્વ.** આ પદ મૂળ પ્રતમાં શંકિત જેવું લાગે છે એથી અહીં પણ એમ જ રાખેલું છે અને એ શંકિત ઉપરથી જે અર્થ સૂઝ્યો તે દર્શાવ્યો છે.

अवयंस ઉપરથી **અવયસ્ય** અને **અવતંસ** જૂઓ ૮–૧–૨૬

Aho ! Shrutgyanam

पावकसिणं पि चित्तं सारं पि धरेसि कह जसं सेयं ।
जिण सियवायक्खायं पि सव्वहा सामलच्छायं ॥ ९ ॥

पावकसिणं-હે જિન ! તું જે પવિત્ર અને વિચિત્ર શ્વેત યશને ધારણ કરે છે તે તો પાપકૃષ્ણ છે-યશ શ્વેત અને પવિત્ર હોય તે પાપકૃષ્ણ કેમ હોઈ શકે ? વળી,

सियवायक्खायं. सामलच्छायं—તે યશ સંસારમાં સિતવાદને નામે ખ્યાત છે છતાં શ્યામલ-કાંતિવાળો છે-જેની ખ્યાતિ સિતવાદ (શ્વેતવાદ) ને લીધે થએલી હોય તે શ્યામલકાંતિ પણ કેમ હોઈ શકે ?

પરિહાર—

पावकसिणं—હે જિન ! તું જે પવિત્ર અને વિચિત્ર શ્વેત યશને ધારણ કરે છે માટે જ તારો એ યશ પાપકષી-પાપનુંકષણ કરનારો-છે પાપોનું છેદન કરનારો છે. વળી,

सामलच्छायं--તારો એ યશ **सिअवाय**-સ્યાદ્વાદના સિદ્ધાંત-ને લીધે ખ્યાત છે એટલે તું સ્યાદ્વાદી તરીકે સુપ્રસિદ્ધ છે; અથવા તારો એ યશ સિતવાદને લીધે ખ્યાત છે એટલે શ્વેતાંબરવાદને લીધે સુપ્રસિદ્ધ છે માટે જ એ નિર્મળ કાંતિએ કરી સહિત છે.

'**कसिणं**' ઉપરથી કૃષ્ણ અને કષિન્. કૃષ્ણ= કાળું. અને કષિન્= નાશકરનાર.

જૂઓ ૮-૨-૧૧૦.

'**सिअवाय**' ઉપરથી સિતવાદ અને સ્યાદ્વાદ જૂઓ ૮-૧-૧૭૭ તથા ૮-૨-૧૦૭.

'**सामलच्छायं**' ઉપરથી શ્યામલચ્છાય=કાળી કાંતિ વાળું. **स अमलच्छाय = सामलच्छाय** = નિર્મળ કાંતિસહિત.

કવિ શ્વેતાંબરમાર્ગી છે માટે જ ભગવાનના યશને 'સિતવાદખ્યાત' કહીને પણ વર્ણવેલો છે.

कयकिच्चं पि अकिच्चं रयतममुक्कं पि नरयतममुक्कं ।
थिरपसमं पि जणं कह अप्पसमं कुणसि कयसेवं ॥ १० ॥

कयकिच्चं अकिच्चं—હે ભગવન્ ! તું કૃતકૃત્ય છો છતાંય અકૃત્ય છો. તથા,

रयतमुक्कं न रयतममुक्कं--રજસ્તમથી મુક્ત છો છતાંય રયતમમુક્ક-રજતમથીમુક્ત-નથી,

थिरपसमं अप्पसमं—અને જે સ્થિર પ્રશમ-વાળો મનુષ્ય તારી સેવા કરે છે તેને તું **अप्पसम**-અપ્રશમ-પ્રશમ વિનાનો કરી મૂકે છે એ કેવું વિચિત્ર કહેવાય ?

પરિહાર—

कयकिच्चं अकिच्चं--હે ભગવન્ ! તું કૃતકૃત્ય છો માટે જ અકૃત્ય-(કૃત્ય = શત્રુ, અ = રહિત) છો-શત્રુથી રહિત છો, જેને કાંઈ કરવાપણું શેષ ન હોય તેને શત્રુ શેના હોય ? અર્થાત્ એ તો શત્રુથી રહિત જ હોય.

रयतममुक्कं नरयतममुक्कं--વળી, હે ભગવન્ ! તું રજસ્તમથી મુક્ત છો માટે જ નરકરૂપ તમથી મુક્ત છો, જે રજસ્તમથી મુક્ત હોય તે જ નરકરૂપ તમથી મુક્ત હોય.

थिरपसमं अप्पसमं--તથા, હે ભગવન્ ! જે સ્થિર પ્રશમવાળો મનુષ્ય તારી સેવા કરે છે તેને તું અપ્પસમ-આપસમો-તારા જેવો કરી શકે છે એ પણ સમુચિત છે. સરખાવો:-

तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ।

ભક્તામર. શ્લો. ૧૦

अकृत्य-કૃત્યવિનાનો-કૃત્ય = કાર્ય તથા શત્રુ.

कृत्यो विद्विषे कार्ये च ।

હૈમ-અનેકાર્થ સં० ૨,૩૪૫

न-रयतममुक्कं = ન રજસ્તમોમુક્ત તથા નરક-તમોમુક્ત.

अप्पसम = અપ્રશમ તથા આત્મસમ.

જૂઓ. ૮-૨-૫૧

Aho ! Shrutgyanam

संतमसंतं न करेसि निप्फलं न य वहेसि सलहं तं ।
निच्चं सकज्जलग्गो न होसि कहं तं जगपईवो ॥ ११ ॥

હે ભગવન્! તું જગત્પ્રદીપ શી રીતે હોઇ શકે? તારામાં પ્રદીપના ગુણો હોય તો તું પ્રદીપ કહેવાય તે ઉચિત છે, પણ તારામાં તો પ્રદીપનો એક પણ ગુણ નથી.

પ્રદીપ **संतमसंतं**—સંતમસનો-અંધારાનો નાશ કરે છે,

सलहं—પ્રદીપની ચારે બાજુ પતંગો નિષ્ફલપણે ઉડતા ફરે છે.

सकज्जलग्गो—પ્રદીપનો અગ્રભાગ સકજ્જલ-કાજળે કરીને હમેશા યુક્ત-હોય છે. ત્યારે તું કાંઈ અંધારાનો નાશ કરતો નથી, તારી આસપાસ પતંગો આવતા નથી અને કાજળની સાથે પણ તારો સંબંધ નથી. એથી તને જગતપ્રદીપ કેમ કહેવો? મોટા મોટા અનુભવી પુરૂષો તો તને 'જગત્પ્રદીપ' કહીને ઓળખાવે છે પણ એમ કેમ થઈ શકે?

પરિહાર-

હે ભગવન્! તું 'જગત્પ્રદીપ' છો એ સમુચિત છે, કારણ કે, જેમ દીવો પોતાના પ્રકાશે આખા ઘરને ઉજાળે છે તેમ '**जयपईवो**'-તેં તારા પવિત્ર પ્રકાશે જગતને-સમસ્ત સંસારને પ્રદીપ-ઉજાળ્યું છે. અથવા જેમ દીવો દરેક વસ્તુને પ્રકાશમાં આણે છે તેમ તેં સમસ્ત સંસારને પ્રકાશમાં આણ્યો છે. અથવા જેમ દીવો પ્રત્યેક વસ્તુને ઓળખાવે છે તેમ તેં જગતનો પ્રત્યેક પદાર્થ સ્વરૂપથી સમજીને ઓળખાવેલો છે. અને તું જગત્પ્રદીપ છો માટે જ

सन्तमसन्तं न करेसि સત્ ને અસત્ નથી કરતો અર્થાત્ જે જેવું હોય છે તેને તું તેવું જ ઓળખાવે છે-સતને સત્ કહે છે, અસતને અસત્ કહે છે. અથવા **सान्तमसान्तम्** જે સાંત વિનાશ-શીલ હોય છે તેને તું અસાંત-અવિનાશશીલ-નથી કરતો-કહેતો. અથવા,

शान्तमशान्तम्-જે શાંત હોય છે તેને તું અશાંત નથી કરતો. વળી,

निप्फलं सलहं તું જગત્પ્રદીપ છો માટે જ નિષ્ફળ શ્લાઘા-ખોટી પ્રશંસા-ને ધારણ નથી કરતો. તથા,

सकज्जलग्गो સ્વકાર્યમાં લગ્ન છે અર્થાત્ તું તારા સ્વરૂપરમણરૂપ કાર્યમાં મગ્ન છે માટે જ તું જગત્પ્રદીપ છે એ બરાબર છે. સરખાવો—

निर्धूमवर्तिरपवर्जिततैलपूरः
कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि ।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ ! जगत्प्रकाशः ॥

ભક્તામર. શ્લો. ૧૬.

संतमसंतं ઉપરથી **सन्तमसन्तम्, सान्तमसान्तम्, शान्तमशान्तम्** જૂઓ ૮-૧-૮૪ તથા ૮-૧-૨૬૦

सलहं ઉપરથી **शलभम्** જુઓ ૮-૧-૧૮૭

श्लाघाम् જુઓ ૮-૨-૧૦૧

सकज्जलग्गो ઉપરથી **सकज्जलाग्र** જુઓ ૮-૨-૭૯

सकार्यलग्न જુઓ ૮-૨-૨૪ તથા ૮-૨-૭૮

केवलनाणुव्वहणो वि दुव्वहं कह चरित्तमुव्वहसि ? ।
सच्चारित्तो वि कहं निच्चारित्ते गुणे धरसि ? ॥ १२ ॥

केवलनाणुव्वहणो-હે ભગવન્! તું કેવલ માત્ર-જ્ઞાનનો જ ધારક છતાં દુર્વહ ચારિત્રને શી રીતે ધરી શકે છે અર્થાત્ જે માત્ર જ્ઞાનનો જ ધારક હોય-શુષ્કજ્ઞાની હોય તે દુર્વહ ચારિત્રને ધારણ ન કરી શકે. તથા,

सच्चारित्तो निच्चारित्ते,-તું સચ્ચારિત્ર છતાં

Aho ! Shrutgyanam

એવા ગુણોને ધારણ કરે છે જે નિચ્ચારિત્ત હોય. જે સચ્ચારિત્ત હોય તે તો નિચ્ચારિત્ત ગુણોને નજ વહે છતાં તું એમ કરે છે એ તો કૌતુક કહેવાય.

પરિહાર—

केवल-नाणुव्वहणो-હે ભગવન્! તું કેવલ જ્ઞાનનો-સંપૂર્ણ જ્ઞાનનો ધારક છો માટે જ દુર્વહ ચારિત્રને પણ વહી શકે છે-જે અપૂર્ણ જ્ઞાનવાળો હોય તે દુર્વહ-જેને બીજા ન વહી શકે એવું-ખાંડા ની ધાર જેવું-ચારિત્ર નજ વહી શકે. અને,

सच्चारित्तो निच्चारित्ते તું સચ્ચારિત્રનો ધારક છો માટે જ નિત્ય અરિક્ત-અમોઘ એવા ગુણોનો ધારક છો-સચ્ચારિત્રીના જ બધા ગુણો અમોઘ હોય છે. અથવા તું નિત્ય અલિપ્ત એવા ગુણોનો ધારક છો-જે સચ્ચારિત્રવાળો હોય તે જ નિત્ય અલિપ્ત-તદ્દન અસક્તિ રહિત ગુણોને ધરી શકે છે. અથવા તું સચ્ચારિત્રશીલ છો માટે જ તારા ગુણો નિત્યા-રિત્ર છે. નિત્યારિત્ર એટલે હમેશા શત્રુથી રક્ષણ આપનાર-જેમ કવચ શત્રુના ઘાથી રક્ષા આપે છે તેમ તારા ગુણો અન્તરંગ શત્રુના ઘાથી તને રક્ષા આપે એવા છે.

केवलनाण.-૧-કેવલ = માત્ર, જ્ઞાન = જ્ઞાન અર્થાત્ એકલું જ્ઞાન જ. ૨ કેવલનાણ = સંપૂર્ણજ્ઞાન (જૈનપારિભાષિક).

'**निच्चारित्ते**' ઉપરથી **नित्य + अरिक्त**
જુઓ ૮-૨-૧૩ તથા ૮-૨-૭૭

नित्य + अलिप्त '**अलिप्त**' પદ ઘટાવતી વખતે **र** અને **ल** નું ઐક્ય સમજવાનું છે. જે શ્લેષ કાવ્ય માં સંભવી શકે છે.

नित्य + अरित्र જુઓ ૮-૨-૭૯

कह तं समारुहंतो सोहम्मसणंकुमारभावम्मि ।
ईसाणलंतयाऽऽरणअच्चुअसीलो जए होसि ॥ १३ ॥

सोहम्मसणंकुमारभावम्मि, ईसाणलंतयारणअच्चुअसीलो-હે ભગવન્! તું સૌધર્મ અને સનત્કુમાર નામક સ્વર્ગના ભાવ ઉપર ચડેલો છતાં ઈશાન, લાંતક, આરણ્ય અને અચ્યુત નામક સ્વર્ગના શીલ જેવો જગતમાં કેમ કહેવાય છે?

જૈન પરિભાષામાં પ્રથમ સ્વર્ગનું નામ સૌધર્મ છે, ઈશાન, સનત્કુમાર, લાંતક, આરણ્ય અને અચ્યુત એ બધાં પણ અનુક્રમે બીજા, ત્રીજા, છઠ્ઠા, અગી-યારમા અને બારમા સ્વર્ગનાં નામો છે. હવે જે પુરૂષ સૌધર્મ અને સનત્કુમાર સ્વર્ગના ભાવે ચડેલો હોય તે ઈશાન વગેરે બીજા બીજા સ્વર્ગના શીલવાળો કેમ હોઈ શકે? હે ભગવન્! તારૂં ચરિત્ર તો એથી વિપરીત છે. એ કેમ ઘટી શકે?

પરિહાર—

सोहं मसणं कुमारभावम्मि ईसाऽणलंतयारण ! अच्चुअसीलो-હે ઈર્ષ્યારૂપ અનલના અંતના કારણ! તું કુમારપણામાં રૂડી શોભાએ અથવા સુંવાળા મહેલ ઉપર ચડેલો છતાં ઇર્ષ્યાના દાહને શાંત કરનારો હોવાથી જ જગતમાં અચ્યુત-શીલયુક્ત કહેવાય છે.

सोहम्मसणंकुमारभावम्मि અથવા **सोहं मसणं कुमारभावम्मि** આમ બે રીતે પદચ્છેદ કરવાથી જુદો જુદો ભાવ નીકળે છે.

सोहं ઉપરથી **सौधम्** અથવા **शोभाम्**
मसणं ઉપરથી **मसृणम्** અથવા **मसृणाम्**
જૂઓ ૮-૧ તથા ૮-૧

ईसाणलंतयारणअच्चुअसीलो અથવા **ईसाणलंतयारण ! अच्चुअसीलो** આમ પદવિભાગ કરવાથી જુદો જુદો ભાવ સમજી શકાય છે.

ईसा = ईर्ष्या જૂઓ ૮-૧-૪૩
अणल = अनल તથા ૮-૨-૭૮, ૭૯
अंतयारण = अन्तकारण

निव्वाणगओ जगप्पईव ! भुवणाइं कहं पयासेसि ।
सयलभुवणप्पयासो वि अप्पयासो कहं होसि ? ॥ १४ ॥

Aho ! Shrutgyanam

निव्वाणगओ—હે જગનાદીપક ! તું નિર્વાણ પામેલો છે છતાં ભુવનોને પ્રકાશિત કરે છે એ કઈ રીતે સમજવું ? જે દીપક નિર્વાણ પામેલો હોય (ઓલવાએલો હોય-ઠરી ગએલો હોય-બુઝાએલો હોય) તે કોઇ વસ્તુને પ્રકાશિત ન જ કરી શકે. ત્યારે તું નિર્વાણ પામેલો છતાં ભુવનોને પ્રકાશિત કરે છે એ મહત્ આશ્ચર્ય છે.

भुवणप्पयासो अप्पयासो—વળી, તું સકલ ભુવનોને પ્રકાશિત કરનારો છતાંય અપ્પયાસ-અપ્રકાશ-કેમ છે ? જે કોઈ બધાં ભુવનોને પ્રકાશિત કરી શકે તે પોતે જાતે અપ્રકાશ કેમ હોઈ શકે ?

પરિહાર—

निव्वाणगओ—હે જગતના દીપક ! તું નિર્વાણ (મુક્તિ) ને પામેલો છે માટે જ બધાં ભુવનોને પ્રકાશે છે. તથા,

अप्पयासो—તું અપ્રયાસ છે-પ્રયાસવિનાનો છે-રાગદ્વેષાદિ વૃત્તિ જન્ય પ્રયાસ વિનાનો છે માટે જ સકલ ભુવનોનો પ્રકાશક છે, એ બરાબર છે.

निव्वाण = નિર્વાણ. નિર્વાણ એટલે દીવાનું ઠરી જવું અથવા મુક્તિ.

अप्पयास ઉપરથી **अप्रकाश** અથવા **अप्रयास**

જૂઓ ૮-૧-૧૭૭

सासायणाण जंतूणं सासितो अणंतसंसारं ।
आसाइगधम्माणं अइरा कह देसि सिद्धिसुहं ॥ १५ ॥

सासायणाण—હે ભગવન્ ! જે જંતુઓ (પ્રાણીઓ-મનુષ્યો) આશાતના કરનારા હોય છે અર્થાત્ દેવ ગુરુ અને ધર્મની અવમાનના કરનારા હોય છે તેઓ સંસારમાં રખડયા જ કરે છે, એમ તેં કહેલું છે, છતાંય

आसाइयधम्माणं તું ધર્મને **आसाइय-आशातित**-કરનાર મનુષ્યને શીઘ્ર મુક્તિ આપે છે. એ કેમ થઇ શકે ? એક તરફ તારૂં વચન અને બીજી તરફ તારી પ્રવૃત્તિ એ બન્નેમાં વિરોધ આવે છે તો હે ભગવન્ ! એ એમ કેમ હોઇ શકે ?

પરિહાર—

હે ભગવાન્ ! જે મનુષ્યો આશાતના કરનારા હોય છે તેઓ તો સંસારમાં રખડયા જ કરે છે એમ તેં કહેલું છે તે બરાબર છે, કારણ કે, જેઓ ધર્મને **आसाइय-आसादित** કરનારા હોય છે-જેઓએ ધર્મને બરાબર પ્રાપ્ત કરેલો હોય છે તેને જ તું શીઘ્ર મુક્તિ આપે છે પણ બીજા આશાતના કરનારને નહિં.

आसाइय ઉપરથી **आशातित** એટલે આશાતના કરનાર.

आसादित એટલે પ્રાપ્ત કરનાર.

જૂઓ ૮-૧

सासायणाण-ઉપરથી **साशातनानाम्** એટલે આશાતના. સહિત=આશાતના કરનારા. તથા,

सास्वादनानाम् એ બીજું પણ પ્રાકૃત રૂપ થાય છે. **सास्वादनानाम्** એટલે સાસ્વાદન નામનું બીજું ગુણસ્થાનક-જે જીવો સાસ્વાદન ગુણસ્થાનકે વર્તનારા હોય છે તેઓ પણ સંસારમાં ફર્યા કરે છે.

જૂઓ ૮-૧-૧૭૭; ૮-૨-૭૯

समणाण बीयभूओ वि सत्तमो संजयाण कह णु तुमं ? ।
कह सत्तजिट्ठो वि नट्ठमोहो सि भुवणम्मि ? ॥ १६ ॥

---

१ મૂળ પાઠમાં 'सासितो' ને બદલે सामितो પાઠ છે પણ 'सामितो' પાઠ કરતાં 'सासितो' પાઠ બરાબર લાગે છે માટે એ પાઠને અહિં સ્વીકારેલ છે. લખેલી પ્રતમાં 'म' ને બદલે 'स' લખાયાની પ્રથા જાણીતી છે.

२ મૂળ પ્રતમાં 'संजयाणु' પાઠ છે પણ 'संजयाण' ને બદલે લેખકે પ્રમાદથી 'संजयाणु' લખ્યું લાગે છે. પણ અહિં 'संजयाणु' પાઠ કરતાં 'संजयाण' પાઠ જ બરાબર બંધ બેસે છે.

Aho ! Shrutgyanam

समणाण बीयभूओ-હે ભગવન્! તું તો શ્રમણોમાં બીજ ભૂત-બીજ જેવો લઘુ-છે. છતાં સંયતોમાં સત્તમ-ઉત્તમ છે એ શી રીતે? જે બીજ ભૂત હોય તે સત્તમ કેમ હોઈ શકે? વળી,

सत्तजेट्ठो नट्ठमोहो-તું સક્ત પુરુષોનો વડો છે છતાં નષ્ટમોહ છે એ પણ કેમ ઘટી શકે. જે સક્ત-આસક્ત-પુરુષોનો વડો હોય તે તો અત્યંત મોહી હોય ત્યારે તું તો તેવો છતાંય નષ્ટમોહ-મોહરહિત છે, એ આશ્ચર્ય જેવું છે.

પરિહાર—

समणाण बीयभूओ-હે ભગવન્! તું શ્રમણોનો બીજભૂત છે એટલે શ્રમણમાર્ગની ઉત્પત્તિ-પ્રવૃત્તિનો કારણભૂત છે એટલે જ તું સંયત પુરુષોમાં ઉત્તમ ગણાય એ વ્યાજબી જ છે. અથવા,

समणाण बीयभूओ-તું શમ જ્ઞાનના બીજરૂપ છે એટલે શાંતિમાર્ગના કારણરૂપ છે માટે જ સંયતોમાં ઉત્તમ મનાઓ છો. અને,

सत्तजेट्ठो તું શક્ત પુરુષોમાં ઉત્તમ છે-વિશેષ શક્તિવાળા હોય તે જ મોહનો નાશ કરી શકે છે. અથવા હે ભગવન્! તું સત્ત્વે-બળે કરીને જ્યેષ્ઠ છે માટે જ નષ્ટમોહ છે, એ બરાબર છે.

समणाण-श्रमणानाम् નિર્ધારણષષ્ઠી. અથવા,

शमज्ञानबीज-કારણ અથવા બીજ જેવું લઘુ.

'सत्त' ઉપર **शक्त** અને **सत्त्व**

જૂઓ ૯-૨-૭૭ તથા ૭૯

कह पयडीअ दिसासं पि वहसि रूवं पयासिअदिसासं।
जिण! नयणामयभूअं पि कारणं दंसणवरस्स ॥ १७ ॥

कहऽपयडीअदिसासं पयासिअदिसासं-હે જિન! તું જે જાતના રૂપને ધારણ કરે છે તે અપ્રકટિતદિગાસ્ય છતાંય પ્રકાશિતદિગાસ્ય છે-ખરી રીતે તો જે રૂપ દિશામુખોને ન પ્રકટાવતું હોય તે દિશામુખોને પ્રકાશિત કરી શકે ખરું? ન જ પ્રકાશિત કરી શકે. આમ છતાં ય તારૂં રૂપ તો વિચિત્ર છે. આ પૂર્વાર્ધ બરાબર સમજાતું નથી

વળી, **नयणामयभूअं कारणं दंसणवरस्स**-એ રૂપ નયનોને આમય-રોગરૂપ છતાંય ઉત્તમદષ્ટિનું કારણભૂત છે-જે રૂપ નેત્રોને રોગ રૂપ હોય તેજ રૂપ ઉત્તમદષ્ટિનું કારણ કેમ થઈ શકે? છતાંય તારૂં રૂપ ઉત્તમદર્શનનું કારણ છે એપણ વિચિત્ર વાત કહેવાય

પરિહાર—

नयणामयभूअं-વળી, હે જિન! જે રૂપને તું ધારણ કરે છે તે નયનામૃત રૂપ-આંખોને અમૃતસમાન છે માટે જ એ રૂપ ઉત્તમ દર્શનનું કારણ છે, એ બરાબર છે.

नयणामय ઉપરથી **नयन × आमय = नयनामय**
नयन × अमय = नयनामृत

જૂઓ ૮-૧-૧૭૭ તથા ૮-૧-૧૨૬

अविरामं पि जइमयं अवरिट्ठं तिहुअणस्स वि वरिट्ठं।
कह निच्छिअं पि मुणिवइअणिच्छिअं देसि सुहनिवहं ॥ १८ ॥

अविरामं जइमयं-હે મુનિપતે! તું જે સુખસમૂહનું પ્રદાન કરે છે તે છે તો અવિરામ પણ યતિમય છે યતિ એટલે વિરામ, યતિમય-વિરામમય. અર્થાત્ એ સુખસમૂહ અવિરામ છતાંય યતિમય કેમ સંભવી શકે? તથા,

अवरिट्ठं वरिट्ठं એ સુખસમૂહ અવરિટ્ઠ છતાં વરિટ્ઠ પણ કેમ હોઈ શકે? અવરિટ્ઠ એટલે વરિટ્ઠ નહિ. વરિટ્ઠ એટલે ઉત્તમ.

निच्छिअं अणिच्छिअं એ સુખસમૂહ નિચ્છિઅ છતાં અનિચ્છિઅ પણ કેમ હોઈ શકે? નિચ્છિઅ એટલે નિશ્ચિત અને અનિચ્છિઅ એટલે નિચ્છિઅથી વિપરીત.

પરિહાર—

अविरामं जइमयं-હે *જિન! હે મુનિપતે!* **તું જે સુખસમૂહને આપે છે તે અવિરામ-અંતવિ-**

Aho ! Shrutgyanam

નાનો છે માટે જ એ યતિમત છે યતિ-સંયમવાળા-ઓને સંમત છે. તથા,

अवरिट्ठं वरिट्ठं-એ સુખસમૂહ અવરિટ્ઠ-અપરેષ્ટ-બીજાઓને-જેઓ તારા અનુયાયી નથી તેઓને-પણ ઇષ્ટ છે માટે જ તે વરિષ્ઠ છે-ઉત્તમ છે. તથા,

निच्छिअं मुणिवइअणिच्छिअं-તે સુખસમૂહ નિશ્ચિત છે. માટે જ મુનિપતિ જનોને ઇષ્ટ-પ્રિય છે. અર્થાત્ નિશ્ચિત એવા સુખસમૂહને મોટા મોટા મુનિઓ પણ ચાહે છે.

जइमय ઉપરથી **यतिमय** તથા **यतिमत**
अवरिट्ठ ઉપરથી **अवरिष्ठ** તથા **अपरेष्ट**
જૂઓ ૮-૨
निच्छिअ ઉપરથી **निश्चित**
मुणिवइ-अणिच्छिअ ઉપરથી **मुनिपते! अनिश्चित** તથા **मुनिपतिजनेच्छित।**

सामपउत्तिपसत्तो कहं सि वेअत्तइक्कसत्तू वि।
कह णु विसंको वि य पयावइ त्ति पयडं वहसि सद्दं ? ॥ १९ ॥

सामपउत्तिपसत्तो वेअत्तइक्कसत्तू હે જિન! તું ત્રણ વેદનો-ઋગ્વેદ, યજુર્વેદ અને સામવેદ-એ ત્રણે વેદનો શત્રુ છતાંય સામની-સામવેદની પ્રવૃત્તિમાં પ્રસક્ત છો. જે ત્રણ વેદનો વિરોધી હોય એ સામવેદની પ્રવૃત્તિમાં પ્રસક્ત કેમ હોઇ શકે? અથવા તું ત્રણે વેદોનો-પુરુષવેદ, સ્ત્રીવેદ અને નપુંસકવેદ-એ ત્રણે વેદનો શત્રુ છતાંય શ્યામા-સ્ત્રીની પ્રવૃત્તિમાં પ્રસક્ત છો. જે પુરુષાદિ વેદ ત્રયનો શત્રુ હોય તે સ્ત્રીની પ્રવૃત્તિમાં પ્રસક્ત કેમ હોઇ શકે. વળી,

विसंको पयावइ-તું વૃષથી-બળદથી અંકિત-ચિહ્નિત છો છતાં પ્રકટપણે 'પ્રજાપતિ' શી રીતે કહેવાય? જે વૃષાંકિત હોય તે તો મહાદેવ કહેવાય, પ્રજાપતિ-બ્રહ્મા ન જ કહેવાય

પરિહાર—

सामपउत्तिपसत्तो वेअत्तइक्कसत्तु-હે ભગવન્! તું પુરુષાદિ ત્રણ વેદનો શત્રુ છે માટે જ સામપ્રવૃત્તિ-શાંતિની પ્રવૃત્તિમાં પ્રસક્ત છે, એ બરાબર છે, તથા

विसंको पयावइ તું વૃષથી-ધર્મથી અંકિત છે માટે જ લોકો તને પ્રકટપણે પ્રજાપતિ-પ્રજાનો સ્વામી-કહીને ઓળખે છે.

सामपउत्ति-ઉપરથી

सामप्रवृत्ति=૧ સામવેદની પ્રવૃત્તિ
श्यामाप्रवृत्ति=૨ શ્યામાની(સ્ત્રીની)પ્રવૃત્તિ
सामप्रवृत्ति=૩ સામ-શાંતિની પ્રવૃત્તિ

वेद=લોકપ્રસિદ્ધ ત્રણ વેદ તથા જૈનપરિભાષામાં પ્રસિદ્ધ પુરૂષાદિ ત્રણ વેદ.

वृष-બળદ અથવા ધર્મ
पयावइ-બ્રહ્મા અથવા પ્રજાનો સ્વામી-પાલક

कह मंसलुद्धरयणियरपरिगयं पुंडरीयरिंछोलिं।
वारिअअसइपरिग्गह परिग्गहे कुणसि चलणाणं ॥ २० ॥

હે ભગવન્! હે પરિગ્રહના પ્રતિષેધક! અથવા હે અસતી (અસતી=ક્રૂર જીવ) પરિગ્રહના વારક? તું એવો છતાંય તારા ચરણોને મૂકવા માટે

मंसलुद्धरयणियरपरिगयं पुंडरीयरिंछोलिं—માંસલોલુપ રજનિચરથી વ્યાપ્ત એવી વાઘ અને રિંછની ટોળીનો ઉપયોગ કરે છે એ કેવું કહેવાય. અર્થાત્ જે પરિગ્રહનો નિવારક હોય વા જે ક્રૂર જંતુઓના પરિગ્રહનો પ્રતિષેધક હોય તે પોતાના કામ માટે વાઘ કે રિંછની ટોળીનો ઉપયોગ કેમ કરીને કરે?

પરિહાર—

હે ભગવન્! પરિગ્રહના વારક! તું તારા ચરણોને મૂકવા માટે પુષ્ટ અને ઉર્ધ્વ એવા રજસમૂહથી વ્યાપ્ત એવી કમલની શ્રેણીનો ઉપયોગ કરે છે તે વ્યાજબી જ છે.

સરખાવો—

Aho ! Shrutgyanam

येषां विकचारविन्दराज्या
ज्यायःक्रमकमलावलींदधत्या ।
शहशैरिति संगतं प्रशस्यं
कथितं सन्तु सिवाय ते जिनेन्द्राः ॥

નમોસ્તુ, શ્લોક. ૨

તથા

उन्निद्रहेमनवपङ्कजपुञ्जकान्ति--
पर्युल्लसन्नखमयूखशिखाऽभिरामौ ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥

ભક્તામર સ્તોત્ર, શ્લો. ૩૨

मंसलुद्ध ઉપરથી ૧ **मांसलुब्ध,** ૨ **मांसल उद्धर्व**
रयणियर ઉપરથી ૧ **रजनीचर,** ૨ **रजोनिकर**

पुंडरीय=૧ વાઘ, ૨ કમળ

रिंछोली=૧ રીંછની ઓળી-શ્રેણી, ૨ ઓળી-પંક્તિ

गयविसयगामतत्ती कहं सि नेआवि अक्खवडलस्स ।
इंदिअपहू वि कह पहू नो इंदिअनिग्गहं कुणसि ? ॥ २१ ॥

गयविसयगामतत्ती नेआवि अक्खवडलस्स —હે પ્રભો ! તું ગતવિષયગ્રામતૃપ્તિ-વિષયસમૂહની તૃપ્તિથી પર છતાં ય અક્ષપટલનો-ઇંદ્રિયસમૂહનો નેતા કેમ હોઈ શકે ? તથા તું ઇંદ્રિયનો સ્વામી છતાં ય અમારી ઇંદ્રિયોનો નિગ્રહ કેમ કરી શકે ? જે વિષય-સમૂહમાં તૃપ્તિ માનનારો હોય તે જ ઇંદ્રિયગણનો નેતા થઈ શકે અને જે ઇંદ્રિયોનો પોષક હોય તે જ ઇંદ્રિયનો સ્વામી પણ થઈ શકે.

પરિહાર--

अक्खवडलस्स હે પ્રભુ ! તું વિષયગ્રામથી થતી તૃપ્તિથી પર છે માટે જ **अक्खवडल**-આત્મસમૂહનો નેતા છો અને તું અમારી ઇંદ્રિયોને પણ વશ રખાવી શકે છે.

अक्ख ઉપરથી અક્ષ=૧ ઇંદ્રિય, ૨ જીવ

कह सासयविन्नाणं निव्विन्नाणं भवम्मि जीवाणं ।
सिवसुक्खमकल्लाणं कल्लाणं जिण ! पणामेसि ॥ २२ ॥

सासयविन्नाणं निव्विन्नाणं-હે ભગવન્ ! જીવોને ભવ-સંસારમાં શાશ્વત વિજ્ઞાન છે છતાં ય નિર્વિજ્ઞાન કેમ છે ? શાશ્વતવિજ્ઞાન હોય ત્યાં નિર્વિ-જ્ઞાનતા કેમ સંભવે ?

अकल्लाणं कल्लाणं-હે જિન ! તું કલ્યાણરુપ જે શિવસુખ આપે છે તે અકલ્યાણરુપ કેમ હોઈ શકે ?

પરિહાર—

હે જિન ! જે જીવો સંસારમાં **निर्विण्ण** છે-ઉદાસીન છે તેઓને જ શાશ્વતવિજ્ઞાન થવાનો સંભવ છે. અને તું જે કલ્યાણરૂપ શિવસુખ આપે છે તે કલ્યાણ-સુવર્ણ-હેમવિનાનું જ હોય તે પણ બરાબર છે.

निविन्नाणं ઉપરથી **निर्विज्ञानम्** અથવા **निर्विण्णानाम्**

कल्याण એટલે ૧ મંગલ તથા ૨ સોનું

" कल्याणं हेम्नि मङ्गले "

હેમ-અનેકાર્થસં૦ ૩, ૧૮૬

नाह परिणाममहुरं विसन्नवीसामठामभूअंपि ।
कह पण्णवेसि कन्नामयं पि मुणिसम्मयं धम्मं ॥ २३ ॥

कन्नामयं मुणिसम्मयं-હે નાથ ! તું જે ધર્મને પ્રરુપે છે તે પરિણામે મધુર છે, ખિન્ન મનવાળાઓ માટે વિસામારૂપ છે છતાં ય એ ધર્મ **कन्नामय**-કન્યામત હોઈને મુનિસમ્મત કેમ હોઈ **शके ?** જે

ખેલકુદનો વિચાર નાની બાલિકાને ગમતો હોય તે મુનિજનોને કેમ ગમે ?

પરિહાર—

હે નાથ ! તું જે ધર્મને પૂર્ણપણે પ્રરુપે છે તે ધર્મ પરિણામે મધુર છે, સંસારથી કંટાળેલાને વિસામારુપ છે, અને **कर्णामृत**-કાનને અમૃત સમાન છે માટે જ મુનિજનોને સમ્મત છે.

कन्नामय-૧ કન્યામત ૨ કર્ણામૃત

सच्छंदयं सम्मुव्वह सव्वं परमप्पयं व पिच्छंतो ।
जं पुण जियसयलक्खो वि अप्पसत्तो सि तमजुत्तं ॥ २४ ॥

सच्छंदयं परमप्पयं હે ભગવન્ ! તું બીજા બધાને અલ્પ-પોતાથી ઉતરતા-જોતો થકો સ્વચ્છંદતાને ધારણ કરે એ તો ઠીક, પણ

जियसयलक्खो अप्पसत्तो-શતલક્ષને જિત્યા છતાં તું જે અલ્પસત્વ દેખાય છે એ તો અયુક્ત છે.

પરિહાર—

सच्छं दयं परमप्पयं जियसयलक्खो अप्पसत्तो--હે ભગવન્ ! તું બીજા બધાને તારી પોતાની પેઠે સમજતો થકો સ્વચ્છ એવી દયાને ધારણ કરે છે. અને તારા પોતાના લક્ષ્યને તેં મેળવેલું છે માટે જ તું **अप्रसक्त-अनासक्त** છે.

सच्छंदयं ઉપરથી **स्वच्छन्दताम्**
અથવા **स्वच्छां दयाम्**

परमप्पयं ઉપરથી **परमल्पकम्**
અથવા **परमात्मकम्**

सयलक्खो ઉપરથી **शतलक्षः** અથવા **स्वकलक्षः**

अप्पसत्तो ઉપરથી **अल्पसत्त्वः** અથવા **अप्रसक्तः**

अमयरसोहालिद्धा अमच्छरिद्धा असारसरहंगा ।
कह निच्चमसंखोहा जलयरवसही वि तुह वाणी ॥ २५ ॥

जलयरवसही-હે ભગવન્ ! તારી વાણી જલચર વસતી (જલચરોના રહેઠાણ) રૂપ છતાંય

अमयर-મગર વિનાની છે,

अमच्छ-માછલાં વિનાની છે,

असारस-સારસ અને ચક્રવાકથી રહિત છે,

असंखोहा-શંખલાના ઓઘથી પણ રહિત છે.

જે જલચરવસતી રૂપ હોય તેમાં તો મગરો હોય, માછલાં હોય, સારસ હોય અને શંખલા પણ હોય. ત્યારે તારી વાણી જલચરવસતી રૂપ છતાં ય તેવી નથી એ કેમ સંભવે ?

પરિહાર—

जलयरवसही-હે ભગવન્ ! તારી વાણી જલદરવસખા-મેઘના શબ્દની સખી છે. માટેજ એ,

अमयरसोहा-અમૃતરસના સમૂહથી તરબોળ છે,

अमच्छरि-મત્સરતા-માત્સર્ય રહિત છે,

असारसरहंगा-અસાર સ્વરને તોડનારી છે, અને

असंखोहा-અસંખ્ય ઊહ-તર્કથી ભરેલી છે.

जलयरवसही-ઉપરથી ૧ **जलचरवसती**
૨ **जलदरवसखी**

अमयरसोहालिद्धा-ઉપરથી ૧ **अमकर-शोभाश्लिष्टा**, ૨ **अमृतरसौघाश्लिष्टा**

अमच्छरिद्धा-ઉપરથી ૧ **अमत्स्यऋद्धा**
૨ **अमात्सर्यऋद्धा**

असारसरहंगा ઉપરની ૧ **असारसरथाङ्गा**
૨ **असारस्वरभङ्गा**

निच्चमसंखोहा ઉપરથી ૧ **नित्यमशङ्खौघा**
૨ **नित्यमसंख्योहा**

સરખાવો—

बोधागाधं सुपदपदवीनीरपूराभिरामं,
जीवाहिंसाविरललहरीसंगमागाहदेहम् ।
चूलावेलं गुरुगममणीसंकुलं दूरपारं
सारं वीरागमजलनिधिं सादरं साधु सेवे ॥
संसारदावा स्तुति, श्लो. ३

Aho ! Shrutgyanam

कह कीरउ पडिओसो असमो सरणागयाण जंतूणं ।
सुरसेविएण तुह जिणवरिंद ! पायारविंदेण ॥ २६ ॥

पडिओसो असमो सरणागयाण-હે જિનવરેંદ્ર! શરણાગત જંતુઓને સુરસેવિત તારા ચરણારવિંદ વડે જે અસમ-અસાધારણ પ્રતિદોષ કરવામાં આવે છે, તે શી રીતે? તારા ચરણારવિંદ તો દોષોનો નાશ કરવા માટે સુપ્રસિદ્ધ છે. છતાં એનાથી આવું વિપરીત કેમ થઈ શકે?

પરિહાર—

पडिओसो अ समोसरणागयाण-હે જિનવરેંદ્ર! સમવસરણમાં આવેલા જંતુઓને સુરસેવિત તારા ચરણારવિંદ વડે જે પ્રતિતોષ થાય છે એ બરાબર જ છે-તારા ચરણો તો જંતુઓને-પ્રાણિઓને તોષ આપનારાં જ છે.

पडिओसो ઉપરથી **प्रतिदोष** અને **प्रतितोष** જુઓ ૮-૧-૧૭૭ તથા ૮-૧-૨૦૬

असमो सरणागयाण ઉપરથી **असमः शरणागतानाम्**

अ समोसरणागयाण ઉપરથી **च समवसरणागतानाम्**

समणजणवायसोहविभूसिअं विसमदिट्ठिवायं पि ।
दसवेआलियपयडं पि पयडिआणंतमग्गणयं ॥ २७ ॥

निज्जुत्ति जुत्तिगरुअं जइ गुरुमइरामयं पि मोहहरं ।
सारंगसंगयं गयमयं पि कह सासणं तुम्ह ॥ २८ ॥ (**युग्म**)

હે ભગવન્! શાસન તારૂં આવું કેવું છે?—

निज्जुत्ति जुत्तिगरुअं નિર્યુક્તિ છતાં યુક્તિના ગૌરવાળું છે.

समणजणवाय० विसमदिट्ठि—શ્રમણ જનવાદની શોભાથી વિભૂષિત છે છતાં વિષમદષ્ટિવાળું છે-જે શાસન, શ્રમણ-જનવાદની સમતાયુક્ત મુનિજનવાદની-શોભાથી વિભૂષિત હોય તેમાં વિષમ-સમતારહિત દૃષ્ટિવાદની ગંધ પણ કેમ ધરે? વળી,

गुरुमइरामयं मोहहरं એ, ગુરુમદિરામય છે છતાં મોહહર છે-જે મદિરાથી ભરેલું હોય તે તો મોહને વધારે એવું હોય છતાં તારૂં શાસન મદિરામય હોઇને પણ મોહહર કેમ થઈ શકે?

दसवेआलियपयडं पयडियाणंतमग्गणयं-વળી, એ, દશવૈકાલિકમાં પ્રકટ છે છતાં અનંતમાર્ગરૂપ નયવાદને પ્રકટ કરનારૂં છે-જે દશસંખ્ય વૈચાલિકમાં પ્રકટ હોય તે અનંતમાર્ગરુપ નયવાદને કેમ પ્રકાશી શકે?

વળી, **सारंगसंगयं गयमयं** એ સારંગ-મૃગ સંગત છે. છતાં ગતમૃગ કેમ છે? જે સારંગસંગત હોય તે તો ગતમૃગ ન જ હોય.

પરિહાર—

निज्जुत्तिजुत्ति-નિર્યુક્ત નામક વ્યાખ્યાઓના યુક્તિપૂર્ણ ગૌરવવાળું.

विसमदिट्ठिवायं હે ભગવન્! તારૂં શાસન શ્રમણજનવાદની શોભાથી યુક્ત છે, અને એમાં કઠણ એવું દૃષ્ટિવાદનામનું શાસ્ત્ર છે એ કાંઈ વિરોધ નથી.

दसवेआलिय-દશવૈકાલિક નામના આગમમાં તારૂં શાસન પ્રકટ છે અને એ અનંતમાર્ગરૂપ નયવાદને પ્રકટ કરનારૂં છે.

जइगुरुमइरामयं-યતિ અને ગુરુજનની બુદ્ધિને રમણ કરાવનારૂં છે માટે જ એ મોહને હરનારૂં છે, અને **सारंग**-સારાંગ-સારભૂત અંગો-અંગ ગ્રંથોથી સંગત છે માટે જ ગતમદ-મદનું નાશક છે.

Aho ! Shrutgyanam

समणजणवाय–श्रमणजनवाद–શ્રમણુસંસ્કૃતિ-સમતા પ્રધાનસંસ્કૃતિ.

विसमदिट्ठिवाय विषम–સમતારહિત દૃષ્ટિઓનો વાદ અથવા **विषम**–દુર્ગમ–કઠણુ એવું દૃષ્ટિવાદ નામનું ચૌદમા બિંદુસાર પૂર્વનું એક પ્રકરણુ.

सारंग–સારંગ તથા સારાંગ

"सारंगो विहगान्तरे द्विपैगशबलेषु च"

હેમ–અનેકાર્થસં० ૩, ૧૨૨–૧૨૩

આ ૨૭–૨૮–શ્લોક યુગ્મરુપ છે.

हयपच्चूहाण नमो तुह निच्चफुरंतनहमणिगणाणं ।
संतावयाण जणपत्थणिज्जछायाण पायाणं ॥ २९ ॥

હે ભગવન્! તારા પાદોને નમસ્કારહો. એ પાદો **हतप्रत्यूह**–વિઘ્નનાશક છે, સ્ફુરાયમાણુ નખરુપ મણિગણુથી યુક્ત છે, શાંતાપદ–આપદોને શમાવનાર–છે, જનપ્રાર્થનીય છાયાવાળા છે–મનુષ્યો એ પાદોની છાયાને પ્રાર્થે–એવા એ છે.

બીજો અર્થ–સૂર્યના કિરણો પ્રત્યે ઘટે એવો છે તે આ રીતે–સૂર્યનાં કિરણોને નમસ્કાર હો જે કિરણો **हतप्रत्यूष**—મળસકાને મટાડનારા છે અર્થાત દિવસને ઉગાડનારા છે, સ્ફુરાયમાણ નભમણિ–સૂર્યના કણરૂપ છે,

संतापक–તપનારાં, તપાવનારાં છે અને એ કિરણોની કાંતિને મનુષ્યો પ્રાર્થે છે.

हयपच्चूह–	१.	**हतप्रत्यूह**
	२.	**हतप्रत्यूष**
नहमणिगण–	१.	**नखमणिगण**
	२.	**नभोमणिकण**
संतावय–	१.	**शान्तापद**
	२.	**संतापक**

छाया–એટલે છાંયો અથવા શોભા–કાંતિ

इय सयलसिरिनिबंधण पालय पच्चल तिलोअलोअस्स ।
भव मज्झ सया मज्झत्थगोअरे संथुइ गिराणं ॥ ३० ॥

હે સકલશ્રીના કારણુ, હે પાલક, હે ત્રિલોક લોકમાં સમર્થ, હે સદાપૂજ્ય! અથવા હે મધ્યસ્થ! એવા હે ભગવન્! તું એ પ્રમાણે મારી સ્તુતિગિરાઓનો વિષય થા અથવા મારી સ્તુતિગિરાઓના અર્થનો વિષય થા, અર્થાત હું તારી સ્તુતિ કરનારો થાઉં, અને તું મારી સ્તુતિનો વિષય થા.

આ અંતિમકાવ્યમાં–

निबंधणपालय એ શબ્દથી કવિએ પોતાના '**धनपाल**' નામની સૂચના પણુ કરેલી છે.

सया मज्झत्थगोअरे ઉપરથી **सदा मध्यस्थगोचरे** અથવા **सदा महय! अर्थगोचरे**

॥ इति श्रीमहावीरविज्ञप्तिका पंडितधन्य–धनपालविरचिता संपूर्णेयं ॥

जैन तत्त्वचर्चा

(૧) સ્ત્રીજાતિને દૃષ્ટિવાદ અંગ ભણવાના નિષેધ પર એક વિચાર.

સમાનતા—વ્યવહાર અને શાસ્ત્ર એ બન્ને સ્ત્રીજાતિને શારીરિક અને આધ્યાત્મિક વિકાસમાં પુરુષજાતિની સમાન સિદ્ધ કરે છે. શારીરિક બળમાં પ્રો૦ રામમૂર્તિથી કુમારી તારાબાઇ કોઈપણ રીતે ઉતરે તેવી નથી. તેવી જ રીતે વક્તૃત્વકલામાં અને અનેક પ્રકારના વિચારમાં વિદુષી એનીબિસેંટ કોઈ પણ વિચારક કે વક્તા પુરુષથી ઉતરે એવા નથી. તે જ પ્રકારે કવિત્વશક્તિમાં કોઇપણ પ્રસિદ્ધ પુરુષ કરતાં શ્રીમતી સરોજિની દેવી પાછાં પડે તેવાં નથી. ખરી રીતે નિયમ એ છે કે સમાન સાધન અને અવસર મળે તો સ્ત્રી પણ પુરુષ જેટલું સામર્થ્ય પ્રાપ્ત કરી શકે છે. શ્વેતાંબર આચાર્યોએ સ્ત્રીને પુરુષની બરાબર કેવલ જ્ઞાન અને મોક્ષની અધિકારિણી અર્થાત્ શારીરિક અને આધ્યાત્મિક વિકાસની અધિકારિણી સિદ્ધ કરેલ છે. પ્રમાણ માટે જૂઓ પ્રજ્ઞાપના સૂ૦ ૭, પૃ૦ ૧૮; નંદી સૂ૦ ૨૧, પૃ૦ ૧૩૦.

આ વિષયમાં મતભેદ ધરાવનાર દિગંબર આચાર્યો સામે તેઓએ (શ્વેતાંબરાચાર્યોએ) બહુ લખ્યું છે. જુઓ નંદી–ટીકા પૃ૦ ૧૩૧,–૧૩૩; પ્રજ્ઞાપના–ટીકા પૃ૦ ૨૦–૨૨. શાસ્ત્રવાર્તા સમુચ્ચય–ટીકા પૃ૦ ૪૨૫–૪૩૦.

આલંકારિક પંડિત રાજશેખરે મધ્યસ્થભાવપૂર્વક સ્ત્રીજાતિને પુરુષજાતિની સમાન વર્ણવી છે.—

" पुरुषवत् योषितोऽपि कवीभवेयुः । संस्कारो ह्यात्मनि समवैति, न स्त्रैणं पौरुषं वा विभागमपेक्षते । श्रूयन्ते दृश्यन्ते च राजपुत्र्यो महामात्यदुहितरो गणिकाः कौतुकिभार्याश्च शास्त्रप्रतिबुद्धाः कवयश्चः । "

કાવ્યમીમાંસા–અધ્યાય ૧૦

અર્થાત્ સ્ત્રીઓ પણ પુરુષની જેમ કવિ થઇ શકે, કારણ કે સંસ્કાર–શિક્ષા એ આત્મામાં ઉતરે છે તે કાંઇ સ્ત્રીજાતિ કે પુરુષજાતિના ભેદની અપેક્ષા–પરવા નથી કરતો. સાંભળવામાં આવે છે અને જોવામાં પણ આવે છે કે રાજપુત્રીઓ, મહામંત્રીની પુત્રીઓ, ગણિકાઓ અને નટભર્યાઓ શાસ્ત્રજ્ઞ તેમ જ કવિ હતી અને છે.

વિરોધ—સ્ત્રીને દૃષ્ટિવાદ ભણવામાટે જે નિષેધ કરાયેલો છે તેમાં બે પ્રકારે વિરોધ આવે છે (૧) તર્કદૃષ્ટિથી, અને (૨) શાસ્ત્રની મર્યાદાથી.

(૧) એક તરફ સ્ત્રીને કેવલજ્ઞાન અને મોક્ષ સુદ્ધાંની અધિકારિણી માનવી અને બીજી તરફ દૃષ્ટિવાદની–શ્રુતજ્ઞાન વિશેષની–પણ અધિકારિણી ન માનવી–અયોગ્ય ઠરાવવી એ એવું વિરુદ્ધ જણાય છે જેમ કોઇને રત્ન સોંપીને કહેવું કે તું કોડીની રક્ષા નહિં કરી શકે.

(૨) દૃષ્ટિવાદના અધ્યયનનો નિષેધ કરવાથી શાસ્ત્રકથિત કાર્ય–કારણ મર્યાદામાં પણ બાધ આવે છે. તે આ રીતે–શુક્લધ્યાનના પહેલા બે પાદ–અંશ પ્રાપ્ત કર્યાવિના કેવલ જ્ઞાન ઉત્પન્ન નથી થતું. પૂર્વનામક શ્રુતના જ્ઞાનની પ્રાપ્તિવિના શુક્લધ્યાનના પ્રથમના બે પાદ પ્રાપ્ત નથી થતા અને પૂર્વશ્રુત એ દૃષ્ટિવાદનો એક હિસ્સો છે. આ મર્યાદાશાસ્ત્રમાં નિર્વિવાદ સ્વીકારવામાં આવી છે.

" शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः " તત્ત્વાર્થ અ૦ ૯, સૂ૦ ૨૬

આ કારણથી સ્ત્રીને દૃષ્ટિવાદના અધ્યયનની અધિકારિણી ન માની કેવલ જ્ઞાનની અધિકારિણી માનવી એ સ્પષ્ટ વિરુદ્ધ જણાય છે.

Aho ! Shrutgyanam

દૃષ્ટિવાદના અનધિકારના કારણોના વિષયમાં બે પક્ષ છે. પહેલો પક્ષ જિનભદ્રગણિ ક્ષમાશ્રમણ આદિનો. એ પક્ષ સ્ત્રીમાં તુચ્છત્વ, અભિમાન, ઇંદ્રિયચાંચલ્ય, મતિમાંદ્ય આદિ માનસિક દોષો બતાવીને તેને દૃષ્ટિવાદના અધ્યયનનો નિષેધ કરે છે. તે માટે જુઓ વિશેષા૦ ભા૦ ગા૦ ૫૫૨

બીજો પક્ષ હરિભદ્રસૂરિ આદિનો છે. આ પક્ષ અશુદ્ધિરૂપ શારીરિક દોષ બતાવીને તેનો નિષેધ કરે છે. જેમ કે—

"कथं द्वादशांगप्रतिषेधः? तथाविधविग्रहे ततो दोषात्।"

લલિતવિસ્તરા, પૃ૦ ૧૧૧/૧

નયદૃષ્ટિથી વિરોધનો પરિહાર—દૃષ્ટિવાદના અનધિકારથી સ્ત્રીને કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવામાં જે ઉપર પ્રમાણે તત્ત્વાર્થ કથિત કાર્ય–કારણ ભાવનો વિરોધ દેખાય છે, તે વસ્તુતઃ વિરોધ નથી. કારણ કે શાસ્ત્ર સ્ત્રીમાં દૃષ્ટિવાદના અર્થની યોગ્યતા માને છે પણ ફક્ત શાબ્દિક અધ્યયનનો તે નિષેધ કરે છે.

"श्रेणिपरिणतौ तु कालगर्भवद्भावतो भावोऽविरुद्ध एव"।

લલિતવિસ્તરા તથા એની મુનિચંદ્રસૂરિકૃત પંજીકા, પૃ૦ ૧૧૧

તપ ભાવના આદિથી જ્યારે જ્ઞાનાવરણીયનો ક્ષયોપશમ તીવ્ર થઈ જાય છે ત્યારે સ્ત્રી શાબ્દિક પાઠ સિવાય જ દૃષ્ટિવાદનું સંપૂર્ણ અર્થજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી શકે છે અને શુક્લધ્યાનના બે પાદ પ્રાપ્ત કરીને કેવલજ્ઞાન પણ પ્રાપ્ત કરી શકે છે.

"यदि च शास्त्रयोगागम्यसामर्थ्ययोगावसेयभावेष्वतिसूक्ष्मेष्वपि तेषां विशिष्टक्षयोपशमप्रभवप्रभावयोगात् पूर्वधरस्येव बोधातिरेकसद्भावादाद्यशुक्लध्यानद्वयप्राप्तेः केवलावाप्तिक्रमेण मुक्तिप्राप्तिरिति न दोषः। अध्ययनमन्तरेणापि भावतः पूर्ववित्त्वसंभवात्, इति विभाव्यते, तदा निर्ग्रन्थीनामप्येवं द्वितयसंभवे दोषाभावात्।" शास्त्रवार्तास० पृ० ४२६

ગુરુમુખથી શાબ્દિક અધ્યયન કર્યાવિના અર્થબોધ ન થાય એવો નિયમ નથી, કારણ કે અનેક માણસો એવા દેખાય છે કે જેઓ કોઇપણ માણસ પાસે ભણ્યાવિના જ મનન અને ચિંતનદ્વારા પોતાના ઇષ્ટ વિષયનું ઊંડું જ્ઞાન મેળવી શકે છે.

હવે રહ્યો શાબ્દિક અધ્યયનનો નિષેધ. તે નિષેધ આ પ્રશ્ન ઉપર અને તર્ક–વિતર્ક ઉત્પન્ન કરે છે. જેમ કે જે મનુષ્યની અંદર અર્થજ્ઞાનની યોગ્યતા માની શકાય, તે મનુષ્યને શાબ્દિક અધ્યયન માટે અયોગ્ય માનવો એ કેટલું સંગત છે? શબ્દ એ તો અર્થજ્ઞાનનું સાધન માત્ર છે. તપ ભાવના આદિ અન્ય-સાધનોથી જે માણસ અર્થજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી શકે છે તે, તે જ્ઞાનને શબ્દદ્વારા સંપાદન કરવામાં અયોગ્ય છે એમ કહેવું તે ક્યાં સુધી વ્યાજબી છે? શાબ્દિક અધ્યયનના નિષેધ માટે જે તુચ્છપણું, અભિમાન આદિ માનસિક દોષ દેખાડવામાં આવ્યા છે, તે શું પુરુષજાતિમાં નથી હોતા? જો વિશિષ્ટ પુરુષોમાં તે દોષોનો અભાવ હોવાથી પુરુષસામાન્ય માટે શાબ્દિક અધ્યયનનો નિષેધ ન કર્યો તો શું પુરુષ-સમાન વિશિષ્ટ સ્ત્રીઓનો સંભવ નથી? અને જો અસંભવ હોય તો સ્ત્રી મોક્ષનું વર્ણન પણ કેમ સંભવી શકે? શાબ્દિક અધ્યયન માટે જે શારીરિક દોષોની સંભાવના કરી છે તે પણ શું બધી સ્ત્રીઓને લાગુ પડે છે? જો કેટલીક સ્ત્રીઓમાં લાગુ પડતી હોય તો શું કેટલાક પુરુષોમાં પણ શારીરિક અશુદ્ધિની સંભાવના નથી? આવી દશામાં પુરુષજાતિને છોડી સ્ત્રીજાતિ માટે શાબ્દિક અધ્યયનનો નિષેધ શા માટે કરાયો? આ તર્કોના સંબંધમાં સંક્ષેપમાં એટલું જ કહેવાનું છે, કે માનસિક અથવા

Aho ! Shrutgyanam

શારીરિક દોષ બતાવીને શાબ્દિક અધ્યયનનો જે નિષેધ કરાયેલો છે તે પ્રાયિક જણાય છે. અર્થાત્ વિશિષ્ટ સ્ત્રીઓ માટે અધ્યયનનો નિષેધ નથી. આના સમર્થનમાં એમ કહી શકાય કે જો વિશિષ્ટ સ્ત્રીઓ દૃષ્ટિવાદનું અર્થજ્ઞાન, વીતરાગભાવ, કેવલજ્ઞાન અને મોક્ષને પ્રાપ્ત કરવામાં સમર્થ થાય છે તો પછી તેનામાં માનસિકદોષની સંભાવના પણ કેમ હોઈ શકે? તેમ જ વૃદ્ધ, અપ્રમાદી અને પરમપવિત્ર આચારવાળી સ્ત્રીઓમાં શારીરિક અશુદ્ધિ પણ કેમ બતાવી શકાય? જેને દૃષ્ટિવાદના અધ્યયન માટે યોગ્ય માન્યા તે પુરુષો પણ-જેવા કે સ્થૂલિભદ્ર, દુર્બલિકા પુષ્યમિત્ર આદિ તુચ્છત્વ સ્મૃતિદોષ વિગેરે કારણોથી દૃષ્ટિવાદની રક્ષા ન કરી શક્યા.

"तेण चिंतियं भगिणीणं इड्ढिं दरिसेमि त्ति सीहरूवं विउव्वइ।"

આવશ્યકવૃત્તિ પૃ૦ ૬૯૮-૧.

"ततो आयरिएहिं दुब्बलियपुस्समित्तो तस्स वायणारिओ दिण्णो ततो सो कइवि दिवसे वायणं दाऊण आयरियमुबट्ठितो भणइ–मम वायणं देंतस्स नासति, जं च सण्णायघरे नाणुप्पेहियं, अतो मम अज्झरंतस्स नवमं पुव्वं नासिहि त्ति। ताहे आयरिया चिंतेति–जइ ताव एयस्स परममेहाविस्स एवं झरंतस्स नासइ अन्नस्स चिरनट्ठं चेव।"

આવશ્યકવૃત્તિ પૃ૦ ૩૦૮

આવી વસ્તુસ્થિતિ હોવા છતાં પણ સ્ત્રીઓ માટે જ ભણવાનો નિષેધ કેમ કરાયો? આ પ્રશ્નનો ઉત્તર એ રીતે આપી શકાય-(૧) સમાન સામગ્રી મળવા છતાં પણ પુરુષોની સરખામણીમાં પુરુષો કરતાં સ્ત્રીઓનું થોડી સંખ્યામાં તૈયાર થવું, અને (૨) બીજી ઐતિહાસિક પરિસ્થિતિ.

(૧) જે પશ્ચિમ વિગેરે દેશોમાં સ્ત્રીઓને ભણવા વિગેરેની સામગ્રી પુરુષો સમાન પ્રાપ્ત થાય છે ત્યાંનો ઇતિહાસ જોવાથી આ જાણી શકાય છે કે સ્ત્રીઓ પુરુષોની તુલ્ય થઈ શકે છે. પરંતુ યોગ્ય વ્યક્તિઓની સંખ્યા સ્ત્રીજાતિની અપેક્ષાએ પુરુષજાતિમાં વધારે થાય છે.

(૨) દિગંબર આચાર્ય કુંદકુંદ સરખાએ પણ શારીરિક અને માનસિક દોષોના કારણથી સ્ત્રીજાતિને દીક્ષા માટે અયોગ્ય ઠરાવી છે.

लिंगम्मि य इत्थीणं, थणंतरे णाहिकक्खदेसम्मि।
भणिओ सुहमो काओ, तासं कह होइ पव्वज्जा॥

ષટ્પાહુડ-સૂત્રપાહુડ ગા૦ ૨૪-૨૫

અને વૈદિક વિદ્વાનોએ શારીરિક શુદ્ધિને અગ્રસ્થાન આપીને સ્ત્રી અને શુદ્ર જાતિને વેદના અધ્યયન માટે અયોગ્ય ઠરાવી, "**स्त्री शुद्रौ नाधीयाताम्**" એમ કહ્યું છે.

આ વિરોધી સંપ્રદાયોની એટલી બધી અસર પડી કે તેના લીધે સ્ત્રીજાતિની યોગ્યતા પુરુષ સમાન માનનાર શ્વેતાંબર આચાર્યો પણ તેને વિશેષ અધ્યયન માટે અયોગ્ય બતાવવા લાગ્યા હશે.

અગીયાર અંગ આદિ ભણાવવાનો અધિકાર માનતા છતાં પણ ફક્ત બારમા અંગના નિષેધનું કારણ એ પણ લાગે છે કે વ્યવહારમાં દૃષ્ટિવાદનું મહત્ત્વ સચવાય. તે કાળમાં વિશેષપણે શારીરિક શુદ્ધિપૂર્વક ભણવામાં વેદ આદિ ગ્રંથોની મહત્તા સમજાતી હતી. દૃષ્ટિવાદ બધા અંગોમાં પ્રધાન હતું એટલા

Aho ! Shrutgyanam

માટે વ્યવહાર દૃષ્ટિથી તેની મહત્તા બતાવવા માટે બીજા મોટા પાડોશી સમાજનું અનુકરણ થવું સ્વાભાવિક છે. આ કારણથી પારમાર્થિક દૃષ્ટિએ સ્ત્રીને સંપૂર્ણ રીતે યોગ્ય માનતા છતાં પણ આચાર્યોએ વ્યાવહારિક દૃષ્ટિથી શારીરિક અશુદ્ધિનો વિચાર કરી તેને ફક્ત શાબ્દિક અધ્યયન માટે અયોગ્ય બતાવી હોય એમ લાગે છે.

ભગવાન ગૌતમબુદ્ધે સ્ત્રીજાતિને ભિક્ષુપદ માટે અયોગ્ય ઠરાવી હતી પરંતુ ભગવાન મહાવીરે તો પ્રથમથી જ તેને પુરુષની સમાન ભિક્ષુપદની અધિકારિણી ઠરાવી હતી. આ કારણથી જૈન શાસનમાં ચતુર્વિધ સંઘ પ્રથમથી જ સ્થાપિત છે અને સાધુ તથા શ્રાવકોની અપેક્ષાએ સાધ્વિઓ તથા શ્રાવિકાઓની સંખ્યા આરંભથી જ અધિક રહેલી છે. પરંતુ પોતાના પ્રધાન શિષ્ય આનંદના આગ્રહથી ગૌતમબુદ્ધે જ્યારે સ્ત્રીઓને ભિક્ષુપદ આપ્યું ત્યારે તેની સંખ્યા ધીમે ધીમે ઘણી વધી અને કેટલીક શતાબ્દિઓ પછી અશિક્ષા કુપ્રબંધ આદિ કેટલાંક કારણોથી તેમાંથી ઘણી સ્ત્રીઓ આચારભ્રષ્ટ થઈ જેને લીધે બૌદ્ધ સંઘ એક પ્રકારે દૂષિત મનાવા લાગ્યો. સંભવ છે કે આ પરિસ્થિતિની જૈનો ઉપર પણ કાંઈ અસર પડી હોય, જેથી દિગંબર આચાર્યોએ તો સ્ત્રીઓને ભિક્ષુપદ માટે પણ અયોગ્ય ઠરાવી અને શ્વેતાંબર આચાર્યોએ એ પ્રમાણે નહીં કરતાં સ્ત્રીજાતિનો ઉચ્ચ અધિકાર કાયમ રાખીને પણ તેમાં દુર્બળતા ઇંદ્રિયચપલતા આદિ દોષો વિશેષરૂપથી બતાવ્યા. કેમ કે સહચર સમાજોના વ્યવહારોનો એકબીજા પર પ્રભાવ પડે તે અનિવાર્ય છે.

-પંડિત સુખલાલજી

(૨) અવ્યવહારરાશિ ને વ્યવહારરાશિની કલ્પના.

આ લેખ લખવાનો ઉદ્દેશમાત્ર એક જ છે, ને તે એ છે કે અવ્યવહારરાશિ ને વ્યવહારરાશિની કલ્પના માત્ર કલ્પિત છે કે તથ્યભૂત છે ?

(૧) જૈનદર્શન કથનાનુસાર જીવોની અનંતાનંતતા છે, ને તે અવ્યહાર ને વ્યવહારરાશિ એમ બે વર્ગમાં વ્હેંચાએલી છે. અવ્યવહારરાશિ સ્થાન જેને કહેવામાં આવે છે, તેમાં માત્ર સૂક્ષ્મ નૈગોદિક જીવો છે, ને તે સિવાય જે જીવો છે, તે સર્વ વ્યવહારરાશિમાં ગણાય છે.

(૨) એ અવ્યવહારરાશિસ્થિત જીવો પોતાનું અવ્યવહારરાશિસ્થાન ક્યારે પણ છોડતા નથી. તેઓના ઉપર આજસુધીમાં અનંત ઉત્સર્પિણીઓ ને અવસર્પિણીઓ ચાલી ગઈ, પણ તેઓ હજી તે સ્થાન (સૂક્ષ્મ નૈગોદિકસ્થિતિ)માં રહ્યા છે. હવે પણ તેઓના ઉપર તેટલી કાલચક્રતા જશે, તો પણ તે જીવો પોતાના સ્થાનમાંથી ખસવાના નથી.

(૩) વ્યવહારરાશિગત જીવો ભલે એકેન્દ્રિયમાંથી માંડી પંચેન્દ્રિય સુધી અથવા નારકથી માંડી દેવ સુધી ગત્યાગતિ કરે; ને ત્યાંથી અનુક્રમે કદાચ વિકાસ પામતા મુક્ત સ્થાનમાં જાય. પણ આ અ-વ્યવહારરાશિસ્થ જીવો પંચેન્દ્રિયત્વ તો શું પણ સ્થૂલ એકેન્દ્રિયત્વને પામવાને પણ ક્યારેય સમર્થ થવાના નહિ.

(૪) આમ હોવામાં તે જીવોને પોતાના કર્મની પ્રધાનતા છે. એટલે આટલી છેક છેલ્લી અધઃસ્થિતિ પામવામાં તે જીવોને મિથ્યાત્વ (અવિદ્યા-અજ્ઞાન) અવિરત્યાદિ આશ્રયોની તીવ્રતા, ને આર્ત રૌદ્રાદિ મલિન-નિકૃષ્ટમાં નિકૃષ્ટ પરિણામોની ઉગ્રતા છે. તે જીવો પોતાના મૂળ (નૈગોદિક) સ્થાનમાંથી આગલ વધવા જાય, પણ, જેમ કોઈ જલાશયમાં રહેલી માંછલીઓને ઠંડીમાં બરફરૂપ આવરણો માથું બહાર કહાડવા દેતા નથી, તેમ તેમનાં પ્રખર-ગાઢ ચીકણા મિથ્યાત્વાદિ અભ્રપટલવત્ આવરણો બહાર ઉપરની કોટિમાં તેમને આવવાં દેતા નથી.

Aho ! Shrutgyanam

(૫) આ પ્રમાણે આ અવ્યવહાર ને વ્યવહાર રાશિઘટક ઘટના જૈનદર્શનમાં જણાય છે. આ ઘટના ગમે તે પુસ્તક ઉપરથી ઉપસ્થિત થઈ હોય, વા, ગમે તે પરંપરા પરિચિત વિચારો ઉપરથી થઈ હોય. આ આગમ સમ્મત છે કે કેમ એ તપાસીએ તે પહેલા કોઇપિણ ઇસિમ એમ પ્રશ્ન કરશે કે આ અવ્યવહાર ને વ્યવહારરાશિ ઘટના શા આધારે થઈ? એમ હોવામાં શું પ્રમાણ છે? એવો શો નિયમ કે જીવ કેદી કેદખાનામાં પોતાની શિક્ષા પૂરી કર્યા પછી પણ કેદખાનામાંથી ન જ છૂટી શકે? એટલે કે પ્રકૃતિબંધ, રસબંધ વિગેરે બંધસ્વરૂપને–બદલામાં દુઃખરૂપ સંપૂર્ણ ફલને–વેદ્યા પછી શાને વિકાસ (ઉન્નત કોટિ)માં ન આવી શકે?

(૬) મતલબ એ છે કે કોઇપિણ જૈનદર્શનના સારામાં સારા અભ્યાસીને આ વાર્તા વિચાર કરતાં શૃંખલાબદ્ધ છે એમ તો નહિ જ લાગે. ત્યારે એમ કહેવામાં આવશે કે ભવ્ય ને અભવ્યની ઘટના જેમ ઘટાડવામાં આવી છે તેમ આ પણ છે. ઉત્તર એ થશે કે તે ઘટના આગમસિદ્ધ છે, પણ આગમ વિરૂદ્ધ નથી. પણ આ ઘટના આગમોક્ત હોય તેમ જણાતી નથી. ઉલટી આગમ વિરૂદ્ધ છે એમ આગમ વિચારતાં લાગશે. આગમમાં અવ્યવહાર ને વ્યવહાર રાશિ એવા શબ્દો જણાતા નથી. તેમ આ ઘટના જે બતાવી, તે પણ જણાતી નથી.

(૭) આગમ (શાસ્ત્ર)કારો ઉપર્યુક્ત વિચારોથી તદ્દન જુદા પડી જાય છે. કારણ એ છે કે, જીવો પોતાની ક્રિયાથી જ ઉપર જાય છે, ને નીચે આવે છે. જે ક્રિયાના બલથી જીવ જે સ્થાન (ગતિ)માં જાય છે, ત્યાં તે ક્રિયાનું બલ (ભોગવવારૂપ ફલ) પૂર્ણ થતાં તે ત્યાંથી છૂટી જાય છે. અર્થાત્ નિગોદ કે એવી એક પણ કોઈ ગતિ નથી, કે જે જીવનું અનાદિત્વ કે અનંતત્વ રાખી શકતી હોય, સંસારસ્થિતિએ જીવનું ભલે અનાદિત્વ દરતું હોય, પણ કોઈ ગતિ–સ્થિતિએ જીવનું અનાદિત્વ સાબિત થતું નથી. આમ જો ન માનીએ તો જુઓ પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર (ઉપાંગ પૈકી ચોથું ઉપાંગ).

(૮) ૧૮માં કાયસ્થિતિપદમાં તે સૂત્ર કહે છે કે–જીવ, સૂક્ષ્મ નિગોદમાં જઘન્યમાં જઘન્ય (ઓછામાં ઓછો) રહે તો એક અંતર્મુહૂર્ત, ને ઉત્કૃષ્ટમાં ઉત્કૃષ્ટ અસંખ્ય ઉત્સર્પિણી ને અવસર્પિણી રહે છે. પછી જરૂર નિકલી જીવ સ્થાનાંતર કરે છે. એમ નહિ તો જુઓ વ્યાખ્યા પ્રજ્ઞપ્તિ (આગમોદય સમિતિ) શતક ૧૨ મું, ઉદ્દેશ ૭ મો. સૂત્ર *૪૫૭–૪૫૮, પત્ર ૫૭૯–૫૮૦

'આખા આ વિશાલ લોકમાં એક પરમાણુ પુદ્ગલ માત્ર રહી શકે તેવો એક સૂક્ષ્મ પ્રદેશ ખાલી રહી શકયો નથી કે જેમાં આ જીવે જન્મ ને મૃત્યુની પ્રવૃત્તિ ન કરી હોય. વાડામાં રહેલું ઘેટાનું ટોળું જેમ વાડાના નાનામાં નાના દરેક ભાગને પોતાના શરીરના દરેકે દરેક અશુચિ પદાર્થોથી, ને દરેકે દરેક શરીરના અવયવોથી સ્પર્શ્યા વિના બાકી રાખતું નથી. તેમ આ જીવે લોકના કોઇપિણ પ્રદેશને સ્પર્શ્યા વિના બાકી રાખ્યો નથી.' (સૂત્ર ૪૫૭) વળી, જુઓ–

'રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં ત્રીશ લક્ષ નરકાવાસ છે. તેમાં દરેકમાં પૃથ્વીપણે યાવત્ વનસ્પતિપણે ને નૈરયિકપણે આ જીવ અસકૃત્ (અનેક વખત) અથવા અનંત વખત ઉત્પન્ન થયો છે. એમ જ સાતે નરકમાં, તિર્યંચ યોનિમાં, મનુષ્યની સર્વ યોનિમાં, અસુર કુમારના ભવનમાં, તેમ ત્યાં રહેલા શયન આસન ઉપકરણ વગેરેમાં ને ત્યાં જે દેવ દેવી હોય તે સર્વમાં, આ જીવ અનેક વખત વા અનંત વખત જઈ આવ્યો છે. એ જ પ્રમાણે સર્વ વ્યંતર, સર્વ જ્યોતિષી ને સર્વ વૈમાનિકના સ્થલમાં પૃથ્વી જલ વનસ્પતિમાં શયનાસનમાં ને અનુત્તરોપપાતિક દેવ સિવાય સર્વ દેવદેવીમાં આ જીવ અનેક વખત વા અનંત વખત જઈ આવ્યો છે. એમ સર્વ જીવો સર્વ સ્થલે અનુકૂળ પ્રતિકૂલ સર્વ સંબંધપણે જઈ આવ્યા છે.'

(સૂત્ર ૪૫૮)

* મૂલ સૂત્રો વિસ્તીર્ણ હોવાથી દાખલ કર્યા નથી.

Aho ! Shrutgyanam

(૯) આ ઉપર્યુક્ત આગમકારોના કથન ઉપરથી સ્પષ્ટ સમજી શકાશે કે સર્વ જીવોને પોતાની શક્તિનો હ્રાસ કરવામાં ને વિકાસ કરવામાં સંપૂર્ણ સ્વતંત્ર અવકાશ છે. નિગોદિક જીવો વિકાસને ન પામે તેમ નથી, ને સ્વર્ગીય વૈમાનિક જીવો હ્રાસને ન પામે તેમ પણ નથી. હ્રાસને વિકાસનો આરંભ તેઓની પ્રવૃત્તિ ઉપર આધાર રાખે છે.

વિચારકો આ ઉપર સારી રીતે વિચાર કરશે ને આ કરતાં વિશેષ મૂલ-આગમ સ્પર્શી ખુલાસો બહાર મૂકશે

-શ્રીહર્ષચંદ્રજી સ્વામી

(૩) કેટલાક વિચારવા લાયક પ્રશ્નો

જૈન વિદ્વાનો માટે ખરી ચર્ચાનું મેદાન

૧. અંગ્રેજો પૃથ્વીનો પરિધિ એટલે ઘેરાવો લગભગ પચીશ હજાર મેલ બતાવે છે એ વાત રદ કરવા કોઈ જૈન વિદ્વાન સ્પષ્ટ પ્રમાણ આપી શકે છે ?

૨. અહીં જ્યારે સૂર્ય આથમે છે ત્યારે અમેરિકામાં ઉદય થાય છે. ત્યાં આથમે છે ત્યારે અહીં ઉદય થાય છે. અને તે વાત તારથી પણ લોકોએ સિદ્ધ કરી છે. ત્યારે અમેરીકા ખંડને કયા ક્ષેત્રમાં ગણવો ?

૩. અમેરિકા જવું હોય તો પશ્ચિમના માર્ગે એટલે મુંબઇથી હિંદી મહાસાગરના રસ્તે કેપગુડહોપ વટાવી, આટલાંટિક મહાસાગર ઓલંઘીને પણ અમેરિકા જઇ શકાય છે. અને પૂર્વના માર્ગે એટલે મદ્રાસથી મહાસાગરના પૂર્વ ભાગમાંથી શિંગાપોર, ચીન, જાપાન થઇને પાશિફિક મહાસાગર પસાર કરીને પણ અમેરિકા પ્હોંચી શકાય છે. એમ એકથી ઉલટી દિશાએ અમેરિકા-ચિકાગો જેવા શહેરમાં લોકો પ્હોંચી શકયા છે. તે પૃથ્વી દડા જેવી ગોળ હોય તો જ બને એમ અંગ્રેજો કહે છે. તે વાતને કોઇ જૈન તોડી નાખવા સમર્થ છે ?

૪. સૂર્ય માગશર પોષમાં જ્યારે છેક દક્ષિણાયન થાય છે ત્યારે ઠેઠ લવણ સમુદ્રમાં ૧૧૯ માંડલા કરે છે. વારૂ ત્યારે છેક દક્ષિણાયન વેલા જો સૂર્યપરથી સમશ્રેણીની સીધી અધોલીટી લઇએ તો તે લવણમાં પડે. તો એ સમ અધોલીટીથી જે દક્ષિણમાં દેશ હોય તે જંબુદ્રીપમાં ગણવો કે લવણમાં ? તેમ છેક ઉતરાયણ થાય છે ત્યારે ઠેઠ નિષધ પર્વત ઉપર હોય ત્યારે તેથી ઉતરના દેશોને શું મહા-વિદેહમાં ગણવા ?

ઉપરના પ્રશ્નો ઉપરથી એ શંકા થાય છે કે લવણ સમુદ્રની જગતી કેમ ઉલંગી દક્ષિણમાં જવાય ? અને વૈતાઢયાદિ પર્વતો ઉલંગીને ઉત્તરમાં કેમ જવાય ? અને હિંદુસ્તાનના લોકો ઉત્તર અને દક્ષિણમાં ઉપલી હદો-એટલે મકરવૃત્ત અને કર્કવૃત્તની આગલ જાય છે આવે છે તેનું શું કારણ ? આવનાર અને જનારને સાશ્વતી પ્રતીમાઓ, જુગલીઆના ક્ષેત્રાદિ વચમાં આવતા નથી તે કેમ ?

ઉપરના ૪ પ્રશ્નો કચ્છ-કોડાયના પ્રોફેસર રવજી દેવરાજના છે. હવે નીચેના પ્રશ્નો હું લખું છું.-

૧. સૂર્યના ૧૮૪ માંડળાના યોજન ૩૬૮ થાય. તો હમણાના ભૂગોળનાં નકશામાં મકરવૃત્ત અને કર્કવૃત્તની લીટીઓ સપ્રમાણ દેખાડી દીધી છે. તેના મૈલ પણ ચોકસ છે. તો આપણે જોજન કેટલા ગાઉનું માનવું ?

૨. અસલનાં વિમાનો ૧૭ હજાર જોજન ઉંચે ચડીને પછે જ્યાં જવું હોય ત્યાં જતા. ત્યારે હમણાના વિમાનો અઢીગાઉ (પાંચ મૈલથી) વધારે ઉંચે (ઠંડીના કારણથી) નથી જઈ શકતા, તેની કેમ સમાધાની કરવી ?

Aho ! Shrutgyanam

૩. જૈન જ્યોતિષના બે સૂત્રો અને કેટલાક ગ્રંથો છે. પણ તે ઉપરથી ગણિત કરી ગ્રહણાદિ વર્તી શકાતા નથી! તેમ હાલના ૫. ખંડો-૧ એશિયા, ૨ યુરોપ, ૩ આફ્રિકા, ૪ આસ્ટ્રેલીયા અને ૫ અમેરીકા એ છે તો તેમાં સૂત્રમાં કહેલથી વધારે થાય છે તેનું કેમ?

૪. શ્રી મહાવીરપ્રભુ ચૈત્ર સુદી ૧૩ ના જન્મ્યા અને કાર્તિકની અમાસે (પુનમીઆ મહીના પ્રમાણે આસોની અમાસે) મોક્ષે પધાર્યા તો ૭૨ વર્ષ પુરાં કેમ થાય? અને તે વખતે જૈન પંચાગોની ગણત્રી શી હતી?

૫. જૈનાગમોની ભાષા કેટલી પ્રાચીન છે તેનું નિર્ણય ભાષાશાસ્ત્રાધારે અતિ બારીક રીત્યા થવું જોઇએ. તેમ જૈન નિગમો અને ચાર વેદો તથા દિગંબરોના મૂલ પુસ્તકો-ધવલ, જયધવલ અને મહાધવલનું પણ નિર્ણય થવું એટલું જ જરૂરનું છે.

૬. ચંદ્રની ચાલ કરતાં ગ્રહની ચાલ ઉતાવલી છે, તો પછી નિત્યરાહુ ચંદ્ર સાથે હમેશ રહી એક એક કલા કેમ દબાવી શકે? અને ચંદ્ર તથા સૂર્યના વિમાનથી ગ્રહના વિમાન અર્ધા છે તો ખગ્રાસ ગ્રહણ કેમ થાય? નાનો પદાર્થ મોટાને સંપૂર્ણ આચ્છાદી ન શકે.

૭. શ્રીભદ્રબાહુ સ્વામી વિષે 'જૈન સિદ્ધાત ભાસ્કર'માં જે સપ્રમાણ શિલાલેખો યુક્ત પુરાવા છે, તેવા કે તેનાથી અધિક સબલ પુરાવા આપણા (શ્વેતાંબરોનાં) છે ખરા? હોય તો અંધારામાં રાખવાનું શું કારણ છે?

-લિ૦ **મુનિ, કચ્છી.**

નોટ—આપણાથી દક્ષિણમાં રહેનારા લોકોને સૂર્ય હમેશ ઉત્તરમાં રહે છે. તે આસ્ટ્રેલિયા, આફ્રિકા અને અમેરીકાના અમુક અમુક ભાગો છે. અને જેઓને ઉલંગીને સૂર્ય ઉત્તરમાં જતો જ નથી એટલે જેને સદાએ સૂર્ય દક્ષિણાયન રહે છે તે એશિયા ખંડ, યુરોપ અને અમેરીકાના અમુક ભાગો છે કે જે નકસામાં જોવાથી સમજાશે. આટલો ખુલાસો પ્રો. રવજી દેવરાજના પ્રશ્નોને અંગે છે.

∵ આ પ્રશ્નોના ઉત્તરો જો કોઈ વિદ્વાન વિચારપૂર્વક લખી મોકલશે તો તે આદરપૂર્વક પ્રકટ કરવામાં આવશે.—**સંપાદક.**

પંન્યાસ પદ.

આજકાલ જેવી રીતે 'પંન્યાસ' પદારૂઢ એક સામાન્ય સાધુ પણ બીજા સાધુને પંન્યાસ પદ અર્પણ કરે છે તેવી રીતે પ્રાચીન કાલમાં નહોતું થતું. પન્યાસ પદ અર્પણ કરવાનો અધિકાર આચાર્યને જ હોય એમ પ્રાચીન ઉલ્લેખોથી જણાય છે. 'પંન્યાસ' એ પદનો ખરો અર્થ 'પંડિત' છે. 'પંડિત' પદ કરતાં 'પંન્યાસ'નું કોઈ જુદું પદ નથી. પૂર્વ કાલમાં જે સાધુઓ બહુશ્રુત થતા તેમને ગચ્છાધિપતિ તરફથી 'પંડિત' પદ પ્રદાન કરવામાં આવતું. પંડિત પદ પછી જો વધારે યોગ્યતા વધતી તો પછી ઉપાધ્યાયની પદવી અપાતી અને તેનાથી પણ જો અધિક યોગ્યતા પ્રાપ્ત થતી તો છેવટે આચાર્ય પદે અભિષેક થતો. **सोमसौभाग्य, गुरुगुणरत्नाकर, हीरसौभाग्य** અને **विजयप्रशस्ति** આદિ કાવ્યોમાં અનેક વ્યક્તિઓના સંબંધમાં આવા ઉલ્લેખો થયેલા છે. આજે જેવી રીતે અમુક અમુક સૂત્રોનાં યોગોદ્વહન કરવાથી જ માત્ર પંન્યાસ થવાય છે પરંતુ જ્ઞાન સંબંધી યોગ્યતા ઉપર બીલકુલ ધ્યાન અપાતું નથી તેમ પૂર્વે નહોતું થતું. પૂર્વે તો અમુક દરજ્જા સુધીની વિદ્વત્તા પ્રાપ્ત કરનારને જ એ પદની પ્રાપ્તી થતી હતી. તપાગચ્છના આચાર્ય વિજયપ્રભસૂરિની પછી યતિયોમાં વધારે શિથિલાચાર પ્રવિષ્ટ થયો અને તેના લીધે યતિવર્ગ સ્વપદથી ભ્રષ્ટ થયો ત્યારે એ ધોરણમાં પણ ફેરફાર થયો. પાછળના બસો ત્રણસો વર્ષમાં તો એ પદ સંબંધી ઘણી જ અવ્યવસ્થા થઈ. એ સમયમાં નથી જોવાતી જ્ઞાન સંબંધી યોગ્યતા કે નથી જોવાતી

Aho ! Shrutgyanam

ચારિત્રસંબંધી યોગ્યતા. એ વખતે તો જેટલા યતિ તેટલા જ 'પંન્યાસ'! સંભળાય છે કે જે યતિ શ્રીપૂજ્યને ભેટ રૂપે થોડાક રૂપીઆ આપતો તેને શ્રીપૂજ્ય તરફથી બદલામાં પંન્યાસ પદ મળતું. પરંતુ એટલું અવશ્ય બંધારણ હતું કે જ્યાં સુધી શ્રીપૂજ્ય તરફથી પંન્યાસપદ અપાયેલું જાહેર થતું નહિ ત્યાં સુધી કોઇ પણ યતિ પોતાના નામ સાથે 'પં.' શબ્દનો ઉપયોગ કરી શકતો નહિ. જેવી રીતે આજે સરકાર તરફથી પ્રજાના કોઈ પ્રતિષ્ઠિત જનને તેની યોગ્યતા અનુસાર 'રાય બહાદુર' કે 'રાજા' આદિના ખેતાબો આપવામાં આવે છે ત્યારે તે વ્યક્તિ ઉપર તે ખેતાબ બાબતનો સર્ટિફીકેટ મોકલવામાં આવે છે તેમ આચાર્ય પણ જ્યારે જે યતિ-સાધુ ને પંન્યાસ પદ આપતા ત્યારે તે બાબતનું પોતાના હસ્તાક્ષરોવાળું પ્રમાણપત્ર તેના ઉપર મોકલી આપતા. આ પ્રમાણપત્રો ઘણાભાગે ૪-૫ આંગળ જ લાંબા ચોડા થતાં હતાં પત્રના મથાળે આચાર્ય પોતાનાં હાથે ફક્ત **'सही'*** આવા બેજ અક્ષરો મ્હોટા કદના લખતા. બાકીનું બધું વૃત્તાંત તેમની પાસે જે મુખ્ય યતિ મનાતો તે લખતો. જુના ભંડારોમાં આવી જાતના સેંકડો પ્રમાણપત્રો મ્હારી દષ્ટિગોચર થયાં છે. વાચકોના અવલોકન માટે એ જાતના બે પત્રોની નકલ અત્રે આપવામાં આવે છે.

सही

॥ प दं० ॥ ॐ नत्वा भ । श्री श्री विजय धर्म सूरीश्वर चरणसेवी उ । श्रीहितविजय गणि लिखितं । पं । देवविजय ग । पं । विनीत स । योग्यं । अपरं तुह्मारा शिष्य ग । कुशलविजयनइं श्रीजीयइं पं० पद प्रसाद कीधो छइं । मिति सं । १८११ वर्षे प्रथ । ज्येष्ठ व । ८ । षोडाडार नगर मध्ये ।

पं० देवविजय ग । योग्यं ।

सही

॥ प दं० ॥ ॐ नत्वा भ । श्री श्रीविजयजिनेन्द्रसूरीश्वर चरणसेवी । पं । सौभाग्यविजय । ग । लिखितं । मु । विनयविजय । पं । कल्याण स । योग्यं । अपरं तुम्हां ने श्रीजीइं पं० पद प्रसाद कीधो छे । मिति संवत १८४८ ना व । महावदि १ दिने पेटलाद मध्ये ।

पं० विनयविजय ग । योग्यं ।

આવી જાતનું પ્રમાણપત્ર મળ્યાં પછી જ તે વ્યક્તિ પોતાના નામ સાથે 'પં૦' અક્ષરનો પ્રયોગ કરી શકતી હતી. તેમ જ આ પદ આપ્યાની ગચ્છના દરેક યતિને આચાર્ય તરફથી ખબર આપી દેવામાં આવતી હતી. જેથી બીજા યતિયો તે વ્યક્તિની સાથે પત્રવ્યવહારાદિ કરે ત્યારે 'પં૦' શબ્દવિશિષ્ટ જ તેનું નામ લખે. જો ખબર હોવા છતાં પણ કોઇ યતિ વ્યક્તિના નામ સાથે એ શબ્દ ન લખે તો તેથી માનહાનિ થએલી મનાતી અને તે બદલ શ્રીપૂજ્ય તરફ ફર્યાદ કરવામાં આવતી!

આજના સુધારાવાળા જમાનામાં એ પદવીના સંબંધમાં પણ કેટલોક સુધારો થએલો જોવામાં આવે છે. આજે એ પદવી આપવામાં નથી રહ્યું પૂર્વનું જ્ઞાનસંબંધી યોગ્યતાનું બંધારણ કે નથી રહ્યું આચાર્ય દ્વારા જ તે મેળવવાનું સાધન! આજે તો જેમને પંચપ્રતિક્રમણ પણ બરોબર શુદ્ધ નહિ આવડતા હોય તે પણ એ પદવી પ્રદાન કરી શકે છે અને ગ્રહણ કરી શકે છે! બંધારણમાં માત્ર અમુક સમય સુધી તપનું સેવન જ બાકી રહ્યું છે. આશા છે કે જેમ જેમ સુધારાની પ્રગતિ થતી જશે તેમ તેમ સાધુઓ એ બાબતમાં પણ પોતાની ઉદારતા બતાવતા જશે!

---

* ઉદયપુર-(મેવાડ)ના મહારાણાના જુના કાગળોમાં પણ મથાળે આવા જ જાતના 'सही' એવા બે અક્ષરો મ્હોટા કદમાં લખેલા હોય છે. જુઓ, વ્યેંકટેશ્વર પ્રેસનો પ્રકટ કરેલો ટૉડનો 'राजस्थान इतिहास' ભાગ ૧ના પરિશિષ્ટમાં

आजना अंकनो वधारो

जैनतत्त्वज्ञानना पिपासुओने खुश खबर	संस्कृत–प्राकृत भाषाना अभ्यासिओने सु समाचार	जैन साहित्यना ग्रंथ संग्राहकोने प्रिय निवेदन

आर्हतमतप्रभाकर कार्यालयद्वारा प्रकाशित

जैन साहित्यना उत्तमोत्तम

संस्कृत–प्राकृत ग्रंथो.

આ સંસ્થાએ પ્રારંભેલ ગ્રંથપ્રકાશનકાર્યના ફળ રૂપે હાલમાં દુષ્પ્રાપ્ય એવા જૈન આગમ તથા પૂર્વાચાર્ય રચિત જૈન ન્યાય, વ્યાકરણાદિક અવશ્ય સંગ્રહ કરવા યોગ્ય શાસ્ત્રીય ગ્રંથો વિદ્વાનોની સહાયતાથી સંશોધન કરવા-પૂર્વક અર્થબોધક અને મતપરિચાયક ટિપ્પણી, વિસ્તૃત પ્રસ્તાવના અને પરિશિષ્ટ વિગેરે અથવા ઈંગ્લિશ નોટ્સ. શબ્દકોશ વિગેરે સાથે સુન્દર બાલબોધ ટાઈપથી ડેમી અષ્ટ પેજી પંચાવન રતલી ગ્લેજ કાગળ ઉપર પુસ્તકાકારે સુન્દર છપાયા છે ને છપાઈ રહ્યા છે. જૈન સાહિત્યને પ્રસાર કરવાના મુખ્ય ઉદ્દેશથી જ સંસ્થાએ ગ્રંથની કિંમત તેને અંગે થયેલા ખર્ચ જેટલા જ રાખેલી હોવાથી એતદ્દેશીય તથા પરદેશીય સંસ્થાઓદ્વારા પ્રકાશિત ગ્રંથની નજરે નજીવી છે. એ બાબત ગ્રંથ જોતાં જ દરેકની ખાત્રી થયા વિના કદાપિ નહી રહે. આ ગ્રંથોમાંનાં ઘણા ખરા ગ્રંથો મુંબાઈ, કલકત્તા વિગેરે યુનિવર્સિટીઓ, શ્રીમહાવીર જૈન વિદ્યાલય તથા શ્રી વીરતત્ત્વ પ્રકાશક મંડલ વિગેરે આદર્શ સંસ્થાઓએ અભ્યાસક્રમ માટે નીમ્યાં હોવાથી દરેક અભ્યાસિઓએ તથા તત્ત્વજિજ્ઞાસુઓએ આ લાભ લેવા કદાપિ નહી ચુકવું. ગ્રંથની નકલો થોડી જ હોવાથી તેમ જ ગ્રંથો શિક્ષણક્રમમાં નિમાએલા હોવાથી ગ્રાહકો તરફથી ઘણી માગણી આવ્યા કરે છે, માટે તૈયાર ગ્રંથો વી. પી. થી મંગાવી લેવા અને છપાતા માટે અગાઉથી દરેક ગ્રંથ પાછળ રૂપિઓ એક મોકલી ગ્રાહક લીસ્ટમાં નામ દાખલ કરાવવા શીઘ્રતા કરવી. જેથી સંસ્થાને ઉત્તેજન મલે અને સાહિત્ય સેવાનું શ્રેય સંપાદન કરવામાં સંસ્થાચાલકોના સહભાગી થઈ શકાય. તેમજ ભવિષ્યમાં ગ્રંથો ન મલવાથી નિરાશ થવાનો પ્રસંગ ન આવે.

१ कलिकालसर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्यरचित प्रमाणमीमांसा स्वोपज्ञवृत्तिसह पृष्ठ लगभग १४५ કિંમત રૂ. ૧.

२ कलिकालसर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्यरचित अन्ययोगव्यवच्छेदिका श्री मल्लिषेणसूरिकृत स्याद्वादमंजरी ટીકા સાથે પૃષ્ઠ લગભગ ૩૨૦ કિં. રૂ. ૨.

पोष्टखर्च शिवाय,

नीचेनां पुस्तको छपाय छे.

३ प्राकृतव्याकरण स्वोपज्ञवृत्ति सह.

४ छंदोऽनुशासन स्वोपज्ञवृत्ति सह.

५ જૈન શાસનના પરમપ્રભાવક श्री वादिदेवसूरिकृत प्रमाणनयतत्त्वालोकालंकार स्वोपज्ञ स्याद्वादरत्नाकर (ઉપલબ્ધ ભાગ પરિચ્છેદ ૭ લગભગ) बृहट्टीका સાથે.

६ सभाष्य तत्त्वार्थाधिगमसूत्र આઠ કર્મોના સ્વરૂપ-દર્શક ફોટાઓ સહિત.

७ श्रीमद् हरिभद्रसूरिकृत अनेकांतजयपताका स्वोपज्ञ वृत्ति अने श्रीमुनिचन्द्रसूरिकृत टिप्पणीसह

८ औपपातिक सूत्र (મૂળ ઈંગ્લિશ નોટ્સ સાથે)

९ सूत्रकृतांग सूत्र (મૂળ ઈંગ્લિશ નોટ્સ સાથે.)

मळवानूं ठेकाणुं—

१ आर्हतमतप्रभाकर कार्यालय, पूना सिटी.

२ जैन साहित्य संशोधक कार्यालय, एलिस ब्रिज, अमदावाद.

३ शा शंभुलाल जगशीभाई, ठे. उस्मानपुरा पुरातत्त्व मंदिर, अमदावाद.

४ मेसर्स मोतीलाल बनारसीदास ठे सय्यद मिठा बजार, लाहोर. (पंजाब)

' हनुमान ' प्रेस, पुणे शहर.

Aho ! Shrutgyanam

Aho ! Shrutgyanam

आचार्य श्रीजिनविजय सम्पादित ग्रन्थोनी नामावली

१ जैन तत्त्वसार (હિન્દી ભાષાંતર)

२ विज्ञप्ति त्रिवेणी (સંસ્કૃત મૂળ-હિન્દી પ્રસ્તાવના)

३ कृपारस कोष (,, ,, ,,)

४ शत्रुंजय तीर्थोद्धार प्रबन्ध ,, ,,

५ द्रौपदी स्वयंवर नाटक ,, ,,

६ प्राचीन जैन लेख संग्रह ભાગ ૧ લો. (પ્રાકૃત મૂળ-ગૂજરાતી વિવેચન.)

७ ,, ભાગ ૨ જો (૫૫૭ શિલાલેખનો સંગ્રહ. ,,)

८ जैन ऐतिहासिक गूर्जरकाव्य संचय (૩૩ ઐતિહાસિક રાસોનો મોટો સંગ્રહ.)

९ हरिभद्राचार्यस्य समयनिर्णयः (સ્વતંત્ર સંસ્કૃત નિબંધ)

१० कुमारपाल प्रतिबोध (પ્રાકૃત ભાષાનો ૧૨ હજાર શ્લોકનો મહાન્ ગ્રંથ.)

११ प्राकृत कथा संग्रह (ગૂજરાત પુરાતત્ત્વ મંદિર ગ્રંથાવલી]

१२ पाली पाठावली (પાલી ભાષાની પાઠમાળા. ગૂ. પુ. મં.)

१३ अभिधानप्पदीपिका (પાલી ભાષાનો શબ્દકોષ ગૂ. પુ. મં.)

१४ जीतकल्पसूत्र-मूल, चूर्णि, टिप्पण समेत (વિસ્તૃત ગૂજરાતી પ્રસ્તાવના)

હાલમાં છપાતા ગ્રંથો

१५ प्राचीन गूजराती गद्य संदर्भ (૧૫ મા સૈકાના ગૂજરાતી ગદ્યનો સંગ્રહ.)

१६ गूजरातना इतिहासनो साधन-संग्रह, ग्रंथ १ लो.

(१) मेरुतुङ्गाचार्यरचित प्रबन्धचिन्तामणिः सटिप्पण।

१७ विजयदेवमाहात्म्य (૧૭ મા સૈકાના એક પ્રસિદ્ધ જૈનાચાર્યનું સંસ્કૃત ચરિત્ર)

१८ पट्टावलि संग्रहः ભાગ ૧ લો. (ખરતર ગચ્છની અનેક પ્રાચીન પટ્ટાવલીઓ.)

તૈયાર થતા ગ્રંથો

१९ कुवलयमाला कथा (૮ મા સૈકાની પ્રાકૃતમાં લખાએલી એક ઉત્તમ જૈન કથા)

२० गूजरातना इतिहासनो साधनसंग्रह, ग्रंथ २ जो (શિલાલેખ વગેરે.)

મુદ્રણસ્થાન : આદિત્ય મુદ્રણાલય, રાયખડ [illegible] : મુદ્રક: ગજાનન વિશ્વનાથ પાઠક

Aho ! Shrutgyanam

ખંડ ૩. अंક ૪.

जैनसाहित्यसंशोधक

ફાલ્ગુન ૧૯૮૪

જૈન
સાહિત્ય સંશોધક

જૈન ઇતિહાસ, સાહિત્ય, તત્ત્વજ્ઞાન આદિ વિવિધ વિષયક

સચિત્ર ત્રૈમાસિક પત્ર

संपादक

श्री जिनविजय

प्रकाशक

જૈન સાહિત્ય સંશોધક કાર્યાલય

વાર્ષિક મૂલ્ય રૂ. ૬)] અમદાવાદ [પ્રતિ અંક મૂ. રૂ. ૨)

Aho ! Shrutgyanam

Aho ! Shrutgyanam

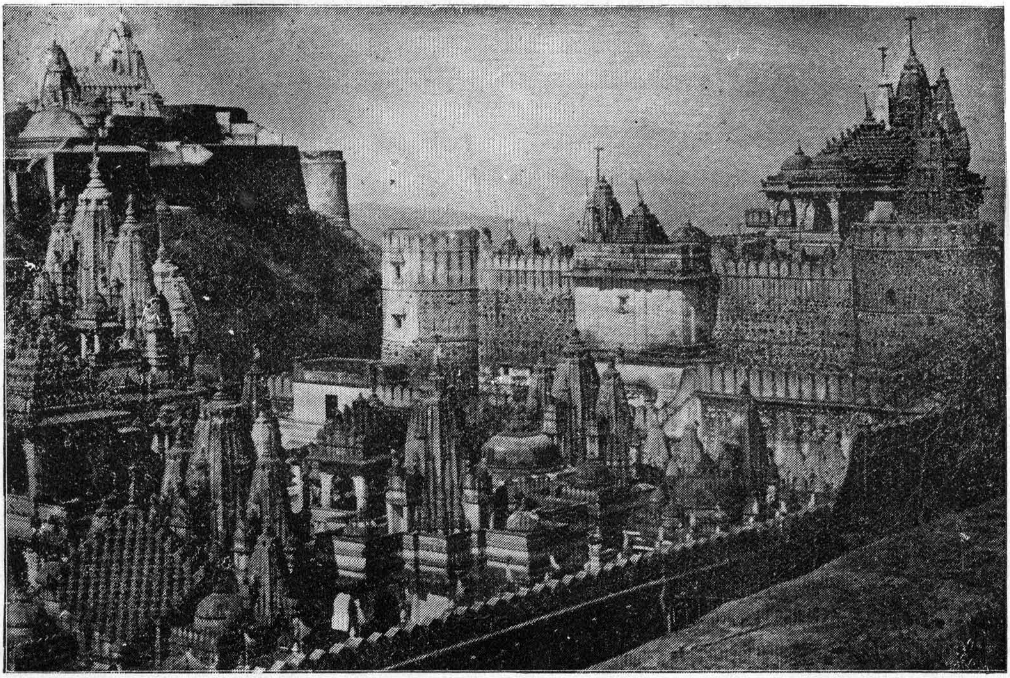

સિદ્ધક્ષેત્ર શત્રુંજય : પાલીતાણા

બ્લૉક: 'કુમાર'ના સૌજન્યથી
કુમાર પ્રિન્ટરી : અમદાવાદ

Aho ! Shrutgyanam

વાચકોને નિવેદન

પ્રસ્તુત અંક સાથે જૈનસાહિત્યસંશોધકનું ત્રીજું વર્ષ પૂર્ણ થાય છે. દર ત્રણ મહીને એ નિયમિત રીતે બહાર પડે એવી પ્રબળ આકાંક્ષા જેમ વાચકોને રહે છે તેમ એવી જ આકાંક્ષા એના સંપાદકને પણ હમેશાં રહી છે એ હું જાણું છું. અને તેથી જ તેની યોગ્ય વ્યવસ્થા ગયા વર્ષથી અમદાવાદમાં કરવામાં આવેલી. પરન્તુ વાચકોની જાણ બહાર નહિ હોય કે શ્રીમાન્ જિનવિજયજી ઉપર માત્ર સંશોધકના સંપાદનનો ભાર ન હતો પણ પુરાતત્ત્વ મંદિરના આચાર્ય તરિકેની જવાબદારી ઉપરાંત એ મંદિર તરફથી પ્રસિદ્ધ થતાં કેટલાંક પુસ્તકોનાં સંપાદનનો અને બીજાં પણ પુસ્તકોના સંપાદનનો ભાર તેમને શિર હતો જ. આર્થિક ખોટની ચિન્તા ધ્યાનમાં ન લઇએ તોપણ આવાં બૌદ્ધિક કાર્યોને સતત કરનારના અનારોગ્યના કારણને ધ્યાન બહાર રાખી શકાય નહિ. એ કારણોને લીધે જ નિયત સમયે અંકો પ્રસિદ્ધ કરી શકાયા નહિ.

વાચકોને કાંઇ પણ લાગવાનો સંભવ હોય તો તે એટલો જ છે કે ચાલુ વર્ષનો છેલ્લો અંક ધાર્યો કરતાં લગભગ ત્રણ મહીના મોડો તેઓની સેવામાં પહોંચે છે. પરન્તુ કોઇ પણ અભિજ્ઞ વાચક જોઇ શકશે કે તેઓ ધારે તે કરતાં કેટલી વધારે સેવા સંશોધકે તેઓની કરી છે. ૪૫ ફરમાને બદલે ૫૦ ફરમાનું વાચન, એ બાહ્ય લાભ તરફ દૃષ્ટિ ન આપીએ તોપણ સંશોધકમાં પ્રસિદ્ધ થએલા લેખો એજ મુખ્ય લાભની વસ્તુ છે. જૈન સમાજના નાના મોટા ત્રણે ફિરકા તરફથી ગૂજરાતી, હિન્દી, મરાઠી અને ઇંગ્રેજી સુદ્ધાંમાં અનેક પત્ર-પત્રિકાઓ નીકળે છે. એમાંથી કોઇ પત્ર કે પત્રિકા સંશોધકની કક્ષાનું ગવેષણાપૂર્ણ અને નિષ્પક્ષવાચન પૂરૂં પાડતા હોય એમ હું અદ્યાપિ નથી જાણતો. જો વખતસર પ્રસિદ્ધ થવાના બાહ્યનિયમનો કાંઇક ભંગ સંશોધકથી થયો હોય તો તે એ ખોટને મુકરર કરેલ લવાજમમાં ધાર્યા કરતાં વધારે ફરમાઓ આપવાના આંતરિક નિયમના ભંગથી દૂર કરે છે એટલે ગ્રાહકોને તો એકંદર લાભ જ છે. અસ્તુ. આ નિવેદનમાં મારું મુખ્ય વક્તવ્ય તો બીજું જ છે અને તે એ છે કે આ અંકને સંપાદિત કરી તેને પ્રસિદ્ધ કરવાનું કામ અણધાર્યું મારે માથે આવી પડયું. અને તે પ્રમાણે મેં યથાશક્તિ અને યથાસામગ્રી તેનો નિર્વાહ કર્યો છે. આ અંકનું સંપાદન તેના સંપાદક શ્રીમાન્ જિનવિજયજીને હાથે થયું હોત તો વાચકો કરતાં હું જ વધારે ખુશ થાત. પણ ધાર્યું કોનું થાય છે ? એક બાજુ તેઓએ પ્રસ્તુત અંક છપાવવાની શરુઆત કરી એકાદ ફરમો છપાયો કે અચાનક જ તેઓશ્રીની જર્મની જવાની તારીખ જે પહેલાં જુન જુલાઇમાં ધારેલી તે મે માસમાં નક્કી થઇ અને તે પ્રમાણે તેઓ તા. ૧૨ મીએ જર્મની માટે વિદાય પણ થઇ ગયા. માત્ર જૈનસમાજ કે ગૂજરાતમાંથી જ નહિ પણ હું જાણું છું ત્યાં સુધી આખા હિંદુસ્તાનમાંથી પ્રૌઢ અભ્યાસી અને વિદ્વાન તરીકે જૈનસાહિત્યના સંશોધનનો મુખ્યપણે

Aho ! Shrutgyanam

અભ્યાસ કરવા જનાર શ્રીજિનવિજયજી જ પહેલા છે. તેઓએ આજસુધીમાં એકનિષ્ઠાથી સાહિત્યસેવાને જ પોતાનું ધ્યેય બનાવેલું છે. અને જર્મની વગેરે પશ્ચિમના દેશોમાંથી નવી જ્ઞેય સમ્પત્તિ લાવી તેઓ સાહિત્યના ક્ષેત્રમાં આજસુધીમાં કર્યું છે તે કરતાં વધારે કિંમતી અને વધારે સંગીન કામ કરવાના છે. એવી દૃઢ આશા-જનિત પ્રસન્નતામાં મારૂં પોતાની યોગ્યતા વિષેની ખામીનું દુઃખ મને નથી સાલ્યું. અને તેથી જ આ અંક પ્રસિદ્ધ કરી શકાયો છે. આશા છે વાચકો મારી ખામી ઉદારતાથી નભાવી લેશે. અને મારી સાથે પ્રભુ-પ્રાર્થનામાં સંમિલિત થશે કે પોતાનો ધારેલો અભ્યાસ સંપૂર્ણ રીતે પૂર્ણ કરી શ્રી જિનવિજયજી સુખરૂપ પાછા ફરે અને છેલ્લામાં છેલ્લી ગવેષણાઓ તેમજ પદ્ધતિના લાભો જૈનસમાજમાં રજુ કરી સ્પૃહણીય જૈનસાહિત્યની વિશિષ્ટ અભિવૃદ્ધિ અને તેના ગૌરવને વધારે અને તે દ્વારા ભારતીય સાહિત્યનો ઉત્કર્ષ સાધે.

હવે એકજ પ્રશ્નનો ખુલાસો કરવો બાકી રહે છે. પ્રશ્ન એ છે કે શ્રીમાન્ જિન-વિજયજી વિદેશથી પાછા ફરે ત્યાં સુધીમાં સંશોધક ચાલુ રાખવું કે નહિ અને રાખવું તો કેવી રીતે? કેટલાક સહૃદય વાચકોના પત્રો એવી મતલબના આવી રહ્યા છે કે સંશોધક ચાલુ રાખવું. શ્રી. જિનવિજયજીની પણ વિદેશ જવાની ઇચ્છા થઇ ત્યારે અને છેલ્લે વિદાય થવાના દિવસે પણ એ જ ઈચ્છા હતી કે સંશોધક ચાલુ રહે. પરન્તુ એ ઈચ્છાને માન આપી સંશોધક ચલાવવું હોય તો ચલાવે કોણ? એ પ્રશ્ન આવ્યો. સંમતિ-તર્કના દુઃસહ બોજા અને બીજાં કેટલાંક કારણસર એના સંપાદનનું કાર્ય (રુચિ છતાં પણ) કરવાની મારી અશક્તિ મેં સ્પષ્ટ જણાવી. અત્યારે રા. રા. મોહનલાલ દલીચંદ દેશાઇ બી. એ. એલ. એલ. બી. સિવાય બીજો કોઇ આ પત્ર ચાલુ રાખે તેવો નજરમાં ન આવવાથી તેમના તરફ સ્વાભાવિક રીતેજ દૃષ્ટિ ગઈ. તેઓ પોતાના ઉપર અનેક પ્રકારના કાર્યનો બોજો છતાં સદ્‌ભાવના ખાતર સંશોધકના સંપાદનનું કાર્ય કરવા કબુલ થયા. પરન્તુ એવી સરતે કે બાહ્યવ્યવસ્થા અને આર્થિકખોટની ચિંતા તેઓ ઉપર ન રહે.

બધી બાહ્યવ્યવસ્થા કરવાની કબુલાત મેં આપી પણ ખોટનો પ્રશ્ન ઉભો છે જ. કાગળ, છપામણી, બ્લૉક, ફોટા અને પોસ્ટનો જ ખર્ચ ગણતાં લગભગ ૪૦૦ રુપિઆની ખોટ આ વર્ષમાં આવી છે. પોણોસો ગ્રાહક વધે તો એ ખોટ પૂરાય અને માત્ર ખોટ પડવાને કારણે સંશોધક બંધ ન રહે. સંશોધકના વાચકોને એ કહેવાની ભાગ્યેજ જરૂર હોય કે સાહિત્યસેવકો આર્થિકખોટનો બોજો હમેશાં નભાવી ન શકે. તેથી એ ખોટની ચિંતાથી મુક્ત રાખી સંશોધકનું કામ ચાલુ રખાવવાની ફરજ તેના સહૃદય વાચકો ઉપર આવી પડે છે. દરેક ગ્રાહક એકએક નવો ગ્રાહક બનાવવાની પોતાની ફરજ સમજે તો કોઈ એકના ઉપર ભાર પડયા સિવાય ખોટ પૂરી થાય અને ઉદાત્ત સાહિત્યનું વાચન વધી ક્રમશઃ સમાજમાં વિદ્યાવૃદ્ધિ થાય.

તેથી હું દરેક વાચકને આ નિવેદન દ્વારા જણાવવા રજા લઉ છું કે તેઓ સાહિત્ય-સંશોધકને ચાલુ રાખવા અને ગ્રાહક બની રહેવા તૈયાર છે? તેમજ તેઓ બીજા નવા

Aho ! Shrutgyanam

ગ્રાહકો મેળવવા કાંઈ 'મૂર્ત' પ્રયત્ન કરશે ? આ બે પ્રશ્નોના ઉત્તરો સંશોધકના વાચકો તરફથી સત્વર આવવાની આશા રાખવી એ અસ્થાને નથી એ ઉત્તરો આવ્યા પછી જો સંતોષકારક પરિણામ જણાશે તો ચોથા વર્ષના સંશોધકના સંપાદનનું કાર્ય સત્વર હાથ ધરવામાં આવશે. તેમજ સાહિત્યની વિવિધ શાખાઓના રૂચિકર તેમજ ઉપયોગી વાચન પૂરૂં પાડવાનો યથાસાધ્ય પ્રયત્ન થશે.

વાચકોએ એટલું સ્મરણમાં રાખવું કે શ્રીમાન્ જિનવિજયજી માત્ર અભ્યાસમાં મુખ્યપણે ગુંથાયા હશે છતાં જો અહિં તેમનું પ્રિયપત્ર ચાલુ હશે તો કાંઈ ને કાંઈ નવી વાનગી મોકલતા રહેશે અને વિદેશી અવલોકન તેમજ ત્યાંના અભ્યાસની ભાત સંશોધક દ્વારા જૈનસાહિત્યમાં પાડતા રહેશે એમ હું દ્રઢપણે માનું છું. સાહિત્ય સંશોધકના લેખોએ જે વાચકોના હ્રદયમાં ખરી જિજ્ઞાસા અને સાહિત્યનિષ્ઠા જન્માવી હશે તેવા વાચકો સંપાદકના નવ અભ્યાસની થોડી પણ નવીન વાનગી મેળવવા આતુર હોય અને તે માટે તેઓ સંશોધક ચાલુ રાખવા પોતાથી બનતો ફાળો આપે એ પણ સ્વભાવિક છે. એજ ધારણાથી વચકો પ્રત્યે નિવેદન કરવા પ્રેરાયો છું. આશા છે તેઓ ઉત્તર આપવામાં વિલંબ નહિ કરે.

સુખલાલ.

Aho ! Shrutgyanam

વિષયાનુક્રમણિકા

૧ શ્રી વિબુધપ્રભુવિનિર્મિતા શ્રીઋષભકુંતલવર્ણન-પંચવિંશતિકા ૩૨૧–૩૨૫

૨ વિબુધવિમલસૂરિ-વિજ્ઞપ્તિ પત્ર ૩૨૬–૩૩૩

૩ આજીવિક સંપ્રદાયઃ મૂળ લે. એ એફ. આર. હોઅર્ન્લે
[અનુવાદક શ્રી ચુનીલાલ પુરુષોત્તમ બારોટ] ૩૩૪–૩૫૮

૪ આનંદવિમલસૂરિએ કરેલું યતિબંધારણ ૩૫૯–૬૦

૫ ભૂગોળ, ખગોળ સંબંધી કેટલાક પ્રશ્નના ખુલાસા [મુનિ હર્ષચંદ્રજી] ૩૬૧–૩૬૫

૬ કલિંગના ચક્રવર્તી મહારાજ ખારવેલના શિલાલેખનું વિવરણ ૩૬૬–૩૮૨
[લે.–વિદ્યામહોદધિ શ્રી કાશીપ્રસાદ જાયસવાલ એમ. એ. પટણા]
(અનુવાદક–સુખલાલજી)

૭ જૈનદર્શનમાં ધર્મ અને અધર્મતત્ત્વ ૩૮૩–૩૯૨
[લે. શ્રીયુત હરિસત્ય ભટ્ટાચાર્ય એમ. એ. બિ. એલ.]
(અનુવાદક–શ્રી નગીનદાસ પારેખ અધ્યાપક ગૂજરાત મહાવિદ્યાલય)

૮ કુંરપાલ સોનપાલ સંબંધી કેટલીક હકીકત અને અમદાવાદમાં
દૂધેશ્વર આગળથી જડેલો લેખ ૩૯૩–૩૯૯
[લે. શ્રીયુત રત્નમણિરાવ ભીમરાવ]

૯ જૈન ઐતિહાસિક ચર્ચા ૪૦૦

Aho ! Shrutgyanam

जैन साहित्यसंशोधक

‘पुरिसा ! सच्चमेव समभिजाणाहि । सच्चस्साणाए उवट्ठिए मेहावी मारं तरइ ।’

‘जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइ; जे सव्वं जाणइ से एगं जाणइ ।’

‘दिट्ठं, सुयं, मयं, विण्णायं, जं एत्थ परिकहिज्जइ ।’

—निर्ग्रन्थप्रवचन—

खंड ३] महावीरनिर्वाण संवत् २४५४–फाल्गुन [अंक ४

श्रीविबुधप्रभुविनिर्मिता

श्रीऋषभकुन्तलवर्णन–पञ्चविंशतिका

चञ्चत्पञ्चममुष्टिकुन्तलततिः [1]प्राचीपतिप्रार्थना-
ऽनुत्खाता तव राजति श्रवणयोः पार्श्वे युगादिप्रभो ! ।
स्नेहद्रोहसमिद्धमानहृदयध्यानप्रदीपोद्भवा,
ऽऽ[2]संज्जेवा[3]ञ्जनमञ्जरी श्रुतियुगद्वाभ्यां विनिर्गत्वरी ॥ १ ॥

श्रीनाभेय ! भवान् नवाभ्युदायिनः श्रीधर्मभूमीपतेः,
प्रासादोऽभिनवोऽस्ति सर्वभुवनप्रीत्यै धृतस्वास्तिकः ।
स्कन्धे तच्चिकुरच्छलादुभयतो [4]दृग्दोषमोक्षक्षमा,
नीलीचर्चितचीरखण्डयुगली लोलेयमालोक्यते ॥ २ ॥

---

१ प्राचीपतिः–इन्द्रः । २ आसज्जा–लग्ना । ३ अञ्जनमञ्जरी–अञ्जनाशिखा । ४ दृग्दोषः–नजर लागवी इति लोकभाषायाम् ।

Aho ! Shrutgyanam

गोस्वामिन्नसहाय एव वृषभस्कन्धस्थलीस्थायिनं,
त्वं प्राग् यं विभराम्बभूविथ महाधुर्यौ (र्यो) युगादौ स्थितः ।
भारे राज्यरथस्य तत्र भरतस्कन्धार्पिते कुन्तल-
व्याजादंसतटे तव व्रणकिणश्रेणिर्ध्रुवं दृश्यते ॥ ३ ॥
प्रव्रज्यां प्रतिपन्नवत्सल ! जगन्नाथ ! प्रपद्य त्वया,
किं त्यक्ताऽहमितीव विज्ञपयितुं सम्प्रेषिता पद्मया ।
तद्देहाम्बुरुहोपजीवनपरा स्वामिन् ! सुवाणिर्भव-
त्कर्णान्ते निवृ (भृ) ता विभाति चिकुरव्याजेन भृङ्गावलिः ॥ ४ ॥
क्षेत्रे श्रीभरतेऽत्र तत्र समये केनाऽप्यतीर्णं पुरा
प्राक् संसारमहार्णवं प्रतरतः स्वामिंस्तव स्कन्धयोः ।
लग्ना शैवलवल्लरी ध्रुवमियं नीलालकालिच्छलात्,
पश्चात्तीर्णवतामियं यदजितादीनां तु न व्यज्यते ॥ ५ ॥
श्रीमन् ! नाभिनरेन्द्रपुत्र ! भवतो हृन्मध्यभागे सदा,
शुद्धध्यानधनञ्जयस्य[1] दहतः कर्मद्रुमाणां वनम् ।
उन्मील [त्] कुटिलालकावलिलताव्याजेन निर्जग्मुषी,
रेजे ध्यामलधूमधोरणिरियं श्रोत्रद्वयद्वारतः ॥ ६ ॥
क्षयेऽहं बहिरङ्गवायुपटलेनाऽपि त्वया तु प्रभो !,
यस्याभ्यन्तरवायुरप्यनुचरो योगार्जितं तन्मनः ।
तन्मे वायुजयं वदेति जलदः प्रष्टुं कचच्छद्मना,
कर्णान्तः स्थितवान् परोपकरणक्रीडासनीडस्तव[2] ॥ ७ ॥
स्वामिन् ! यद् भवता व्रतं कलयता[3] सामायिकास्त्रोर्जितैः,
रागद्वेषमहाभटद्वयपराभूतिः समासूत्र्यते ।
तेनेयं मरुदेविसम्भव ! तव स्कन्धोपरिष्टात् कच-
श्रेणी संतनुते प्रशस्तियुगली सख्यं मषीवर्णभाक् ॥ ८ ॥
त्रैरत्न[4]-त्रिपदी[5]-त्रिकालविषयज्ञान[6]-त्रिलोकाद्भुत-
स्वामित्वप्रभृतिच्छदत्रयभृतः सद्ब्रह्मवृक्षस्य ते ।

---

१ धनञ्जयः-अग्निः । २ सनीडः-व्यसनी । ३ कलयता-स्वीकुर्वाणेन । ४ त्रैरत्नं-ज्ञानदर्शन-चारित्रात्मकम् । ५ त्रिपदी-'उप्पन्ने इ वा विगमे इ वा धुवे इ वा' इतिरूपा । ६ त्रिकालविषयं ज्ञानं-अतीतानागतवर्त्तमानकालीनं ज्ञानम् ।

Aho ! Shrutgyanam

श्लिष्टस्कन्धतटाः शिरोरुहजटाः पुण्यैकलभ्यं सदा,
पादाधःस्थितविश्ववैभवनिधिं संसूचयन्ति प्रभो ॥ ९ ॥
सन्मार्गे व्रजतां सतामभिमुखीभूतास्त्रिलोकीवधू–
शीर्षालङ्करणं शिवाय भवसि त्वं पूर्णकुम्भ ! प्रभो ! ।
पूर्णस्य प्रशमामृतेन भवतः कर्णोपकण्ठे[1] लुठ–
त्केशौघव्यपदेशतो विलसति श्रीवृक्षपत्रावलिः ॥ १० ॥
त्वं स्वामिन् ! परितापहृत् त्रिजगतामानन्दनश्चन्दनः
कुण्डं ज्ञानसुधारसस्य सुगुणश्रेणीमणीनां निधिः ।
युक्तं त्रिष्वपि रूपकेषु भवतः स्कन्धे कचानां कुलं;
नीलाम्भोजविभं निलीनवृङ्गीनिभं गीयते.... ॥ ११ ॥
दोर्दण्डद्वयदम्भतो रणमहास्तम्भाग्रजाग्रद्गुरु–
स्कन्धप्रोन्नतकुम्भकोटिविलसत्केशौघभूतच्छदः ।
वक्त्राम्भोरुहविभ्रमभ्रमदलिव्याजोल्लसत्तोरण (णः)
स्र(स्र)ग्रम्योद्धुतसिद्धिसौधपुरतो द्वारायसे त्वं प्रभो ! ॥ १२ ॥
स्मेरत्पक्ष्मकपाटनेत्रयुगलीवातायनप्रान्तयोः,
स्कन्धाक्रीडनगोपरि श्रुतिलताव्यालम्बि दोलाद्वयम् ।
वक्त्रं गौरकपोलभित्ति भवतो वाग्देवता–पद्मयोः,
क्रीडासौधमुपान्तयोरुपवनप्रायोल्लसत्कुन्तलम् ॥ १३ ॥
त्वद्वक्त्रस्य सुधारुचेः[2] पुर इह स्थातुं न शक्तो द्विषा–
मप्याह्लादकमस्य चारिमगुणं[3] व्यालोकितुं चोत्सुकः ।
उच्चैःस्कन्धगिरीन्द्रयोरुभयतो भीत्या निलीय प्रभो !,
मन्ये श्यामलकुन्तलच्छलमुपादायाऽन्धकारः स्थितः ॥ १४ ॥
योगिन्नाह ननः कानने सुरभिणि ज्योतिष्प्रधाने
त्यक्त्वा शाश्वतमत्सरं निवसतः पाथोजचन्द्रश्रियौ ।
तस्मिन् बुद्धिवृत्तिपसङ्गमनयोरप्राप्नुवन्तौ ध्रुवं,
पर्यन्ते चिकुरच्छलेन मधुपश्रेणिकलङ्कौ स्थितौ (?) ॥ १५ ॥
नित्यं कान्तिकलः कलङ्कविकलस्त्वद्वक्त्रचन्द्रो यथा,
देव ! त्वं वद तादृशः कथमयं मत्पुत्रचन्द्रो भवेत् ।

---

१ उपकण्ठे–निकटे । २ सुधारुचिः–चन्द्रमाः । ३ चारिमगुणः–सौन्दर्यम् ।

Aho ! Shrutgyanam

एवं प्रष्टुमिवाभितः श्रुतियुगं सङ्कुच्य कल्लोलिनी[1]–
क्रान्तः कुन्तलकैतवादुपययौ गाम्भीर्यमन्त्रं[2] तव ॥ १६ ॥
सौरभ्यातिशयेन ते यदि मुखं श्रीसद्म पद्मं स्फुर–
ज्ज्योतिःपाथसि[3] कण्ठनालमभितः पङ्कन्ति[4] तत् कुन्तलाः ।
विश्वाह्लादिविभा[5]वशाद् यदि मुखं चन्द्रोऽथ तत्पृष्ठत–
स्तत्कान्ता चिकुरच्छलेन रजनिः केनाऽत्र नो मन्यते ॥ १७ ॥
स्वामिंस्त्वन्नयनाद्भुताद्भुततमश्रीनिर्जिता लज्जया,
न स्थातुं पुरतः क्षमा कुवलयश्रेणिर्निलीय ध्रुवम् ।
प्राग्मित्रीकृतचन्द्रतोऽप्यतिसुखं द्रष्टुं त्वदीयं मुखं,
प्रान्तस्कन्धशिलोच्चयोपरि समारूढा शिरोजच्छलात् ॥ १८ ॥
नित्यं मानवदेवदानवदृशां व्यूहेन लेह्याऽप्यसौ,
श्रीनाभेय ! भवन्मुखौषधिपते[6]ज्योत्स्ना कथं क्षीयताम् ? ।
य(त)स्मादत्र जगत्रयीपरिवृढ[7]प्रान्तद्वये[8] कुन्तल–
व्याजाद् राजति कृष्णचित्रकलताजालप्रवालावलिः ॥ १९ ॥
आलोक्य त्रि[9]दिवापगां परिलसत्कैलासशैलासना–
ऽध्यासीनस्य [10]वृषध्वजस्य शिरसि प्रेङ्खोल[11]नादुन्मदाम्[12] ।
संहर्षादिव देव ! ते [13]रविसुता मूर्धानमासेवते,
केशश्रेणिमिषाद् [14]वृषाङ्कविमलक्ष्माभृत्तटीमण्डनम् ॥ २० ॥
श्रीशत्रुञ्जय एष कुञ्जरवरः प्रोद्दामसौदामिनी[15]–
श्लिष्टाम्भोदमिषेण हेमखचितप्रत्यङ्गरङ्गद्गुडैः[16] ।
तत्रोच्चैस्तरचैत्यकोष्ठकगतो धर्मं दधानः प्रभो !,
विश्लिष्यद्वि(ष्यन्[17]) विषमेषुमद्भुतगुणं त्वं नाभिभूर्वो भद्रः ॥ २१ ॥
दृश्या कुन्तलदम्भतोंऽसतटयोस्त्वत्पृष्ठबद्धोल्लस–
त्तूणीरद्वयबाणसंचयशिखासंदोहपिच्छच्छविः ।

---

१ कल्लोलिनीकान्तः–समुद्रः । २ " गोभिर्यमत्रं " ज । ३ पाथः–जलम् । ४ पङ्कमिवाऽऽचरन्तीत्यर्थः । नामधातुरयम् । ५ विभा–कान्तिः । ६ औषधिपतिः–चन्द्रः । ७ परिवृढः–प्रभुः । ८ योः प्र. ९ त्रिदिवापगा–गंगानदी । १० वृषध्वजः–शिवः । ११ प्रेङ्खोलनं–हिन्दोलनम् । १२ उन्मदा–उन्मत्ता । १३ रविसुता–यमुनानदीत्यर्थः, सा किल कृष्णजलेति कुन्तलसाम्यम् । १४ वृषाङ्कः–ऋषभो जिनः । १५ सौदामिनी–विद्युत् । १६ गुडः–हस्तिपीठगतमास्तरणम् । १७ विषमेषुः–कामः ।

Aho ! Shrutgyanam

जेतव्यस्तव संज्जितस्त्रिभुवनद्रोहश्च मोहः स्फुर–
द्रागद्वेषकषायपञ्चविषयमायप्रवीरैर्वृतः ॥ ॥ २२ ॥
उच्चांसस्थलसंस्थकुन्तललताजालेप्रवालाश्रित–
प्रत्यासन्नविलोलकर्मलतिकापाशद्वयत्रासतः ।
देव ! त्वत्कपोलचन्द्रयुगलस्यैणौ प्रणश्य ध्रुवं,
त्वद्दीक्षारसिकौ स्थितौ पुर इमौ श्रीधर्मचक्रान्तिके ॥ २३ ॥
अश्रान्तां विबुधप्रभुप्रभृतिकत्रैलोक्यलोकस्तुति–
वर्षन्तीं परितः सुधां श्रवणयोः प्रान्ते तव स्फूर्जति ।
तस्याऽऽस्यन्दवशादिवोद्गतमिदं स्वामिंस्त्वदंसस्थले–
श्रीनाभेय ! शिरोजराजिमिषतो दूर्वावनं पावनम् ॥ ॥ २४ ॥
एवं नाभितनूद्भव प्रतिलवं कृत्वा मनः सौष्ठवं,
स्वामिन् ! वर्णितकुन्तलं तव नवं यः पापठीति स्तवम् ।
प्राप्य प्राग् विबुधप्रभुत्वविभवं भुक्त्वा च दूरे भवं,
स प्राप्नोति सुखं गलत्परिभवं निःश्रेयसश्रीभवम् ॥ २५ ॥

॥ इति श्रीऋषभकुन्तल [वर्णन] पञ्चविंशतिकास्तवनम् ॥

---

१ सज्जितः–परिहितकवचः । २ " लान्तरालश्रि– " प्र. । ३ एणः–हरिणः । ४ त्वद्दीक्षारसिकौ–त्वद्दर्शनरसिकौ । ५ " न्त " प्र. । ६ नवं–नवं–नवीनम् । ७ भृशं पुनः पुनर्वा पठतीति पापठीति । यङ्लुगन्तमिदम् । ८ " शिवं " प्र. ।

Aho ! Shrutgyanam

વિબુધવિમલસૂરિ–વિજ્ઞપ્તિ પત્ર.

[આ નીચે આપેલું વિજ્ઞપ્તિપત્ર, વડોદરાની સેન્ટ્રલ લાઈબ્રેરીના સંસ્કૃત વિભાગના અધ્યક્ષ અને 'ગાયકવાડસ્ ઓરિએન્ટલ સીરીઝ'ના સંસ્થાપક સદ્ગત સાક્ષર શ્રીયુત ચિમનલાલ ડાહ્યાભાઈ દલાલ, એમ, એ. પાસેથી અમને મળ્યું હતું. એ વિજ્ઞપ્તિપત્ર ઔરંગાબાદ (દક્ષિણમાં નીઝામના રાજ્યમાં આવેલું એક પ્રસિદ્ધ શહેર) ના સંઘે સંવત્ ૧૮૧૦ ના વર્ષમાં વિબુધવિમલસૂરિને ગાંધલી બંદરે લખેલું છે.

–સંપાદક]

श्रीपार्श्वदेवजी

स्वस्तिश्रीभवनं मनोज्ञवचनं त्रैलोक्यलोकावनं
विद्यावल्लिवनं प्रहृष्टभवनं सौभाग्यभूवावनं।
क्लपतोनोलवनं शिवाध्वजवनं श्रियो वनीजीवनं
पायाब्धेपवनं भूसानिधुवनं पार्श्वं स्तुवे पावनम् ॥ १ ॥

स्वतिश्रीमकरं सरोद्रहकरं गाम्भीर्यरत्नाकरं
श्यामाश्यामकरं जगद्दिनकरं कीर्त्याजितोषाकरम्।
ध्वस्ताराकिरं विदांस्तसु(मु)करं श्रीपद्मपद्माकरं
बुद्धाङ्घ्रिमकरं शामाब्धीमकरं पार्श्वं भजे शंकरम् ॥ २ ॥

स्वस्तिश्रीरमणस्तनोतु सततं प्रीते सतां सन्तति
श्रीमत्पार्श्वजिनेश्वरः कमलीने ने तव पङ्केरुहाम्।
प्रोक्तेवायत चक्षुषो जलरुचां वीथीव भोगीद्विषां
सिन्धुनां रजनीसीतेव सरसी जन्मेवबुध्यान्धसाम् ॥ ३ ॥

એવં શ્રીમંતં શ્રી આદિજિનં પ્રણંમ્ય. શ્રી પાર્શ્વજિનં પ્રણંમ્ય. શ્રી શાંતિજિનં પ્રણંમ્ય. શ્રી વીરજિનં પ્રણંમ્ય. સકલ દેશનગર શિરોમણિ, નરશમુદ્ર, વાપી કૂપ તડાગાદિ વાડી વનખંડ આરામ સુશોભિતે, શ્રી જિનપ્રસાદ શેખર કલશ ધ્વજા મનોહર શ્રેણિ સંશોભિતે, ઉપાશ્રય સાધર્મિક જિન સહિતે ધર્મ જૈન નિત્યોત્સવં સંયુકતે, ન્યાય પ્રવીણ નરપતિ નગર ઉત્તમ, શ્રી પૂજ્ય ચરણકમલ ન્યાસરેણુ પવિત્રિતે શ્રી ગાંદલીબંદીરમહાનગરે પૂજ્યારાધ્યતમોતમ પરમપૂજ્યાર્ચનીયાત્ પરમપૂજ્ય શ્રી ચારિત્રપાત્રચુડામણી સકલસાધુ શિરોમણી વિદ્વજ્જન મુકુટાયમણી સરસ્વતી કંઠાભરણ સકલ કલા સંપૂરણ ઇત્યાદિક ગુણેં કરી અલંકૃત્ય. એક શ્રી જિનઆજ્ઞા પ્રતિપાલક, દ્વિવિધ ધર્મના પ્રકાસક, ત્રિણ તત્ત્વના આરાધક, ચતુર્ગતિનિવારક, પંચમગતિ સાધક, ખટ્ કાય રક્ષક, સપ્તભય નિવારક, અષ્ટ મદ ચૂરક નવવિધ બ્રહ્મચર્યધારક, દશવિધ યતિધર્મ પ્રરૂપક, ઇગ્યારે અંગનાં જાંણ, બારે ઉપાંગના ઉપદેશક, તેરેં કાઠિયાંના જીપક, ચઉદેં

Aho ! Shrutgyanam

વિદ્યાનિધાંન, પનરેં ભેદેં સિદ્ધના પ્રરૂપક, સોલ કલા સંપૂર્ણ શશીવદન, સત્તર ભેદ પૂજાના ઉપદેશક, અષ્ટાદશ સહસ્ર સિલાંગરથ ઉપદેશક, ઓગણીસ કાયોત્સર્ગ દોષ નિવારક, વીસ થાંનક તપ આરાધક, ઇકવીસ ગુણ શ્રાવકના પ્રકાશક, બાવીસ પરીસહના જીપક, તેવિસ સુગડાંગ અધ્યયનના ન્રાયક, ચઉવિસ શ્રી જીનેશ્વરની આજ્ઞા પ્રતિપાલક, પંચવીસ ભાવનાના ભાવિક, છવીસ દશાકલ્પ વ્યવહાર આરાધક, સત્તાવિસ અણુગાર ગુણના પ્રકાશક, અઠાવીસ લબ્ધિગુણના પ્રકાસક, ઓગણતિસ પાપશ્રુતપ્રસંગ નિવારક, ત્રીસ મહા મોહની સ્થાનકના પ્રરૂપક, ઇગતીસ સિદ્ધગુણના ન્રાયક, બત્રીસ લખણેં કરી શોભિત, તેત્રીસ આસાતના ટાલણહાર, ચઉત્રીસ અતિસય શ્રી તીર્થંકરના ઉપદેશક,

ચઉપઇ

કુંથુ જિણંદ ગણધર સડતીસ, ઉદ્દેશા ખુડીયા અડતીસ;
ગુણચ્યાલીસ કુલગિર નરખિત્ત, ચાલિશ ધણ્યુ શાંતિપવિત. ૧
ઇગયાલીસ ધર્યા યોગી યોગ, દોષ બયાલીસ રહીત લઇ ભોગ;
તિગચાલીસ વિપાકાધ્યયન, ચોથે વર્ગ ચમાલીસ તિમ. ૨
ધર્મતણુ ધણુ પણિયાલ, બંભી લીપી અક્ષર છગ ચયાલ;
અગ્નિભૂત ગૃહ વર્ષ સગયાલ, ધર્મનાથ ગણધર અડયાલ. ૩
ગુણ પંચાસ તે દિઆય, ધનુષ પંચાસ અનંત જિનકાય;
ભેદ વિનયના ઇકાવન, મોહનીના નામ છે બાવન્ન ૪
વીર શીખર અનુતર તેપન, તિમ છઉમથાદિન ચઉપન્ન
વીર કહેં અધ્યયન પણુપન્ન, વિમલનાથ ગણધર છપન્ન. ૫
ત્રિણ અધ્યયન પીટક સગવન્ન, પંચકર્મ પ્રકૃતિ અઠાવન્ન;
ચંદસંવત્સર દિન ગુણસાઠ, વિમલનાથ તણુ ધણુષજ સઠ. ૬
જોયણ ભજીઇ ઇગસઠી ભાગ, બાસઠિ જોયણ ગંગાનો લાગ;
પૂરૂષ સીલાકા પ્રસિદ્ધ ત્રેસઠ, ચોંસઠ સુંદરીના ગુણ લધ્ધઠ. ૭
સૂરમંડલેં નિખધે પણુસઠ્ઠિ, તંદુલ આયુ સાગર છાસઠ્ઠ;
શ્રી શ્રેયાંસ ગણધર સડસઠ્ઠ, ધાતકીઇ ગુરૂ જણુ અડસઠ્ઠિ ૮
ગુણ સત્તરિ પયડી વિણુ મોહ, સત્તર ધણુ તણુ બારસ જિન સોય;
ઇગસત્તરિ પૂર્વલખ અજિત ગૃહવાસ, શ્રી ગુરૂ બહોત્તર કલાનિવાસ. ૯
એગ અસં તિગસત્તરિ ભાય, ચીહોત્તર વર્ગ અગ્નિભૂતનો આય;
પંચોત્તર ઇગિભાગ જાણુ, મધ્યમ મંડ છિહુંત્તરનેં ઠાંણુ. ૧૦
લવ સત્યોત્તરિ મૂહુરત થાય, વર્ષ અઠોત્યર અકંપિત થાય;
પોલિ પોલ એક અંતર માંન, સહસ ઓગણ્યાસી જોયણપ્રમાણુ. ૧૧
અસી ધણુષ શ્રેયાંસ પ્રમાંણુ, મુની પડિમા ઇકયાસી દિનમાંણુ;
બયાશી દિન શ્રી વીરજિણંદ, દેવાનંદા કુખવ સંદ ૧૨
ચુલસી ગણધર પ્રથમજિનતણા, પઢમ અંગેં પચ્યાસી ઉદ્દેસા ગણ્યા;
સુવિધી તણા છયાસી ગણધાર, સગસિ પ્રકૃતિ ષટ્ કર્મ નિર્ધારિ ૧૩
અઠયાસી ગ્રહ કીધા વસ, નવ્યાસ અતિલ્લ તિસ;
નેઉ ધણુ સીતલ જિનતણું, એહમાંન આગમમાંસુણું ૧૪

Aho ! Shrutgyanam

આયુ ગોત્ર વિણુ ખટ્કર્મની, પ્રકૃતિ એકાણું ઓઘે સુણી;
બાણુ વર્ષ ગોતમને આય, ત્રાણુ મણચંદ્રપ્રભ થાય ૧૫
ચોરાણું ગાથાંને ભેદ, પંચાણુ ગણ અજિત જિનદેવ,
છન્નુ લાખ ભવ અતિ ભલા, વાયુ કુમાર તણુ નિરમલા. ૧૬
ઉત્તર પ્રકૃતિ સત્તાણુ સાખિ, આઠ કર્મની ઓઘે દાખિ;
અઠાણુ ભાઈ ભરતના, સહસ નિવાણું જેયણ મેરૂના. ૧૭
પાર્શ્વનાથ સતવર્ષજ આય, એકાધિક સંતત સમુદાય;
બીડુત્તર સત્ત ભાષા ભેદ, વિદ્યા ચઉદ તણા લહો વેદ. ૧૮
દોધક ભેદ તણા મંડાણ, તિડોત્તર સતના તુહ્મિ જાંણ;
રાગ ભેદ ચિડોત્તર ભલા, દોધક ભેદ પંચસત નિરમલા. ૧૯
છડોત્તર સત્ત રાગ મૂર્છના, સાત અધિક સત તસ ગ્રામના;
માલા મણીયા એકસો આઠ, તિણ જપે સૂરિમંત્રને પાઠ. ૨૦
સહસ લાખને કોડ વિચાર, ઇણિપરિજ્ઞાપક વિવિધ પ્રકાર;
સુરગુરૂ સમસેં અવતાર, તપાગચ્છ મુની તું આધાર. ૨૧
ગચ્છનાયક ગચ્છાધિપ સાર, સુંદર મૂરતિ મોહનગાર;
કરતો ભવિજનનેં ઉપગાર, જિમ વરસે પૂષ્કર જલધાર. ૨૨
ઇત્યાદિક ગુણ નહિં મણા, જીભ એકકિસ કહિંઇ ઘણા;
શ્રી વિબુધ વિમલ સૂરીશ્વરરાય, સાંપ્રત જેહનો સુજસ ગવાય. ૨૩

શ્રી ઇત્યાદિક ગુણેં કરી વિરાજમાંન, ઇત્યાદિ બહુ વિજ્ઞાયક, શ્રી શ્રી પૂજ્યજી, જાઇ સંપન્ને, બલસંપન્ને, કુલસંપન્ને, રૂવ સંપન્ને, દંસણ સંપન્ને, ચારિત્ર સંપન્ને ઉયંસી, તેંયંસી, જસંસી, જિઅકોહે, જિઅમાંણે, જિઅમાએ, જિઅલોહે જિઅપરીસહે જિઅ ઇંદીએ, ઇત્યાદિ ગુણેં કરી અલંકૃત. વાદીગજસીંહ વાદી કદલી કૃપાણ, વાદિ મુખભંજણ, સકલ ભૂપાલ રંજણ, વાદિ તિમિર ભાસ્કર, વાદિ રાવણરાંમ, વાદિ તારાચંદ, વાદી પર્વતઇદ, સરસ્વતી લબ્ધ પ્રસાદ, શ્રી જિનસાસન ઉદ્યોતકારક, ધન્ય તે રાજારાણા યુવરાજ્ય ઇસર ઇભ્ય વિવહારિયા જેહે શ્રી પૂજ્યજીના ચરણકમલ વાંદ્યા અને વાંદે ધન્ય તે શ્રાવક ધન્ય તે શ્રાવિક જેહ શ્રી પૂજ્ય નિરંતર અમૃતમય દેશના સાંભલે. સમુદ્રપરિં ગંભીર, મેરૂની પરિંઅચલ, ભારંડ પંખિની પરેં અપ્રમત્ત, કુંજરની પરિં સૌંડીર, સીંહ જિમ દુર્ધ્ધર, તિમ કર્મની લેપેં કરી રહિત, પરમબંધવ, પરમસ્નેહી, પરમઉપગારિ, જંગમતીર્થ, પંડિતજિન લલાટ ચુડામણિ ગચ્છાધિપતિ, ગચ્છમંડણ, ગચ્છનાયક, ધરમ ભાર ધુરંધર વાચા અવિચલ. કિંબહુના–

દૂહા

ગયણંગણ કાગલ કરૂં, લેખણ કરૂં વન રાય;
મહીયલ સઘલી મસકરૂં, તોહિં ગુણ લખ્યા જાય; ૧
અહ્મ હીયડું દાડિમ કલી, ભરીયો તુહ્મ ગુણ ગેહ,
અવગુણ એક ન સાંભરે, વિસારીજેં જેહ. ૨
હિયડા તે કિમ વિસરેં, જે સહગુરુ સુવિચાર;
દિનદિન પ્રતેં સાંભરેં, જિમ કોમલ સહકાર. ૩

Aho ! Shrutgyanam

વિસાર્યાં નવિ વીસરેં, જે સહટગુરૂ કિમ કિમ ન વિસરેં;
સમયેં ચિત્ત ન મોય, જએ વિણ ઘડી ન જાય. ૪

દૂહા

સરસતિ કંઠાભરણ, તપ તેજેં દિનકાર;
ચારિત્ર પાત્ર ચૂડામણી, ભવિજન તારણ હાર. ૧

શ્રી શ્રી શ્રી અતિ ઘણી, એકસો આઠ અભિરાંમ;
શ્રી શ્રી વિબુધવિમલ સૂરજી, સપરિવાર ચરણાન. ૨

આજ્ઞા કારિ ગુરૂપદેં, પંકજ રેણુ સમાંન;
દાસ ભાવ કરી આપણો, લિખેં લેખ સિરનાંમ. ૩

કુલદીપક કુલઉદ્દ્યોતકારક, કલિકાલ કલ્પદ્રુમ; જિમ દેવતાં માંહેં ઇંદ્ર, તારામાંહેં ચંદ્ર, ગિરમાંહિ મેરૂ. વાજિત્રમાંહેં ભેરૂ, પર્વમાંહિં શ્રીપર્યુષણાપર્વ, હસ્તિમાંહિ એરાવણ, સૂત્રમાંહિ શ્રી કલ્પસૂત્ર, મંત્રમાંહી નવકાર, રતનમાંહિં ચિન્તામણી, તિમ ગચ્છમાંહિં શ્રીતપગચ્છ, તેમાંહિં શ્રી ભટ્ટારકનેં ગુણેંકરી સુસોભિત છો, શ્રી શ્રી પૂજ્યજીના ગુણ અનંત એક મુખેં એક જીભેં કિમ વરણવાય. જો સરસ્વતી પ્રસન્ન થાય તોહિ લિખ્યા ન જાય. સાધુ મંડલી સોભીત પરમ ઉપગારી શિરોમણી, ભવ્ય જીવનેં સમકિત દાતાર ઇત્યાદિ સર્વ ઉપમા જોગ્ય, પરમપૂજ્ય પરમગુરૂ શ્રીમત્તપાગચ્છાધિરાજ સકલભટ્ટારક પરંપરા પુરંદર, શુદ્ધ ભટ્ટારક શિરોમણી ભટ્ટારક શ્રી ૧૦૮ શ્રી શ્રી શ્રી શ્રી શ્રી વિબુધવિમલસૂરીસર સપરિવારન્ ચરણકમલાન્ શ્રી બરાનપૂર નગરાત્ સદાસેવક આજ્ઞાકારિ ચરણસેવક આજ્ઞા પ્રતિપાલક, દીપાસા મોતિચંદસા, તથા ગોકલદાસ, ગોપાલદાસ, વણારસીદાસ, ગુલાબદાસ, દુલભદાસ, વધુસા, હર્ષચંદસા, કચરાસા, વધુ, સોની ભોજસા ઉદાસા, ડુંગરસા મેંઢાસા, ઝવેંરચંદ, ઝવેંરસોની, નાલચંદ, ધનાસા, રાયચંદસા, કીકાસા, પ્રતાપમોદિ, ખેતાસા, જીવણદાસ, હઠીસંગ, સોભાગસા, રૂપાસા, સંકલસા, કપૂરસા, દેવચંદસા, તારાચંદસા, ગલાલસા, હેમચંદસા, ગલાલસા, પ્રમુખ સમસ્તસંઘની વંદના ૧૦૮ વાર અવધારયોજી, ઇહાં શ્રી પૂજ્યજીનેં વાંદવાનેં સંઘનેં ઘણી ઉત્કંઠા છેં, તે દિવસ કેહવેં હસેં જે શ્રીના મુખની દેસના સાંભલશું એહવી અમને ઘણી ઉત્કંઠા છેં, ઈહાં શ્રીજીનેં પ્રસાદેં કરી પજુસણ પરવ નિર્વીઘ્નપણેં થયા છેં, અઠાઇ તથા છઠ અઠમાદિક ઘણો તપ થયો છે. ઈહાં શ્રીજીના સેવક આજ્ઞાકારિ પં. માંનવિમલજી, પં. તિલકવિમલજીની વંદના ૧૦૮ વાર અવધારયોજી. ઇહાં શ્રીજીનો પરિવાર જથા જોગ્ય જોઇઇ તેહવો છે, શ્રીજી એકવાર ચોમાંસું ઉત્તરે દેવયાત્રા કરવા પધારયોજી. આંહિનો સંઘ શ્રીજીની દેસના સાંભલવાનેં ઘણો હર્ષ રાખે છેં, ઈહાં શ્રીજી સંઘ ઉપર સ્નેહ રાખો છો તેહથી વિશેષ રાખયોજી, તુહ્માારા ગુણ અહર્નિશ નીરંતર સાંભરેં છેં જી. તુહ્મને સંઘ ધર્મકરણીવેલા અવસરેં નીત્ય સંભારેં છેં જી. તે માટે એકવાર પતિતપાવન કરવા પધારયોજી સંઘ દેવયાત્રા અવસરેં નિત્ય સંભારેં છેં જી. તુહમ્યો પણ શ્રી બરાનપૂરના સંઘનેં સંભારવોજી. શરિરનાં જતન કરયોજી. બાઇ જમકુ બાઇ નંદકુંઅર, બાઇ સામકુંઅર, બાઈ મેંઢીબાઈ, માનકુંઅરબાઈ, હેજબાઇ, બાઇ કીલાં, સમસ્ત શ્રાવીકાની વંદના ૧૦૮ વાર અવધારયોજી. સંવત ૧૮૧૦ આસો સૂદિ ૧૫ સંઘેં શ્રીજીનેં વંદના લખી છેં જી તે જાણવુંજી સંઘ ઉપર કૃપાદષ્ટી રાખો છો તેહથી વિશેષ રાખવીજી. શ્રીજી જે જે દેશના દેવ જૂહારેં તિહાંશ્રી બરાનપૂરના સંઘનેં સંભરાવોજી ઇતિ શ્રેયોઽસ્તુ મંગલં.

Aho ! Shrutgyanam

અથ ઢાલ રસીયાની

પ્રથમ તીર્થંકર પયકમલેં નમું, સમરૂં સરસ્વતિ માય; સુ.
પંચમ આરે હો મુનીવર પ્રગટીઓ, ભેટયા ભવ દુખ જાય સુ. ૧
વિબુધ વિમલસૂરી વંદો ભાવસું, નિકંદો કરમની કોડિ; સુ;
ગુણેં કરી અમૃત ભર્યો, કુંણ કરે એહની હોડિ. સુ. ૨
ગુણ છત્તિસેં અંગે ઓપતા, ગોપતા મન વચકાય; સુ.
પંચસુમતિ મહાવ્રત પાલતા, પંચાચાર પણ કહેવાય. સુ. ૩
આગમ પસ્તાલીસ જસ મુખ વસેં, અષ્ટ મહાવ્યાકર્ણે પંચકાવ્યિ; સુ.
અનેર અનોપમ ગ્રંથ ગુણેં ભર્યા, ન્યાય ચિંતામણી ભાવિ. સુ. ૪
તપ તીક્ષણતાં અંગેં આદરેં, અનુભવ રસનો ભંડાર; સુ.
વિબુધવિમલસૂરિ શાસન સોભતા. અઘહર દિનકર જિમ અંધકાર. સુ. ૫
માતા રહિયાંબાઈ કુખેં અવતર્યા, પીતા ગોકલ ગુણવંત; સુ.
પ્રાગવંસ પૂન્યવંત અજુઆલીઓં, મહીમા મેર મહંત સુ. ૬
તુમ પદ પંકજ અમ મન મધુકર, ધન ચાતુકની રે પ્રીતિ; સુ.
... ...એહ અમારી રે પ્રીતિ. સુ. ૭
ધન ધન ક્ષેત્ર સીરોમણ ગાંદલી, ધન ધન ગીરૂઆરે પાસ; સુ.
ધન ધન સંઘ શ્રાવક નેં શ્રાવિકા, અવિચલ ધરમ ઉલાસ. સુ. ૮
બરાનપુરના સંઘની વંદના બ્યાંચજ્જે બેકર જોડિ; સુ.
... ...ગાંદલી નવ નીધ કોઠી કલ્યાણ સુ. ૯

વિબુધવિમલસૂરીસર સ્વાધ્યાય સંપૂર્ણ.

विमलपादभृत्श्रीआनन्दाभिधानमुनीश्वराः
सुविहितवराः सद्गीतार्थास्तपागणमण्डनं
कृतनिजहितास्तेषां पट्टप्रभाकरशेखराः
विजयपदयुक्श्रीदानाख्या युगे शुभसूरयः ॥ १३७ ॥

વ્યાખ્યા. અથ ગુરૂ પરંપરાની પ્રશસ્ત લિખીએ છે જે સિદ્ધાંતના અર્થ પરંપરાગત હોય તેહ સત્ય જાણવ્યા તેહજ ગુરૂની પરંપરા જે છે તેહ સમ્યકત્વનું મૂલ કારણ છઇ તે માટે ગુરૂપરંપરાની પ્રશસ્તિ લિખવી યોગ્ય છે.

જે શ્રીવર્ધમાન સ્વામી તો સકલ ગુરૂપરંપરાનું કારણ છે, તેહ માટે પ્રથમ પટ્ટોધર છે તે શ્રી સુધર્મા સ્વામી થકી શ્રી હેમવિમલ સૂરીશ્વર પર્યંત । પંચાવણ પાટ સુધી ૫૫ સુદ્ધ પરંપરા ચાલી આવી છે । તેહને પાટેં । છપ્પણમેં પાટેં ૫૬ । વિમલપદ ભૃત્ । શ્રી આનંદાભિધાન મુનીશ્વરા ક૦ । વિમલપદના ધરનાર્યા શ્રીઆણંદવિમલ મુનીશ્વરા એ હવા આચાર્ય પટ્ટોધર । સુવિહિતવરા ક૦ ક્રિયાવંત સાધુમાંહી વરા પ્રધાન સદ્ગીતાર્થાઃ ક૦ ઉત્તમ ગીતાર્થ બહુ શ્રુત તપાગણમંડનં તપાગચ્છના મંડનકૃત નિજહિતા ક૦ ।

Aho ! Shrutgyanam

પોતાને કર્યું છે હિત જેહનેં એહવા શ્રી આણંદ વિમલ સૂરીશ્વર તિહકાલે લુંકાનો મત ઘણો વિસ્તર્યો છે । તેહ ગુરૂની આજ્ઞા થકી । સંવત્ ૧૫૮૨ । શ્રી આનંદ વિમલસૂરીશ્વરઈં ક્રિયા ઉદ્ધાર કરીને ઘણા જીવનેં પ્રતિ બોધ્યા તેહ પાટે શ્રી વિજયદાનસૂરીશ્વર સત્તાવન પાટનેં વિષે થયા। તેષાં પટ્ટપ્રભાકર શેખરા ક૦ તેહના પાટને વિષે પ્રભાકર ક૦ સૂર્યનઇ વિષે શેખરા મુકુટ સરખા યુગનેં શુભ સૂરયઃ ઉત્તમ સૂરિ છે । ૧૩૭

तेषां पट्टवियत्तले शविजया श्रीहीरसूर्योपमाः
क्षित्यामक्बरसाहिना द्युतिमता विख्यातसत्कीर्त्तयः ।
श्रीसेनाह्विजयाख्यसूरिसुभगाः पट्टे सपादास्पदं
सूरिश्रीविजयादिदेवमुनयो गच्छे तपानामनि ॥ १३८ ॥

વ્યાખ્યા–તેષાં ક૦ તેહ **વિજયદાનસૂરી**શ્વરનેં પટ્ટરૂપ આકાશ તલનેં વિષે વિજય પટ્ટ સહિત શ્રી હીરસૂર્યોપમા ક૦ અઠાવન્નમા પાટનેં વિષે શ્રી **હીરવિજય**સૂરીશ્વર થયા। તેહ સૂર્યમાન પ્રતાપી થયા ક્ષિત્યાં ક૦ પૃથિવીને વિષે અકબરસાહિના દ્યુતિમતા ક૦ જ્યોતિવંત તેહને પ્રતિબોધવ્યે કરીને સત્કીર્ત્તયઃ ક૦ ભલી છે કીર્ત્તિ તેહની । ૫૮ । શ્રીશેનાહ્વિજયાખ્યસૂરિસુભગા ક૦ । ઓગુણસાઠમેં પાટઇ શ્રી **શ્યેનવિજય**સૂરિ નામા થયા પટ્ટે સપાદાસ્પદં શ્રી હીરવિજયસૂરીશ્વરનેં પાટેં સવાઇ થયા સૂરિશ્રી વિજયાદિદેવ મુનયો ક૦ સાઠમેં પાટેં શ્રી **વિજયદેવ**સૂરીશ્વર થયા ગચ્છે તપાનામનિ ક૦ તપાગચ્છને વિષે થયા । ૬૦ । ૧૩૮ । કાવ્યાર્થઃ

तेषां पट्टे प्रभाख्या विजयपदयुताः सूरिमुख्या बभूवुः
तत्पट्टे ज्ञानसूरिप्रवरसविमलाः साधुसंविज्ञसंज्ञाः ।
श्रीसौभाग्याभिधाना जलधिपदयुजः सूरिसंपत्प्रयुक्ता–
स्तेषां पट्टे तपस्वी सुमतिजलनिधिसूरिसंज्ञान्वितोऽभूत् ॥ १३९ ॥

વ્યાખ્યા–એકસઠિમેં પાટે શ્રી **વિજયપ્રભ**સૂરિ થયા. બાસઠિમેં પાટઇ શ્રી **જ્ઞાનવિમલ**સૂરીશ્વર થયા. સાધુસંવિજ્ઞસંજ્ઞા ક૦ સાધુમાંહિ **સંવેગની સંજ્ઞાવંત** આચાર્ય થયા તિહાં ઢુંઢિયાનો મત વિશેષેં પ્રવર્ત્યો તિહાં સંવેગી સાધુના શ્રી પૂજ્ય થયા । શ્રીસૌભાગ્યભિધાના જલધિપદયુજઃ સૂરિસંપત્પ્રયુક્તાઃ–બાસઠિમઇ ૬૨ પાટઈ થયા તેહ શ્રી **જ્ઞાનવિમલ** સૂરીશ્વર નઇ પાટે ત્રેસઠિમેં પાટેં શ્રી **સૌભાગ્યસાગર** સૂરિ થયા તેહ સૂરિની સંપદાસહિત થયાઃ । તેષાં પટ્ટે તપસ્વી૦ તેહશ્રી સૌભાગ્યસાગરસૂરીશ્વરને પાટઇ ચૌસઠિમેં શ્રી **સુમતિસાગર** સૂરીશ્વર થયા । તેહ સુમતિસાગરસૂરીશ્વર કેહવા છે તપસ્વી૦ ક૦ મહાતપસ્વી । શ્રી વર્ધ્ધમાન તપસ્યાના કરનાર્યા એક ઘીની વિગઇ વિના પંચ વિગઇના પચ્ચખાણ કરનાર્યા । ૧૩૯ । કાવ્યાર્થઃ ।

धत्ते न्याययशा यशोविजयतां श्रीवाचको नामनि
साहाय्याद् बुध ऋद्धिनामविमलः संवेगमार्गास्थितः ।
तच्छिष्यो गुरुकीर्तिकीर्तिविमलो बुद्धो गुरुस्तच्छिशुः
सूरिश्रीविबुधाभिधानविमलो ग्रन्थं व्यधत्तेमकं ॥ १४० ॥

વ્યાખ્યા–પૂર્વ જે કહી તેહ શ્રીઆનંદવિમલસૂરીશ્વર થકી ગુરૂની પરંપરા કહી તેહ આચાર્યપદની પરંપરા જાણવી જે ગ્રંથકર્ત્તા **વિબુધવિમલ**સૂરી । તેહના આચાર્યપદના દાતા શ્રી **સુમતિસાગર** સૂરીશ્વર

Aho ! Shrutgyanam

થયા. દીક્ષાગુરૂ તો પંડિત શ્રી**કીર્તિવિમલ** ગણિ પંન્યાસપદ ધારી । તેહના ગુરૂશ્રી **ઋદ્ધિવિમલ** ગણિ મહાપુરૂષ મહાતપસ્વી સંવેગી થયા તે । **સંવત્ ૧૭૧૦** વર્ષે ગૂજરાતમધ્યે ધાણધારમધ્યે શ્રી **પાલણપુર** ને પાસેં **ગોલાગ્રામ** મધ્યે શ્રી **મહાવીર** સ્વામીની સાનિધ્યેં ક્રિયા ઉદ્ધાર કર્યો । તેહ કાલેં શ્રીયશોવિજય ઉપાધ્યાય કાશિમાંહિં । ન્યાયશાસ્ત્ર ભણીને ઇહાં પધાર્યા છેં । તેહ સંવેગપક્ષી બહુશ્રુત વિચરતા હતા તેહની સાહાય્યઇ । શ્રી **ઋદ્ધિવિમલ** ગણિ ક્રિયા પાલતા હવા । તેહના શિષ્ય પં । શ્રી કીર્તિવિમલ ગણિ થયા તે ગુરૂકીર્તિ ક૦ મોટી છે કીર્તિ જેહની । અનેક ભવ્ય જીવને પ્રતિબોધીને દીક્ષા દીધી છે । જેહના ગુણ ઘણા વિખ્યાત છે જગત્રયમાંહિ છે । તેહ બુધ્ધ ક૦ બહુશ્રુત ગુરૂ ક૦ ગ્રંથકર્ત્તાના ગુરૂ છે । તચ્છિશુઃ ક૦ તેહના જે શિષ્ય તેહ ગ્રંથકર્ત્તા સૂરિશ્રી વિબુધાભિધાન વિમલો ક૦ । શ્રી સુમતિસાગર સૂરીશ્વર સંવત **૧૭૯૮ વર્ષે વૈશાખ સુદિ ત્રીજે સૂરિપદની** સ્થાપના શ્રી **શંખેશ્વર** ગ્રામ મધ્યે કરી તિહાં એક સ્થાપના કરી છે ગ્રંથં વ્યધત્તેમકં ક૦ । તેહ ગ્રંથ કર્ત્તાઈ ઇમિકં ઇમિમેવ ઇમકં ગ્રંથં ક૦ સમ્યકત્વપરીક્ષા રૂપગ્રંથં પ્રતિવ્યધત્ત ક૦ કરતા, હતા. । ૧૪૦ ।

नौरंगाबादपुर्यां प्रथितजिनगृहश्राद्धवर्गान्विताया-
माचार्यो यौवराज्ये स विमलमहिमा सूरिनाम्ना प्रसिद्धः ।
इत्याद्यैः सारशिष्यैः शुभपरिकरितो ग्रंथरूपं त्वकार्षीत्
भव्यानां धर्महेतोः स विबुधविमलः शुद्धसम्यक्परीक्षम् ॥ १४१ ॥

વ્યાખ્યા—જે **નોરંગાબાદ** સહર નગરને વિષે તેહ પુરી કેહવી છે પ્રથિત૦ પ્રથિતાનિ કારિતાનિ જિનગૃહાણિ યૈસ્તે શ્રાદ્ધવર્ગાસ્તૈરન્વિતા યુક્તા—જે નગરિને પ્રથિત ક૦ કરાવ્યા છે જિનના ગૃહ ક૦ શ્રી તીર્થંકરદેવના દેહર્યાં જે શ્રાદ્ધના સમૂહ એહવા ઘણા શ્રાવક છે જૈનના દેહર્યાં પ્રતિમા પ્રતિષ્ઠા દીક્ષા મહોત્સવના કરનાર્યાં દ્રવ્ય સ્તવરૂપઈ કરીને સમ્યકત્વ નિર્મલ કરતા થકા એહવ્યા શ્રાવક ઘણા છે. તેહ શ્રાદ્ધવર્ગાં સહિત એહવી પુરી તેહને વિષે । માચાર્યો યૌવરાજ્યે સ વિમલમહિમા સૂરિ નામ્ના પ્રસિદ્ધ ક૦ તેહ નગરીને વિષે નવો મેહલ્યો છે તેહનેં વિષે શ્રી શાંતિનાથ ભગવંતના દેહરા મધ્યે **સંવત્ ૧૮૧૩ ના વર્ષે ફાગુણ સુદિ પંચમીને** દિનેં સા કર્પૂરચંદ મોતીચંદ । તથા સા દેવચંદ લાલજી પ્રમુખ સંઘે ઘણ્યો મહોચ્છવ કરીને આચાર્યપદની સ્થાપના કરી । તેહ શ્રી **મહિમાવિમલસૂરિ** રિતિ નામઈ કરીને પ્રસિદ્ધ છે । ઇત્યાદ્યૈઃ સારશિષ્યૈઃ શુભપરિકરિતો ગ્રંથરૂપં ત્વકાર્ષીત્ ક૦ । જેહ એહ ગ્રંથ **કર્ત્તા છે તેહના શિષ્યઃ મુખ્ય શ્રીમહિમાવિમલસૂરિપ્રમુખૈઃ** સાર શિષ્યૈ ક૦ પં શ્રી **ક્ષાંતિ**વિમલ પ્રમુખ અનેક શિષ્યઈ શુભ પરિકરિતઃ । શુભ પરિવારઈ પરવર્યો એહવ્યો ગ્રંથકર્ત્તા ગ્રંથરૂપં ત્વકાર્ષીત્ ક૦ તુ પુનઃ । ગ્રંથ રૂપ પ્રતિ અકાર્ષીત્ ક૦ કરતા હવા । તેહ ગ્રંથ રૂપ કેહવ્યો છે । સમ્યક્પરીક્ષં ક૦ । યથાર્થ સત્ય છે પરીક્ષા જેહને વિષે સ સમ્યક્પરીક્ષં । ૧૪૧

यत्राराध्या जैन्यः प्रतिमा सम्यग्दृष्टिभिः श्राद्धैः
ग्रंथो विबुधविमलगणिकृतः स सम्यक्त्वपरीक्षेति ॥ १४२ ॥

વ્યાખ્યા—યત્રારાધ્યા જૈન્ય ક૦ જેહ ગ્રંથને વિષે આરાધ્યા ક૦ આરાધવા યોગ્ય પૂજવા યોગ્ય છે જૈન્યઃ ક૦ જૈનની પ્રતિમા સમ્યગ્દષ્ટિભિઃ શ્રાદ્ધૈઃ ક૦ । સમ્યગ્દષ્ટિ શ્રાવકઇ શ્રીવીતરાગની પ્રતિમા પૂજવા યોગ્ય કહી છે । તેહ ગ્રંથો સ૦ ક૦ તેહ **સમ્યકત્વ પરીક્ષેતિ** એહવ્યું નામ છે । ૧૪૨ આર્યાર્દ્ધઃ

Aho ! Shrutgyanam

शाके नंद ९ वार्द्धि ७ रस ६ चंद्र १ मिते १६७९ संवत्सरे ज्येष्ठमासि।
वह्नि ३ विधु १ पर्वत ८ चंद्रमिते १८१३ वीरसंवत्सरे शुभे ॥ १४३ ॥

શાકે ક૦ શ્રી શાલિવાહન રાજાઈ પ્રવર્ત્તાવ્યો જે શાકે સંવત્સર **સંવત ૧૬૭૯ ના વર્ષે** વહિન ક૦ ત્રિણ ૩ વિધુ ક૦ એક ૧ પર્વત ક૦ આઠ એટલ્યે **સંવત્ ૧૮૧૩ ના વર્ષે જ્યેષ્ટ માસિ** ક૦ જ્યેષ્ટ માસને વિષે । એહ વીર સંવત્સરને ક૦ વીર વિક્રમાદિત્યના સંવચ્છરને વિષે એહ ગ્રંથ સંપૂર્ણ થયો । ૧૪૩ । આર્યાર્થઃ

शुक्लपक्षत्रयोदश्यां समाप्तोऽयं ग्रंथः स भानुविमलसाध्वर्थे ।
बालावबोधो भाविजीवसुखकृत् ॥ १४४ ॥

વ્યાખ્યા—શુકલ પક્ષ ત્રયોદશ્યાં૦ શુકલ પક્ષને વિષે શુદને વિષે શુદ તેરસીનેં વિષે સ ગ્રંથઃ । સમાપ્તોયં ક૦ । એહ પ્રત્યક્ષ ગતઃ । સમ્યકત્વપરીક્ષારૂપ ગ્રંથ સમાપ્તઃ સંપૂર્ણ થયો ભાનુવિમલ સાધ્વર્થે ક૦ । સાધુ ભાનુવિમલના આગ્રહ થકી એહ ગ્રંથ કર્યો બાલાવબોધો ક૦ । બાલકનેં અવબોધનું કારણ છે । ભવિજીવસુખકૃત્ ક૦ જે ભવિ મોક્ષગામી જીવને તો સુખકૃત્ ક૦ સુખનો કરનાર્યો એહ ગ્રંથ છે । કદાચ કોઇક અરૂચિ જીવને । એહ ગ્રંથ દુઃખદાયી પણ હસ્યૈ । તેહના દોષને ઉદયઇ કરીને પણ એહ ગ્રંથનો દોષ ન જાણવ્યો. જ્યો ઉત્તમ જીવને સુખદાયી છે । તો મહા કલ્યાણનું કારણ છે । ૧૪૪ । આર્યાર્થઃ ।

यत्किंचित् सिद्धान्तविरुद्धं लिखितमनुपयोगेन
तत् शोधनीयं विद्वद्भिर्वा मिथ्यादुष्कृतं मेस्तु । १४५ ।

વ્યાખ્યા—યત્કિંચિત્ ક૦ જે કાંઇ સિદ્ધાંત વિરૂદ્ધ ક૦ શ્રી આવશ્યક પ્રમુખ સિદ્ધાંત થકી જે કાંઇ વિરૂદ્ધ વિપરીત લિખિતં ક૦ । જે કાંઇ વિરૂદ્ધ લિખાણ્યું હોએ । અનુપયોગેન ઉપયોગ રહિત પણે કાંઈ વિરૂદ્ધ લિખાણું હોએ તત્ શોધનીયં વિદ્વદ્ભિ ક૦ તેહ શોધવ્યું વિદ્વદ્ભિ ક૦ પંડિતઈ એહ ઉપકાર કરવ્યો પંડિત તેહજ નઇં કહીએ । જે પર ઉપગાર કર્યે વા ક૦ અથવા મે ક૦ મુઝને મિથ્યા દુઃકૃતં ક૦ જે દુઃકૃત જે પાપ જે ઉત્સૂત્ર કાંઇ અણુપયોગઇં લિખાણ્યું હોએ । તેહનું જે પાપ મિથ્યા ક૦ ફોકટ અસ્તુ ફોકટ થાજ્યો જે ઈહાં ગ્રંથને વિષઈ જાંણીને તો સિદ્ધાંત વિરૂદ્ધ લિખ્યું નથી । પણ અજાણતાં કાંઇ લિખાણ્યું હોએ તો તેહ વિચારીનઇ શોધજ્યો પંડિત હોય તેહ મુઝને તો મિચ્છામિ દુક્કડ હોજ્યો । મંગલમસ્તુઃ । ૧૪૫ । આર્યાર્થ ॥ ઇતિ શ્રી સમ્યકત્વપરીક્ષા સમાપ્ત । સંવત ૧૮૧૪ ના વર્ષે ફાગુણ વદિ ૭ । વાર બૃહસ્પત દિને લિખિતં ॥ શ્રી નૌરંગાબાદ મધ્યે ॥

Aho ! Shrutgyanam

આજીવિક સંપ્રદાય.

[મૂળ લેખક એ. એફ. આર. હોઅર્નલે]

(અનુવાદક ચુ. પુ. બારોટ)

[ડૉ. એ. એફ. આર હૉઅર્નલે એ જાણીતા યુરોપીયન સ્કૉલરમાંના એક છે તેઓનો પરિચય જૈનસાહિત્ય સંશોધક પ્રથમ ખંડના ચોથા અંકમાં થોડો આપવામાં આવેલો છે. તેથી અહિં તેની પુનરુક્તિ આવશ્યક નથી. અહિં માત્ર એટલું જ જણાવવું બસ થશે કે આ ઇંગ્રેજીમાં તેમણે લખેલો 'આજીવક' વિષયક એક નિબંધ 'ઇન્સાઇક્લોપીડિયા ઑફ્ રિલિજીયન્ એન્ડ એથિકસ'ના વૉ. પહેલાના પૃ. ૨૫૯ ઉપર પ્રસિદ્ધ થએલો છે. જેનો ગૂજરાતી અનુવાદ નીચે આપવામાં આવે છે.

આ નિબંધ અનેક દૃષ્ટિએ ઉપયોગી છે. તેમાં આજીવક સંપ્રદાય અને તેના નેતા ગોશાળક વિષે પુષ્કળ માહિતી બૌદ્ધ અને જૈન ગ્રંથો ઉપરથી એકત્ર કરવામાં આવી છે. નિબંધ વાંચતાં જ લેખકના વિશાળ વાચન, મનન અને પૃથક્કરણ કૌશળની છાપ પડયા વિના રહેતી નથી. એમાંની કેટલીક અટકળો કલ્પિત હોવાનો સંભવ છે. પણ ખરા અભ્યાસીએ સાહિત્ય ઉપરથી તટસ્થભાવે વસ્તુ કેમ તારવવી એનો સચોટ દાખલો આ નિબંધ પૂરો પાડે છે.

પશ્ચિમીય વિદ્વાનોની અભ્યાસપદ્ધતિ, અને વિચારસરણિથી માહિત થવા ઇચ્છનાર એક મુનિશ્રી માટે મૂળ ઇંગ્રેજી નિબંધનો ગૂજરાતી અનુવાદ કરવામાં આવેલો પણ એ અનુવાદ બીજા જિજ્ઞાસુઓને પણ ઉપયોગી થાય એવી ધારણાથી તે મુનિશ્રીની સમ્મતિથી એ અનુવાદ અત્રે પ્રસિદ્ધ કરવામાં આવે છે.

આ અનુવાદ કેવળ ભાવાનુવાદ ન હોતાં મુખ્યપણે શાબ્દિક અનુવાદ છે. મૂળ સાથે મેળવનારને સગવડ પડે એવી દૃષ્ટિથી અનુવાદ કરવામાં આવેલો તેથી ક્વચિત્ ક્વચિત્ વાક્ય રચના ગૂજરાતી ઢબને બંધ ન બેસે તેવી જણાશે છતાં કાળજી પૂર્વક વાંચનારને તેમાંથી અર્થબોધ થવામાં કશી જ અડચણ આવે તેમ નથી. આ નિબંધમાં વપરાયેલા પુસ્તકોના સંકેતોનું સ્પષ્ટીકરણ નિબંધના અંતમાં આપવામાં આવે છે.

સંપાદક.]

૧ **ઉપોદ્‌ઘાત**—બૌદ્ધોના[1] અને જૈનોના, બન્નેના પવિત્ર ગ્રંથો ઉપરથી આપણે જાણીએ છીએ કે ઇ. સ. પૂર્વે છઠ્ઠા સૈકાના પ્રાયઃ અંત ભાગમાં બૌદ્ધ અને જૈન ધર્મની સ્થાપના સમયે આજીવિક નામનો એક સમકાલીન ભિક્ષુસમૂહ હસ્તી ધરાવતો હતો. અમુક જૈન શાસ્ત્રોમાં આપણને વિશેષ માહિતી મળે છે કે આ સમૂહનો સ્થાપનાર ગોસાલમંખલીપુત્ત[2] નામનો માણસ હતો. સપ્તમાંગમાં[3] ગોસાલે એક જણને–સદ્દાલપુત્તને–આજીવિકસમૂહમાં સ્વીકાર્યાનું કહેવાયું છે. અને ભગવતી સૂત્ર નામના પંચમાંગમાં આપણને એ સમૂહે મુખી તરીકે સ્વીકારેલ ગોસાલનો વૃત્તાંત મળે છે. બુદ્ધે ઉપાલંભાર્થે વીણી કાઢેલા છ ભિક્ષુસંઘોના નેતાઓમાંના એક તરીકે અનેકવાર બૌદ્ધ પવિત્ર ગ્રંથો[4] ગોસાલ મંખલીપુત્તનો ઉલ્લેખ કરે છે; છતાં સ્પષ્ટ રીતે, આજીવિકો સાથે સંબંધ ધરાવનાર તરીકે એઓ એનો કદિ ઉલ્લેખ કરતા નથી. પરંતુ બન્ને (જૈન અને બૌદ્ધ) એને સ્વતંત્ર ઇચ્છાશક્તિના અને નૈતિક જવાબદારીના નિષેધનો ધાર્મિક તાત્ત્વિક સિદ્ધાંત–નિયતિવાદ–ધરાવનાર તરીકે લખે છે એ હકીકત દર્શાવે છે કે આ બાબતમાં બૌદ્ધ પરંપરા જૈનથી યથાર્થ રીતે જુદી પડતી નથી.

---

૧. અં. નિ. ૩, ૨૭૬; ડા. પૃ. ૭૧, ૨૨૦ ૨. પાલી मंखलीपुत्त, સંસ્કૃત मस्करीपुत्र; ૩. ઉ. દ. ૨. ૧૩૩ ૪. મ. નિ. ૧, ૧૯૮, ૨૫૦, ૫૧૫ સં. નિ ૧, ૬૮: ૩૯૮; ૪ દી. નિ. ૧, ૫૨, જા, ૫. ૨૪૬

Aho ! Shrutgyanam

આજીવિક નામના ચોક્કસ અર્થ વિષે આપણને કશી માહિતી નથી. સંસ્કૃત શબ્દ **आजीव** એટલે કોઇ પણ અમુક વર્ગના લોકોનો જીવનમાર્ગ વા વ્યવસાય–પછી તે સંસારી ગૃહસ્થ તરીકેનો હોય વા ત્યાગી પરિવ્રાજક તરીકેનો હોય. આમ **सम्यग्–आजीव** એ બૌદ્ધ પદ્ધતિમાં પરિવ્રાજકના આઠ ફરજીયાત 'માર્ગો'માંનો એક માર્ગ હતો. **आजीविक** શબ્દ **आजीव**માંથી આવેલો હોઈને એનો અર્થ પોતાના વર્ગને યોગ્ય પ્રકારનું જીવન ગુજારનાર એવો થાય છે. આપણે હવે પછી જોઈશું કે કર્મનાં બંધનોથી મુક્ત થએલા ભિક્ષુઓના આજીવ પરત્વે ગોસાલ વિચિત્ર અભિપ્રાયો ધરાવતો હતો એમ માનવાને કેટલાંક કારણો છે. સંભવતઃ આજ કારણોએ કરીને એ અને એના અનુયાયીઓ આજીવિકો અથવા આજીવનો વિશિષ્ટ સિદ્ધાંત ધરાવનાર તરીકે ઓળખવામાં આવ્યા. આપણી પાસે જે જે સૂચનો છે તે તમામ એમ બતાવે છે કે આવા દાખલાઓમાં બહુધા હોય છે એમ એ નામ એમણે પોતે પાડેલું ન હોતું પરંતુ એમના પ્રતિપક્ષીઓએ પોતાનો તિરસ્કાર સૂચવવા માટે પાડેલું હતું. આપણે જોઇશું એ પ્રમાણે ભિક્ષુપણાને મોક્ષના સાધન તરીકે નહિ પણ ગુજરાનના સાધન તરીકે, માત્ર વ્યવસાય તરીકે, અનુવર્તીને ગોસાલે પોતાની જ વર્તણુકથી ઢોંગનો આક્ષેપ વહોરી લીધો હતો. એમ જણાય છે કે આજીવિક નામ મૂળે ગોસાલ અને એના અનુયાયીઓને 'ધંધો લઇ બેઠેલા' તરીકે બદનામ કરવાના અર્થમાં યોજાયું હતું; જો કે નિઃશંકપણે, પાછળના કાળમાં જ્યારે તે એક પરિવ્રાજક સંઘનું વિશિષ્ટ નામ થયું ત્યારે એ દુઃખ લાગે એવો અર્થ લુપ્ત થયો હતો.

૨ **ગોસાલનો અંગત ઇતિહાસ**—સામાન્યતઃ ભગવતી સૂત્ર તરીકે ઓળખાતું જૈનોનું પંચમ અંગ ગોસાલના જીવનનો આપણને ઠીક ઠીક સંબદ્ધ અને વિગતવાર વૃત્તાંત[5] આપે છે. આ વૃત્તાંત પ્રમાણે ગોસાલનો પિતા એક પ્રકારનો **मंख** અર્થાત્ ધંધાર્થી માગણ હતો અને એનું નામ મંખલી હતું. આથી કરીને એ **मंखलीपुत्त** વા મંખલીપુત્ર તરીકે ઓળખાતો હતો. એનું બીજું નામ ગોસાલ પડયાનું કારણ એ હતું કે એનો જન્મ ગૌશાળામાં (ગોસાલમાં) થયો હતો જ્યાં અમુક વરસાદની ઋતુ દરમિયાન અન્ય કોઇ આશ્રયસ્થાન નહિ મળવાથી એનાં માબાપે આશરો લીધો હતો. એ મોટો થયો ત્યારે એણે પોતાના બાપનો ધંધો ગ્રહણ કર્યો. લગભગ એજ સમયે મહાવીરે નિગ્ગન્થ[6] તપસ્વી તરીકે પરિક્રમણ શરૂ કર્યું હતું. પોતાના ભ્રમણ દરમિયાન ગોસાલને વારંવાર એમનો ભેટો થયો. લોકો મહાવીરને જે મહાન પૂજ્ય ભાવથી જોતા એ જોઈને એણે એમની સાથે જોડાવાનો નિશ્ચય કર્યો. પ્રથમ પાછો કાઢવામાં આવ્યા છતાં પોતાની અતિયાચનાથી આખરે એ મહાવીરના શિષ્ય તરીકે સ્વીકૃત થવામાં ફાવ્યો. પરંતુ આ બે માણસો ચારિત્ર્યમાં અને સ્વભાવમાં એટલા ભિન્ન હતા કે છ વર્ષ પછી ગોસાલની દગાબાજી અને ફંદફેલના કારણે એમના સહચારનો અંત આવ્યો. હવે ગોસાલે હરિફ નેતા બની આજીવિક નામનો જુદો પંથ જમાવ્યો અને પોતાના અનુયાયીઓ સાથે સાવત્થી (શ્રાવસ્તી) નામના ગામમાં ગયો અને ત્યાં એક કુંભારણના મકાનના ભાગમાં પોતાનું મથક કર્યું. ત્યાર બાદ સોળ વર્ષ દરમિયાન મહાવીર કદિ પોતાના પૂર્વ સહચારીને ભેગા થયા હોય એવું જણાતું નથી. એટલા ગાળા પછી (એક દિવસ) મહાવીર પરિક્રમણ કરતા કરતા સાવત્થીમાં આવી ચઢયા. અને ગોસાલનો ત્યાં કેવો પ્રભાવ પ્રવર્તે છે એ એમના સાંભળવામાં આવ્યું. પ્રસંગોપાત્ત પોતાને તપસ્વી તરીકે ઓળખાવનારનો જુઠો વેશ એમણે ઉઘાડો પાડયો. એ વાત કાને આવતાં ગોસાલે વેર લેવાની ધમકી આપી અને એકદમ પોતાના અનુયાયીઓને લઇને મહાવીર જ્યાં પોતાના નિગ્ગન્થો સાથે ઉતર્યા હતા તે તરફ ઉપડયો. ત્યાં એણે એક વિચક્ષણ દલીલ આગળ કરીને ઝઘડો માંડયો. 'એણે કહ્યું: મને ઓળખવામાં મહાવીરે ભૂલ કરી છે. વાસ્તવમાં એક સમયે મહાવીરના સહચારી તરીકે જાણીતા થએલા ગોસાલથી હું સંપૂર્ણતયા ભિન્ન માણસ છું' આ વાક્છળને મહાવીરે તિરસ્કાર-

૫. ઉ. દઃ પરિશિષ્ટ ૧ માંનું ભ. સૂ. ૧૫ નું ભાષાંતર ૬. એની જોડણી निग्गण्ठ પણ થાય છે, જુઓ જૈ. સૂ. પૃ. ૧૪ પાદનોંધ.

Aho ! Shrutgyanam

પૂર્વક બાજુ ઉપર હડસેલી કાઢ્યું એટલે એથી ક્રોધાયમાન થએલા ગોસાલે પોતાના પ્રતિપક્ષીને ન ભંડાય એવી ગાળો ભાંડી અને બન્ને* હરિફો મારામારી ઉપર આવ્યા. લડાઈમાં મહાવીરના બે શિષ્યો ખોખરા થઇ ગયા પરંતુ આખરે વ્યક્તિગત મુકાબલામાં મહાવીરે ગોસાલને હાર ખવડાવી અને એને અપકીર્તિ પૂર્વક પાછા હટવાની ફરજ પડી. એના હરિફોના ટોણાઓ અને એથી ઉત્પન્ન થએલા ગામલોકના અવિશ્વાસે કરીને ગોસાલથી સાવત્થીમાં ઉભું રહેવાય એવું રહ્યું નહિ. આની એના મગજ ઉપર એટલી બધી અસર થઇ કે એ ચસકી ગયું અને તપસ્વીનો સર્વ સંયમ બાજુ ઉપર ફેંકી દઇને એ ગાન તાન (નાચ) અને પાનમાં ગુલતાન થઈ ગયો અને પેલી કુંભારણને નાચવા તથા એની દુકાનનું કાદવવાળું પાણી લઈ લઇને પોતાના ઉપર છાંટવા લાગ્યો. તોફાનભર્યા આ ભોગવિલાસના જીવનના છ મહિનાએ એનો અંત આણ્યો. અને તે સાથે બુદ્ધિનું અને પશ્ચાત્તાપનું પુનરાગમન થયું. મરતાં મરતાં એણે પોતા વિષેના મહાવીરના કથનની સત્યતાનો પોતાના શિષ્યો સમક્ષ સ્વીકાર કર્યો અને એમને કહ્યું કે મને હરેક કલંકનાં ચિહ્નોથી દાટજો અને મારી શરમ ઢંઢેરો પીટાવી જાહેર કરજો. ઉમેરવામાં આવ્યું છે કે પોતાના ગુરુની અંતઘડીની સૂચનાઓનો શિષ્યોએ અમલ કર્યો નહોતો.

ભગવતી સૂત્રમાંના ગોસાલના જીવનવૃત્તાંતનો સાર આવો છે. એના જીવન વિષેના બૌદ્ધ ઉલ્લેખો આથી પણ વધુ સંક્ષિપ્ત છે. બુદ્ધઘોષ (આશરે ઇ. સ. ૪૧૦) દીઘનિકાય ઉપરની પોતાની ટીકાને વિષે આપણને જણાવે છે કે મંખલી એ ગોસાલનું નામ હતું અને પાછલું નામ એ ગૌશાળામાં જન્મ્યો હતો તે ઉપરથી એને આપવામાં આવ્યું હતું. [એક દિવસે] એણે બેદરકારીથી એક તેલનું વાસણ ભાગી નાખ્યું હતું. અને એના ગુસ્સે ભરાયલા શેઠે એને પકડ્યો હતો. શિક્ષાના ભયથી શેઠના હાથમાં પોતાનાં કપડાં રહેવા દઇને એ એના પંજામાંથી નાઠો. નાગો નાગો એ એક ગામ ભણી નાઠો, જ્યાં લોકોએ એને કપડાં ધર્યાં: પરંતુ એણે એ ગ્રહણ કરવાની ના પાડી, કારણ નગ્ન અર્હત્ અથવા પવિત્ર પુરુષ તરીકે એને વધારે સારૂ ગુજરાન મેળવવાની આશા પડી.

[બન્ને અહેવાલો—આપણે નિર્ધાર કરવા સમર્થ છીએ ત્યાં સુધી એક બીજાથી તદ્દન સ્વતંત્ર છે. એક બૌદ્ધ છે, બીજો જૈન છે; અને બૌદ્ધો અને જૈનો પ્રતિપક્ષી સંપ્રદાયો હોઇને એક બીજાનાં અવલોકનો [જેમનાં તેમ] સ્વીકારી લે જ નહિ. તદુપરાંત બુદ્ધઘોષે લંકામાં રહીને લખ્યું અને જૈન ધર્મશાસ્ત્રો, આપણી સમક્ષ અત્યારે છે એ પ્રમાણેનાં, પશ્ચિમ ભારતમાં રચાયાં હતાં. બન્ને અહેવાલો મળતા આવે છે અને જુદા પડે તે બન્ને બાબતમાં પરમ મૂલ્યવાન છે. એ બે બાબતમાં મળતા આવે છે; પ્રથમ, ગોસાલ ગૌશાળામાં અને હલકા કુળમાં જન્મ્યો હતો અને પાછળથી તેણે નગ્ન ભિક્ષુનો વ્યવસાય અંગીકાર કર્યો હતો; અને બીજું એનો આ વ્યવસાય અંતઃકરણપૂર્વકનો નહોતો પરંતુ માત્ર નિરુદ્યોગ આજીવિકા મેળવવા માટે જ ગ્રહણ કરેલો હતો. હવે પછી દર્શાવવામાં આવશે તે પ્રમાણે ગોસાલના પાખંડીપણાની માન્યતાનું કારણ, બૌદ્ધો અને જૈનો બન્નેના કહેવા મુજબ, એ હતું કે એ નીતિ વિરુદ્ધના સિદ્ધાંતોનો ઉપદેશ કરતો એટલું જ નહિ પણ વળી તે પ્રમાણે આચરણ કરતો.

બન્ને અહેવાલો જુદા પડે છે તે મંખલી વા મંખલીપુત્ત નામના અર્થની બાબતમાં. જૈનોના કથનાનુસાર મંખલી એ ગોસાલના બાપનું નામ છે અને એ **मंख** ઉપરથી આવેલું છે. બૌદ્ધોના કહેવા પ્રમાણે એ ગોસાલનું પોતાનું નામ છે. **मंख** માંથી કાઢેલી વ્યુત્પત્તિનો બચાવ થઇ શકે એમ નથી. પ્રાકૃત શબ્દ **मंखली** સંસ્કૃત શબ્દ **मस्करिन** નો સમાનાર્થક છે. પરંતુ **मंख** ના સમાર્થ **मस्क** જેવો કોઈ શબ્દ હસ્તી ધરાવતો નથી. વાસ્તવમાં, આગલો શબ્દ, એનો મંખલીના મૂળ તરીકે નિર્દેશ કરતા ભગવતી

* ભગવતીના પાઠ પ્રમાણે તો ભગવાન્ મહાવીર મૌનજ રહ્યા હતા ગોશાળકના ગમે તેવા પ્રકોપ સામે પણ-સંપા૦

Aho ! Shrutgyanam

ગૂજરાત પુરાતત્ત્વ મંદિર (અમદાવાદ)ની પ્રબંધસમિતિ

ખુરશી ઉપર બેઠેલા: (ડાબી બાજુથી) પં. સુખલાલજી; અ. રામનારાયણ વિ. પાઠક; આચાર્ય જિનવિજયજી; અ. ધર્માનંદ કોસંબી; મૌલવી અબુજફર નદવી; અ. હરિનારાયણ આચાર્ય.

જમીન પર બેઠેલા: (ડાબી બાજુથી) પં. બહેચરદાસજી; મંત્રી રસિકલાલ છો. પરીખ; અ. ગોપાલદાસ પટેલ.

પાછળ વચ્ચે ઉભેલા: ચુનીલાલ પુ. બારોટ, પુસ્તકાલય સંરક્ષક.

Aho ! Shrutgyanam

જર્મન પ્રો. ડૉ. ડબ્લ્યુ શુબ્રિંગ પી.એચ. ડી. ગયા શિયાળામાં અમદાવાદ આવેલા ત્યારે જૈન સાહિત્ય સંશોધક કાર્યાલય તરફથી તેમને આપવામાં આવેલી પાર્ટીના સમયે લીધેલો ફોટોગ્રાફ.

કુમાર પ્રિન્ટરી : અમદાવાદ

Aho ! Shrutgyanam

સૂત્રના ફકરા સિવાય, ક્યાંય જોવામાં આવ્યો નથી અને હું અનુમાન કરવાનું સાહસ કરૂં છું કે એ ખાસ ઉપજાવી કાઢેલો જ છે. તદુપરાંત અનુમાનાશ્રિત એ **मंख** શબ્દનો અર્થ જુના ટીકાકારોને નિશ્ચિતપણે જ્ઞાત ન હોતો. આમ, અભયદેવ (આશરે ૧૦૫૦ ઈ. સ.) ભગવતીસૂત્ર ઉપરની પોતાની ટીકામાં એનો અર્થ 'જયાં ત્યાં, પોતાની સાથે રાખેલા (કીનાખોર) દેવોનાં ચિત્રો બતાવી લોકોની પાસેથી દાન પડાવતો ભીખારી' એવો કરે છે, ત્યારે હેમચંદ્ર (આશરે ૧૧૪૦ ઈ. સ.) અભિધાન ચિંતામણિ ઉપરની પોતાની ટીકામાં[૮] કહે છે કે એ સુપ્રસિદ્ધ શબ્દ માગધ-બંદીજન-નો પર્યાય શબ્દ છે. સત્ય, નિઃશંકપણે, એ છે કે **नायपुत्त**, 'નાયવંશનો માણસ' (મહાવીરનું વિશેષણ) એ શબ્દની જેમ મંખલીપુત્ત એ પણ સાધિત શબ્દ (Formation) છે. એ એમ વર્ણવે છે કે ગોસાલ, મૂળ, મંખલી વા મસ્કરિન્ નામના ભિક્ષુવર્ગનો માણસ હતો. ભારતમાં આ ભિક્ષુવર્ગનું ઘણું પૂર્વકાલીન અસ્તિત્વ એ હકીકતથી સાબીત થાય છે કે સુવિખ્યાત વૈયાકરણ પાણિનિ (આશરે ૩૫૦ ઇ. સ. પૂર્વે) પોતાના વ્યાકરણમાં (૬, ૧, ૧૫૪) આ નામ કેમ પડયું તે સમજાવે છે. એના કહેવા પ્રમાણે મસ્કરિન્ નામ પડવાનું કારણ એ હતું કે એ લોક પોતાના હાથમાં વાંસદંડ (**मस्कर**) રાખતા. દંડ રાખવાના આ અભ્યાસને લીધે એ **एकदंडिन्** તરીકે પણ ઓળખાતા હતા. પાણિનિના લખાણ ઉપરના પોતાના ભાષ્યમાં[૯] પતંજલિ આગળ સમજાવે છે કે આ પ્રકારનો પરિવ્રાજક મસ્કરિન્ કહેવાતો એનું કારણ વિશેષે કરીને એ હતું કે એણે સર્વ પ્રવૃત્તિઓનો ત્યાગ કરવાની પ્રતિજ્ઞા કરેલી હતી, નહિ કે એ દંડ રાખતો. આ બે લખાણોમાંથી એક હકીકત તરી આવે છે અને તે એ કે આ મસ્કરીઓના વા એકદંડીઓના બે પ્રકારો હતા. ઉતરતી શ્રેણિનો તપસ્વી ભિક્ષાપાત્ર અને કટિબંધન ઉપરાંત સાથે એક યથાર્થ દંડ રાખતો જયારે પરમહંસની ઉચ્ચતર શ્રેણિમાં એ આ ત્રણે વસ્તુના અધિકારનો ત્યાગ કરતો અને નિતાન્ત ત્યાગ રૂપી દંડનો જ[૧૦] આશ્રય લેવાનો દાવો રાખતો.

પ્રાચીન ભારતમાં ઘરબાર વિનાના પરિવ્રાજક તપસ્વીનું જીવન અંગીકાર કરવાનું વલણ એક સમયે ઘણું પ્રચલિત હોવાનું જણાય છે. ઘણી વાર આ જીવન સાચા ધાર્મિક હેતુઓથી ગ્રહણ કરવામાં આવતું; પરંતુ સંભવતઃ એટલી જ વાર કેવળ રખડેલપણાના શોખને લીધે અને પ્રામાણિક કામ કરવાની અનિચ્છાને લીધે પણ એમ કરવામાં આવતું. કોઇ અમુક વર્ગના લોકોમાં જ એમ હતું એવું નથી; પરંતુ સંભવતઃ નીચલા વર્ગોમાં એનો વિશેષ પ્રચાર હતો. ઉપલા વર્ગોમાં (કહેવાતા દ્વિજોમાં) બ્રાહ્મણ સ્મૃતિકારોએ આનું નિયમન કરવાનો પ્રયત્ન કરેલો. એમણે એવો ધારો બાંધેલો કે ઉગતી અવસ્થાના વર્ષો વિદ્યાસેવનાર્થે અર્પણ કરવાં, વચલી અવસ્થાનાં વર્ષો કુટુંબપાલન અને વ્યવસાય સેવનાર્થે ખર્ચવાં અને તપસ્વીજીવનાર્થે કેવળ ઉતરતી અવસ્થાનાં વર્ષો સમર્પણ કરવાં. પરંતુ આ પથ્ય નિયમનનો ભારતીય સમાજમાં કયારે ય પણ ઝાઝો અમલ થતો હતો એ તો શંકાસ્પદ જ ગણાય; કારણ પરિવ્રજ્યાર્થે સમગ્ર જીવન સમર્પણ કરવાની વૃત્તિ લોકોમાં અતિ પ્રબળ હતી. નિયમ તરીકે મસ્કરીન્ એકાંત જીવન ગુજારતો. આ પ્રકારનું જીવન અંગીકાર કરવાના ઘણા ગંભીર દુરૂપયોગો થવાનો ભય હતો. એથી કરીને પ્રભાવશાળી વ્યક્તિત્વવાળા માણસોએ તપસ્વી જીવન પ્રત્યેના વલણનું શાસન કરવાના કાર્યનો વિચાર કર્યો-એનો પ્રતિબંધ કરીને વા એ માટે જીવનની અમુક કાલ-મર્યાદાનું બંધન મુકીને નહિ, પરંતુ વર્તનના કડક નિયમોના શાસનવાળા સંઘોમાં પરિવ્રાજકોનું સંગઠન કરીને. આવા લોકો તે બૌદ્ધ અને જૈન ધર્મના સંસ્થાપકો. બધા અહેવાલો જોતાં ગોસાલ ભાગ્યેજ એ પ્રકારનો આદમી હતો. પ્રકૃતિથી જ એ પરિવ્રાજકપણાના બ્હાને સ્વચ્છંદી જીવન ગુજારતા ઉતરતા પ્રકારના

---

૮. બો. અને સ્યુ. ૭૯૫ મું ૫૬. ૯ કી. મ. ૩, ૯૬. ૧૦. વે. ઇ. સ્ટુ. ૨. ૧૭૪-૧૭૫.

મસ્કરીઓમાંનો હોય એમ જણાય છે. આ હલકા પ્રકારના ભિક્ષુઓના પ્રાચીન ભારત વિષેના અસ્તિત્વની લોકમાન્યતાનો Folk-lore એક વિચિત્ર ટુકડો સાક્ષી પુરે છે, એ તિત્તિર[૧૧] જાતકમાં આવે છે. બૌદ્ધ જાતકોમાં આવતાં પદ્યોમાં પ્રાચીનમાં પ્રાચીન-ખુદ બૌદ્ધ ધર્મ કરતાં પણ ઘણા પ્રાચીન-સમયની લોકમાન્યતાઓ સમાયેલી છે. એ **जातक** ના બારમા અને તેરમા પદ્યોમાં હલકા પ્રકારના એક ભિક્ષુને અન્ય વસ્તુઓ સાથે એક વાંસદંડ (**वेताचार**) રાખતો વર્ણવ્યો છે, જે બતાવે છે કે એ એકદંડી વા મસ્કરીના નામથી ઓળખાતા ભિક્ષુવર્ગનો મનુષ્ય હોવો જોઇએ. પરંતુ આ બાતમીને વિશિષ્ટ અર્થ અર્પનાર તો એ છે કે ઘણા પાછળના સમયનું એના ઉપરનું ભાષ્ય એ ભિક્ષુને આજીવિક તરીકે ઓળખાવે છે. સ્પષ્ટ છે કે બૌદ્ધોના મુખમાં 'આજીવિક' એ અધમ પ્રકારના મસ્કરિન્ વા એકદંડિન્ને લાગુ પડતો ઠપકાનો શબ્દ હતો. બૌદ્ધો અને જૈનો બન્ને ગોસાલને મંખલી અને આજીવિકોનો આગેવાન શા કારણે કહે છે એ આથી સમજાતું જણાય છે; અને ઘણો સંભવ છે કે એ પોતે જ મંખલી હતો એટલું જ નહિ પણ જૈનો કહે છે એમ મંખલીનો અનૌરસ પુત્ર હતો.

મહાવીર સાથે સંબંધ બાંધવામાં ગોસાલ શા હેતુથી પ્રેરાયો હતો એ નક્કી કરવું મુશ્કેલ છે. એમ હોય કે એ ધર્મોત્સાહીના સંબંધથી ગોસાલની પ્રકૃતિની શુભતર વૃત્તિઓ અલ્પકાળ માટે જાગૃત થઇ હતી; વા, જૈન વૃત્તાંત્ત સૂચવે છે એમ 'પોતાના વેપારની' વધુ પ્રબળ 'કળકુંચીઓ' મહાવીર પાસેથી શીખવાની મળશે એવી પણ એણે આશા રાખી હોય. પ્રથમ વિકલ્પાનુસાર મહાવીરના સંસર્ગની એના ઉપર કોઇ કાયમી અસર ન પડી. ગોસાલે પોતાનો મઠ કુંભારણના મકાનમાં થાપ્યો હતો એ જૈન લખાણ વિષે ગંભીરપણે પ્રશ્ન ઉઠાવવાનું કાંઇ કારણ જણાતું નથી. ધાર્મિક ભિક્ષુઓના કડકમાં કડક નિયમોમાંના એકની આ ઉઘાડી અવજ્ઞા બુદ્ધની ગોસાલ વિષેની સુપ્રસિદ્ધ જુગુપ્સાથી દૃઢ પ્રમાણ થાય છે એ જોતાં ગોસાલના જીવનના અંતિમ દૃશ્યમાં નિઃશંક કૈંક કરૂણ છે. એના પોતાના શિષ્યો અને ગામલોકોની મોંઢામોંઢ મહાવીરે ઉઘાડાં પાડેલાં એનાં કલંકો અને એથી નીપજેલું એનું ગાંડપણ તથા અંતકાળ વખતનો એનો ક્ષણિક પશ્ચાત્તાપ કરૂણ છે. પરંતુ દયાની એ લાગણીના માપનો આધાર ગોસાલના યથાર્થ ચારિત્ર્ય વિષે આપણે કેવો અભિપ્રાય બાંધેલો છે એના ઉપર છે.

ભગવતીસૂત્ર[૧૨] લખે છે કે મહાવીર ગોસાલ પછી સોળ વર્ષ સુધી જીવ્યા. એમાં એમ પણ લખ્યું છે કે એક અસાધારણ હાથીના[૧૩] કબ્જા માટે વૈશાલીના રાજા ચેડગ સાથે મગધના રાજા કુણીય (અજાતશત્રુએ) કરેલો વિગ્રહ ગોસાલના મૃત્યુનો સમકાલીન હતો. આ બે લખાણો ઉપરથી ગોસાલના મરણના વર્ષનો આશરો નક્કી કરી શકાય. શ્રુતપરંપરા પ્રમાણે મહાવીરના અવસાનનું વર્ષ ઈ. સ. પૂર્વે ૫૨૭ છે. આ પ્રમાણે ગોસાલના મરણની સાલ ઈ. સ. પૂર્વે ૫૪૩ ની આવશે. પરંતુ એ સાલ ખરૂં પૂછો તો અતિ પૂર્વકાલીન છે. ઉપર્યુક્ત હાથી મગધના રાજા સેણીય (બિંબિસાર) તરફથી પોતાના પાટવી પુત્ર કુણીયના ચઢીઆતા દાવાની અવગના કરીને કનિષ્ઠ પુત્ર વેહલ્લને અપાયો હતો. એ નિશ્ચિત છે એમ માની શકાય કે એ હાથીના કબ્જા માટે વિગ્રહની શરૂઆત કરવા કુણીય પોતાના રાજસત્તાપ્રવેશની જ વાટ જોતો હતો. હવે, ધીમા ભુખમરાથી કુણીયે પોતાના પિતાનો ઘાત કર્યો ત્યાર પહેલાં કેટલાંક વર્ષોથી એણે એને ગાદી સોંપી દીધી હતી. આ ઘાત ઈ. સ. પૂર્વે ૪૯૦ માં વા બુદ્ધના નિર્વાણની આઠ વર્ષ પહેલાં થયો; કારણ, હવે વ્યવહારિક રીતે નક્કી છે એ પ્રમાણે, એ બનાવ (નિર્વાણ) ઇ. સ. પૂર્વે ૪૮૨ માં બન્યો. મહાવીર બુદ્ધ કરતાં કેટલાક સમય-કેટલા લાંબા તે જણાયેલ નથી-પૂર્વે નિર્વાણ પામ્યા. પરંતુ ગોસાલ મહાવીર પૂર્વે સોળમા વર્ષમાં-વિગ્રહના વર્ષમાં-ગુજરી ગયો અને એ વિગ્રહ કુણીય

૧૧ જા. ૩. ૫૪૨ માં નં. ૪૩૮. ૧૨ પૃ. Fol. ૧૨૫૦ a, ૧૨૬૯ a; ૧૩ ઉ. દ. પરિશિષ્ટ ૧ પૃ. ૭

Aho ! Shrutgyanam

રાજસત્તાને આસને આવ્યો એ વર્ષમાં જ બન્યો હોવો જોઇએ. હવે એ રાજ્યારોહણ સેણીયના ઘાત કરતાં ઘણા લાંબા સમય પૂર્વે સુસ્થાપિત કરી શકાય એમ નથી. મહાવીર બુદ્ધ પૂર્વે બે વર્ષ ઉપર ઇ. સ. પૂર્વે ૪૮૪ માં નિર્વાણ પામ્યા અને એથી કરીને ગોસાલનું મૃત્યુ અને વિગ્રહનું બનવું મહાવીરના નિર્વાણ પૂર્વે ૧૬ વર્ષ ઉપર અને સેણીયના ઘાત પૂર્વે ૧૦ વર્ષ ઉપર ઇ. સ, પૂર્વે ૫૦૦ માં થયું એમ માની લેવાથી સર્વ શરતો ઉત્તમ રીતે સંતોષાય છે.

૩. ગોસાલના આચારવિચાર—ગોસાલ કે એના આજીવિક અનુયાયીઓમાંના કોઇ પોતાના આચારવિચારોની નોંધ મુકી ગયા નથી. એથી કરીને આ બન્ને બાબતો વિષે ફરજીયાતપણે એમના હરિફો અર્થાત્ જૈનો અને બૌદ્ધોનાં લખાણોમાંના પ્રસંગવશાત્ કરાયેલા ઉલ્લેખો ઉપરથી જ આપણે અભિપ્રાય બાંધવાનો રહે છે. એમનાં કથનો, અલબત્ત, કેટલીક સાવચેતીથી સ્વીકારવાં જોઇએ; પરંતુ એમની સામાન્ય વિશ્વાસપાત્રતાની એમના તમામ આવશ્યક બાબતોમાંના મળતાપણાથી બાંહ્યધરી મળે છે. આ મળતાપણાનું ખાસ કરીને વધારે મૂલ્ય છે કારણ એ કથનો બે પરસ્પર વિરોધી સંપ્રદાયો તરફથી આવતાં હોઇ બાતમીનાં બે સ્વતંત્ર મૂલો નિર્માણ કરે છે.

બૌદ્ધ મજ્ઝિમનિકાયમાં[૧૪] એક ઘણું બોધક કથન આવે છે. એમાં બુદ્ધને પોતાનાથી ભિન્ન પડતી તપસ્વીપદ્ધતિને અષ્ટ વર્ગમાં વહેંચી નાખતો વર્ણવ્યો છે. આમાંના ચારને એ અબ્રહ્મચર્યવાસ કરનાર તરીકે અપરાધી ઠરાવે છે; બીજા ચાર વિષે માત્ર એટલું જ કહે છે કે એ 'અસંતોષકારક' (**अनास्सासिक**) છે. પાછળના વર્ગમાં એ મહાવીરની પદ્ધતિને મુકે છે. ભેદ સ્પષ્ટ છે. બુદ્ધનો ગોસાલ વિષેનો વાંધો નૈતિક કારણોને લીધેનો હતો–ગોસાલ સિદ્ધાંતથી અને આચારથી અનીતિમાન સિદ્ધાંતો ધરાવતો હોવાથી એની પદ્ધતિ, ખરેખર, બુદ્ધે પરમ અપકારી[૧૫] વિચારેલી, અને એના પ્રણેતાને એમણે (**मोघपुरिस**) 'ખળ પુરુષ'–માછીની જેમ માણસોને માત્ર એમનો નાશ કરવા અર્થે જ પકડતા 'ખળ પુરુષ' તરીકે જ કલંકિત કર્યો છે.

ગોસાલના મતનો મૂળભૂત સિદ્ધાંત, બૌદ્ધો અને જૈનો બન્નેના ધર્મગ્રંથોમાં, સહેજસાજ જુદી પડતી પરંતુ વસ્તુતઃ એકસરખી પરિભાષામાં લખાએલો છે. જૈન ઉવાસગ દસાઓ[૧૬]માં એ નીચે પ્રમાણે રજૂ થાય છે: 'ઉદ્યમ વા પરિશ્રમ વા શક્તિ વા પૌરુષ વા' મનુષ્યબળ જેવી કોઇ વસ્તુ નથી; સર્વ વસ્તુઓ અપરિવર્તનીયપણે નિશ્ચિત થઇ ચુકેલી છે.' [૧૭]બૌદ્ધ દીઘનિકાયમાં [૧૮]ગોસાલના સિદ્ધાંતોનો સારાંશ સંપૂર્ણતરપણે નીચે પ્રમાણે વર્ણવેલો છે.

'પ્રાણીઓની ભ્રષ્ટતા માટે, નિકટનું વા દૂરનું કોઈ કારણ નથી; એઓ નિમિત્ત વા કારણ વિના ભ્રષ્ટ થાય છે. પ્રાણીઓના પાવિત્ર્ય માટે નિકટનું વા દૂરનું કોઇ કારણ નથી; એઓ વિના નિમિત્તે વા વિના કારણે પવિત્ર થાય છે. કશું જ આપણા પોતાના વા બીજાના પ્રયત્નો ઉપર અવલંબતું નથી; ટુંકમાં કશું કોઇ માનવપ્રયાસ ઉપર અવલંબતું નથી; કારણ શક્તિ વા પૌરુષ વા મનુષ્ય પરિશ્રમ વા મનુષ્યબલ જેવી કોઇ ચીજ નથી. પ્રત્યેક સવિચાર વસ્તુ (અર્થાત્ ઉચ્ચતર પ્રાણીઓ), પ્રત્યેક સેન્દ્રિય વસ્તુ (અર્થાત્ અધમતર કોટિનાં પ્રાણીઓ), પ્રત્યેક પ્રજનિત વસ્તુ (અર્થાત્ પ્રાણીમાત્ર), પ્રત્યેક સજીવ વસ્તુ (અર્થાત્ તમામ રોપાઓ) બલ પ્રભાવ વા શક્તિથી રહિત છે. એમની ભિન્નભિન્ન અવસ્થાઓ–કોઇ પણ સમયની–વિધિવશાત્, સંજોગવશાત્ વા એમની પોતાની પ્રકૃતિવશાત્ છે; અને ષડ્વર્ગોમાંથી (જુઓ નીચે પૃ. ૩૪૨) એક વા બીજામાંની પોતાની સ્થિતિ પ્રમાણે જ મનુષ્યો સુખ-દુઃખના ભોક્તા બને છે.

---

૧૪. ૧, ૫૧૪, ff ન્યુ. રે, ૨, ૨૮૪. ૧૫ અં. નિ. ૧, ૨૮૬; ઓ. બુ. ૮૨, ૧૯૯, ડા. ૭૧. ૧૬ ૧, ૯૭, ૧૧૫; ૨. ૧૧૧, ૧૩૨. ૧૭ સરખાવો સં. નિ. ૩, ૨૧૦; અં. નિ. ૧, ૨૮૬ ૧૮ પૃ. ૫૩, ડા. ૭૧.

સિદ્ધાંતસ્વરૂપે આ પદ્ધતિની વિગતવાર વ્યવસ્થા કેવી કરી હતી તે આપણે જાણતા નથી. બૌદ્ધ અને જૈન ધર્મગ્રંથો આથી વિશેષ કશી માહિતી આપતા નથી. એમ છતાં એ સ્પષ્ટ છે કે સિદ્ધાંતની દૃષ્ટિએ એ એક પ્રકારનો હાડોહાડનો **નિયતિવાદ** હતો, જે મનુષ્યની સ્વતંત્ર ઇચ્છાશક્તિ વિષે અને કહેવાતા શુભાશુભ કર્મ વિષેના એના ઉત્તરદાયિત્વ વિષે નકાર ભણતો હતો. એ પણ એટલું જ સ્પષ્ટ છે કે જો આચારમાં ઉતારાય તો આ સિદ્ધાંત અત્યંત ઉપદ્રવકારક થઇ પડે. બૌદ્ધો અને જૈનો બન્ને સંમત છે કે ગોસાલે પોતાનો સિદ્ધાંત આચારમાં પણ ઉતારેલો જ. આગળ લખ્યા પ્રમાણે બુદ્ધે એના ઉપર અબ્રહ્મચર્યનો આરોપ મુકેલો. મહાવીરનું કથન પણ એટલું જ ભારપૂર્વકનું છે. 'તપસ્વી સ્ત્રીઓ સાથે સંભોગ કરે તો કશું પાપ કરતો નથી' [૧૯]એવું શિખવવાનો મહાવીર એના ઉપર આરોપ મુકે છે. એ એના અનુયાયી ઉપર 'સ્ત્રીઓના ગુલામ' [૨૦]હોવાનો આક્ષેપ કરે છે અને કહે છે કે 'તેઓ બ્રહ્મચર્યવાળું જીવન ગાળતા નથી.' [૨૧]ગોસાલે પોતાનો મુખ્ય મઠ એક સ્ત્રીના મકાનમાં રાખવાનું પસંદ કરીને પોતાના જ કૃત્યથી પોતાના ઉપર આ આક્ષેપ વહોરી લીધો હતો.

મૂળ, ગોસાલ મહાવીરનો શિષ્ય હતો એમ જૈન ધર્મશાસ્ત્રો પ્રતિપાદન કરે છે એ હકીકત ઉપરથી જણાશે કે આ નિયતિવાદ અને એનો વ્યવહારમાં કરેલો પ્રયોગ બાદ કરતાં એના અને મહાવીરના સિદ્ધાંતોમાં મુખ્યત્વે કરીને કાંઇ ભેદ ન હતો. જૈન ભગવતીસૂત્રમાં જે એમ લખ્યું છે કે ગોસાલના સિદ્ધાંતો 'પુવ્વોના અંશરૂપ અષ્ટ મહાનિમિત્તોમાંથી લીધેલો છે' એના ઉપરથી પણ વળી આ અનુમાનનું સૂચન થાય છે.[૨૨] આ પુવ્વો (પૂર્વો વા 'મૂલો') મહાવીરે પોતે પોતાના શિષ્યોને શિખવેલાં મૂલ પવિત્ર સૂત્રો હોવાનું મનાતું હતું.[૨૩] 'સર્વ સત્ત્વો' ના વર્ગીકરણની વિચિત્ર યોજના જે બૌદ્ધ દીઘનિકાયમાં[૨૪] ગોસાલની હોવાનું જણાવેલ છે તેથી ગોસાલના અને મહાવીરના સિદ્ધાન્તોના સામાન્ય મળતાપણાનું વિશેષ સમર્થન થાય છે. એ યોજના સમજવાનું અને જૈન ધર્મશાસ્ત્રોમાં સવિસ્તર દર્શાવવામાં આવેલા મહાવીરના સિદ્ધાન્તો સાથે એને અસરકારક રીતે સરખાવવાનું એની અતિસંક્ષિપ્ત લખાવટને લીધે મુશ્કેલ બને છે. પરંતુ બે અગત્યની વિગતો, જે જૈનો ખાસ કરીને મહાવીરના સિદ્ધાંતો હોવાનો દાવો કરે છે તેની એકરૂપતા ચોક્કસપણે સાબીત કરી શકાય છે.

આ સંબંધમાં એ નોંધવા યોગ્ય છે કે પોતાની વર્ગીકરણની યોજનામાંથી ફલિત કરેલા ગોસાલના ઉપદેશનો અપવાદ બાદ કરતાં એની એ જ યોજના બૌદ્ધ મજ્જિમનિકાય[૨૫] અને સંયુત્તનિકાયમાં[૨૬] ભિખ્ખુ **પકુધ કચ્ચાયનની** હોવાનું અને તિબેટી દુલ્વમાં[૨૭] ભિખ્ખુ **અજિતકેસકમ્બલની** હોવાનું જણાવેલું છે. આ બે પુરુષો તથા ગોસાલ મંખલીપુત્ત, બુદ્ધે વારંવાર આગળ પડતી રીતે પોતાના હરીફ તરીકે જણાવેલા છ ભિક્ષુનેતાઓમાંના હતા. બીજા ત્રણ નેતા તે નિગ્ગન્થોનો નેતા **મહાવીર નાતપુત્ત, પૂરણકસ્સપ** અને **સંજય બેલટ્ઠીપુત્ત.** આથી કરીને જણાશે કે વર્ગીકરણની એ યોજના વાસ્તવમાં સર્વ ષડ્ ભિક્ષુનેતાઓને સામાન્ય હતી, પરંતુ પ્રત્યેક જણ એનો પોતાની વિશિષ્ટ રીતે પ્રયોગ કરતો. ગોસાલના દાખલામાં એ પ્રયોગે નિયતિવાદની સરણી ગ્રહણ કરી; અને, ખરેખર, દીઘનિકાયમાં આ યોજનાની સાથે જે નિયતિ-વાદી શિખામણ જોડેલી છે તેનાથી એ સ્પષ્ટપણે સૂચિત થાય છે. એ યોજનાની એક બાબતના સંબંધમાં– જે, પ્રબુદ્ધ આત્મા (**सण्णी सं. संज्ञी**) વિષેની છે–બૌદ્ધ ધર્મશાસ્ત્રો એના સામાન્ય મળતાપણાનો વિગતના તફાવતો સહિત, પ્રત્યક્ષપણે એકરાર કરે છે. દીઘનિકાય[૨૮]ના કથનાનુસાર મજ્જિમનિકાયમાં[૨૯]

---

૧૯. જૈ. સૂ. ૨. ૪૧૧ **૨૦.** જૈ. સૂ. ૨, ૨૭૦ **૨૧.** જૈ. સૂ. ૨,૨૪૫ **૨૨.** ઉ. દ. પરિશિષ્ટ ૧ પૃ. ૪, **૨૩.** ઈ. એં. ૧૭, ૨૮૦; ૨૦, ૧૭૦, ૧૭૧ **૨૪.** પૃ. ૫૪; ડા. ૭૨ **૨૫** મ. નિ, ૧. ૫૧૭, ન્યુ. રે. ૨, ૨૮૯ **૨૬.** સં. નિ. ૩, ૨૧૧, ૨૧૨ **૨૭.** રો. લા. બુ. પૃ. ૧૦૩ **૨૮** પૃ. ૩૧. ડા. ૪૪, ૪૫ **૨૯.** ૪, ૩૯૮

Aho ! Shrutgyanam

લખેલું છે કે બુદ્ધથી વિરૂદ્ધ જઇને સર્વ ષડ્‌ભિક્ષુનેતાઓ એક સરખી રીતે બોધ કરતા કે 'પ્રબુદ્ધ આત્મા' નિર્વાણ પછી અસ્તિત્વ ધરાવવું જારી રાખે છે, જો કે એ અસ્તિત્વના ચોક્કસ પ્રકાર વિષે એમનામાં મતભેદ હતો. આત્મા 'રૂપી' છે એવો મત ગોસાલ ધરાવતો હોવાનું કહેવાય છે (બુદ્ધઘોષવડે) જ્યારે મહાવીર માનતા કે એ અરૂપી છે. પરંતુ આ પારિભાષિક શબ્દોનો ચોક્કસ અર્થ શો હતો તે આપણે જાણતા નથી.

વર્ગીકરણની યોજના નીચે મુજબ છે.[30] '૧૪૦૦૦૦૦ મુખ્ય પ્રકારના જન્મો છે, અને પુનઃ ૬૦૦૦ (અથવા હુલ્ત્ર પ્રમાણે ૬૦,૦૦૦) અને પુનઃ ૬૦૦ બીજા છે. કર્મના ૫૦૦ પ્રકાર છે અને (પંચેન્દ્રિય પ્રમાણે) વળી પાંચ બીજા છે અને (મન, વાચા અને કર્મ પ્રમાણે વળી ત્રણ બીજા છે; અને આખું કર્મ અને અર્ધું કર્મ (પણ) છે.) (આખું કર્મ એટલે વાચા વા કર્મણા કરેલું કર્મ અને અર્ધું કર્મ એટલે કેવળ મનસા કરેલું કર્મ). વર્તણુકના ૬૨ પ્રકાર છે. આંતરકલ્પો (periods) ૬૨ છે; મનુષ્યોમાં ૭ વર્ગ (**अभिजाति**) છે; માનવ જીવનની ૮ અવસ્થાઓ છે; ૪૯૦૦ પ્રકારના 'આજીવ' છે; ૪૯૦૦ પ્રકારના પરિવ્રાજકો છે; નાગલોકથી વસાયેલા ૪૯૦૦ પ્રદેશો છે; ૨૦૦૦ શક્તિઓ (Faculties) છે; ૩૦૦૦ પાપમોચનસ્થાનો છે; ૩૬ ધૂળરાજિઓ છે, 'પ્રબુદ્ધ (**संज्ञी**) આત્માઓ' માંથી સાત પેદાશો (productr) છે, ions અસંજ્ઞી પ્રાણીઓમાંથી છે અને ૭ (શેરડીની) બે ગાંઠો વચ્ચેના ભાગોમાંથી છે; ૭ પ્રકાર દેવોના છે, ૭ મનુષ્યોના છે, ૭ પિશાચોના છે, સાત સરોવરોના છે; સાત મોટા અને સાતસો નાના પ્રપાતો છે, સાત અગત્યનાં અને સાતસો બીનઅગત્યનાં સ્વપ્નો છે; ૮૪૦૦૦૦૦ મહાકલ્પો છે જેમાં બાલ અને પંડિત બન્ને એક સરખી રીતે સંસારમાં આથડી આથડીને આખરે પોતાના દુઃખનો અંત આણશે' આ યોજનાને અંતે ગોસાલને પોતાનો નિયતિવાદી ઉપદેશ પરિશિષ્ટરૂપે જોડતો વર્ણવ્યો છે: 'જો કે પંડિતો અમુક શીલે કરીને, વ્રતે કરીને તપે કરીને, વા બ્રહ્મચર્યે કરીને (વારસામાં મળેલાં) અપરિપક્વ કર્મોથી પરિપક્વ કરવાની આશા રાખશે અને બાલો એ જ સાધનોથી પરિપક્વ થએલાં કર્મમાથી છૂટવાની આશા રાખશે પરંતુ એમાંથી એક પણ ફાવી શકવાના નથી; જાણે માપથી માપી આપેલાં ન હોય એવાં સુખદુઃખો સંસાર દરમિયાન બદલી શકાવાનાં નથી; એમાં નથી વધારો થઇ શકવાનો કે નથી ઘટાડો. જેમ એક દોરીનો દડો ફેંકો તો બરાબર એની લંબાઇ સુધી ઉકેલાશે, જરાય વધારે નહિ, તેમ બાલ અને પંડિત બન્ને એક સરખી રીતે નિયત સમય સુધી સંસારમાં ભ્રમણ કરશે અને ત્યાર પછી જ, કેવળ ત્યાર પછી જ, એમના દુઃખનો અંત આવશે.'

ઉપલી યોજનામાંની બે બાબતો જે જૈન[31] સિદ્ધાંતોમાંની બાબતો સાથે ચોક્કસપણે મેળવી શકાય એમ છે તે આ છે; (૧) સર્વે સજીવ પ્રાણીઓનું ઇંદ્રિયોના પ્રમાણમાં એક, બે, ત્રણ, ચાર અથવા પાંચ ઇંદ્રિયો ધરાવનાર તરીકેનું વર્ગીકરણ જે જૈન ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રમાં સંપૂર્ણતયા અપાયેલું છે. અને (૨) મનુષ્ય જાતિનું ષડ્ અભિજાતિઓમાં વર્ગીકરણ. પાછળનું, ગોસાલના મત પ્રમાણેનું વર્ગીકરણ બુદ્ધઘોષે બૌદ્ધ દીઘનિકાય[32] ઉપરના પોતાના ભાષ્યમાં સમજાવેલું છે. આ વૃત્તાંત પ્રમાણે ગોસાલ આ ષડ્-વર્ગોને છ વર્ણો વડે ઓળખતો-કૃષ્ણ, નીલ, લોહિત, હારિદ્ર, શુક્લ અને પરમ શુક્લ. કૃષ્ણાભિજાતિ એટલે શિકારીઓ, કસાઇઓ, ખુનીઓ, ચોરો ટુંકમાં તમામ ક્રૂર ધંધા કરનારા મનુષ્યો. નીલા-

૩૦. દી. નિ. ૫૪: ડા, ૭૨: સરખાવો ઉ. દ., પરિશિષ્ટ ૨. પૃ. ૧૭-૨૯ ૩૧ જૈ. સૂ. ૨. ૨૧૩, ૨૧૯; વળી જૈ. સૂ. ૧. ૩ પાદનોંધ બીજી ૩૨. સુ. વિ. ૧૬૨, ઉ. દ. ના પરિશિષ્ટ ૨ પૃ. ૨૧ માં અનુવાદિત

Aho ! Shrutgyanam

ભિજાતિ એટલે ભિખ્ખુઓ અર્થાત્ બૌદ્ધ ભિક્ષુઓ. લોહિતાભિજાતિ એટલે નિગ્ગન્થો જે (કંઈ નહિ તો) એક લંગોટી તો પહેરતા જ. હરિદ્રાભિજાતિ એટલે સર્વવસ્ત્રત્યાગી અચેલકના ગૃહી અનુયાયીઓ. શુકલાભિજાતિ એટલે આજીવિકો અને આજીવિનિયો (સ્ત્રી આજીવિકો) અને પરમ શુકલાભિજાતિ તે આજીવિકનેતાઓ–નંદવચ્છ, કિસ્સ સંકિચ્ચ અને ગોસાલ મંખલીપુત્ત.

મહાવીરની યોજનામાં પણ આ ષડ્વર્ગો, જેને એ લેશ્યા કહે છે તે સહેજસાજ જુદા પડતા છ વર્ણો પ્રમાણે ઓળખવામાં આવેલા છે:—કૃષ્ણ, નીલ, કાપોત (ભુખરો), તેજો (રાતો), પદ્મ (પીળો) અને શુકલ.[33] પ્રથમ દષ્ટિએ આ વર્ણોની વ્યાખ્યાની બાબતમાં બન્ને યોજનાઓમાં ઘણો ફરક હોવાનું જણાય છે. પરંતુ સૂક્ષ્મ નિરીક્ષણે અંતર્ભૂત સિદ્ધાંત એક જ છે એમ જણાય છે. મહાવીરના મત પ્રમાણે જે સજીવ પ્રાણીઓને ઇજા કરે છે અર્થાત્ જૈન સિદ્ધાંતના પાંચ વ્રતોમાંના પ્રથમ વ્રત (અહિંસા) નું ઉલ્લંઘન કરે છે તે કૃષ્ણ છે. જે લોભ વા કામવાસનામાં રત રહે છે અર્થાત્ જે ચોથા અને પાંચમા (અકિંચન અને બ્રહ્મચર્યનાં) વ્રતોનું ઉલ્લંઘન કરે છે તે નીલ છે. જે કપટી અને ચોર છે અર્થાત્ બીજા અને ત્રીજા વ્રતોનું (સત્ય અને અસ્તેય) ઉલ્લંઘન કરે છે તે કાપોત કહેવાય છે. જે વ્રતપાલનાર્થે સંયમી અને પ્રયત્નવાન છે અર્થાત્ ગૃહી અનુયાયીઓ છે તે તેજો કહેવાય છે. જેઓ દૃઢ સંયમી છે અર્થાત્ યથાર્થ ભિક્ષુઓ છે તે પદ્મ કહેવાય છે. સ્વયં મહાવીર જેવા જિનકલ્પિક જેમણે નિતાંત આત્મસંયમ સાધ્યો છે તેઓ શુકલ કહેવાય છે.[34] ગોસાલની વ્યાખ્યા પણ વ્યવહારતઃ એ જ છે. અપવાદ એ છે કે એ લાક્ષણિક દાખલાઓ (types) ટાંકીને પોતાનો અર્થ સ્પષ્ટ કરે છે. આમ એને મતે બૌદ્ધો અર્થાત્ ભિખ્ખુઓ નીલાભિજાતિના છેઃ કારણ એમના હરિફોમાં બૌદ્ધોની ખ્યાતિ પુષ્ટિમાર્ગ[35] પ્રત્યે પ્રેમ રાખનાર 'સુખવાદી' (**सातवादिन्**) તરીકેની હતી. નિગ્ગન્થો લોહિતાભિજાતિના નમુનારૂપ હતા; કારણ તેઓ સુખનો ત્યાગ કરવાની બાબતમાં બૌદ્ધો કરતાં ચઢીઆતા હતા. પરંતુ લંગોટીને વળગી રહેવાની બાબતમાં આજીવિકો કરતાં ઉતરતા હતા. એના પોતાના અર્થાત અચેલકના વા 'નરાતાળ નાગડા' નેતાના ગૃહી અનુયાયીઓ હારિદ્રાભિજાતિના (મહાવીરના તેજો વર્ગના) નમુના હતા. પોતાના ખાસ અનુયાયીઓ, કહેવાતા આજીવિકો જેઓ દેખીતી રીતે નરાતાળ નાગા ફરતા તે શુકલાભિજાતિના (અથવા મહાવીરના પદ્મ-વર્ગના) નમુના હતા. આ સંબંધમાં એ નોંધવું રસભર્યું છે કે ગોસાલના વર્ગીકરણનો બુદ્ધઘોષનો અર્થ અંગુત્તરનિકાય[36] ઉપરથી રચેલો છે, છતાં ત્યાં (અંગુત્તરનિકાયમાં) એ, ભિક્ષુનેતા પૂરણકસ્સપનો હોવાનું લખેલું છે.' જો આ કેવળ પાઠપરત્વેનો પ્રમાદ ન હોય તો અત્યાર આગમચ કયારનું ય જે એમ કહ્યું છે કે આ વર્ગીકરણની યોજના બુદ્ધના આગળ પડતા તમામ ષડ્ પ્રતિસ્પર્ધીઓને સામાન્ય હતી તેનું એ સમર્થન કરે છે[37]

ઉપર કયારનું કહેવાઈ ચુકયું[38] છે કે મહાવીર અને ગોસાલ વચ્ચે મુખ્યપણે કોઇ સિદ્ધાંતભેદ ન હતો. એમ છતાં, એક મુદ્દો એવો હતો જેના વિષે જૈન પરંપરા પ્રમાણે એમની વચ્ચે નામીચો ભેદ હતો. તે બન્ને કહેવાતા પુબ્વો અથવા મૂળ કથનોનો સ્વીકાર કરતા હતા. પાછળથી એને દષ્ટિવાદ વા જૈનોના બારમા અંગનું સ્વરૂપ આપવામાં આવ્યું. આ અંગના પ્રથમ અંશને પરિકમ્મ અર્થાત્ 'મહાવીરના સિદ્ધાંતોનો અર્થ બરાબર ગ્રહણ કરવા માટે જોઇતી તૈયારીઓ' કહે છે.[39] આ પરિકમ્મ બાબત

૩૩ જૈ. સૂ. ૨. ૧૯૬ ૩૪. જૈ. સૂ. ૨, ૧૯૯, ૨૮૦; ૩૫ જૈ. સૂ. ૨, ૨૬૯, પાદનોંધ ૩: અને વી. ઓ, જ. ૩, ૩૩૨ પાદનોંધ ૨. ૩૬ ૩, ૩૮૩ ૩૭. સરખાવો મહાભારત ૧૨, ૨૮૦, ૬, ૩૩ ff ૩૮ પૃ. ૧૪; ૩૯ ઇ. એં. ૨૦, ૧૭૩.

Aho ! Shrutgyanam

આપણને કહેવાયું છે કે કેટલાક એના છ સમૂહ (group) ગણાવતા જ્યારે બીજાઓ સાત ગણાવતા, **પ્રથમ** ગણના ચુસ્ત જૈનોની હતી, જ્યારે પાછલી ગણના અમુક આજીવિકો અથવા તેરાસિયો નામના અમુક ફાંટાપાડુઓની હતી, જેઓ અભયદેવ[૪૦] સમજાવે છે તે પ્રમાણે ગોસાલે સ્થાપેલા પાખંડી સંપ્રદાયના હતા. આ લોકોનો સર્વ વસ્તુઓને ત્ર્યાત્મક–સત્, અસત્ વા સદસત–લેખવાનો આચાર હતો. તે ઉપરથી તેઓનું નામ તેરાસિય (સં. **त्रैराशिक**) પડ્યું હતું. આમ એ લોકો કહેશે કે અમુક વસ્તુ સત્ હોય, અસત્ હોય વા સત્ અને અસત્ બન્ને હોય. પરિભાષા પ્રમાણે સ્યાદ્વાદના નામે ઓળખાતો આ મત સામાન્ય રીતે જૈનોનો વિશિષ્ટ વાદ છે. ફલિત થાય છે કે તેરાસિયોએ એનો કોઈ ખાસ તરેહનો ઉપયોગ કર્યો હોવો જોઈએ અને આ ખાસ રીત એ એમનો સપ્તમ પરિકમ્મસમૂહ બન્યો હશે. આગળ વધીને એમ પણ અટકળ કરાય કે આ સપ્તમ સમૂહ મનુષ્યના આજીવ વા ધંધા પરત્વેનો હતો; અને આ કારણને લીધે તેરાસિયોનું બીજું નામ આજીવિકો વા ધંધાદારીઓ પડ્યું હતું. આ વિષય પરત્વેના એમના ઉપદેશનો સાર શીલાંક[૪૧] સમજાવ્યો છે તે પ્રમાણે એ છે કે (મહાવીરે સ્વીકારેલી) મનુષ્યની બે અવસ્થાઓ (૧) કર્મબદ્ધ અને (૨) કર્મમુક્ત—ઉપરાંત **એની** એક ત્રીજી અવસ્થા છે જેમાં એ યથાર્થ બદ્ધ પણ નથી તેમ યથાર્થ મુક્ત પણ નથી.[૪૨] બંધનયુક્ત અવસ્થાના મનુષ્યો તે સંસારી લોકો. (મહાવીરની જેમ) સંસારનો ત્યાગ કર્યો હોય તે (ત્રીજી) દશાના મનુષ્યો. આ લોકો પોતાના આધ્યાત્મિક અહંત્વને લીધે યથાર્થ રીતે મુક્ત નથી હોતા. યથાર્થવિમુક્તિની અવસ્થા જે મેં પ્રાપ્ત કરી છે એમ ગોસલ કહેતો હતો તેને પામતાં પહેલાં આ લોકોને હજી અસંખ્ય જન્મમરણની ઘટમાળમાંથી પસાર થવાનું હતું. ભગવતીસૂત્રમાં ગોસાલ સ્વમુખે દેહાંતરનો પોતાનો સિદ્ધાંત નીચે પ્રમાણે સમજાવે છે.[૪૩]

એ કહે છેઃ ' મારા સિદ્ધાંત પ્રમાણે જે જે પૂર્ણ થયા છે, અત્યારે થાય છે અને ભવિષ્યમાં થવાના છે તે તમામને ૮૪૦૦૦૦૦ મહાકલ્પ પુરા કરવા પડશે એ મહાકલ્પો દરમિયાન એમને અંતરીક્ષમાં (**संजूह**) સાત વાર દેવ તરીકે અને પૃથ્વી ઉપર સાત વાર ' જ્ઞાનવાન પ્રાણી ' (**सण्णोगब्भ**) તરીકે નિયમિત રીતે વારાફરતી જન્મવું પડવાનું છે અને અંતમાં વળી પોતાવડે સાત ભિન્ન ભિન્ન દેહો પુનરુજ્જીવિત કરી પૂર્ણાહૂતિ કરવી પડશે; અને આ પુનર્જન્મો દરમિયાન અનુક્રમે પાંચ પ્રકારના કર્મોની અને, ત્રણ પ્રકારના કર્મોની, અને કર્મના રાશિભાગની અસરોથી અનુક્રમે (૮૪૦૦૦૦૦ મહાકલ્પના) ૧૦૦૦૦૦ અને ૬૦૦૦૦ અને ૬૦૦ ના પ્રમાણમાં પોતાની જાતને મુક્ત કરીને તેમને અંતિમ પૂર્ણતા પ્રાપ્ત કરવી પડશે. '

આ પરિપાટીમાં અંતર્ગત થતા સમયની અમાપ લંબાઇનો ખ્યાલ આપવા ગોસાલ ઉમેરે છેઃ—

ગંગાનદીનું તળીયું ૫૦૦ યોજન લાંબુ, અર્ધો યોજન પહોળું અને ૫૦ ધનુષ્[૪૪] ઉંડું છે. પોતાની પૂર્વેની ગંગાથી સાત ગણી એવી એવી અનુક્રમે સાત ગંગાશ્રેણીઓ લઇએ તો છેલ્લી ગંગા આપણી ૧૧૭૬૪૯ ગંગાઓ બરાબર થાય. હવે જો પ્રત્યેક સો વર્ષે એક રેતીનો કણ દૂર કરીએ તો આ સાતે ગંગા નદીઓની રેતી ખાલી કરતાં એક **सरस्** (સરોવર) કલ્પ જેટલો સમય જાય; અને **આવા** આવા ૩૦૦૦૦૦ **सरस्** કલ્પો એકત્ર થાય ત્યારે એક મહાકલ્પ થાય '[૪૫]

૪૦ આશરે ઇ. સ. ૧૦૫૦ **૪૧**. આશરે ઇ. સ. ૮૭૬ **૪૨**. જૈ. સૂ. ૨, ૨૪૫. પાદનોંધ ૨, **૪૩**. fols ૧૨૩૭-૧૨૫૨, શે, લા, બુ, ૫, ૨૫૩; ઉ. દ. પરિશિષ્ટ ૨. પૃ. ૧૮ વળી જુઓ ડા. ૭૨ **૪૪**. યોજન–૪½ માઇલ; ધનુ–૬ ફીટ **૪૫**. ઉ, દ, પરિશિષ્ટ. ૨, પૃ. ૨૭, પાદનોંધ ૨૧

Aho ! Shrutgyanam

પૃથ્વી ઉપરના છેલ્લા ભાનપૂર્ણ અસ્તિત્વ દરમિયાન જીવને પુનરુજ્જીવન દ્વારા સાત દેહાંતરમાં થઈ પસાર થવાનું છે. એટલે કે જીવ વારા ફરતી સાત જુદા જુદા માણસોના મૃતદેહમાં પ્રવેશ કરે છે અને એમ એને પુનઃ સજીવન કરે છે. પોતાનો દાખલો આપી ગોસાલ સમજાવે છે કે પોતે ઉદાઇ **કુણ્ડિયાયણીયના** દેહનો રાજગૃહ ગામની નજીકમાં ત્યાગ કર્યો અને **એનેજ્જગના** દેહમાં પ્રવેશ કર્યો. આ દેહને પોતે ૨૨ વર્ષ સુધી સજીવન રાખ્યો. **એનેજ્જગ** મરણ પામ્યો ત્યારે પોતે **મલ્લરામના** દેહમાં પ્રવેશ કર્યો અને એ દેહને ૨૧ વર્ષ પર્યંત સજીવન રાખ્યો. એવી જ રીતે એણે એક પછી એક એમ **મણ્ડિય, રોહ, ભારદ્દાઇ** અને **અજ્જુણગ ગોયમપુત્તના** દેહો અનુક્રમે ૨૦, ૧૯, ૧૮ અને ૧૭ વર્ષ પર્યંત પુનર્જીવિત કર્યા. ગોસાલ આગળ ચાલુ રાખતાં કહે છે કે ' છેવટ સાતમા દેહાંતરથી મેં કુંભારણના મકાનમાં અજ્જુણગનો દેહ છોડયો અને ૧૬ વર્ષની મુદત માટે ગોસાલ મંખલીપુત્તના દેહમાં પ્રવેશ કર્યો, એથી કરીને મારા સિદ્ધાંત પ્રમાણે ૧૩૩ વર્ષની દરમિયાનમાં હું સાતે દેહાંતરો પરિપૂર્ણ કરી ચુકયો છું.

પુનરૂજ્જીવનકરણનો સિદ્ધાંત એનો પોતાનો હોવાનો ગોસાલનો આ આગ્રહ સવિશેષ અગત્યનો છે. જૈન પરંપરા પ્રમાણે એના જીવનના અમુક પ્રસંગોના સંબંધમાં ઉદ્ભૂત થયેલા એના વિશિષ્ટ સિદ્ધાંતોમાંનો જ આ એક છે. અને એ ગોસાલની ખાસ વિચિત્રતા છે. સ્પષ્ટ રીતે, એ ગોસાલે કરેલી દેહાંતરના પોતાના સામાન્યવાદની કંઇક અનુપપન્ન પૂર્તિરૂપ જ છે. એ વિશિષ્ટ હેતુથી ઉમેરાયેલી હોવી જોઇએ અને એ કયો તે વ્યવહારિક રીતે ગોસલે પોતે કબૂલ કરેલું છેઃ એટલે કે મહાવીરે એના ચારિત્ર્ય વિષે કરેલા આક્ષેપોનું નિવારણ કરવાનો. ભગવતી સૂત્રમાં[४६] આપણને જણાવેલું છે કે સાવત્થીમાં મહાવીર સાથે થયેલા એના છેલ્લા વિગ્રહ વખતે ગોસાલ એમને કહે છે કેઃ—

'તમે મને તમારો શિષ્ય કહ્યો છે પરંતુ એ તમારો શિષ્ય ગોસાલ મંખલીપુત્ત તો લાંબો સમય થયાં મૃત થયો છે અને દેવલોકમાં પુનર્જન્મ પામ્યો છે. હું તો ખરી રીતે **ઉદાઇ કુણ્ડિયાયણીય** છું અને સાતમા દેહાંતરમાં જ ગોસલનું સજીવન કરેલું શરીર જે હું અદ્યાપિપર્યંત ધારણ કરી રહ્યો છું તેમાં પેઠો છું.'

મંખલીપુત્ત ગોસાલપણાનો ઇન્કાર નિશ્ચિતપણે એમ સૂચવતો જણાય છે કે આ બે જણના પૂર્વકાલીન સાહચર્યનો ભંગ કેવળ અવ્યવહારિક અને સૈદ્ધાંતિક મતભેદને કારણે ન હોતો જેટલો મહાવીર તેમ જ, સામાન્ય રીતે લોકો જેને અપયશકર્તા અને તપસ્વીને અયોગ્ય ગણતા એવા કોઇ વર્તનને લીધે હતો.

પુનઃસજીવનકરણનો સિદ્ધાંત જો કે ગોસાલે પોતાની એકરૂપતાનો ઇન્કાર કરવાના ઇરાદાથી પ્રયોજ્યો હતો પરંતુ ભગવતી સૂત્રના[४७] કથનાનુસાર જે પ્રસંગે ગોસાલને એ સિદ્ધાંત સુઝાડયો તે (પ્રસંગ) ગોસાલના મહાવીર સાથેના સાહચર્યના કાલમાં બન્યો હતો.

એક સમયે સિદ્ધત્થ ગામથી કુમ્મગામ સાથે સાથે પરિક્રમણ કરતા કરતા આ બે પુરુષો પૂર્ણ ફાલેલા એક મોટા તલના ઝાડવા પાસે થઇને પસાર થયા, એને જોઇને ગોસાલે મહાવીરને પૂછ્યુંઃ 'આ ઝાડવું નિર્જીવ થશે કે નહિ અને એનાં બીજ પુનઃ કયારે નજરે પડશે ? મહાવીરે કહ્યુંઃ 'એ ઝાડવુ નિર્જીવ જશે પરંતુ એ જ ઝાડવાની શીંગોમાં બીજ બનશે.' ગોસાલને આ કથન ગમ્યું નહિ; માટે મહાવીરને જુદા પાડવાનો વિચાર કરીને એ ચુપચાપ પેલા ઝાડવા પાસે પાછો ગયો, અને એને સમૂળું ઉખેડી નાંખીને દૂર ફેંકી દીધું. પરંતુ દૈવયોગે ત્યાર પછી વરસાદનું એક ઝાપટું પડયું. અને

४६. fol, १२३७; ઉ. દ. પરિશિષ્ટ ૧ પૃ. ૫ ४७ fol. १२१४ ff; ઉ. દ. પરિશિષ્ટ. ૧ પૃ૦ ૩

Aho ! Shrutgyanam

એના પરિણામે એ ફરીથી મૂળ નાખી શકયું અને એથી કરીને આખરે એને શીંગો બેઠી અને તેમાં બીઆં થયાં. તે દરમિયાન એ બન્ને જણ કુમ્મગામ પહોંચી ગયા હતા. કેટલાક વખત પછી પાછા વળતાં એઓ એ તલના છોડવા આગળ થઇને પસાર થયા. અને એને જોઇને ગોસાલે મહાવીરને એની ભવિષ્યવાણી યાદ કરાવી અને કહ્યું 'સ્પષ્ટ છે કે છોડવો નથી મરી ગયો અને બીઆં નથી બંધાયાં.' મહાવીરે જવાબ આપ્યો: 'મારી ભવિષ્યવાણી ખરી પડી છે; કારણ તેં પોતે એને સમૂળો ઉખેડી દૂર ફેંકી દીધો હતો તે જોતાં છોડવો મરી ગયો હતો પરંતુ વખતસર વરસાદ પડવાથી એ છોડવો પુનઃ સજીવન થયો અને એને શીંગો બેઠી અને બીઆં થયાં.' એમણે ઉમેર્યું કે 'આવી જ રીતે સર્વ છોડ સજીવન થઈ શકે એવા છે' ગોસાલે હજી એ વાત ન માની અને છોડવા પાસે જઇને એની શીંગો તપાસી; પરંતુ એ ફોલતાં મહાવીરનું કહેવું ખરૂં હતું એમ જણાવાથી એણે આગળ વધીને એમ અનુમાન કર્યું કે કેવળ છોડવાઓ જ નહિ પરંતુ વાસ્તવમાં સર્વ સજીવ પ્રાણીઓ પુનઃ જીવિત થવા શક્તિમંત છે. જો કે પુનરુજ્જીવનના સિદ્ધાંતને આમ સામાન્ય રૂપ આપવા વિષે મહાવીર તો સંમત ન જ થયા.

આ બાબતમાં એક બીજો મત જે ભગવતીસૂત્રમાં[૪૮] ગોસાલના અનુયાયીઓનો તદ્દન વિશિષ્ટ મત હોવાનું જણાવેલું છે તેનો ઉલ્લેખ કરી શકાય. એ '**अट्ठचरमाइं**' (આઠ અંતિમતાઓ) ના નામે ઓળખાય છે. તે આ પ્રમાણે : છેલ્લું પીણું. છેલ્લું ગીત, છેલ્લું નૃત્ય, છેલ્લી (પ્રેમ) યાચના, છેલ્લો વંટોળીઓ, છંટકાવ કરતો છેલ્લો હાથી, મોટા પથ્થરો રૂપી અસ્ત્રો વડે કરેલો છેલ્લો વિગ્રહ અને છેલ્લો તીર્થંકર અર્થાત્ મંખલીપુત્ત પોતે. આ સિદ્ધાંતને ઉપસ્થિત કરનાર પ્રસંગો તે ગોસલના જીવનના અંતિમ દિવસોમાં બનેલા પ્રસંગો. પહેલી ચાર '**चरमाइं**' તે એના પોતાના જીવનની વાતમાં કયારનાં ય વર્ણવાઇ ચુકેલાં[૪૯] એના પોતાનાં અંતિમ કૃત્યો. ત્યાર પછી ત્રણ તે ગોસલના મૃત્યુ-સમયની બરાબર લગભગમાં બનેલા જાણવા જેવા બનાવો હોવાનું કહેવાય છે. છેલ્લો વંટોળીઓ, એ પ્રસંગોપાત હજી પણ બંગાળાની મુલાકાત લેતા, પરંતુ ઉત્તર હિંદના અન્ય ભાગોમાં લગભગ અજ્ઞાત એવા ધોધમાર વરસાદ સાથે થતા પ્રચંડ વાવાઝોડાના એકાદા તોફાનને ઉદ્દેશીને છે. 'છંટકાવ કરતો હાથી,' તે રાજકીય અંતઃપુરની સન્નારીઓના ગંગાસ્નાનને સમયે તેમના મનોરંજનાર્થે કેળવેલું એક પ્રકારનું જંગી જનાવર હોવાનું કહેવાય છે; જેના કબ્જા દાવા માટે આગળ જણાવ્યા પ્રમાણે મગધ અને વૈશાલીના નરેશો વચ્ચે વિગ્રહ ઉત્પન્ન થયો હતો. આ વિગ્રહમાં એવાં પથ્થરનાં અસ્ત્રો વપરાયાં હોવાનું કહેવાય છે કે જે દેખીતી રીતે કોઇ પ્રકારની જબ્બર ગોફણો વડે ફેંકાયાં હોવાં જોઇએ.[૫૦] આ વિચિત્ર સિદ્ધાંતના અસ્તિત્વનું કારણ, નિઃશંકપણે, એ છે કે પોતાના ગુરુના સંદિગ્ધાર્થ મૃત્યુને વિષે, એમની પુનઃ પ્રતિષ્ઠા કરે એવી કોઈ પ્રકારની ઇંદ્રજાલનું આરોપણ કરવાની ગોસાલના શિષ્યોને જરૂર લાગી હતી.

ગોસાલના અવસાન સમયે બનેલા પ્રસંગોએ ભગવતી સૂત્રમાં[૫૧] નિવેદન કરેલ બીજા વિચિત્ર સિદ્ધાંતને ઉપસ્થિત કર્યો. એણે પોતાની તાવલી ઉશ્કેરણીમાં પોતાના હાથમાં એક કેરી ધારણ કર્યાનું અને કુંભારના મકાનમાં હમેશાં હાજર હોય છે એ માટીવાળા પાણીથી પોતાની જાતને ભીંજવ્યાનું કહેવાય છે. આ ક્રિયાએ 'ચાર પેયો અને ચાર અપેયો' (**चत्तारी पाणगाइं चत्तारी अपाणगाइं**) નો સિદ્ધાંત સુઝાડયાનું કહેવાય છે. (ચાર પેયો એટલે ચાર વસ્તુઓ જે પીણા તરીકે વપરાય અને ચાર અપેયો એટલે ચાર વસ્તુઓ જેનો સ્પર્શ કરાય પણ જે પીવાય નહિ) ચાર પેયો તે ગૌમૂત્ર,

૪૮. fols ૧૨૫૪, ૧૨૫૫, ઉ. દ. પરિશિષ્ટ ૧. પૃ. ૭. **૪૯.** પૃ. ૪. **૫૦.** નિ. સુ. હ. ૧૭ ff. **૫૧.** fol, ૧૨૫૫ ff: ઉ. દ. પરિશિષ્ટ ૧ પૃ. ૮, ૯,

Aho ! Shrutgyanam

હાથથી મેલું કરેલું પાણી, અર્થાત્ (કુંભારના વાસણમાંનું પાણી), સૂર્યથી તપેલું પાણી; અને ખડકમાંથી ટપકતું પાણી. ચાર અપેયો જે પાણીના ભોટવા, કેરીઓ, કઠોળ (શીંગો) વગેરે જેવી વસ્તુઓને ઉદ્દેશીને છે.

આજીવિકોના આચારો સંબંધી આપણી પાસે બૌદ્ધ મજ્ઝિમનિકાયમાં એક બોધપ્રદ કથન છે. ૩૬ મા પ્રકરણમાં[૫૨] નિગ્ગન્થ સંઘના સાધુ સચ્ચકને બુદ્ધસમક્ષ ગોસાલ મંખલીપુત્ત તથા એના મિત્રો નંદ વચ્છ અને કિસ્સ સંકિચ્ચના અનુયાયીઓમાં પળાતા આચારો સમજાવતો દર્શાવ્યો છે. આપણે જોયું છે[૫૩] તે પ્રમાણે આ ત્રણે પુરુષો આજીવિકોના આગેવાનો હતા. એમના અને એમના અનુયાયીઓના સંબંધમાં સચ્ચક કહે છે:—

'એઓ સર્વ વસ્ત્રોનો પરિત્યાગ કરે છે (**अचेलक**); એઓ સર્વ શિષ્ટાચારો (**मुत्ताचार**) કોરે મુકીને વર્તે છે. એઓ પોતાનો ખોરાક પોતાના હાથમાંથી ચાટી ખાય છે (**हत्थापलेखण**)[૫૪] એઓ ભિક્ષા માટે આવવાની વા રાહ જોવાની કોઈની હાક સાંભળતા નથી; તેઓ પોતાને માટે ખોરાક ખાસ તૈયાર થવા દેતા નથી; વા આમંત્રણથી જમવા જતા નથી. તેઓ જે વાસણમાં વા પેણામાં (Pan) ખોરાક રંધાયો હોય તેમાંથી–તેના મુખમાંથી–કોઇ ખોરાક સ્વીકારતા નથી. તેમજ ઉમરાની અંદર મુકાયેલો અથવા ખાંયણીઆમાં ખંડાવા મુકાયેલો (શબ્દશઃ-મુસળો વચ્ચે મુકાયેલો) અથવા ચૂલા ઉપર ચડેલો ખોરાક સ્વીકારતા નથી, તેમજ સહ ભોજન કરતા યુગલ પાસેથી અથવા સગર્ભા સ્ત્રી પાસેથી અથવા ધાવણા છોકરાવાળી સ્ત્રી પાસેથી અથવા પુરુષ સાથે સંભોગ કરતી સ્ત્રી પાસેથી તેઓ ખોરાક સ્વીકારતા નથી. તેમજ (દુકાળના સમયમાં) ક્ષીણ થયેલો ખોરાક તેઓ લેતા નથી. તેમજ પાસે કુતરૂં ઉભું હોય ત્યારે, વા માખો બણબણતી હોય ત્યાંથી તેઓ ખોરાક સ્વીકારતા નથી; મચ્છી વા માંસ તેઓ નહિ ખાય, તેમજ ચોખામાંથી બનાવેલો દારૂ વા મૈરેય (?) (મહુડાનાં ફુલો–Wood Jordia Jloria hunda) માંથી બનાવેલો દારૂ અથવા છોડાં છતાં જવની બનાવેલી ખાટી રાબ તેઓ નહિ પીએ. એમનામાંના કેટલાક કેવળ એક ઘરે જ ભિક્ષા માગે છે અને એક મુઠ્ઠી અન્ન જ સ્વીકારે છે. બીજા સાત ઘરે માગે છે અને સાત મુઠ્ઠી સ્વીકારે છે; કેટલાક એક અન્નોપહાર ઉપર ગુજારો કરે છે, બીજા બે અને વળી બીજા સાત અન્નોપહાર સ્વીકારે છે; કેટલાક કેવળ એક ટંક જમે છે, બીજા દર બે દિવસે માત્ર એકવાર ભોજન કરે છે; બીજા દર અઠવાડીએ માત્ર એકવાર જમે છે અને વળી બીજા દર પખવાડીએ કેવળ એક ભોજન લે છે; આ રીતે તેઓ ઉપવાસનાં નાના પ્રકારનાં વ્રતોનું પાલન કરે છે.'

દીઘનિકાયમાં[૫૫] આજીવિક આચારોનો આ અહેવાલ અચેલક કસ્સપના મુખમાં મુકેલો છે. આ બુદ્ધના છ પ્રતિસ્પર્ધીઓમાંના પુરણ કસ્સપ[૫૬] નામના ભિક્ષુનેતાનો ઉલ્લેખ હશે; અને એ એમ સૂચવે છે કે ઉક્ત આચારો એ છ એ પ્રતિસ્પર્ધી ભિક્ષુસંઘોને વત્તા ઓછા સામાન્ય હતા. અને આમ એમના સામાન્ય સિદ્ધાંતોની બાબતમાં જે કયારનું કહેવાઇ ચુકયું છે તેનું સમર્થન થાય છે. ગમે તેમ હોય મહાવીર અને એના નિગ્ગન્થોની બાબતમાં પ્રોફેસર યાકોબીએ જૈન ઉત્તરાધ્યયનના[૫૭] પોતાના ઉપોદ્ઘાતમાં એમના અને આજીવિકોના આચારોની એકરૂપતા દર્શાવેલી છે.

આજીવિક આચારો વિષેના સચ્ચકના કથનના સંબંધમાં એક બીજી બાબત ધ્યાનમાં લેવા જેવી છે. જ્યારે એણે પોતાનું કથન પુરૂં કર્યું, ત્યારે બુદ્ધે પૂછયું કે આવાં વ્રતો અનુસરતાં આજીવિકો ખરેખર

---

૫૨. મ. નિ. ૧. ૨૩૮; ન્યુ. રે ૧. ૩૭૬. ૫૩. ઉપર પૃ ૩૪૨ વળી હવે પછીનું પૃ ૩૫૧. ૫૪. પૃ. ૩૪ પાદનોંધ ૭૩. ૫૫ પૃ. ૧૬૬; ડા. ૨૨૭. ૫૬ પૃ. ૧૬ ૫૭. જૈ. સૂ. ૨. પૃ ૩૧

Aho ! Shrutgyanam

જીવન ટકાવી શકે છે કેમ ? સચ્ચકે તિરસ્કારથી જવાબ આપ્યો કે અલબત્ત, બીજા સમયોમાં તેઓ પુષ્કળ અને ઉત્તમ ખાન પાનેનો ભોગ કરે છે અને એમ શારીરિક શક્તિ પુનઃપ્રાપ્ત કરે છે અને જાત (શરીર) વધારે છે. ગોસાલ અને એના આજીવિકોની સચ્ચાઈની એમના સમકાલીનોમાં કેટલી કીર્તિ હતી તે વિષેનું આ સૂચક કથન છે. ઘણી ગંભીરતર સ્ત્રીવિષયક બાબતમાં ગોસાલના દંભની શંકા, જે એની અને મહાવીરની વચ્ચેના કલહનું કારણ હતું એમ માનવાને કારણ છે તેનું આ હકીકત કેવળ સમર્થન કરે છે.

'પરિકમ્મ'ના સપ્તમ સમૂહને લગતા એમના વિચિત્ર સિદ્ધાંત વિષે અને તેરાસિયો વા આજીવિકો વિષે જે કથન કરવામાં આવેલું છે એની શૈલી ઉપરથી એ સ્પષ્ટ છે કે તેઓ નિગ્ગન્થ સમાજના વર્તુલ બહારના લેખાતા ન હોતા. એમનો સિદ્ધાંત મોટા સમૂહને સ્વીકરણીય નહિ હોય, એ ફાંટાપાડુ પણ હોય પરંતુ એ મિથ્યાદૃષ્ટિવાળા તરીકે નિંદી કઢાયેલો તો નહોતો જ. એ એવું પ્રતિપાદન કરનાર ગોસાલની અને એનો અસ્વીકાર કરનાર એના સહચારી મહાવીરની વચ્ચે ભલે ઘર્ષણકારક નિવડયો હોય પરંતુ એ બે જણના પૂર્વ સહચારને સ્થાને જે સંપૂર્ણ વિશ્લેષ અને ગાઢ શત્રુતા સ્થપાયેલી આપણે જોઇએ છીએ તે એ (સિદ્ધાંતને) કારણે ન હોય. સ્પષ્ટપણે આ પરિવર્તન માટે તેરાસિય અથવા આજીવિક સિદ્ધાંત સાથે તત્ત્વતઃ અયુક્ત એવું, કોઈ ખાસ કારણ હોવું જોઇએ. આ કારણ શું હતું તે આપણને સ્પષ્ટતયા ક્યાંય કહેવામાં આવેલું નથી. બૌદ્ધો આ બાબત વિષે નિઃશબ્દ છે. આપણે જાણીએ છીએ કે બુદ્ધને ગોસાલ પ્રત્યે અણગમો હતો, પરંતુ એ એની સાથે કદિ અંગત પરિચયમાં આવેલા ન હોતા અને ગોસાલના મહાવીર સાથેના કલહમાં એમને વા બૌદ્ધોને ઝાઝો રસ પડેલો નથી. મહાવીરના સંબંધમાં મામલો જુદો હતો. એમના તપસ્વી જીવનના પૂર્વકાલીન વર્ષોમાં એ અને ગોસાલ સહચારીઓ હતા. પાછળનો ભેદ અને સંપૂર્ણ જુદાઇ જૈનોને મન અગત્યની બાબત બન્યા સિવાય રહી શકે નહિ. એમ છતાં, એમનાં શાસ્ત્રોમાં પણ—અત્યારે આપણે એમને જાણીએ છીએ ત્યાં સુધી—એ વિશ્લેષનું કોઇ સ્ફુટ કારણ લખાયેલું નથી. કેટલાંક આડકતરાં સૂચનો ઉપરથી આપણે અનુમાનો દોરવાનું રહે છે; અને આ સૂચનો પોતાની વ્યંજકતાના વિષયમાં જરા યે દુર્બોધ નથી. કુંભારણના મકાનમાં ગોસાલે પોતાનો મુખ્ય વાસ પસંદ કર્યાની વાત અને પોતાની એકરૂપતા ના કબુલ કરવાનો એનો પ્રયત્ન સ્પષ્ટપણે વિશ્લેષના સૈદ્ધાન્તિક નહિ પણ વ્યાવહારિક કારણનો, ગોસાલની વર્તણુકમાંના કોઇ કલંકિત સ્વરૂપનો નિર્દેશ કરે છે. આ સ્વરૂપ શું હતું તે સૂત્રકૃતાંગમાં[૫૮] પૂરતી રીતે સાફ સાફ દર્શાવેલું છે. 'મહાવીર જેવા સંસારત્યાગ કરનારાઓ મધ્યમાવસ્થાના માણસો છે અને શુદ્ધ કરેલું જળ જેમ પુનઃ અશુદ્ધ થાય છે તેમ તેઓ હજી કર્માવગુંઠનશીળ છે. જ્યારે ગોસાલ પોતે સંપૂર્ણ મુક્તિને પામેલો છે' એ ગોસાલના કથનનો ઉત્તર આપતાં મહાવીર ગોસાલ અને એના અનુયાયીઓની વર્તણુકનો નિર્દેશ કરતાં કહે છે કે 'આ માણસો બ્રહ્મચર્યવાળું જીવન ગુજારતા નથી.' અર્થાત્ આ હકીકત ગોસાલના વિવાદની સત્યાસત્યતા વિષે [કોઇ પણ] 'ડાહ્યા પુરુષ'ને સંતોષ આપવા પૂરતી હોવી જોઇએ. આ સંબંધમાં એ નોંધવા જેવું છે કે ભગવતી સૂત્રમાં[૫૯] મહાવીરને, ગોસાલનો પુનર્જન્મનો સિદ્ધાંત વક્રોક્તિમાં એને જ લાગુ પાડતા વર્ણવ્યા છે. યથાર્થ મુક્તિની અવસ્થામાં હોવાને બદલે ગોસાલને ખરી પૂર્ણતા પ્રાપ્ત કરતાં પહેલાં પોતાના અવસાન પછી કેવી રીતે પુનર્જન્મની અનંત ઘટમાળમાં થઇને પસાર થવાનું છે તે મહાવીરે ત્યાં દર્શાવ્યું છે. એ ઘટમાળનાં અનેક પગથીઆંનો એ નામ સાથે

૫૮. જૈ. સૂ. ૨. ૨૪૫. ૫૯. fols ૧૨૭૫-૧૨૯૧; ઉ. દ. પરિશિષ્ટ ૧, પૃ. ૧૧-૧૪

નિર્દેશ કરે છે. એમ છતાં સૂત્રકૃતાંગમાં એક વધુ વ્યંજક ફકરો આવે છે. એમાં ગોસાલના મહાવીર ઉપરના આક્ષેપો સંબંધી મહાવીરના અનુયાયી આર્દ્રકે એની સાથે જે વાદવિવાદ કરેલો તે આલેખાયેલો[૬૦] છે. એ આક્ષેપો તે આ: પહેલો આક્ષેપ મહાવીરની અસંગતતાનો અર્થાત્ પહેલાં એ એકાકી સાધુ તરીકે ભ્રમણ કરતો પણ પાછળથી એણે પોતાની જાતને અનેક સાધુઓથી પરિવૃત કરી; બીજો આક્ષેપ અસ્થાને કડકાઇ કરવાનો અર્થાત્ ગોસાલ જે ચતુર્યામનો અસ્વીકાર કરતો હતો તેનો મહાવીર આગ્રહ કરતા. અને ત્રીજો આક્ષેપ આધ્યાત્મિક અહં અને આધ્યાત્મિક ભીરૂતાનો. ચતુર્યામ નીચેની બાબતોને અનુલક્ષીને છે.

(૧) ઠંડુ પાણી પીવું
(૨) (રાંધ્યા વિનાનાં) બીજો ખાવાં
(૩) ખાસ તૈયાર કરેલી વસ્તુઓ સ્વીકારવી
(૪) સ્ત્રી સંભોગ કરવો

મહાવીર આ ક્રિયાઓને પાપપૂર્ણ લેખી એનો નિષેધ કરતા. પરંતુ ગોસાલ પ્રતિપાદન કરતો કે એ ક્રિયાઓ કરવામાં તપસ્વી કશું પાપ કરતો નથી. એના એ જ ચાર નિયમો એજ સૂત્રકૃતાંગમાં[૬૧] બીજે સ્થળે લખેલા છે જો કે નોંધવા જોગ ભેદસહિત. એ નીચે પ્રમાણેઃ—

(૧) ઠંડુ પાણી પીવું
(૨) (રાંધ્યા વિનાનાં) બીજો ખાવાં
(૩) ખાસ તૈયાર કરેલી વસ્તુઓ સ્વીકારવી
(૪) માંદા ભાઇને ગૃહીના વાસણમાં લવાયેલો ખોરાક ખવરાવવો

સ્ત્રી સંભોગની નૈતિક બાબતનું સ્થાન અહીં ગૃહી અનુયાયીના વાસણમાંથી ખાવાની વૈધિક બાબતે લીધું છે. આ ભેદનો અર્થ હવે પછી સમજાવવામાં આવશે. આ જગોએ માત્ર એટલું જ ધ્યાનમાં રાખવાનું છે કે તકરારનો કોઇ પણ વિષય સિદ્ધાંતને લગતો નથી; એ બધા વર્તણુકને લગતા છે.

ચર્ચાનો વિષય ધાર્મિક તપસ્વીઓની વર્તણુકનો હતો એ વિચારતાં સૌથી વિસ્મયકારક તકરારી મુદ્દો તે સ્ત્રીસંભોગ સંબંધીનો છે. વસ્તુ સ્થિતિ સમજવા માટે આપણે યાદ રાખવું જોઇએ કે મહાવીરના પૂરો ગામી પાર્શ્વે પોતાના અનુયાયીઓને માત્ર ચાર વ્રતો પાલન કરવાનો આદેશ આપ્યો હતો.[૬૨] (૧) અહિંસા, (૨) સુનૃત અથવા સત્ય, (૩) અસ્તેય (૪) અપરિગ્રહ વા અકિંચન અર્થાત્ પાર્શ્વે દયા, સત્ય, પ્રામાણિકતા અને નિર્ધનતાનાં વ્રતોનો આદેશ આપ્યો હતો. મહાવીરે આમાં બ્રહ્મચર્યનું[૬૩] પાંચમુ વ્રત ઉમેર્યું. આ ઉમેરો કરવાનું એમનું કારણ ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રમાં[૬૪] સમજાવેલું છે. મહાવીરની પૂર્વે એ અધ્યાહાર હતો કે બીજાં વ્રતોથી બ્રહ્મચર્ય ગર્ભિત રીતે આદિષ્ટ છે; પરંતુ વાસ્તવમાં એથી એમાં છૂટકબારી રહેલી હતી. વધૂ એક પ્રકારની મિલ્કત ગણાતી હોવાથી નિર્ધનતાના વ્રતાનુસાર લગ્ન નિષિદ્ધ હતું; અને પરદારગમન પ્રામાણિકતાના વ્રતથી નિષિદ્ધ હતું. પરંતુ વેશ્યાગમનનું છીંડુ ઉઘાડું હતું. એટલે એ માર્ગે પાર્શ્વે સ્થાપેલા નિગ્ગન્થ સમાજના બૌદ્ધિક વા નૈતિક નિર્બળતાવાળા સભ્યોમાં ધીરે ધીરે નીતિશૈથિલ્ય પેઠું. મહાવીરનું બ્રહ્મચર્યનું પંચમ વ્રત એ દોષની સુધારણાર્થે યોજાયેલું હતું. આ મુદ્દા ઉપર એમના સહચારી ગોસાલે પ્રતિરોધ કર્યો. એ, શિથિલ ટોળી પ્રત્યે સહાનુભૂતિ ધરાવતો હતો. અને યથાર્થ રીતે 'મુક્ત' થયેલો તપસ્વી કોઇ પાપ કરી શકે નહિ અને સ્વતંત્ર ઇચ્છા શક્તિનો

૬૦. જૈ. સૂ. ૨. ૪૦૯–૪૧૩. ૬૧. જૈ. સૂ. ૨. ૨૬૭. ૬૨. જૈ. સૂ. ૨. ૧૨૧. ૬૩. જૈ સૂ. ૨. ૯૧, ૧૦૯, ૧૩૯, ૨૦૪. ૬૪. જૈ. સૂ. ૨. ૧૨૨, ૧૨૩

Aho ! Shrutgyanam

અભાવ હોવાથી નૈતિક જવાબદારી છેજ નહિ એ બેવડી દલીલથી એણે પોતાના અને બીજાઓના નીતિશૈથિલ્યને નિર્દોષ ઠરાવ્યું હોય એમ જણાય છે. ખરેખર, માનવાને સારૂં કારણ છે કે ગોસાલની વર્તણુકની આ શિથિલતા એજ મહાવીરને પાંચમુ વ્રત દાખલ કરવાનો અને એમ ગોસાલને નીકળી જવાની ફરજ પાડવાનો પ્રસંગ આપ્યો. ઉપર ટાંકેલા ચાર નિયમોના બે ઉતારાઓમાં પહેલા ત્રણ નિયમો સામાન્ય છે જ્યારે ચોથાની બાબતમાં એ ઉતારા જુદા પડે છે. આ એ ત્રણ વ્રતોમાંની કોઇ વિશિષ્ટ વસ્તુનો નિર્દેશ કરે છે. હવે, સૂત્રકૃતાંગમાં[૬૫] એક સ્થળે ફક્ત ત્રણ ખાસ નિયમો (ઠંડુ પાણી, બીજ અને ખાસ તૈયાર કરેલો ખોરાક નહિ સ્વીકારવા બાબતના) જ લખેલા છે અને આચારાંગ સૂત્ર[૬૬]માં મહાવીરને આપણે નિયમત્રય **यामातिण्णि** આદેશનાર 'ડાહ્યા પુરુષ' તરીકે વર્ણવેલા જોઇએ છીએ. બીજી બાજુએ બૌદ્ધ દીઘનિકાયમાં[૬૭] મહાવીરને પોતાની જાતને 'ચાર નિયમોવાળા પુરુષ (**चतुंयाम**) તરીકે વર્ણવતા દર્શાવ્યા છે. આ તફાવતની સમજુતી જે સ્વતઃ સૂચવાય છે તે એ કે મહાવીરે પોતાના અનુયાયીઓને મૂળ માત્ર ત્રણ નિયમોનો આદેશ કરેલો અને પાછળના સમયમાં જ્યારે ગોસાલ જોડે એમને તકરાર થઇ ત્યારે એમણે ચોથો નિયમ દાખલ કરેલો. સ્ત્રીસંભોગને લગતો આ ચોથો યામ વાસ્તવમાં મહાવીરનું બ્રહ્મચર્યનું પંચમ વ્રત છે જે કયારનું ઉલ્લેખાઇ ચુક્યું છે. એ પ્રમાણે પાર્શ્વના ચાર યામોમાં કરેલો મહાવીરનો ઉમેરો છે. ચોથા યામની એટલે કે મહાવીરની યોજનાના પંચમ વ્રતની સ્થાપના માટેનો પ્રસંગ ગોસાલે જ પુરો પાડેલો એ અટકળ જો બરાબર હોય તો, એ મહાવીર સાથેના ગોસાલના વિશ્લેષનું ખરૂં કારણ એનું નીતિશૈથિલ્ય હતું એ વિધાન એથી ઘણે અંશે સાબીત થાય છે. સ્ત્રી સંસર્ગ વર્જવાના તપસ્વીના ધર્મ વિષે બોલતાં મહાવીરને ગોસાલ સંબંધે સૂત્રકૃતાંગમાં[૬૮] આમ કહેતા દર્શાવ્યા છેઃ 'સાધુઓની સભામાં એ પવિત્ર શબ્દો ઉચ્ચારે છે છતાં છૂપી રીતે એ પાપ કર્મો કરે છે; પરંતુ 'ડાહ્યા પુરુષો' જાણે છે કે એ પ્રપંચી અને 'બડો બદમાશ છે.' સ્ત્રી સંગને લગતી વર્તણુકના વિષયમાં ગોસાલના **બગભગત** વેડા જ મહાવીર અને એની વચ્ચેના તડનું કારણ હતું.

મુખ્ય કારણ આ હોય છતાં નિશંકપણે એ બે જણ વચ્ચેનું સંઘર્ષણ તીવ્ર કરનારાં બીજાં સહકારી કારણો હતાં. એ ઠંડા પાણી, અને રાંધ્યા વિનાનાં બીજોના વપરાશ તથા ખાસ તૈયાર કરેલા ભોજનના સ્વીકારને લગતા યામત્રય વિષેનાં હતાં. આ દેખીતી રીતે નજીવા વિષયોના મહત્વનો સાક્ષાત્કાર કરવા માટે આપણે યાદ રાખવું જોઇએ કે સર્વ ભારતીય તાપસોમાં કર્મવિરતિ એ વર્તનનો સર્વોપરિ નિયમ હતો, કારણ આત્માને જન્મ મરણની ઘટમાળમાં બાંધનારી વસ્તુ કર્મ છે. પરંતુ આ નિયમને એક અપવાદ હતોઃ અને તે એ કે મોક્ષ પ્રાપ્તિ કરાવનાર સમગ્ર વિધિનું પાલન દેહ વિના કોઇથી થઇ શકે નહિ એથી કરીને દેહ ટકાવી રાખવા માટે આવશ્યક હોય એવાં કર્મો[૬૯] અર્થાત્ અન્ન ભિક્ષા અને ભોજન અનપકારી છે અને બંધન કર્તા નથી.[૭૦] પ્રત્યેક વ્રત વા યામ આ નિયમ અને એના અપવાદને વગર કહ્યે વશ વર્તતું ગણાતું હતું. આમ, જ્યારે બધા એક મત હતા કે ખોરાકનો સંઘરો કરવાની મના છે પરંતુ પોતાનો રોજીંદા નિર્વાહ પુરતો ખોરાક માગવાની છૂટ છે ત્યારે કેટલાક તપસ્વીઓ એ છૂટને પણ અમુક યામોથી મર્યાદિત કરતા. રખેને કોઇ જીવની હિંસા થાય એ કાળજીથી મહાવીરે ઠંડા પાણીના અને પ્રાકૃતિક અવસ્થામાં પડેલાં બીજોના વપરાશની મના કરી; એકને ઉકાળ્યા પછી અને બીજાને રાંધ્યા પછી વા જીવરક્ષણની અન્ય ક્રિયાઓ કર્યા પછી જ ઉપયોગ કરવો. (એમ કહ્યું)

૬૫ જૈ. સૂ. ૨. ૩૧૩. ૬૬ જૈ. સૂ. ૧. ૬૩. ૬૭ પૃ. ૫૭; ડા ૭૪. ૬૮ જૈ. સૂ. ૨ ૨૭૩. ૬૯ સૂ. કૃ. ૨, ૬ § ૭ની ટીકામાં धर्म-आधार-शरीररक्षणाय, જૈ. સૂ. ૨, ૪૧૧ માં. ૭૦ જુઓ ભા. રિ૦ પૃ. ૯૪, ૯૯.

રપેને ભિક્ષાનો ખાસ અધિકાર અસંયમના પતનને પામે એ કાળજીથી એમણે વળી ભિક્ષુઓ માટે ખાસ તૈયાર કરેલા ભોજનના સ્વીકારનો પણ નિષેધ કર્યો. બીજા પક્ષે ગોસાલે આ યામત્રયનો ઈન્કાર કર્યો.

વળી, જ્યારે સર્વ તાપસો એક મત હતા કે દેહ ઉપરાંત કોઇ પણ અન્ય મિલ્કત તાપસે ન રાખવી જોઇએ ત્યારે મહાવીરે ભિક્ષાન્નના સ્વીકાર માટે ભિક્ષાપાત્ર રાખવાની છૂટ રાખી. આ છૂટના ન્યાયી-પણાનો ગોસાલે નિષેધ કર્યો, કારણ તાપસ એ હેતુ માટે પોતાના હાથનો ઉપયોગ કરી શકે અને કરવો જોઈએ. ખોરાક[૭૧] બે હાથ જોડીને બનાવેલા ખોબારૂપી પાત્રમાં સ્વીકારવો જોઈએ અને આ કુદરતી પાત્રમાંથી ચાટી જવો જોઇએ. આથી કરીને આ કડકતર નિયમ પાળનાર તપસ્વીઓ 'હાથ ચાટુ' (हत्थापलेखन)[૭૨]ના નામે ઓળખાતા. એમ છતાં જો માંદા સાધુ માટે અન્ન જોઇતું હોય. તો એ ગૃહીના વાસણમાં લઈ જવાનું હતું. મહાવીરે આ વર્તન વિષે વાંધો લીધેલો કારણ એથી ગૃહીના વાસણમાંના કોઇ જીવની હિંસા થવાનો ભય હતો[૭૩]

આ સંબંધમાં વસ્ત્રના પ્રશ્નના નિરૂપણનો ઉલ્લેખ કરવા જેવો છે. (પાર્શ્વ જેવા) કેટલાક તાપસો પ્રાવરણ વાપરવાની પરવાનગી આપતા; બીજા કેવળ કમી ન કરી શકાય એવા લઘુતમ કટિ બંધનની જ પરવાનગી આપતા; જ્યારે વળી બીજાઓ સદંતર નાગા ફરતા. મહાવીરના નિકટના અનુયાયીઓ[૭૪] વા નિગ્ગન્થો બીજા વર્ગમાં આવતા જણાય છે. તદનુસાર ગોસાલે એમને 'એક ચિંદરડા વાળા માણસો' एकसाटक કહ્યા છે અને પોતાના લોહિત વર્ગમાં મુકયા છે.[૭૫] પોતાના નિગ્ગન્થોને લંગોટ વસ્ત્રની છૂટ આપતાં મહાવીરે પોતાને માટે સર્વ વસ્ત્રનો પરિત્યાગ કરેલો હતો. આ બાબત વિષે એમની અને ગોસાલની વચ્ચે કંઇ ભેદ ન હોતો; બન્ને અચેલક અથવા 'નવસ્ત્રા' વર્ગના ભિક્ષુઓ હતા. ખરેખર, એ પ્રાયઃ સંભવિત છે કે આ બાબતને વિષે મહાવીર ઉપર ગોસાલનો પ્રભાવ પડયો હોય. કારણ જૈન ધર્મશાસ્ત્રોમાં આપણને કહેવામાં આવ્યું છે કે પ્રથમ જ્યારે મહાવીરે તપસ્વી જીવનનો અંગીકાર કર્યો ત્યારે એ પાર્શ્વના સવસ્ત્રા સમાજમાં દાખલ થયા હતા; એ જીવનના બીજા વર્ષમાં જ એમને ગોસાલનો સમાગમ થયો. લગભગ તેજ કાલે એમણે નિતાંત નગ્નતાના કડકમાં કડક પાલનનો સ્વીકાર કર્યો. એ સંયોગ સૂચવે છે કે મહાવીરે એ આચારને ગોસાલ પાસેથી અંગીકાર કર્યો અને ગોસાલના દંભે કરીને પાછળથી છેવટનો વિશ્લેષ ઉત્પન્ન ન હોતો થયો ત્યાં સુધીના એમના સાહચર્યની ગાંઠ બનેલી તે આજ બીના. એમ છતાં એ સંભવિત જણાય છે કે નિગ્ગન્થ સમાજમાં સામાન્ય નિયમ લંગોટી પહેરવાનો હતો અને નિતાન્ત નગ્નતાનો સંપ્રદાય ગોસાલની ટોળી જેણે પરિક્કમના[૭૬] સપ્તમ સમૂહમાં રચેલ આજીવ વિષેનો ગોસાલનો સિદ્ધાંત અંગીકૃત કર્યો હતો અને જે એથી કરીને આજીવિક તરીકે ઓળખાતી હતી, તેનામાં જ પ્રવર્તમાન હતો.

આ મુદ્દા ઉપર બૌદ્ધ વિનયપિટકમાં[૭૭] એક બોધદાયક વાર્તા કહેલી છે. એક સમયે જ્યારે બુદ્ધ સાવત્થીમાં રહેતા હતા ત્યારે એમને અને એમના ભિખ્ખુઓને વિશાખા નામની એક ધનવાન સ્ત્રીએ પોતાને ઘેર ભોજન લેવાનું આમંત્રણ કર્યું હતું. ભોજન તૈયાર થતાં એણે પોતાની દાસીને અતિથિઓ બોલાવી લાવવા મોકલી. રસ્તામાં વરસાદનું એક સખત ઝાપટું પડયું અને બુદ્ધના નિવાસે પહોંચતાં એણે જોયું તો ભિખ્ખુઓ નવસ્ત્રા થઇ વરસાદની મઝા માણતા હતા. કંઇ ભૂલ થયેલી ધારીને એ પોતાની શેઠાણીને ખબર આપવા પાછી ગઇ અને કહ્યું કે મને દર્શાવવામાં આવેલી જગાએ કોઈ ભિખ્ખુઓ નથી; ત્યાં તો આજીવિકો છે. અલબત્ત આ ગેરસમજુતી દૂર કરવામાં આવેલી; પરંતુ સાવત્થીમાં

૭૧ જૈ. સૂ. ૧, ૫૭ પાદનોંધ ૨, અને ૨, ૨૬૭, પાદનોંધ ૨. ૭૨ દી૦ નિ૦ ૧૬૬; ડા ૨૨૭; ૭૩ જૈ. સૂ. ૨. ૩૦૪. ૭૪ જૈ. સૂ. ૧. ૭૩. ૭૫ પૃ. ૧૯. ૭૬. પૃ. ૨૧. ૭૭. પૃ. ૧ ૨૫૧; વિ. પિ. તરજુમો ૨. ૨૧૬ ff

બનેલો બનાવ બતાવે છે કે આજીવિકો નગ્ન ભિક્ષુઓ હતા અને ગોસાલના અનુયાયીઓ હતા, જેણે કે આપણે જોઈ ગયા તે પ્રમાણે મહાવીરથી છૂટા પડયા પછી પોતાનું મુખ્ય મથક સાવત્થીમાં થાપેલું હતું. ગોસાલે પાડેલા મનુષ્યના ષડ્‌વર્ગોથી[૭૮] આ જ મુદ્દો દૃષ્ટાંત સહિત સમજાવવામાં આવ્યો છે. એમાં શુક્લાભિજાતિ એટલે પોતાની જ ટોળી–નગ્ન આજીવિકો–એમ બતાવવામાં આવ્યું છે. જ્યારે લોહિતાભિજાતિના નમુના તરીકે એક ચીંદરડાવાળા નિગ્ગન્થો અર્થાત્ મહાવીરના પક્ષકારોને ગણાવ્યા છે. એમ છતાં, નિતાંત નગ્નતા એ નિગ્ગન્થોમાં આખા આજીવિકપક્ષનું ચિહ્ન હોવું જોઇએ; કેવળ ગોસાલ સાથે નોખા પડી ગયેલા અંશનું જ નહિ કારણ, હવે પછી જણાશે એમ પાછળના કાળમાં દિગંબર સંપ્રદાય ઉત્પન્ન થયો[૭૯] તે નિગ્ગન્થો સાથેનો સંબંધ રાખી રહેનાર બાકીના આજીવિક પક્ષરૂપી બીજમાંથી.

ગોસાલે મહાવીર સામે કરેલા બીજા બે આક્ષેપો વિચારવાનું હવે બાકી રહે છે. આમાંના પહેલામાંનો ઉલ્લેખ તદ્દન સ્પષ્ટ નથી. મહાવીર સામે આક્ષેપ કરેલો છે કે એ પ્રથમ એકાકી સાધુ તરીકે અટન કરતા પણ પાછળથી એમણે ‘પોતાની જાતને અનેક સાધુઓથી પરિવૃત કરી’[૮૦] બીજા પક્ષે ગોસાલ ‘એકાકી અને નિઃસંગ રહેવા’ નો[૮૧] દાવો કરે છે, એમ છતાં, વાસ્તવમાં, ગોસાલ પણ આજીવિકો તરીકે ઓળખાતા અનેક સાધુઓથી પરિવૃત હતો. એથી કરીને સ્પષ્ટ છે કે નેતા અંગત શિષ્યોના સાથમાં પર્યટન કરે અથવા રહે એ દોષ નહોતો ગણાતો. ગોસાલની નજરે, મહાવીરની કાર્યપ્રણાલિ સામેની એની ફરિયાદનું મુખ્ય કારણ એ હોવાનું જણાય છે કે બુદ્ધની જેમ મહાવીરે સાધુસંઘની સ્થાપના કરી. મહાવીરના અનુયાયીઓ નાના વા મોટા સમૂહોમાં વિવિધ સ્થળોએ વિખરાયેલા હતા. પરંતુ એ બધાને એક ધર્મ અને એક નેતા (મહાવીર) વાળા સમાજ તરીકે સંગઠિત કરવામાં આવ્યા હતા. ગોસાલના અનુયાયીઓનો નાનો સમૂહ હતો અને એ સર્વદા પોતાના અગ્રેસરના સાથમાં રહેતો. ખરેખર, એવીજ સંદિગ્ધ પ્રકૃતિના અન્ય સાધુસમૂહો હતા જેમનું નામ પણ આજીવિકો હતું, પરંતુ તેઓ જુદા જુદા આગેવાનો સાથે જુદા રહેતા હતા. એ આગેવાનોમાંના બેનાં નામ, બૌદ્ધ ધર્મશાસ્ત્રોમાં[૮૨] લખાયેલાં છે તે પ્રમાણે કિસ્સ સંકિચ્ચ અને નંદ વચ્છ છે. પરંતુ આ અનિશ્ચિત પ્રકારના આજીવિકો, જેમને પાછળના આજીવિક જથાના સાધુઓથી જુદા જાણવા જોઇએ[૮૩] તેમનો નિગ્ગન્થો (જૈનો) અને બૌદ્ધોની જેમ સંગઠિત સંઘ ન હતો. સ્પષ્ટ છે કે ગોસાલ અને એની વિચાર સરણિના અન્ય પુરુષોના અનીતિમય આચાર વિચારો વિસ્તૃત જાહેર સંઘની સ્થાપનામાં કુદરતી વિઘ્નની ગરજ સારે એમ છે. આ બાબતમાં પોતાની અશક્તિના ભાને કરીને જ પોતાના સફળતર પ્રતિસ્પર્ધી સામેના ગોસાલના આક્ષેપો પ્રેરાયેલા હોય એમ પણ હોય.

મહાવીર સામેના બે આક્ષેપોમાંનો બીજો એના ઉપર આધ્યાત્મિક અહમ્ અને ભીરુતાનો આરોપ મુકે છે. આ આક્ષેપમાં મનુષ્યની ત્રણ આધ્યાત્મિક અવસ્થાઓના[૮૪] ગોસાલના સિદ્ધાંતનો ઉલ્લેખ છે. એ પ્રમાણે મહાવીર વચલી અવસ્થામાં હતા; એમનો આત્મા કર્મથી અલિપ્ત હોવા છતાં યથાર્થ રીતે મુક્ત નહોતો કારણ મારી પદ્ધતિ જ એકલી બરાબર છે અને મારાથી જુદા પડનારા બધા તિરસ્કારને પાત્ર છે એમ વિચારવામાં મહાવીર આધ્યાત્મિક અહંકારથી ભરેલો હતો.[૮૫] એ આધ્યાત્મિક ભીરુતાથી પણ ભરેલો હતો. કારણ પ્રાકૃત જનતામાં ધર્માન્તર કરનારાઓ મેળવવા એ આતુર હતો; પરંતુ પોતાના

૭૮ પૃ. ૧૯. ૭૯ પૃ. ૪૭. ૮૦ જૈ. સૂ. ૨. ૪૦૯–૪૧૦. ૮૧. જૈ. સૂ. ૨, ૪૧૧. ૮૨ મ. નિ. ૧ ૨૩૮, ૫૨૪; અં, નિ, ૩. ૩૮૪. ૮૩ હવે પછીનું પૃ. ૫૫. ૮૪ પૃ. ૨૨. ૮૫. જૈ. સૂ. ૨. ૪૧૧§§ ૧૧–૧૪ અને સૂ. ૬૦ ઉપરની શીલાંકની ટીકા ૧. ૧, ૩ § ૧૨. જૈ. સૂ. ૨. ૨૪૫

મતનું ખંડન કરે એવા પંડિતોને મળતાં એ ડરતા હતા.[૮૬] મહાવીરનો પક્ષકાર જવાબ આપે છે કે પ્રથમ, મારા ગુરુ બીજાઓ કરે છે એમ પોતે જેને સત્ય માને છે એનો કેવળ બોધ કરે છે અને પાખંડી મતોનો તિરસ્કાર કરતાં છતાં એઓ એ મતો ધરાવનારને તિરસ્કારતા નથી બીજું એઓ પ્રામાણિક અને યોગ્ય પ્રતિપક્ષીઓને મળવાની કદિ ના પાડતા નથી અને પોતાના મત માટે લોકોનાં દિલ જીતવાનો પ્રયત્ન કરતાં જાતે દંભરહિત છે.

૪. આજીવિકોનો ઈતિહાસ—આજીવિકોનો પૂર્વતમ ઉલ્લેખ ગયા પાસેના બર્બર નામના ડુંગરા ઉપરની ખડકમાં કોતરી કાઢેલી બે ગુફાઓની દિવાલો ઉપર કોતરેલા એક ટુંકા લેખમાં આવે છે. એમાંનાજ લખાણ પ્રમાણે એ મહારાજા અશોકના રાજ્યના તેરમા વર્ષમાં અર્થાત્ ઇ. સ. પૂર્વે ૨૫૧ ની સાલમાં કોતરાયેલો છે. તે આમ છે. 'રાજા પ્રિયદસ્સીએ, પોતાના રાજ્યના તેરમા વર્ષમાં આ ગુફા આજીવિકોને અર્પણ કરી'

બીજો ઉલ્લેખ એના એ જ મહારાજા અશોકના સુવિખ્યાત શાસન-સ્તંભોમાંના સાતમા ઉપર ઈ. સં. પૂર્વે ૨૩૬ એટલે કે એના રાજ્યના ૨૮ મા વર્ષમાં કોતરેલા લેખ[૮૭]માં આવે છે. એ આમ છે; 'મેં યોજ્યું છે કે મારા ધર્મમહામાત્રો બૌદ્ધ સંઘના તેમજ બ્રાહ્મણોનાં આજીવિકોનાં, નિગ્ગન્થોના અને વાસ્તવમાં જુદા જુદા તમામ પાખંડોનાં કાર્યોમાં વ્યાપ્ત થઇ જશે.'

એક બીજો પૂર્વકાલીન ઉલ્લેખ, નાગાર્જુનની ડુંગરા ઉપરની ખડકમાંથી કોતરી કાઢેલી ત્રણ ગુફાઓની દિવાલો ઉપર અશોકના ઉત્તરાધિકારી દશરથના રાજ્યના પ્રથમ વર્ષમાં અર્થાત્ ઇ. સ. પૂર્વે ૨૨૭ ની સાલમાં કોતરાયલા શિલાલેખમાં[૮૮] આવે છે. એ આમ છે. 'આ ગુફા મહારાજા દશરથે ગાદીએ આવ્યા પછી તરત જ, ચંદ્ર સુરજ તપે ત્યાં સુધી નિવાસસ્થાન તરીકે વાપરવા માટે સંમાન્ય આજીવિકોને અર્પણ કરી હતી.'

આ પછી ઇ. સ. ના છઠ્ઠા સૈકા પર્યંત આજીવિકોનો કોઇ ઉલ્લેખ આપણને મળતો નથી. એ સૈકામાં, પ્રાયઃ ઇ. સ. ૫૫૦ ની સાલમાં વરાહમિહિર પોતાના બૃહજ્જાતક[૮૯] અને લઘુજાતક[૯૦] નામના જ્યોતિષના ગ્રંથોમાં સાત પરિવ્રાજક વર્ગોમાંના એક તરીકે એમનું નામ લે છે. એ સાત તે આ: (૧) શાક્યો વા રક્તપટો (રાતા ઝભ્ભાવાળા પુરૂષો), (૨) આજીવિકો વા વ્યાખ્યાકાર ભટ્ટોત્પલ[૯૧] સમજાવે છે એમ એકદંડીઓ; (૩) નિર્ગન્થો વા જૈન સાધુઓ, (૪) તાપસો વા વન્યાશનો (વનફળ ખાનારા) અર્થાત વાનપ્રસ્થ તરીકે રહેતા ત્રીજા આશ્રમવાળા બ્રાહ્મણો; (૫) ભિક્ષુઓ અર્થાત્ ઘરબાર વગર પરિવ્રાજક તરીકે ફરતા અને ભાષ્યકારના કહેવા પ્રમાણે મીમાંસા પદ્ધતિને અનુસરનારા ચતુર્થાશ્રમના બ્રાહ્મણો (૬) વૃદ્ધ શ્રાવકો; અને (૭) ચરકો, જે પણ બે પ્રકારના પરિવ્રાજક સન્યાસીઓ હોવાનું જણાય છે. વરાહ મિહિર કહે છે કે મનુષ્ય પોતાની કુંડળીના સૂચન અનુસાર આમાંના એકાદા વર્ગમાં દાખલ થવા નિર્માયેલો છે એ હકીકત ઉપરથી સ્પષ્ટ છે કે એના સમયમાં આ સાતે વર્ગના તપસ્વીઓ અને એથી કરીને આજીવિકો પણ વાસ્તવિક રીતે અસ્તિત્વમાં હતા.

નવમા સૈકામાં આજીવિકોનું અસ્તિત્વ ચાલુ હતું એ વિષે આપણી પાસે મહાન જૈન ટીકાકાર શીલાંકની[૯૨] સાક્ષી છે અને આજીવિકોની અને દિગંબર જૈનોની એકરૂપતાની રસ પડે એવી હકીકત અહીં આપણને પહેલીવાર મળે છે. મહાવીરના ચતુર્યામોને વિષે સૂત્રકૃતાંગમાં[૯૩] કેટલાકોએ લીધેલા

૮૬ જૈ. સુ. ૨. પૃ. ૪૧૨, §§ ૧૫–૧૮ અને પૃ. ૪૧૩ §§ ૧૯–૨૫ ૮૭, ઇ, એ, ૨૦, ૩૬૧ ff; સ્મી. એ ૧૫૫; ૮૮ ઇ૦ એ૦ ૨૦, ૩૬૧, ff સ્મી૦ અ૦ ૧૪૫: ૮૯. ૧૫. ૧, ૯૦. ૯. ૧૨, ૯૧ આશરે ઇ. સ. ૯૫૦ ૯૨. આશરે ઇ. સ. ૮૭૬ ૯૩. જૈ. સૂ. ૨. ૨૬૭

Aho ! Shrutgyanam

વાંધા બાબત ટીકા કરતાં શીલાંક લખે છે કે ત્યાં આજીવિકો વા દિગંબરોનો ઉલ્લેખ છે. એના એ જ ગ્રંથના બીજા ફકરા[૯૪] ઉપરની પોતાની ટીકામાં એ ગોસાલના અનુયાયીઓને અર્થાત્ આજીવિકોને અને તેરાસિયોને (**सं. त्रैराशिको**) એકરૂપ જણાવે છે એ જોતાં ફલિત થાય છે કે શીલાંકના મતે ગોસાલના અનુયાયીઓ, આજીવિકો, તેરાસિયો અને દિગંબરો ત્રણે એક જ પ્રકારના પરિવ્રાજકો હતા.

દશમા સૈકામાં આજીવિકો અને દિગંબરોની એકરૂપતાની આપણને વધુ સાક્ષી મળે છે. હલાયુધ[૯૫] પોતાના અભિધાનરત્નમાલા[૯૬] નામના શબ્દકોષમાં શ્વેતાંબર અને દિગંબર અથવા, એ કહે છે તે પ્રમાણે, શ્વેતવાસ અને દિગ્વાસ નામના બે જૈન વિભાગોનાં નામોની મોટી સંખ્યા ગણી બતાવે છે. એ કહે છે કે દિગ્વાસ આજીવના (જે માત્ર આજીવિકનું સંક્ષેપરૂપ જ છે.) નામે પણ ઓળખાય છે.

અંતમાં ૧૩મા સૈકામાં અમુક દેવાલયોના લખાણોનાં આપણને ઉલ્લેખ મળે છે કે આજીવિકો એ કાળમાં એક સમૂહ તરીકે દક્ષિણ ભારતમાં યથાર્થ રીતે અસ્તિત્વમાં હતા. આ લખાણો તે વિરિંચિપુરમ્ પાસેના પોયર્ગે આગળ આવેલાં પેરુ માલના દેવાલયની દિવાલો ઉપરના લેખો.[૯૭] એ ઇ સ. ૧૨૩૮, ૧૨૩૯, ૧૨૪૩, ૧૨૫૯માં ચોલરાજા રાજે મંદિરને કરેલાં ભૂમિદાન અને આજીવિકો ઉપર નંખાયેલા કરવેરા, ને ઉદ્દેશીને છે. આ શિલાલેખોના સંપાદકે આધુનિક તામિલ શબ્દકોષોના આધારે આ આજીવિકો એટલે જૈનો એમ જણાવેલું છે. આ, અલબત્ત જૈનોનો દિગંબર સમાજ જ સમજવાનો. કારણ, જેનું મુખ્ય મથક એ કાળમાં દક્ષિણ ભારતમાં હતું અને જેનાં સંસ્થાનો અદ્યાપિ પર્યંત ત્યાં જોવામાં આવે છે એ આ જ સમાજ.[૯૮] તામિલ શબ્દકોષોમાંનાં તદ્વિષયક લખાણો તામિલ સાહિત્યના[૯૯] અને સંભવતઃ આધુનિક વાપરના આધારે કરાયેલાં છે. પ્રાચીનતર તામિલ સાહિત્યમાં આજીવિક શબ્દ જૈનો અર્થાત દિગંબરોના અર્થમાં વપરાયલો છે એ નિશ્ચિત છે. એથી કરીને, નિઃશંકપણે ઈ. સ. ના છઠ્ઠા સૈકામાં જ્યારે વરાહમિહિરે એ શબ્દ વાપર્યો ત્યારથી એ નામથી જૈનોનો દિગંબર સમાજ સંજ્ઞિત થયેલ છે.

વરાહમિહિરના એ શબ્દપ્રયોગ પરત્વે એ નોંધવાનું છે કે એનો વ્યાખ્યાકાર ભટ્ટોત્પલ (આશરે ઈ. સ. ૯૫૦) એમ જણાવે છે કે આજીવિકો એટલે એકદંડીઓ. કાલકાચાર્ય નામના જૈન લેખકની એણે ટાંકેલી એક પ્રાકૃત ગાથાને આધારે આ એક રૂપતા (આજીવિકો-એકદંડીઓ) દર્શાવેલી છે. એ લેખક જે ઇ. સ. ૪૫૦ની આસપાસમાં અર્થાત્ વરાહમિહિર પૂર્વે પ્રાયઃ એક સૈકા ઉપર થઇ ગયો તે તપસ્વીઓના સપ્તવર્ગોનાં નામ આપે છે, જેમાં અપવાદ એટલો છે કે આજીવિકોને સ્થાને એ એકદંડીઓ લખે છે. ભટ્ટોત્પલ પોતે ઉમેરે છે[૧૦૦] કે એકદંડીઓ અથવા આજીવિકો નારાયણ અર્થાત્ વિષ્ણુના ભક્તો છે. બીજા પક્ષે શીલાંક અન્ય સંબંધમાં એકદંડીઓ વિષે બોલતાં એઓ શિવના ભક્તો[૧૦૧] હોવાનું જણાવે છે. આ દેખીતો વિરોધ ઉપરથી સ્પષ્ટ છે કે આ બન્ને વ્યાખ્યાકારોના મનમાં હતો તે અદ્યાપિ પર્યંત દંડી તરીકે ઓળખાતો તપસ્વી વર્ગ જ. આ તપસ્વીઓ સામાન્યરીતે હિંદુઓના શૈવ સંપ્રદાયના હોવાનું લખાય છે; પરંતુ એઓ ખઇ પૂછો તો ઉદારમતવાદી હોય છે કારણ એઓ નારાયણ તરીકે માત્ર શિવનું જ નહિ પરંતુ વિષ્ણુનું પણ આહ્વાન કરે છે. એઓ ટોચે લાલાશ પડતા રંગના કપડાનો કકડો લગાડેલો દંડ ધારણ કરે છે અને કેવળ લંગોટી પહેરે છે વા સંપૂર્ણતઃ નગ્ન ફરે છે. એમને એકલ જીવન ગુજારવાની આજ્ઞા હોય છે. એઓ વેદાંતી મતો ધરાવે છે;[૧૦૨] અને જ્ઞાતિનો વા

---

૯૪ જૈ, સૂ, ૨, ૨૪૫. **૯૫** આશરે ઇ. સ. ૯૫૦. **૯૬** ૨. ૧૮૯, ૧૯૦. **૯૭** સા. ઇ. ઇન્સ્ક્રીપશન્સ. ૨. ૮૮, ૮૯, ૯૨, ૧૦૮ **૯૮** ઇ. એ. ૩૨. ૪૫૯, જ. ઓ. સો. ૩૮ ૧૭. **૯૯** tesce ડો. પોપ **૧૦૦** ટ્રા. ક્રો. ઓ. ૩. ૨ પૃ. ૫૫૩. **૧૦૧** જૈ. સૂ. ૨. ૨૪૫, ૪૧૭. **૧૦૨** ઓં. ગે. ૯. ભા. ૨. ૫૪૨.

બીજી જ્ઞાતિનો કોઇપણ માણસ એમનામાં જોડાઇ શકે છે. એમને દશનામી દંડીઓ સાથે સેળભેળ ન કરી દેવા જોઇએ. દશનામી દંડીઓ તો સરખામણીમાં આધુનિક વર્ગના સન્યાસીઓ છે. સુધારક શંકરાચાર્ય અને એમના શિષ્યોએ ઇ. સ. ના ૯મા સૈકામાં એમની તો સ્થાપના કરી, એ મઠવાસી છે અને સંઘપ્રવેશની બાબતમાં જ્ઞાતિ ઉપર કેટલુંક ધ્યાન આપે છે.[૧૦૩]

ગોસાલ, મંખલીપુત્ત વા મંખલી (**मस्करिन्**) અર્થાત્ વાંસદંડ રાખનાર પુરુષ કહેવાય છે એ હકીકત ઉપરથી સ્પષ્ટ છે કે મૂળે એ એકદંડી (વા દંડી) સન્યાસીના વર્ગનો હતો; અને જો કે પાછળથી એ મહાવીર સાથે ભળ્યો અને એની પદ્ધતિ સ્વીકારી તોપણ એ પોતાના કેટલાક વિશિષ્ટ મતો અને પોતાની પ્રાચીન વિશિષ્ટ સંજ્ઞા, વાંસદંડ, પણ રાખી રહ્યો હતો. આ ભેદોને લીધે નિગ્ગન્થ સમાજમાંની એની ટોળી તેરાસિય વા આજીવિક અને દેખીતી રીતે એકદંડીના નામે પણ ઓળખાતી હતી.[૧૦૪] ત્યાર પછીના કાળમાં ગોસાલના અસાધુ જીવનની ખબર પડતાં મહાવીરે એ કારણને લીધે એને નિગ્ગન્થ સમાજમાંથી બહિષ્કૃત કર્યો. એમ જણાશે કે એની સાથે આજીવિક પક્ષમાંના કેટલાક બીજા માણસો જે એના ગાઢ મિત્રો હતા અને એના પાપાચારોના ભાગી હતા. તેમને પણ બહિષ્કૃત કરવામાં આવ્યા હતા. બૌદ્ધધર્મશાસ્ત્રો આમાંના બે મિત્રોનાં નામ આપે છે, કિસ્સ સંકિચ્ચ અને નંદવચ્છ,[૧૦૫] આ આ ત્રણ પુરુષોએ, મહાવીરથી જુદા પડયા પછી સમવિચારના નાના નાના સમૂહોની સરદારી કરીને સાવત્થીમાં સરખામણીમાં એકાંત જીવન ગુજાર્યું હોય એમ જણાય છે. પરંતુ એમ માનવાને કશું કારણ નથી કે આ કાળાં મેંઢાંને કાઢી મુકયા પછી નિગ્ગન્થ સંઘમાં આજીવિકો વા તેરાસિયોનું પક્ષ તરીકેનું અસ્તિત્વ મટી ગયું હતું. વાસ્તવમાં, જે કાંઈ પુરાવો મોજુદ છે તે એથી ઉલટી દશા સૂચવે છે. આમ, આ સંબંધમાં ‘ ચતુર્યામ ’ના બે અહેવાલો વચ્ચેનો ભેદ જે આપણે કયારનો નોંધી ચુકયા છીએ[૧૦૬] એ ખાસ મહત્વનો છે. સ્ત્રીસંગના દોષનો ઉલ્લેખ એ અહેવાલમાં આવે છે કે જે પ્રધાનતરપણે ગોસાલ અને એના પક્ષ જોડે સંબંધ ધરાવે છે, જ્યારે બીજો અહેવાલ જેમાં એની જગાએ ગૃહીના પાત્રના વપરાશનો ઉલ્લેખ છે. તે ટીકાકાર શીલાંકના કથનાનુસાર આજીવિકો વા દિગંબરો સંબંધીનો છે. એ બે અહેવાલોમાંનો ભેદ એમ સૂચવે છે કે નિગ્ગન્થ સંઘમાં આજીવિક પક્ષનો એક એવો વિભાગ હતો કે જે ગોસાલના તડના નીતિવિરોધો સાથે સામેલ ન હતો. વાસ્તવમાં આજે પણ દિગંબરો એ ચતુર્યામમાં વિવક્ષિત થતા મુદ્દાઓને વિષે શ્વેતાંબરોથી જુદા પડે છે. આમ ઠંડાં પાણી અને કુદરતી બીજોના ઉપયોગ સંબંધીના યામોના ઉદ્દેશ કોઇપણ પ્રકારના જીવ પ્રત્યેની આત્યંતિક કાળજીને દઢીભૂત કરવાનો હતો; પરંતુ દિગંબરો ‘ પ્રાણીઓના જીવને વિષે માત્ર મધ્યમસરની કાળજી રાખનારા ’ કહેવાય છે જ્યારે શ્વેતાંબરો અતિકાળજી રાખનારા કહેવાય છે.[૧૦૭] ચતુર્થ યામના સંબંધમાં બન્ને મતવાળા બ્રહ્મચર્યવ્રતનો આગ્રહ કરતાં છતાં ભિક્ષાપાત્રના અધિકારના સંબંધમાં ભિન્ન અભિપ્રાયો ધરાવે છે. ભિક્ષાપાત્ર એ શ્વેતાંબર સાધુઓના નિયમિત ઉપકરણસંભારનું અંગ છે જ્યારે દિગંબરોને એ રાખવાની પરવાનગી નથી; એમણે પોતાની ભિક્ષા પોતાના ખોબામાં જ સ્વીકારવાની હોય છે.[૧૦૮] નવસ્ત્રાપણાની બાબતમાં એ બે સંપ્રદાયો વચ્ચેનો ભેદ એમના નામોથી પૂરતી રીતે સૂચવાયેલો છે.

નિગ્ગન્થ સમાજમાં પાછળથી ફરી ઉભળેલા તેરાસિયોના ઝઘડાથી, અને દિગંબરોમાં આજ દિન સુધી દંડની વિશિષ્ટતાસૂચક જે સંજ્ઞા રખાઇ રહી છે એથી એ જ દિશામાં વધુ પુરાવો મળે છે.

---

૧૦૩ J. B. A. S.૫૯. ૫૫, પાદનોંધ, **૧૦૪** પૃ. ૨૨. **૧૦૫** પૃ ૨૯ **૧૦૬** પૃ. ૩૬ **૧૦૭** ઇ. એ. ૩૨. ૪૬૦. **૧૦૮**. ગોમન, પૃ. ૧૫૧.

Aho ! Shrutgyanam

આપણને કહેવામાં આવેલું છે કે પ્રવેશ પ્રસંગે "જૈનધર્મશાસ્ત્રોમાં જેની અનુજ્ઞા અપાયેલી છે એવી વસ્તુઓ અર્થાત્ પાંચપુટ લાંબો એક કાળો દંડ વગેરે નવા સાધુને આપવામાં આવે છે અને એ સાધુ વા (પાકો સાધુ) હમેશાં તે દંડ પોતાની પાસે રાખે છે."[૧૦૯]

ત્યારે મામલો આમ આવી રહ્યો છે: એક દંડી એ અમુક તાપસવર્ગનું સામાન્ય નામ છે. એ વર્ગની બે પ્રશાખાઓ છે, ચુસ્ત શૈવ દંડીઓ અને પાખંડી જૈન આજીવિકો વા દિગંબરો. એકદંડી શબ્દથી જૈન લેખક કાલકાચાર્ય, અલબત્ત, દિગંબરો સૂચવવા માગતો હતો; અને વરાહમિહિરે એટલા માટે એની જગાએ ગેરસમજનો સંભવ દૂર કરવા નિશ્ચિતતર આજીવિક શબ્દ મુકયો. ચુસ્તધર્મિ વ્યાખ્યાકાર ભટ્ટોત્પલે વસ્તુસ્થિતિની ખોટી સમજથી પાખંડ મતવાદી આજીવિકોને ચુસ્તધર્માનુગામી દંડીઓ સાથે સેળભેળ કરી દીધા.

ભદ્રબાહુ જે સંયુક્ત નિગ્ગન્થ વા જૈન સમાજનો છેલ્લો અગ્રણી થયો હોવાનું જણાય છે તેના જીવન દરમિયાન, દિગંબરોની પરંપરા પ્રમાણે એમના પોતાના અને શ્વેતાંબરોના પક્ષો વચ્ચે તીવ્ર વિરોધ ઉભો થયો.[૧૧૦] એના અવસાન પછી અલ્પકાળમાં ઇ. સ. પૂર્વે ૩૧૪ ની સાલની આજુબાજુમાં એ બે પક્ષો વચ્ચેના ભેદોએ આગળ વધીને અંતિમ અને નિશ્ચિત અણગમાનું સ્વરૂપ પકડયું, જેનું કારણ કલ્પસૂત્રમાંની શ્વેતાંબરપરંપરા[૧૧૧] પ્રમાણે છલુક રોહગુપ્ત નામનો પુરુષ હતો. આ માણસ ઈ. સ. પૂર્વે ૨૬૯ થી ૨૩૯ સુધી શ્વેતાંબરોનો અગ્રેસર હતો. એ મહાગિરિનો શિષ્ય હોવાનું કહેવાય છે. તેરાસિય તડ પાડનાર કહેવાય છે તે આ જ માણસ. આપણે જોઈ ગયા છીએ એમ તેરાસિયો એટલે આજીવિકો અને આજીવિકો એટલે દિગંબરો. એથી કરીને ફલિત થાય છે કે ઇ. સ. પૂર્વે ૨૫૧-માં જ્યારે અશોકે બર્બર ડુંગરની ગુફા આજીવિકોને અર્પણ કરી ત્યારે આજીવિક વા દિગંબર સંઘ કયારનો ય અસ્તિત્વમાં હતો. અશોકના ઉત્તરાધિકારી દશરથ (વા જૈનો કહે છે એ પ્રમાણે સંપ્રતિ) વિષે આપણને સાફ કહેવામાં આવેલું છે કે એને જૈનમતનો કરવામાં આવ્યો હતો. એ સાચું છે કે શ્વેતાંબરો એવો દાવો કરે છે કે ઉપર્યુક્ત મહાગિરિના[૧૧૨] સહાગ્રણી અને સમકાલીન[૧૧૩] એવો સુહસ્તી[૧૧૪] નામના પોતાના અગ્રેસરે દશરથને જૈનમતાવલંબી બનાવ્યો હતો. પરંતુ, દશરથે ઇ. સ. પૂર્વે ૨૨૭ માં નાગાર્જુની ડુંગરની ગુફાઓ આજીવિકોને અર્પણ કરી છે એ હકીકત ઉપરથી ખરૂં પૂછો તો એના ધર્માન્તરનો યશ કદાચ દિગંબરોને આપવો ઘટે છે; જો કે, અલબત્ત, પોતાના પુરોગામી અશોકની જેમ એણે પોતાના સમયના મુખ્ય મુખ્ય સાધુસંઘોને અર્થે નિષ્પક્ષપાતપણે પણ પોતાના અનુગ્રહની વ્યવસ્થા કરી હોય એમ બની શકે છે, અશોકના સાતમા શાસનસ્તંભ ઉપરથી આપણે જાણીએ છીએ કે અશોકે બૌદ્ધોને, નિગ્ગન્થોને, આજીવિકોને અને બ્રાહ્મણોને એક સરખી રીતે આશ્રય આપ્યો હતો. જે કહેવાઇ ચુકયું છે એના ઉપરથી હવે સ્પષ્ટ છે કે નિગ્ગન્થ અને આજીવિક એ શબ્દો આપણને શ્વેતાંબરો અને દિગંબરો તરીકે જાણીતા એવા બે જૈન સંઘોનો નિર્દેશ કરે છે. એમ પ્રતિપાદિત કરવામાં આવ્યું છે[૧૧૫] કે શાસનમાંનો બ્રાહ્મણશબ્દ આજીવિકોને લાગુ પડે છે અને એથી એઓ 'બ્રાહ્મણીય' સંઘના હોવાનું વર્ણન છે. એ પૂર્વ સમયમાં બૌદ્ધ અને જૈન (નિગ્ગન્થ) ના જેવો

---

૧૦૯. બો. ગે. ૯. ભા. ૧. પૃ. ૧૦૭. ૧૧૦. જ. જ. ઓ. સો. ૩૮. ૧૪: ૪૦, ૯૨; ઇ. એ. ૨૧. ૫૯. ૧૧૦. અર્થાત્ ઈ. સ. પૂર્વે ૪૮૪ માં થયેલા મહાવીરના અવસાન પછી ૧૭૦ વર્ષે જુઓ, પૃ. ૧૫. ૧૧૧ જૈ. સૂ. ૧. ૨૯૦; ૧૧૨. જ. જ. ઓ. સો. ૩૭. ૫૦૧. ૧૧૩. ઇ. સ. પૂર્વે ૨૬૯-૨૨૩; ૧૧૪. ક. સૂ. ૧૦: જૈ. સૂ. ૧. ૨૯૦. ૧૧૫. પ્રોફેસર કર્ન અને બુહલર એ. ઈ. ૨. ૨૭૪; ઇ. એ. ૨૦. ૩૬૨.

Aho ! Shrutgyanam

કોઈ ચુસ્ત બ્રાહ્મણીય સંઘ અસ્તિત્વમાં હતો કે નહિ એ મુશ્કેલી બાજુ ઉપર મુકીએ તો પણ શાસનમાં તો 'બાહ્મણો' વિષે કથન છે. એ શબ્દનો અર્થ 'કોક રીતે બ્રાહ્મણવાદ સાથે જોડાયેલો પુરુષ' એવો નથી થતો. એ શબ્દ તો બ્રાહ્મણવર્ણનો પુરુષ એવો અર્થ લક્ષીભૂત કરે છે. અને શાસનનો પૂર્વાપર સંબંધ જોતાં એનો અર્થ 'બ્રાહ્મણ તપસ્વી' અર્થાત્ ચોથા બ્રાહ્મણીય **આશ્રમ**નો સ્વીકાર કરનાર બ્રાહ્મણ વર્ણનો મનુષ્ય એવો થાય છે. આવો મનુષ્ય પરિવ્રાજક સન્યાસી તરીકેનું ઘરબાર વગરનું જીવન ગુજારવાનું વ્રત લેતો. ભટ્ટોત્પલના લખાણનું પ્રમાણ લેવાની વાત, કયારનું જણાવાઈ ચુકયું છે એ પ્રમાણે નિરર્થક[116] છે. વૈષ્ણવ વા શૈવ સન્યાસી ગમે તે ન્યાતનો હોઇ શકે (વા ખરૂં પૂછો તો પૂર્વાશ્રમમાં એ ગમે તે ન્યાતનો ભલે હોય)[117] બ્રાહ્મણીય દેવોના ભકતો હોવાનું માન્ય કરતા હોવાથી આ માણસોને બ્રાહ્મણીય તપસ્વીઓ ભલે કહેવાય પરંતુ કોઇ પણ હિંદી એમને 'બ્રાહ્મણો' નહિ કહે. 'બ્રાહ્મણી' એ શબ્દ **ब्राह्मण** શબ્દથી જુદો તદ્દન વિદેશીય એવો પાશ્ચાત્ય ખ્યાલ વ્યક્ત કરે છે.

આજીવિકોના ઇતિહાસનો સંક્ષેપમાં નીચે મુજબ સાર અપાય: ગોસાલે પોતાનું તપસ્વી જીવન મંખલી વા મસ્કરિન્ તરીકે અર્થાત્ વાંસદંડ રાખતા વિશિષ્ટ અને સુપ્રસિદ્ધ પ્રાચીન પરિવ્રાજક તરીકે શરૂ કર્યું. કેટલાક કાળ પછી એણે મહાવીર જે પાર્શ્વનાથના અનુયાયીઓ એવા નિગ્ગન્થ વા **કર્મ**ના બંધનથી નિર્મુક્ત, નામના અન્ય પરિવ્રાજક વર્ગના હતા તેમની ઓળખાણ કરી. તાપસિક ધર્મોની (**અચેલક**ના મુદ્દાવિષેની) કડકાઈ પરત્વે સમાન વિચારો ધરાવનાર આ બે પુરુષો ભેગા મળ્યા અને એક સામાન્ય પદ્ધતિ ઘડી કાઢી, જેમાં, એમ છતા, ગોસાલે પોતાની કેટલીક વિગતો ઉમેરી, એમના અનુયાયીઓમાં બન્નેને પોતપોતાના પક્ષકારો હતા. અને ગોસાલનો પક્ષ પરિવ્રાજકોના **आजीव** પરત્વે પોતાના આગેવાનોના ખાસ અભિપ્રાયે ધરાવતો હોઈ, આજીવિક 'ધંધાર્થી' તરીકે ઓળખાતો. કાળના વહેવા સાથે ગોસાલમાં નીતિ વિરુદ્ધની વૃત્તિઓનો પ્રાદુર્ભાવ થયો, અને આથી એ બે સહચારીઓ વચ્ચે માઠી લાગણીઓ ઉત્પન્ન થઈ. અંતે એનું પરિણામ સંપૂર્ણ મૈત્રીભંગમાં આવ્યું. ગોસાલ, આજીવિક પક્ષના જે માણસો પોતા પ્રત્યે સક્રિય સહાનુભૂતિ ધરાવતા હતા તેમને લઇને દૂર થયો. આમ જુદા પડનારાઓનો સમૂહ મોટો હતો અથવા તો સમૂહ તરીકે એઓ એમના નેતા ગોસાલના અવસાન પછી જીવન્ત રહ્યા એમ માનવાને કંઈ કારણ નથી. ગોસાલના નીતિવિરુદ્ધના આચારવિચારોના ભાગીદાર નહોતા એવા આજીવિકપક્ષના અન્ય માણસો નિગ્ગન્થ સંઘમાં જ રહ્યા; પરંતુ સંપૂર્ણ નગ્નતા, ભિક્ષાપાત્રનો ત્યાગ, અહિંસા વિષેની અપૂર્ણ કાળજી, દંડની વિશિષ્ટ સંજ્ઞા અને સંભવત: અન્ય બાબતો વિષેના પોતાના વિચારો તેઓ રાખી રહ્યા. આ ભેદોને કારણે આજીવિક પક્ષ અને બાકીના નિગ્ગન્થ સમાજ વચ્ચે નિ:શંકપણે અમુક પ્રમાણમાં સંઘર્ષણ તો હતું જ. ખાસ કરીને ભદ્રબાહુ, જે ખરૂં પૂછો તો આજીવિકો પ્રત્યે સહાનુભૂતિ ધરાવતા હોવાનું જણાય છે, તેના સમયમાં એ બહાર આવ્યું. પરંતુ એ સંઘર્ષણ ઈ. સ. પૂર્વેના માત્ર ત્રીજા સૈકાના પૂર્વતર ભાગમાં જ પરાકાષ્ટાએ પહોંચ્યું અને તેરાસિય (त्रैराशिक) તરીકે ઓળખાતો પક્ષ નિશ્ચિતપણે અને છેવટને માટે જુદો પડયો તથા એનો વિશિષ્ટ સંઘ રચાયો, જે અત્યારે દિગંબર તરીકે ઓળખાય છે. દિગંબર અને શ્વેતાંબર એવા જૈન વિભાગોના મૂળનો ઉદ્ગમ આમ જૈનધર્મની છેક શરૂઆત સુધીમાં જણાય છે. કારણ એનું અસ્તિત્વ, પરોક્ષ રીતે, બે પરસ્પર વિરોધી વિભાગોના પ્રતિનિધિરૂપ મહાવીર અને ગોસાલ નામના બે સહચારી અગ્રેસરોના વૈમનસ્યને આભારી છે.

હવે, બૌદ્ધ ધર્મશાસ્ત્રોમાં અને અન્ય સ્થળે આવતા આજીવિક સાધુઓ વિષેના પણ માત્ર છૂટા

૧૧૬. પૃ. ૪૮. ૧૧૭. વી. મો. હિ. પૃ. ૫૯ ff ૮૩. ff.

Aho ! Shrutgyanam

છવાયા ઉલ્લેખો જ લક્ષમાં લેવાનું બાકી રહે છે. **વિનયપિટક**[૧૧૮] અને **મજ્ઝિમનિકાયમાં**[૧૧૯] કહેલું છે કે બુદ્ધના બુદ્ધ થવા પછી તરત જ કેવી રીતે એમને ઉપક નામના આજીવિકનો ભેટો થયો અને એણે એમના આધ્યાત્મિક અનુભવોના અહેવાલની કેવી તિરસ્કારપૂર્વક બરદાસ્ત કરી. **મજ્ઝિમનિકાયમાં**[૧૨૦] વળી આજીવિક **પણ્ડુપુત્તની** વાત છે, જે પૂર્વે એક રથ બનાવનારો હતો અને જેને બુદ્ધે પોતાના મતનો કર્યો હતો. વિનયપિટકમાં[૧૨૧] વળી એક નનામા આજીવિક સાધુ વિષે કથન છે, જેણે બૌદ્ધ સાધુ કસ્સપને એના ગુરુદેવના અવસાનની પ્રથમ ખબર આપી. આ ત્રણ જણ **સંભવતઃ** નિગ્ગન્થ **સમાજમાંના** આજીવિક પક્ષના સભ્યો હતા. બીજે સ્થળે વિનયપિટકમાં[૧૨૨] **એક પ્રસંગે** અમુક આજીવિકોને છત્રી ઓઢીને ચાલતા કેટલાક બૌદ્ધ સાધુઓનો મેળાપ થતાં એમણે પોતાના હરિફોની આ અતાપસિક વર્તણુકની કેવી મજાક કરી હતી તે વર્ણવાયલું છે. **મહાવંશમાં**[૧૨૩] **આશરે** ઇ. **સ. પૂર્વે** ૪૨૬ માં રાજા **પણ્ડુકભયના** સમયમાં લંકામાં હસ્તિ ધરાવતો ' એક આજીવિક **સમૂહ**, જેને માટે એ રાજાએ એક મકાન (**गह**) બંધાવ્યાનું કહેવાયું છે. તેની વિચિત્ર બાતમી છે. **એમ** છતાં આ બાતમી, જે પૂર્વકાલીન સમયને લગતી છે, તે જોતાં ઘણા સંકોચ સાથે સ્વીકારવી જોઇએ. **આજીવિકોની** બીજી ઘણી વિચિત્ર બાતમી **સદજિરો સુગિઉર** (Sadajiro Suguira) ' હિંદુલૉજિક એઝ પ્રીઝર્વ ઇન ચાઈના એન્ડ જપાન '[૧૨૪] નામના નાના ગ્રંથમાં આવે છે.

ઉપોદ્‌ઘાતના પૃ. ૧૬ ઉપર ગ્રંથકર્તા કહે છે કે ચીની અને જાપાની ગ્રંથકર્તાઓ વારંવાર એ **મહાન સંપ્રદાયોમાં** (અર્થાત્ સુપ્રસિદ્ધ છ ભારતીય સંપ્રદાયોમાં) બે વિશેષ **સંપ્રદાયોનો સમાવેશ કરે** છે. એ **નિકેન્દબ્રી** અને **અશિબિકના** નામે ઓળખાય છે અને એક બીજાને તદ્દન મળતા આવે છે. એ બન્ને માને છે કે પાપી જીવનનો દંડ મોડો વહેલો ભરવો જ પડે છે; અને એમાંથી બચવું અશક્ય હોવાથી એ દંડ જેમ બને તેમ વહેલો ભરવો એ બહેતર છે કે જેથી ભાવી જીવન આનંદમાં નિર્ગમન કરવાની છૂટ રહે. આમ એમના આચારો તાપસિક હતાઃ ઉપવાસ, મૌન, અચલ–આસન, અને આ ક્રૂર પોતાની જાતને દાટેલી રાખવી એ એમની તપસ્યાનાં બોધક હતાં. સંભવતઃ એ સંપ્રદાયો જૈન વા કોઈ અન્ય હિંદુ સંપ્રદાયની પ્રશાખાઓ હતા.

આ લખાણમાંના ' નિકેન્દબત્ર અને આશિબિક ' સ્પષ્ટતઃ નિગ્ગન્થો અને આજીવિકો **અર્થાત્** શ્વેતાંબર અને દિગંબર જૈનો છે.

[**વાઙ્મય**—આજીવિકો વિષે કોઇ સંકલિત અહેવાલ અસ્તિત્વમાં નથી; પરંતુ ઉપરના લખાણોમાં ઉલ્લેખાયલા ગ્રંથો ઉપરાંત એ સંપ્રદાય વિષેના છૂટા છવાયા ટુંક ઉલ્લેખો નીચેના ગ્રંથોમાં આવે છેઃ— બુહ્લર, Epigraphia Indica (Calcutta, 1894), ii, 272, 274, 323 અને ઇ. એ. ૨૦. ૩૬૧ ff.) બુરનૌફ, Lotus de la bonne loi (Paris, 1852) ગ્રીમબ્લોટ, Sept suttas Palis' ઇ. એ. (બોમ્બે, ૧૮૭૯) ૮, ૩૧૨; યાકોબી, Jaina sutras, સે. બુ. ઇ, વૉ. ૨૨ અને ૪૫. (ઓકસફર્ડ, ૧૮૮૪–૯૫) ભાગ. **૧**. પૃ. ૧૬, ૧૮, ભા. **૨**. પૃ. ૧૯, ૨૨–૨૬, ૨૯–૩૨ અને ઇ. **એ**. ૯. ૧૬૧ ff; એચ. કર્ન, Hist.. de Bouddhisme, **૧**. (પેરીસ, ૧૯૦૧–૩),

૧૧૮. ૧. ૮., સે. બુ. ઇ. ૧૩. ૯૦. **૧૧૯**. ૧. ૭૦; ન્યુ. રે. ૧. ૨૭૧, ૨. ૪૫૪. **૧૨૦**. ૧. **૩૧**; ન્યુ. રે. ૧. ૪૫. **૧૨૧**. ૨. ૨૮૪; સે. બુ. ઇ. ૨૦. ૩૭૦. **૧૨૨**. ૨. ૧૩૦; વી. વિ. તરજુમો. ૨૦. **૧૩૨**. **૧૨૩**. ટ. મ. ૬૭. **૧૨૪**. સંપાદક Mr. Eelgar A. Singer, Jr. યુનીવર્સીટી ઓફ. પેન્સીલવેનીઆની ફીલોસોફીક સીરીઝનો નં. ૪.

Aho ! Shrutgyanam

૧૫, ૧૨૧, ૧૫૧, ૨. ૬, ૪૧, ૩૩૭, અને Manual of India Buddhism (સ્ટ્રાસબુર્ગ, ૧૮૯૬), પૃ. ૭૨. અને મ. ૨, ૭૪, ૮૨, ૧૧૨, ૧૧૬; લોયમાન, વી. ઓ. જ. ૩. (વીએના, ૧૮૮૯), ૩૨૮ ff. Actes du Sixieme Congres or. ૧૮૮૩, ભા. ૩. પૃ. ૫૫૪ ff. અને Aupapāka Sutra (લીપઝીગ, ૧૮૮૩), ભા. ૧. પૃ. ૮૦, par. ૧૨૦, ઓલ્ડનબર્ગ, Buddha (ચોથી આવૃત્તિ ૧૯૦૩) પૃ. ૮૨, ૯૩, ૧૯૯; ઓ. શ્રેડર, Stand der Ind. Philosophie (સ્ટ્રાસબુર્ગ, ૧૯૦૨), પૃ. ૧૨, ૩૪. ff.; હ્રીઝ ડેવીડસ, Buddhist India (લંડન, ૧૯૦૩), પૃ. ૧૪૩, ૧૪૬, ૨૯૦, અને Diologues of the Buddha (લંડન, ૧૮૯૯), પૃ. ૭૧, ૨૧૯, ૨૨૦, ૨૨૭, ૨૩૨; રોકહીલ, Life of the Buddha (લંડન, ૧૮૮૪), પૃ. ૧૦૧, ૨૪૯ ff.; સેનાર્ટ, Insciptions de Piyadassi (પેરીસ, ૧૮૮૬), ૨. પૃ, ૨૦૯ ff.; વી. એ. સ્મીથ, Asoka (ઓકસફર્ડ, ૧૯૧), પૃ. ૧૦૬, ૧૪૪ f.; વેબર, Catalogue of the Royal Library, બર્લીન ઇન્ડેકસ, પૃ. ૧૨૮૦ (૧૮૯૨.)]

આ લેખમાં વપરાયેલા સંકેતોની સમજુતી

અં. નિ.=અંગુત્તર નિકાય
આ.સુ.=આચારંગ સુત્ત.
બો. અને રયુ.=Bohtlingk and Rien's edition of the Abhidhana Chintamani
બુ. સુ.=બુદ્ધિસ્ટ સુત્તસ્ સેક્રેડ બુકસ્ ઓફ ધી ઇસ્ટ વો. ૧૧
ભા. રિ.=Bhandarker's Report on the Search of Sanskrit Mss. 1883-84
ભ. સૂ. Bhagvati Sutra, Calcutta edition.
કો. બુ.=Bh. Coplestons' Buddhism.
દી. નિ.=દીઘનિકાય.
ડા.=Dialogues of the Buddha, trans. by T. W. Rhys Davids.
એ. ઈ.=Epigraphia Indica.
જૈ. સૂ.=જૈનસૂત્રો, ભા. ૧. અને ૨. સેક્રેડ બુકસ્ ઓફ ધી ઇસ્ટમાં વો. ૨૨ અને ૪૫.
જા.=Jatakas.
કી. મ.=Kielhorn's edition of the Maha Bhashya.
ક. સૂ.=Kalpa Sutra, ed. હર્મન યાકોબી.
મ. નિ.=મજ્જિમનિકાય.
ન્યુ. રે.=Neumann's Reelen Gotama Buddhas.
નિ. મ.=Niryavaliya Sutta, ed. Dr. S. Warren.
ઓ. બુ.=Oldenberg's Buddha.
ઓમન=The Mystics, Ascetics and Saints of India by J. C. Oman.
રો. લા. બુ.=Rockhill's Life of Buddha
સ્મી. અ.=Smith's As'oka in Rulers of India Series
સા. ઈ. ઇન્સ્ક્રીપ્સ=South Indian Inscriptions in Archæological Survey of India
સે. ઇન્સ્ક્રીપ. વિ.=Senart's Inscriptions de Piyadassi.

Aho ! Shrutgyanam

સૂ. કૃ.=Sutra Kritanga in Jain Sutras, Part II.
સં. નિ.=Sanyutta Nikaya.
સુ. વિ.=Sumangala Vilasini.
ટ. મ.=Turner's ed. of the Mahavamsha.
ટ્રા. કો. ઓ.=Transactions of the Sixth International Congress of Orientalists.
ઉ. દ.=Uvāsaga Dasāo, ed. by R. Hoernle in Bibliotheca Indica.
વી. ઓ. જ.=વીએના ઓરીએન્ટલ જર્નલ.
વિ. વિ. તરજુમો=Vinaya Pitaka, tr. in Secred Books of the East Vols. ૧૩, ૧૭ અને ૨૦.
વે. ઇ. સ્ટુ.=Weber's Indische Studien
વિ. મો. હિ=Wilkins Modern Hinduism.
સે. બુ. ઇ.=સેક્રેડ બુકસ્ ઓફ ધી ઇસ્ટ.
ઈ. એ.=ઇન્ડીઅન એન્ટીકવરી.
જ. જ. ઓ. સો.=જર્નલ ઓફ ધી જર્મન ઓરીએન્ટલ સોસાઇટી.
બોં. ગે.= બોમ્બે ગેઝેટીઅર.

आनंदविमलसूरिए करेलुं यति–बंधारण.

संवत १५८३ ना वर्षे पत्तननगरे ज्येष्ठमासे श्री संघसमुदायमध्ये श्रीआणंदविमलसूरिभिर्लिख्यते:

१ गुरुने आदेसें विहार करवो।

२ वणिगने दिक्षा देवी बीजाने नही ।

३ गीतार्थनी निश्राइ महासतीनें दिक्षादेवी बीजे परें नही ।

४ वेगला थकी गीतार्थ कन्हें कोई एक दिक्षा- लिइं तो तेहनी परिक्षा करी वेस पलटाववो पण विधिं गुरु पासे दिक्षा देवराववी, योग वहेवराववा ।

५ पाटणमांहे गीतारथनो संघाडो एक रहे चोमासा मध्ये बीजे नगरें ६ ठाणुं चोमासुं रहे गांमें ठाणु ३ चौमासुं हुंइ आठ बीजे षेत्रें रहे ।

६ वेगळा थको कागलें आदेस मंगाववो ।

७ एकले माहात्में विहार न करवो ।

८ एकलो विहार करतो आवे तो मांडले केणे न बेसारवो ।

९ बीज पांचम आठम एकादशी चउदश अमा- वस्या पूर्णिमा एवं मासमध्ये १२ दिन विगई न वोहोरवी, उपवास आंबिल नीवी यथा- शक्ति तप करवो ।

१० तिथि वधे तिहां एकदिन विगय न विहरवी।

११ पात्रे रोगांन न देवो ।

Aho ! Shrutgyanam

१२ पात्रां कालां काढवां करवां ।

१३ योग वह्या विना सिद्धांत न वांचवां ।

१४ एक समाचारीना साधु केवारें बीजे उपासरे रह्यां होय ते गीतारथ कनें आवी वांदणां देई सय्यात्तर पूछी हींड पूंछी विहरवूं ।

१५ दिवस मांही आठ थोई वार १ देव वांदवा ।

१६ दिवसमध्ये २५०० सज्झाय गण्यो जोइये न गणे तो जघन्य सझाय १०० सो गणवो ।

१७ वस्त्र पात्र कांबली ठामडा पूंठें बांधी न मुकवां, चालतां मेले उपाडवा, गृहस्थ पासें उपडाववां नहीं ।

१८ वरसमध्ये धोणि १, बीजी धोणि नहीं ।

१९ पोसालमांहे केंणें नहीं....।

२० पोसाले भणवा न जावूं ।

२१ एक सहस्र ग्रंथ टाली लेषक पासे न लषाववूं ।

२२ द्रव्य अपीवी केणे भटनी पासे न भणवुं ।

२३ जेणें गांमें चोमासुं रह्या होइं तिहां चोमासा ने पारणे मास २ मध्ये वस्त्र विहरवो न कल्पे ।

२४ अकालसझाइं आंबिल ।

२५ एकासणो सदैव ।

२६ छठादिकने पारणे जिम गुरु कहे तिम करवूं ।

२७ पारिठावणियागारेणं न करवुं ।

२८ आठम चउदस अजुवाली पंचमी ए ५ उपवास ।

२९ आठम चउदस विहार न करवो ।

३० एक निवीताइं निवीतो न लेवो ।

३१ चौरासि गच्छ मांहेलो माहात्मा गुरुना केहेण विना न राखवो ।

३२ गुरुने अणपूछे नवी परूपणा नवी समाचारी न मांडवी ।

३३ नवो निषास्युं न वावरवो ।

३४ सपर कोरुं लुघडो (न) वावरवो ।

३५ कोरा मांहें गोडिया भरवा अटांण साल्ह गीता-रथ टाली न वावरवां ।

॥ इति पांत्रीसबोलसंपूर्णम् ॥

Aho ! Shrutgyanam

भूगोळ, खगोळ संबंधी केटलाक प्रश्नना खुलासा

વિચારકો આ લેખ પૂર્ણ વાંચ્યા શિવાય આગળથી કાંઇ પણ વિચાર ન કરી બેસે એવી આશા રાખું છું.

આજે લખ્યું છે તે બન્ને બાજુનો અભ્યાસ કર્યા પછી જે હકીકત સમજવામાં આવી છે તે લખું છું.

૧. જે અંગ્રેજો ને પશ્ચિમના લોકો આજે વિજ્ઞાન ક્ષેત્રમાં ઝૂકી રહ્યા છે, તે ત્રણ ચાર સૈકાથી વધારે ધસારો કરતા હોય એમ જણાય છે. કોલંબસ પ્રથમ વધારે પૃથ્વી શોધવા નીકળી પડ્યો, ત્યાં સુધી વધારે દુનિયા છે તેવું તેઓને ભાન ન હોતું. ત્યાર પછી તેઓએ એક પછી એક આ મધ્ય ખંડમાં આવી દુનિયાની મુસાફરી કરી. ડ્રેક, હોકિન્સ ને કુક જેવાએ દરિયામાં ચારે બાજુએ ચુડીના આકારે ગોળ મુસાફરી કરી. તે લોકોએ ઘણું સાહસ ખેડયું ને ઘણા આગળ વધ્યા. તેઓ માનવા લાગ્યા કે પૃથ્વી ગોળ છે. એ લોકો પોતાના સાહસના ને પરાક્રમના વૃત્તાન્તો એક પછી એક બહાર મૂકવા લાગ્યા. તેઓ સમજવા લાગ્યા કે ઘણું જ સત્ય આપણે શોધીએ છીએ. ત્યાર પછી કોપરનીકસે ૧૫૪૩ માં પૃથ્વી ફરે છે એ સિદ્ધાંત (Theory) દાખલ કર્યો, ત્યાં સુધી તે લોકો પૃથ્વી ફરે છે એવું માનતા ન હોતા. નવા જમાનાનો સુધારો વધવા લાગ્યો, ને એક ચીજ હતી તેને નવો વાઘો (ડ્રેસ) પહેરાવ્યો. તેઓ પોતાની જાતને ઘણા બુદ્ધિમાન ને શોધક માનવા લાગ્યા. ત્યાર પછી ખગોળ સંબંધી શોધમાં પૃથ્વીથી ચંદ્ર સૂર્ય વગેરે વગેરે આકાશીય પદાર્થો સાથે કેવું ને કેટલું અંતર છે, તે, તે લોકો યંત્રોથી અને સાધનોથી માપવા લાગ્યા. ત્યાર પછી ન્યુટન, બેકન, હાર્વે, ગેલીલીયો વગેરે વગેરેથી અનેક અનેક શોધો બહાર આવવા લાગી. આ પૃથ્વી એક ગ્રહ છે, એમ માની આકાશીય પદાર્થોની ગ્રહરૂપ હારમાલામાં પૃથ્વીરૂપ ગ્રહમણકાને પણ દાખલ કરી દીધો. આમ અનેક રીતે અનેક વિદ્વાનોની શોધખોળ જોતાં લોકોની દૃષ્ટિમાં એમ સિદ્ધ થયું છે કે પૃથ્વી ગોળ છે—તે દડા આકારે છે, ને તે સૂર્યની આસપાસ દૈનિક, વાર્ષિક ને બીજી અનેક ગતિથી ફરે છે; એમાં શક નથી.

૨. ઉપર્યુક્ત વિચાર અત્યારે આપણા દેશમાં જોસભેર ચાલી રહ્યો છે પણ એમ સંભળાય છે, ને કેટલીક ચોપડીઓથી સમજાય છે કે આ વિચાર યુરોપમાં સર્વત્ર માન્ય હોય એમ જણાતું નથી. ઘણો ભાગ પૃથ્વી ફરે છે તે બાજુમાં નથી. તે લોકો કહે છે કે (The earth is not Sphere) પૃથ્વી ગોળ નથી ને અસ્થિર પણ નથી (The Tarra Farmd) પણ પૃથ્વી સ્થિર છે.

૩ હવે આપણે એક બીજી બાજુ જોઇએ. અંગ્રેજો કે પશ્ચિમના લોકોએ જે જે શોધો કરી, તે તેઓનાં સાહસને પુરૂષાર્થ છે પણ તે બધું સત્ય છે એમ કયી રીતે બુદ્ધિ કબુલ કરી શકે? કારણ, તે પ્રજાને જોવા માટે, ને જાણવા માટે કાંઇ પણ સાધન હોય તો ચર્મદૃષ્ટિ કે ચર્મહૃદય છે. જે પ્રજા એમ કહે છે કે સૂર્ય એક અગ્નિનો ભડકો છે, અથવા પહેલાં કહેતા હતા કે તે એક રાક્ષસ છે, વળી કહે છે કે સૃષ્ટિની ઉત્પત્તિ અમૂક વર્ષ પછી થઇ; તે પહેલાં નહોતી; વળી કહે છે કે મર્કટમાંથી માનવ-જાતિ થઇ. આમ અનેકાનેક વાર્તાઓ તેઓ જે દૃષ્ટિથી કહે છે, તે દૃષ્ટિ કયી લેશો ? પૂર્વની પ્રજા ઉપર પશ્ચિમના લોકોની ધુંસરી પડી છે ને તે આજ સુધી છે. આ પ્રજા આજે વિકાસને પામી હોય તો પશ્ચિમની પ્રજાને આભારી છે, ને આજે કાંઇ પણ સમજવા લાગી હોય તો તેઓએ નાંખેલાં કેળવણીનાં મૂળ છે. હવે આ જ પ્રજા આજે કહે છે કે આપણે આજ સુધી પરતંત્રતામાં રહ્યા, પણ

Aho ! Shrutgyanam

હવે પરતંત્રતા ન જોઇએ; એટલું જ નહી પણ આપણને આજ સુધી જે શિક્ષણ મળ્યું તે બધું ભૂલ-ભરેલું મળ્યું છે, ને ઘણું નુકશાનકારક છે. તે વસ્તુ ગમે તેવી હોય પણ લોકો એટલું તો સમજી શક્યા છે કે આપણી પૂર્વની ભૂમિની વિવિધતા કોઇ જુદી જ હતી. અનેક વિદ્યા, વિચાર, કલા, તત્ત્વ, ધર્મ વગેરેનું સાહિત્ય અધિકાધિક ને ઉચ્ચ હતું.

૪. બ્રાહ્મણ સાહિત્યમાં કે બૌદ્ધ સાહિત્યમાં કે જૈન સાહિત્યમાં પૃથ્વી ફરે છે ને સૂર્યાદિ નથી ફરતાં એવું પ્રમાણ છે ? વેદમાં ગમે તે વાતો હો, બૌદ્ધ સાહિત્યમાં ગમે તે વાત હો પણ જૈન સાહિત્યથી કાંઇક સમજાય તે જણાવવા યત્ન કરૂં છું. આપણી આર્ય પ્રજા એમ કહેશે કે સત્ય લાગે તે કેમ ન માનવું ? આપણી બુદ્ધિને તે બરાબર ગ્રાહ્ય છે તો કાં ગ્રહણ ન કરવું ? ભૂગોળ ને ખગોળ સંબંધી જ્ઞાન આજે આપણી શાળાઓમાં ચાલી રહ્યું છે; ગ્રેજ્યુએટ વિદ્વાનોએ આજ સુધીમાં ગુજરાતીમાં તે જ વિચારો ને વિવેચનો ને ભાષાંતરો બહાર પાડ્યાં છે ને લોકોને મારી મચડીને સમજાવવામાં આવે છે, અને ઘણા લોકો તે વિદ્યાના શોખીન પણ થઇ રહ્યા છે.

૫. આ સ્થળે એટલું કહેવું જોઇએ કે પૂર્વની પ્રજાએ પોતાની બુદ્ધિને પશ્ચિમની પ્રજાને ત્યાં ઘરાણે મૂકી છે; તે તો હવે નિકળે ત્યારે ખરી? ન નીકળવાને કારણ એ છે કે પૂર્વની પ્રજા શું માનતી હતી તે કાં તો તેમને બરાબર સમજાયું ન હોય, અથવા સમજવાને જેવા જોઇએ તેવા સાધન તેમને મળ્યાં ન હોય; ગમે તેમ હો, પણ પૂર્વની પ્રજા ખરેખર ભૂલવણીમાં પડી છે. એકલી પૂર્વની પ્રજા ભૂલાવામાં પડી છે તેમ નથી પણ જૈન પ્રજા પણ ભૂલવણીમાં પડી છે. જૈનો કહે છે કે બીજું બધું ગમે તેમ હો પણ શ્રીમહાવીરના નામે ચડેલા જિનાગમોમાં તો આ બાબતની ખાસ ભૂલ છે. તો પછી એ શંકા થશે કે જ્યારે પૃથ્વી સંબંધીમાં મહાવીરે ભૂલ કરી છે, તો પછી તેમનાં કથેલાં શ્રુતધર્મ, ચારિત્ર ધર્મ ને દ્રવ્યાસ્તિકાયાદિ પદાર્થો વગેરે જે બાબતો છે તે સાચી હશે એ શા આધારે સમજવું ? પ્રાચીન સમયમાં શ્રીમહાવીર જેવા ઋષિઓ પાસે દિવ્યજ્ઞાન કે અતીન્દ્રિય જ્ઞાન હતું એમ દાવો આપણાથી કેમ થઈ શકશે ? અથવા તો તેનામાં સર્વજ્ઞત્વ તો નહિં જ એ ખુલ્લું થશે.

૬. જૈન દર્શન પ્રમાણે જંબુદ્રીપના ભરતના દક્ષિણાર્ધના મધ્યખંડમાં આપણે રહીએ છીએ. એ ખંડ પશ્ચિમમાં આટલાંટિક મહાસાગર, ઉત્તરમાં ઉત્તર મહાસાગર, પૂર્વમાં પાસિફીક ને દક્ષિણમાં દક્ષિણ મહાસાગરની વચમાં રહ્યો છે. ચારે બાજુએ પાણી હોવાથી વચમાં જમીન ઉપસેલી દેખાય છે. ઉત્તરમાં ઉત્તર બાજુ ઉંચી છે. દક્ષિણમાં દક્ષિણ બાજુ નીચી છે. તેનાં પ્રમાણ એ છે કે પશ્ચિમ આટલાંટિક ને પૂર્વ પાસિફીક દરિયા જેવી નદીઓ, ઉત્તરથી દક્ષિણ ભણી જાય છે. નીચાણ હોય તે ભણી પાણીનો પ્રવાહ જાય છે, એ વાત જ સિદ્ધ છે. તે નદિયો (દરિયાઓ) ઉપર પ્રવાહમાં ઓછી છે, ને નીચે પ્રવાહમાં વિસ્તીર્ણ છે. આ ખંડના મધ્યમાંથી ઉત્તર ભણી જઇએ તો ઉત્તર ધ્રુવ (North-pole Star) ઉંચો ને ઉંચો દષ્ટિમાં (૪૫ અંશે) આવે છે; ને નીચાણમાં જઇએ તો અદૃશ્ય થાય છે. તેથી સમજાય છે કે દક્ષિણ નીચાણમાં છે. એ ખંડ તે જ કે જેમાં આપણે રહીએ છીએ, તે પૂર્વનો ગોળો કે જેમાં એશિયા, આફ્રિકા, યુરોપ ને આસ્ટ્રેલીયા છે. હવે સમજી લ્યો કે જે યુરોપીયનોએ મુસાફરી કરી છે, તે તે ગોળ ફરતા દરિયા વિષે; પણ બીજી રીતે નહીં. પણ એથી પૃથ્વી ગોળ છે એમ સિદ્ધ થતું નથી. હાલના આપણા અર્ધ પ્રાજ્ઞો તો ફૂલાઇને કહે છે કે ગોળ દડાની જેમ પૃથ્વી પર તેઓએ મુસાફરી કરી છે. હવે તમે કહેશો કે અમેરિકા ખંડ ત્યારે ક્યાં આવ્યો ? સમજો કે ભરતના પશ્ચિમમાં છેલ્લો ખંડ છે તે, કે જેને હાલમાં અમેરિકા કહેવામાં આવે છે.

Aho ! Shrutgyanam

ભરત ક્ષેત્ર

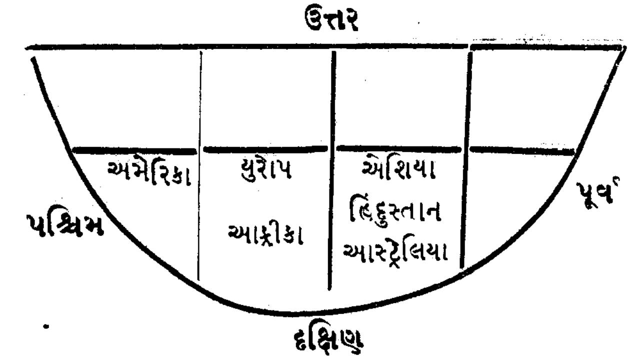

૭. હવે તમે ઉપરના નકશા તરફ જુઓ. આ મધ્ય ગોળો કે જેમાં આપણે રહીએ છીએ તે ઉપરથી (ઉપરની બાજુમાં) સાંકડો છે ને નીચેની બાજુમાં વિસ્તીર્ણ છે. એટલે એ ગોળો ગોળ છે એ બરાબર સિદ્ધ થતું નથી. બીજો ગોળો લગભગ ત્રિકોણાકારે છે; ને ઘણો પાણીવાળો છે. એટલે અત્યારે આટલી પૃથ્વી આપણી દૃષ્ટિમાં આવી છે. પૂર્વ પાસિફીક ચીરી જો પૂર્વમાં જાય તો જરૂર (કોલંબસે શોધી તેમ) પૃથ્વી પ્રાપ્ત થાય; પણ જઈ શકાતું નથી એમ અંગ્રેજો કહે છે.

૮. હવે આપણે પૃથ્વી ઉપર સિદ્ધા વર્તુલ ચક્રો પૂર્વથી પશ્ચિમ જતા જુઓ ! તે શું છે ? એ સૂર્યને ચાલવાના તેના ગોળ (વર્તુલ) માર્ગો છે. જ્યારે પૃથ્વી ગોળ વર્તુલ માર્ગમાં ગતિ કરે છે ત્યારે સૂર્ય ફરતો માનો તો તે ગોળ વર્તુલ અર્ધચક્રમાં ધનુષ્યાકૃતિ આકારે ગતિ કરે છે. દૃષ્ટાન્ત–આપણે સીધા ઉત્તર બાજુમાં બરાબર ઉભા રહી જોઇએ તો બરાબર જુનની ૨૩–૨૪ તારીખે ઈશાનકોણમાંથી સૂર્ય નીકળતો જણાશે. તે વખતે, ઉત્તરાભિમુખ મકાન હોય ને તેને આગળ આંગણું કે બારણું હોય તો જોઈ શકશો કે સૂર્યનો તાપ (તડકો) તેના આંગણામાં ખુલ્લો પડેલો હશે. આ સૂર્ય ધીમે ધીમે ઉપર ચડતો આપણા માથા પર આવશે. માથાથી વાંકમાં ચાલતો અસ્ત થતો વાયવ્ય કોણમાં જતો આપણે જોઈશું. ચોવીસ કલાક પૂર્ણ કરી બીજા દિવસે તેની પાસેના બિન્દુમાં (બીજા વર્તુલમાં) આવેલો આપણને દેખાશે. આમ દરરોજ નવા નવા અક્ષાંશ કે વર્તુલમાં ચાલતો સૂર્યને જોઈશું. ને છેક છેલ્લા ૧૮૦ અક્ષાંશમાં (જૈનદર્શન ૧૮૪ કહે છે, જુઓ ચંદ્રપ્રજ્ઞપ્તિ ને સૂર્યપ્રજ્ઞપ્તિ એટલે ૩૬૬ દિવસના હિસાબે ૧૮૨ છે ને બે વર્તુલ એકેક ૧૮૨ × ૨ : ૩૬૪ ∵ ૩૬૬ વખત ફરે છે એટલે ૩૬૬ થાય છે) ડીસેંબરમાં ૨૩–૨૪ મી તારીખે સૂર્ય અગ્નિકોણમાં ઉદય થતો ને વાંકમાં ગતિ કરતો ને નૈઋત્ય-કોણમાં અસ્ત પામતો જોઇશું. તે વખતે સૂર્યના માર્ગો બધા લવણસમુદ્ર (દરિયા)માં પડે છે. ત્યાં વસતિનો અભાવ છે. પણ તેનાં કિરણો–તાપ આપણુ બધાને મળે છે. ફેર એ છે કે જ્યારે જેને સૂર્ય નજીક હોય છે ત્યારે જેટલો તાપ–કિરણો જેટલા વખત સુધી તેને મળે છે ત્યારે તેને છેટે જવાથી તેટલા વખત તાપ–કિરણો મળી શકતા નથી. આપણા દેશને, યુરોપને, તેમ જે જે ઉત્તર બાજુમાં પ્રદેશો છે, તેઓને સૂર્ય જેમ માર્ચ, એપ્રીલ એમ પાંચ છ માસ સુધી વધારે વખત રહે છે, તેમ સૂર્ય જ્યારે દક્ષિણાયનમાં દક્ષિણ બાજુમાં લગભગ છ માસ સુધી હોય છે ત્યારે સૂર્યનો તાપ તેટલો મળતો નથી કારણ સૂર્ય ઓછો વખત રહે છે. પણ તે વખતે દક્ષિણના લોકોને આપણા કરતાં તાપ વધુ વખત રહે છે. જ્યાં જેમ દિવસ (તાપ) વધારે વખત ત્યાં રાત્રિ અંધકાર વધારે વખત રહે છે, એ સહજ છે. હવે આપણે જો સૂર્યની જગાએ પૃથ્વીને મુકીશું તો તેમ જ ક્રિયા વા પ્રવૃત્તિ બને છે,

Aho ! Shrutgyanam

પણ બીજી પ્રવૃત્તિ થતી નથી. પૃથ્વીને માનીશું તો પૃથ્વી સૂર્ય ભણી દિવસ રાત્રિ કરવા ગતિ કરે છે. જ્યારે ઉત્તરાયણ સૂર્યને ઉત્તર બાજુમાં આવવાને-કહીએ છીએ, ત્યારે પૃથ્વી સૂર્ય પાસે જાય છે. જ્યારે દક્ષિણાયન થાય છે. ત્યારે પૃથ્વી સૂર્યથી દૂર જાય છે.

૯. સૂર્યની શોધ કરતાં શોધકોને સૂર્યની કલ્પના કાંઈ જુદી જ લાગી છે. બીજા બધા ગ્રહોની શોધ કરતાં ત્રાસ ને અસ્થિરતા જેટલાં તેમને નથી લાગ્યાં, તેટલાં ત્રાસ ને અસ્થિરતા સૂર્યને ચોક્કસ કરતાં થયાં છે. એક પછી એક શોધકોએ નવો નવો જુદો જુદો નિર્ણય સમજાવ્યો છે. પણ હજુ તેઓ જોઈએ તેવા નિર્ણય પર આવી શકયા નથી. હજુ પણ જે જે શોધકો આગળ યત્ન કરશે, તેઓને આજ કરતાં કાંઇ જુદું જ સમજાશે.

૧૦. હવે કોઇ એમ પ્રશ્ન કરશે કે લોકો મકરવૃત્ત ને કર્કવૃત્તને ચીરીને આગળ જાય છે તેનો ઉત્તર એ જ કે આ વાત પ્રશ્ન કરનાર સમજ્યા હોય એવું જણાતું નથી. પૌરાણિક વાતોને નવા જમાનાએ ગપગોળા માન્યા છે, એ વાત ઠીક છે; પણ નવો જમાનો જે ગપગોળા હાંકે છે, તે બિચારી ઘેર બેસી રહેલી પ્રજા સાંભળી આભી જ બની જાય છે. એટલે, આ જમાનાને લાગે છે કે નવો જમાનો કેવાં કેવાં સત્ય શોધી આપે છે. સાચી વાત એ છે કે કર્કવૃત્તના એટલે તે વખતના સૂર્ય વર્તુલો યુરોપ ઉપર આવે છે, તે વાત ખરી છે પણ ત્યારપછી યુરોપ ઉપર આગળ વધતા ઉત્તર મહાસાગરમાં આવે છે કે જ્યાં અમુક ભાગ સુધી સ્ટીમરો વા વહાણો ચાલે છે જેમાં થઇ આટલાંટિકમાં આવી અમેરિકામાં જાય છે, પણ ઉપર આગળ વધી શકાતું નથી. કારણ ઉપર આગળ જવામાં ઘણા પ્રયત્નો થયા છે પણ લોકો પાછા આવ્યા છે ને મરણોન્મુખ પણ થયા છે. જ્યારે પૂર્ણ ભરતમાં જઇ શકાતું નથી ત્યારે યુગલક્ષેત્રને મહાવિદહક્ષેત્રમાં જવાની વાત જ શી કરવી ? વળી દક્ષિણ મહાસાગરમાં પણ આગળ અમુક હદ પછી જવાયું નથી. ઉત્તરમાં જવાની વાત આજથી કેટલાંક વર્ષ પહેલાં ગુજરાતીના દીવાળીના અંકમાં ને સાંજવર્તમાનના પતેતીના અંકમાં હતી ને પૃથ્વી ગોળ નથી આ વાત પણ આવી હતી, પણ તે અંકો યાદ નથી તેમ આજે તેને ઘણાં વર્ષ થઈ ગયાં છે.

૧૧. વળી એમ પ્રશ્ન થાય છે કે અમેરિકામાં અત્યારે તાર મુકતાં માલમ પડે છે કે અહીં જ્યારે મધ્ય દિવસ હોય ત્યારે ત્યાં મધ્ય રાત્રિ હોય, એ વાત સત્ય જણાતી નથી, તેમાં કયાં ભૂલ છે તે પરાશ્રિતતા હોવાથી માલમ પડતી નથી (એટલે તાર સંબંધી હકીકત ઘણી ગુંચવણવાળી છે) પણ અત્ર એક બીજો દાખલો લઇએ. એમ કહે છે કે લંડનને તેના આસપાસના પ્રદેશમાં (વિલાયતમાં) સૂર્ય લગભગ સોળ કલાક રહે છે, ને રાત્રિ આઠ કલાક રહે છે, તો વિલાયતમાં અસ્ત થયા પછી અમેરિકામાં સૂર્યોદય થાય એમ આ પ્રશ્નથી સિદ્ધ થાય છે. આ ઉપરથી સમજાશે કે અમેરિકામાં નીચેના ગોળામાં સૂર્ય સોળ કલાક વિલાયતની જેમ રહેવાનો તો અહીં કે યુરોપમાં સોળ કલાકની રાત્રિ સૂર્યના અભાવે રહેવી જ જોઇએ. તે રહે છે ખરી ? આપણે એવું અનુભવ્યું છે કે સોળ કલાકના દિવસ પછી સોળ કલાકની રાત્રિ રહે ? આથી એમ પ્રશ્ન થશે કે પૃથ્વી સૂર્ય પાસે જવાથી સૂર્યાસ્ત થતો નથી. આમ હોય તો કોઇપણ દેશની પ્રજાને પૂછો કે તમારે સૂર્યોદય ને સૂર્યાસ્ત થાય છે કે નહીં ? વિલાયતમાં ઉપરના પ્રદેશમાં ઉભા રહી જુઓ, એશિયાના કોઇપણ ભાગમાં રહીને જુઓ, તેમ અમેરિકાના ભાગમાં રહીને જુઓ; તો પણ પશ્ચિમમાં સૂર્યાસ્ત થતો ને પૂર્વમાં સૂર્યોદય થતો જણાશે. આ ઉપરથી બંને ગોળા વચ્ચે રાત્રિ દિવસ જેટલો અંતર રહે છે કે નહીં તેનો વ્યાજબી ખ્યાલ આવી શકશે. નહીં તો માનવું પડશે કે ઉદયાસ્ત થનાર ને સ્થાયી રહેનાર સૂર્ય જુદા જુદા છે. નહીં તો ઉદયાસ્ત નથી થતો આવો અનુભવ સર્વ પ્રજાને થવો જોઇએ.

૧૨. આ પૃથ્વી ગોળ સ્થાલીની જેમ છે. તે આખા જંબુદ્રીપની સ્થિતિએ, નહિં કે આટલી આપણા આજના અનુભવમાં આવેલી પૃથ્વીની સ્થિતિએ. બીજ ત્રીજના ચંદ્ર માફક આ અર્ધ ભરતક્ષેત્ર છે. તેમાં ત્રણ ભાગ છે. તેમાં પૂર્વનો ભાગ પશ્ચિમ ભાગની જેમ (અમેરીકા) હાથ આવ્યો નથી.

Aho ! Shrutgyanam

૧૩. તાજુબી એ છે કે અંગ્રેજોએ પૃથ્વીને ગ્રહરૂપ મણકો ગણી આકાશીય પદાર્થોની માળામાં ગોઠવી દીધી. પણ ખ્યાલ એ થાય છે કે કયાં આકાશીય સ્વચ્છ-શુકલ પદાર્થો ને કયાં આ મલીમસી-માર્તિક (માટી સંબંધી) પૃથ્વી ! દૈનિક માસિક ને વાર્ષિક ગતિ કરવામાં સૂર્ય ને ચંદ્રને નક્ષત્રોની માલાની હાજરી જોઇએ છીએ. તે સિવાય સૂર્ય ચંદ્ર પોતાની ગતિનો ખ્યાલ લોકોને આપી શકતા નથી. તેમ આ પૃથ્વીને પોતાની ગતિમાં અનુકૂળ થનાર પૃથ્વીની કયી નક્ષત્રમાલા હાજર થશે ? સૂર્ય ચંદ્રાદિ આકાશીય પદાર્થોમાં આ પૃથ્વી પણ એક આકાશમાં લટકતો ગોળો છે, તે સમજવું કે માનવું એ શું ભ્રમજનક જ્ઞાન નથી ? કોઈ પણ શાન્ત સ્થિરસ્થાનમાં-વેધશાળામાં રહી જોતાં જ્યોતિષીઓને જ્યારે કોઈ પણ આકાશીય પદાર્થો પોતાની ગતિનું જ્ઞાન આપે છે. ત્યારે પૃથ્વી એ પ્રમાણે ફરે છે એવું જ્ઞાન કઇ વેધશાળામાં રહી જોતાં પ્રેક્ષકને થયું છે ? એમ કહેવામાં આવે છે કે અનુમાન પ્રમાણથી પૃથ્વી ફરવાનું જ્ઞાન થાય છે. પ્રત્યક્ષથી નહીં. ત્યારે ગ્રહોની ચાલ જોવામાં કાં અનુમાન નથી આગલ કરતા ? શા માટે પ્રત્યક્ષથી જુઓ છો ? પૃથ્વીને બરાબર પ્રત્યક્ષથી જુઓ, ખાત્રી થશે કે 'ભૂલ્યા છીએ !' વસ્તુતઃ સૂર્યની જગાએ પૃથ્વીને મૂકતાં દૃષ્ટિ વિપર્યય જ્ઞાન જણાય છે. માત્ર પૃથ્વી ને સૂર્ય વિષે છે એટલું જ નહીં પણ ન્યુટને -gravitation (ગુરુત્વાકર્ષણ) નિયમ શોધી કાઢયો તે પણ દૃષ્ટિ વિપર્યય છે. વૃક્ષ ઉપરથી ફળ નીચે પડયું, તે જમીનપર આવ્યું, ત્યારે તેને જોતાં વિચાર કર્યો, ને મનથી નિર્ણય કર્યો કે તે ફળ ઉપર કાં ન ગયું ? નીચે કેમ આવ્યું ? નિશ્ચય થયો કે જરૂર પૃથ્વીએ પોતા ભણી ખેંચ્યું, મોટી વસ્તુ હમેશાં નાની વસ્તુને ખેંચે છે એ સિદ્ધાંત (Theory) ચોક્કસ થયો. પણ જે વસ્તુ વજનદાર હોય તે નીચે આવે એ સહજ છે ને જે હલકી હોય તે ઉપર જાય. જેમ પાણીની વરાળ, અગ્નિનો ધૂમ. વળી એક ત્રીજો દાખલો લ્યો. આંખ ઉપર સૂર્યનાં કિરણો પડે છે તેથી આંખ પદાર્થ ને રંગને જોઈ પકડી શકે છે આમ નવો જમાનો કહે છે. નંદિસૂત્ર ને વિશેષાવશ્યક-ભાષ્ય કહે છે કે ચક્ષુઃઇન્દ્રિય ને મનઃઇન્દ્રિય ઉપર જો પદાર્થ પડે તો તે ઇન્દ્રિયો પદાર્થને પકડી શકે નહીં પણ તે બે ઇન્દ્રિયો સામી જાય છે ને પદાર્થને પકડે છે.

૧૪. એમ કહેવું પડશે કે પદાર્થોની શોધખોળ કરવામાં તેઓનું ઘણું સાહસ છે. પણ શોધમાં જે દિવ્યજ્ઞાન જોઇએ તે તેમની પાસે નથી જ. પરિણામ એ આવ્યું કે સૂર્ય જેવી ચીજને જુદા જુદા ખ્યાલોથી કલ્પના કરવામાં, મંગળ જેવા ગ્રહની સાથે અનેક વર્ષો થયા છતાં વાતો કરવામાં, ને ચંદ્ર ઉપર રહેલા વૃક્ષો જલાશયાદિ સમજવામાં, તેઓ કલ્પનાઓના હવાઈ કિલ્લાઓ ચણતા હોય એમ જણાય છે. ઇતિહાસમાં લખાએલ મનુષ્યો ને દેવો જેઓ વિદ્યાબળથી ને દૈવીબળથી આકાશમાં ઉડતા ને દોડતા હતા; તેઓની સાથે આજની પ્રજા આધિભૌતિક સાધનોથી ઘસારો કરતી ને તેઓની આગળ જવા યત્ન કરતી હોય એમ આજની પૂર્વની પ્રજાને લાગી રહ્યું છે.[1]

મુનિ હર્ષચંદ્રજી.

---

૧ કોઈ સાંપ્રદાયિક માન્યતાને સ્થાપિત કરવાનો પ્રયત્ન કરવો એમાં કાંઇ ખોટું નથી પણ જ્યારે તેની વિરુદ્ધ પ્રબલ દલીલો હોય ત્યારે તેવા પ્રયત્નની પાછળ સંગીન અભ્યાસ, બન્ને બાજુનું સમભાવપૂર્વક મેળવેલું જ્ઞાન, સચોટ દલીલો અને સબળ પ્રમાણો એ બધું આવશ્યક છે. ભૂગોળ ખગોળ જેવા વિષયમાં તો એ વસ્તુની વધારેમાં વધારે આવશ્યકતા છે. તેમ છતાં હમણાં હમણાં આ વિષય તરફ જે જૈન સમાજમાં વિચાર કરવાની વૃત્તિ અલ્પાંશે જાગૃત થઇ છે. તે ચાલુ રહે એવા હેતુથી આ લેખ અહીં પ્રસિદ્ધ કર્યો છે. છેલ્લી એકાદ લીંટી કાઢી નાખીને આખો લેખ જેવો ને તેવો છાપ્યો છે.

નંદિસૂત્ર અને વિશેષાવશ્યકભાષ્યનું નામ લઇ જે ઇંદ્રિય અને મન વિષે કહેવામાં આવ્યું છે. તેનો અર્થ વસ્તુતઃ એવો છે કે ઇંદ્રિય અને મન એ બન્ને પ્રાપ્યકારી નથી તેથી પોતાના સ્થાનમાં રહીને જ દૂરવર્તિ એવા પણ વિષયભૂત પદાર્થને તે ગ્રહણ કરે છે. ગ્રહણ કરવા તે કાંઇ પદાર્થના સ્થાનમાં જતા નથી. -સંપાદક.

Aho ! Shrutgyanam

कलिंगना चक्रवर्ती महाराज खारवेलना शिलालेखनुं विवरण

[લેખકઃ–વિદ્યા મહોદધિ શ્રીકાશીપ્રસાદ જાયસવાલ એમ. એ. પટણા]

[પશ્ચિમ હિંદુસ્થાનમાં થએલ પરમાર્હત નરપતિ કુમારપાલ અને દક્ષિણ હિંદુસ્થાનમાં થએલ પરમાર્હત નરપતિ અમોઘવર્ષ એ સામાન્ય રીતે જૈન જનતામાં પ્રભાવક નરેશ તરીકે બહુ જાણીતા છે. કારણ કે જેમ તેઓ સમયથી નજીક છે તેમ તેઓની તથા તેઓના આશ્રિત વિદ્વાનોની મંદિર, સાહિત્ય આદિ સંબંધી વિવિધ કૃતિઓ ઉપલબ્ધ છે. પરન્તુ ઐતિહાસિક તેમ જ મહાપ્રભાવશાળી પરમાર્હત ખારવેલ નરપતિની બાબતમાં તેમ નથી. એ નરપતિને જાણનાર કહેવાતા જૈન વિદ્વાનોમાં પણ ગણ્યા ગાંઠયા જ મળશે. કારણ એ છે કે એ નરપતિ જેમ સમયથી દૂર છે તેમ તેના સંબંધનું સાહિત્ય પણ નહિંવત્ છે. આમ છતાં પણ સદ્ભાગ્યની વાત એ છે કે એ કલિંગ ચક્રવર્તિ ખારવેલે જ પોતે કોતરાવેલ એક શિલાલેખ મળી આવ્યો છે. અને તેના ઉપરથી તેને લગતી અનેક બાબતો ઉપર પ્રકાશ પડે છે.

એ શિલાલેખની ભાળ મળ્યા પછી તેને વાંચવા સમજવા વિગેરે માટે લગભગ સો વર્ષ થયાં દેશીય અને વિદેશીય વિદ્વાનો પ્રયત્ન કરતા આવ્યા છે. દેશીય વિદ્વાનોમાં વ્યાપારપ્રધાન ગૂજરાતના સાક્ષરોનું પણ સ્થાન છે. સદ્ગત ભગવાનલાલ ઇંદ્રજીતે વૈદ્યકપ્રિય પ્રશ્નોરા કુળમાં જન્મ્યા છતાં પણ એ પ્રાચીન શિલાલેખ વાંચવા અને તત્સંબંધી વિચાર કરવા આજથી ૪૦ વર્ષ અગાઉ ગૂજરાતી તરીકે ફાળો આપેલો છે. રાવબહાદુર કે૦ હ૦ ધ્રુવ અધ્યાપક તેમજ ઐતિહાસિક સાક્ષર છે એટલે એ વિષયમાં તેમનો ઉહાપોહ સ્થાને જ ગણાવો જોઇએ. પરન્તુ આશ્ચર્ય અને દુઃખની વાત એ છે કે બધી સાધન સંપત્તિ પ્રાપ્ત છતાં તેમ જ જ્ઞાન અને શોધખોળ પાછળ જોઇતો બધો વખત મેળવી શકનાર સેંકડો જૈન સાધુઓમાંથી આ બાબત ભાગ્યે જ કોઇનું ધ્યાન ગયેલું છે. પ્રસિદ્ધ અને પ્રાચીન એક જૈન નરપતિ વિષે જૈન વિદ્વાનોની અને ખાસ કરી જૈન સાધુમંડલની આટલી જિજ્ઞાસાશૂન્યતા એ ભાગ્યે જ ક્ષંતવ્ય ગણી શકાય. તેમ છતાં ખુશીની વાત એ છે કે પ્રસ્તુત પત્રના તંત્રી શ્રીમાન્ જીનવિજયજીએ આજથી અગીયાર વર્ષ અગાઉ પ્રાચીનજૈનલેખસંગ્રહ (પ્રથમ ભાગ) એ નામનું એક પુસ્તક બ્હાર પાડેલું. જેમાં એ ખારવેલનો શિલાલેખ અને બીજા ત્રણ લેખો આપેલા છે. સાથે સાથે તેઓશ્રીએ એ પુસ્તકમાં એ લેખને સમજવા અને તેની બધી વસ્તુઓ ઉપર પ્રકાશ પાડવા તે વખત સુધી પ્રસિદ્ધ થએલી બધી સામગ્રીનો ઉપયોગ કરી ખૂબ માહિતી પૂરી પાડી છે.

ખારવેલના એ શિલાલેખ પાછળ ઘણા વર્ષો થયાં સતત શ્રમ કરનાર શ્રીયુત જાયસવાલ મહોદયે છેલ્લામાં છેલ્લો ખારવેલના શિલાલેખ વિષે એક નિબંધ હિંદીમાં પ્રસિદ્ધ કર્યો છે. એ મહત્વનો હોવાથી નાગરીપ્રચારિણીપત્રિકાના ૧૯૮૪ ના કાર્તિક માસના અંકમાંથી તેનો ગૂજરાતી અનુવાદ અત્રે આપવામાં આવે છે. આ લેખને વધારે સમજવા અને તેના અભ્યાસ માટે ઉંડા ઉતરવા માટે અમે અમારાં તરફથી કશું ન લખતાં પ્રાચીન જૈનલેખસંગ્રહ (પ્રથમ ભાગ) વાંચવાની વાચકોને ભલામણ કરીએ છીએ. જો કે એ પુસ્તક ગૂજરાતી આલમ માટે બહુ જ મહત્વનું છે, પણ અત્યારે તે સુલભ નથી. તેથી એ શિલાલેખનું તેમજ ખારવેલનું મહત્ત્વ અને પ્રાચીનકાલમાં જૈનધર્મની જાહોજલાલી સમજાવવા પૂરતા થોડાક ફકરા એ પુસ્તકના ઉપોદ્ઘાતમાંથી અને અનુપૂર્તિમાંથી અહીં મૂકવામાં આવે છે. વિશેષ રસવૃત્તિવાળાઓ એ મૂળ પુસ્તક વાંચી લેશે તો તેને પ્રસ્તુત અનુવાદ સમજવામાં કિંમતી મદદ મળશે અને જ્ઞાન સમૃદ્ધિ વધશે.

Aho ! Shrutgyanam

(ઉપોદ્‌ઘાતમાંથી પૃ. ૧-૨)

"જૈન ધર્મ સાથે સંબંધ ધરાવનારા જેટલા પ્રાચીન શિલાલેખો આજ સુધીમાં મળી આવ્યા છે તેમાં આ પુસ્તકમાં આપેલા "કટક નજીક આવેલી ઉદયગિરિની ટેકરી ઉપરના હાથીગુફા તથા બીજા ત્રણ લેખો" સર્વથી પ્રાચીન છે. હાથીગુફા વાળો મહામેઘવાહન રાજા ખારવેલનો લેખ જૈન ધર્મની પુરાતન જાહોજલાલી ઉપર અપૂર્વ અને અદ્વિતીય પ્રકાશ પાડનારો છે. શ્રમણભગવાન્ શ્રી મહાવીરદેવપ્રબોધિત પંથના અનુયાયિઓમાંના કોઇપણ પ્રાચીનમાં પ્રાચીન નૃપતિનું નામ જો શિલાલેખમાં મળી આવ્યું હોય તો તે ફક્ત એકલા આ પ્રતાપી નૃપતિ ખારવેલનું જ છે. જૈનધર્મના ઈતિહાસની દૃષ્ટિએ તો આ હાથીગુફાવાળો લેખ અનુપમ છે જ, પરંતુ ભારતવર્ષના રાજકીય ઇતિહાસની અપેક્ષાએ પણ આની ઉપયોગિતા અનુત્તર જ જણાય છે. લગભગ એક શતાબ્દી જેટલા લાંબા કાળથી આ લેખની ચર્ચા યુરોપીય અને ભારતીય પુરાતત્ત્વજ્ઞોમાં ચાલ્યાં કરે છે. અનેક લેખો અને પુસ્તકો આ લેખના વિષયમાં લખાયાં-છપાયાં છે. સેંકડો વિદ્વાનો આ લેખની મુલાકાત લઇ ફોટા વિગેરે ઉતારી ગયા છે-અને હજુ પણ એમજ ચાલુ છે. આવી રીતે ઐતિહાસિક વિદ્વાનોમાં આ લેખ એક મહત્ત્વનો અને પ્રિય થઇ પડયો છે. પરંતુ એ જાણીને મ્હને સાશ્ચર્ય ખેદ થાય છે કે જેમના ધર્મ સાથે આ મહત્ત્વના સ્થાનનો સીધો સંબંધ છે. જેમનો એક પ્રકારે આ કીર્તિસ્થંભ છે અને જેમની પ્રાચીન પ્રભુતાના પ્રકાશમય કિરણો આમાં અંકિત થએલાં છે તે જૈનોમાંથી હજી સુધી કોઇને એનું નામ પણ જણાયું-સંભળાયું નથી.

શ્રમણ ભગવાન્ શ્રી મહાવીરદેવના નિર્વાણ બાદ ઉદાયી, ચંદ્રગુપ્ત, સંપ્રતિ અને વિક્રમાદિત્ય આદિ નૃપતિઓ જૈનધર્મ પાળનારા અને જૈનશાસનની પ્રભાવના કરનારા થઇ ગયાના ઉલ્લેખો કેટલાક જૈનગ્રંથોમાં જોવામાં આવે છે, પરંતુ તે કથનની સત્યતા સિદ્ધ કરનાર એક પણ ઐતિહાસિક પ્રમાણ-કે જેને નિઃશંક રીતે સર્વ કોઇ સ્વીકારી શકે-આજ સુધીમાં ઉપલબ્ધ થયું નથી. જે ગ્રંથોમાં ઉપર્યુક્ત રાજાઓને જૈનધર્માનુયાયી જણાવ્યા છે તે ગ્રંથો ઘણા પાછળના સમયે લખાયા છે તેથી તેમના કથન ઉપર પુરાતત્ત્વજ્ઞો બહુ વિશ્વાસ નથી રાખતા. કારણ કે આવા ગ્રંથોક્ત વર્ણનોમાંથી ઘણા ખરા ઇતિહાસની દૃષ્ટિએ નિર્મૂલ ઠર્યા છે, અને ઠરતા જાય છે. દૃષ્ટાંત તરીકે જે વિક્રમાદિત્ય નામના રાજાના વિષયમાં અનેક ચરિત્રો અને આખ્યાનો લખાયાં છે અને જેના નામથી આજે આખા ભારતવર્ષમાં (લગભગ ૧૨૦૦-૧૫૦૦ વર્ષથી) રાષ્ટ્રિય સંવત્ પ્રવર્તે છે તેના અસ્તિત્વ અને સમય સુધાં માંટે પણ આજના અનેક ઐતિહાસિકો શંકાશીલ છે."

અનુપૂર્તિમાંથી પૃ. ૫૧ થી ૫૭ સુધી. ખારવેલના સંબંધમાં શ્રીયુત કે૦ હ૦ ધ્રુવનુ કથન

"ઇ૦ સ૦ પૂર્વે ૧૬૫માં કલિંગના રાજા મહામેઘવાહન ખારવેલે મગધ ઉપર સ્વારી કરી. હાલ જેને ઓઢિયા પ્રાંત કહે છે તે પ્રાચીન ઉત્કલ દેશની દક્ષિણે કલિંગ આવ્યો હતો. એ પૂર્વ સમુદ્રના કાંઠે ગોદાવરીના મુખ સુધી પસર્યો હતો. ત્યાંના લોક સાહસિક કહેવાતા હતા. પ્રજામાં બ્રાહ્મ બૌદ્ધ અને જૈન ત્રણે ધર્મનો પ્રસાર હતો. પરંતુ પરિબલ જૈનોનૂં હતું. પૂર્વે કલિંગ નંદરાજાના અહોળા સામ્રાજ્યનો ભાગ હતો. એના પછી થનાર મહાપ્રતાપી ચંદ્રગુપ્તે સમસ્ત દક્ષિણાપથ પાટલિપુત્રની છાયા નીચે આણ્યો હતો. ત્યારથી આશરે સો વરસ તે મૌર્યોના તાબામાં રહ્યો હતો. દરમીયાન ઇ૦ સ૦ પૂર્વે ૨૬૪ માં તેણે છૂટા થવાનો એક નિષ્ફળ પ્રયત્ન કર્યો હતો અને તેના બદલામાં અશોકને હાથે ભારે ખુવારી ભોગવી હતી. છેવટે મૌર્યો જ્યારે નબળા પડયા, ત્યારે ઇ૦ સ૦ પૂર્વે ત્રીજા શતકના છેલ્લા ચરણમાં ચેત [સં. ચૈત્ર] વંશના રાજા ક્ષેમરાજે પરતંત્રતાની ઘસાઇ ગએલી બેડી તોડી નાંખી. તે જ અરસામાં અંધ્રદેશનો રાજા સિમુક પણ સ્વતંત્ર થયો. ત્યાર બાદ કલિંગના રાજાએ ઉત્તરમાં ઉત્કલ પશ્ચિમમાં કોશલ અને દક્ષિણમાં વેંગીમંડલનો પ્રદેશ જીતી લઇ રાજ્યમાં વધારો કર્યો. પશ્ચિમમાં આંધ્ર રાજાએ પણ નાસીક પર્યંત મુલક ઉત્તરના રાષ્ટ્રિકો પાસેથી જીતી લીધો. મહાનદીથી કૃષ્ણાના મુખ સુધી વિસ્તાર પામેલા પૂર્વ રાજ્યમાં જ્યારે ક્ષેમરાજનો પૌત્ર ભિક્ષુરાજ ખારવેલ રાજા થયો. ત્યારે અર્ધી સદીની સ્વતંત્રતા અને સુવ્યવસ્થાના પ્રતાપે કલિંગની આર્થિક સ્થિતિ ઉત્તમ પ્રકારની હતી. રૈયત આબાદ અને ખજાનો તર હતાં. નવો રાજા પણ પ્રજાના સુખમાં, રાજ્યના અભ્યુદયમાં અને કુળની કીર્તિમાં વધારો કરે એવો હતો. એનાં પ્રશસ્ત લક્ષણથી સંતોષ પામી પ્રજાએ એને રાજપદ આપ્યું હતું. ખારવેલ અને એના પૂર્વજો જૈન હતા. એનો

Aho ! Shrutgyanam

જન્મ ઇ સ. પૂર્વે ૧૯૭ માં થયો હતો. એને બાળપણમાં વિજિગીષુને છાજે એવી ઉત્તમ પ્રકારની કેળવણી મળી હતી. ગણિત, સાહિત્ય, વ્યવહાર અને ચિત્રવિદ્યામાં તે કુશળ હતો. જૈન આગમોનું તે સારું જ્ઞાન ધરાવતો હતો. અભ્યાસકાળ પૂરો થતાં પંદર વરસની ન્હાની ઉમ્મરે તેને યુવરાજ બનાવવામાં આવ્યો, અને પચીસમા વરસમાં તેના પિતા બુધરાજ દેવલોક પામતાં તે રાજા થયો. ઇ. સ. પૂર્વે ૧૭૩. પૂર્વજની વિજયપ્રવૃત્તિ જારી રાખવા અભિષેક જળથી જ તેણે સંકલ્પ કર્યો. ગાદીએ આવ્યા ને બીજે વર્ષે એ સંકલ્પને પુષ્ટિ આપનારો પ્રસંગ પણ તેને આવી મળ્યો. અંધ્રરાજ્યના નૈસર્ગિક શત્રુ રાષ્ટ્રિકોએ ભોજકોની સહાયતાથી શ્રીમલ્લ શાતકર્ણિને ભારે સંકડામણમાં લીધો હતો; તેમાંથી છૂટવા તેણે ખારવેલની મદદ માગી. કલિંગરાજે મોટું ચતુરંગ દળ અંધ્રરાજની વ્હારે મોકલ્યૂં. આ જબરું સૈન્ય કુમ્મકે આવી પહોંચતાં શત્રુએ પાછાં પગલાં કર્યાં. તેમની પૂંઠે લાગી કલિંગવીરોએ કૌશાંબ ક્ષત્રિયોની સામેલગીરીથી દુશ્મનના હાથમાં ગયેલૂં નાસીક નગર પાછું મેળવ્યું. શૂરા રાષ્ટ્રિક અને ભોજકના હાથ હેઠા પડયા અને તેમણે ખારવેલ સાથે મેળ કર્યો. એ રીતે અંધ્ર, મહારાષ્ટ્ર અને વિદર્ભદેશ કલિંગની છાયા નીચે આવ્યા; અને કલિંગનરેશનો પ્રતાપ રાજ્ય કાળના બીજા જ વર્ષમાં નર્મદા અને મહાનદીથી કૃષ્ણા સુધી પસર્યો. " -સંપાદક.]

અનુવાદ

હિંદુ ઇતિહાસનો પુનરુદ્ધાર આશ્ચર્યકારક છે. ગુપ્ત રાજાઓનો વૃત્તાંત કોણ જાણતું હતું? મૌર્ય ચંદ્રગુપ્તની કીર્તિ વિશાખદત્ત સુધી અને ભારતપતિ શુંગોના વૃત્તાંતો કવિ કાલિદાસ સુધી જીવતાં હતાં. તેમજ ત્યાર પછીના ગ્રંથો મારફત આપણે એઓને આજ પણ જાણીએ છીએ. પરંતુ સમુદ્રગુપ્ત, કર્ણકલચુરી અને ખારવેલ જેઓ મૌર્ય ચંદ્રગુપ્ત અને નેપોલિયનથી પણ ઉતરતા ન હતા. બલ્કે એમ કહેવું જોઈએ કે કોઇ કોઈ બાબતમાં તેઓથી પણ ચડીઆતા હતા. તેઓનું નામનિશાન પણ આપણી પાસેના ગ્રંથોમાં નથી. તેઓનો ઇતિહાસ તેઓના વખતમાં લખાએલ લેખ, પત્થર અથવા તામ્રપત્ર ઉપર કોતરાયેલ પ્રશસ્તિઓ અને ચરિત્રોની મદદથી પ્રસિદ્ધિમાં આવ્યો છે. શિલાલેખો અને દાનપત્રો ઉપરથી ઇતિહાસ તારવવો એ પુરાતત્ત્વજ્ઞોની જુની પ્રથા છે. રાજતરંગિણીકાર કલ્હણે પોતાના કાશ્મીરના ઇતિહાસની રચનામાં એ સાધનનો ઉપયોગ કર્યો હતો. એવું તેણે પોતે જ લખ્યું છે. જુના હિંદુરાજાઓ અને પંડિતો એ પ્રથા જાણતા, નહી તો તેઓ ભૂમિદાન, કુંભદાન વિગેરે સાધારણ પ્રસંગોમાં લાંબા લાંબા ચરિત્રો અને રાજવહીવટના કામોના વર્ણનો શા માટે કોતરાવે. અથવા મંદિરોના શિખરોની નીચે અને સ્તૂપોની અંદર હાડકાંઓ સાથે લેખો ખજાનારૂપે શા માટે દાટી રાખે? ઇતિહાસને ચિરસ્થાયી કરવાની આ રીત હતી. અશોકે તો સ્પષ્ટ લખ્યું છે કે ચિરસ્થાયી કરવા વાસ્તે લેખો પત્થરો ઊપર કોતરાવવામાં આવ્યા.

તેઓ શિલાલેખ વિગેરેમાં વૃત્તાંત અને ચરિત્ર ઘણું કરી ઐતિહાસિક દૃષ્ટિથી આલેખતા હતા; અર્થાત્ વીતી ગયેલ અથવા વર્તમાન હકીકત સંક્ષેપમાં કાવ્યરૂપે નહી. સાચારૂપે દાખલ કરી વર્ણવતા હતા. એ વસ્તુ જોઇ ડોકટર ફ્લીટે કહ્યું છે કે, શિલાલેખ અને તામ્રલેખ જોવાથી સિદ્ધ થાય છે કે પુરાતન હિંદુઓમાં ઈતિહાસ લખવાનું સામર્થ્ય હતું. પૌરાણિક અને કાવ્યવર્ણનોથી એ લેખોની પ્રથા બિલકુલ જુદી છે. એ લેખોની પરંપરા અને શૈલી દસ્તાવેજી ઢબની છે. પુરું નામ, ઠામ, પિતૃપરિચય, ઠેકાણું, તિથિ, સંવત વિગેરે આપી પોતાની રચનાનું કારણ જણાવે છે.

Aho ! Shrutgyanam

એવા લેખોમાંથી જેટલા લેખો આજ સુધીમાં અહિં મળી આવ્યા છે તેમાં કલિંગ ચક્રવર્તી મહારાજ ખારવેલનો લેખ, જે “હાથીગુંફા લેખ”ના નામથી પ્રસિદ્ધ છે તે અગ્ર-ગણ્ય છે. એથી જુનો, નાનકડા મૌર્ય લેખો બાદ કરીએ તો, ફક્ત મહારાજ અશોકવાળો શિલાલેખ “ધર્મલિપિ” છે અને ઐતિહાસિક ઘટના તેમ જ જીવનચરિત્રનું વર્ણન પૂરું પાડનાર ભારતવર્ષનો આ સૌથી પહેલો શિલાલેખ છે.

આ લેખ ઉડીસા (ઉત્કલ)ના ભુવનેશ્વર તીર્થની પાસે ખંડગિરિ–ઉદયગિરિ પર્વત ઉપર એક પહોળી ગુફા ઉપર કોતરવામાં આવેલો છે. પહાડમાં કોરી કોરીને અનેક ઓસરીવાળાં મકાનો–જૈનમંદિર તેમ જ જૈન સાધુઓ વાસ્તે ઉપાશ્રયરૂપ ગુફા–ગૃહ ત્યાં જુના વખતથી બનેલાં છે. એક એવો જ મહેલ પણ પર્વત કોરી બનાવવામાં આવેલો છે. એમાંથી કેટલાંક મકાનો ઉપર વિક્રમ સંવત પહેલાં લગભગ ૨૦૦ વર્ષના સંસ્કૃત અક્ષરો કે, જેને બ્રાહ્મી લિપિ કહેવામાં આવે છે, તેવડે પ્રાકૃતભાષામાં લેખો કોતરી કાઢેલા છે. એ બધા મકાનોને ત્યાં ‘ગુંફા’ અર્થાત્ ગુફા કહે છે. એક એવી બે માળની ગુફા (ખરી રીતે મકાન) ખારવેલની પટરાણીએ કરાવેલી છે. જેને તેઓ ‘પ્રાસાદ’ કહેછે. મહારાણીએ એ ગુફા કલિંગના શ્રમણો માટે કરાવી હતી. લેખમાં મહારાણીના પિતાનું નામ છે અને પતિશ્રી ખારવેલને “કલિંગચક્રવર્તી” કહેવામાં આવ્યો છે. હાથી-ગુંફા લેખમાં જે ઇતિહાસ આપવામાં આવ્યો છે, તે ઉપરથી મહારાજ ખારવેલ બરાબર ચક્રવર્તી સિદ્ધ થાય છે. તેથી જ મેં ઇંગ્રેજીમાં એઓને Emperor કહેલ છે અને પુરાતત્ત્વજ્ઞ ડૉક્ટર વિન્સેન્ટ સ્મીથે એ કથન સ્વીકારી લીધું છે.

હાથીગુંફા એ નામ આધુનિક છે. આ ગુફા કારીગીરી વિનાની બેડોળ છે. એમ જણાય છે કે તે ખારવેલના પહેલાથી હતી અને કોઇ કારણને લીધે વિશેષ માન્ય તેમ જ પ્રતિષ્ઠિત હશે, તેથી જ તેના ઉપર આ બહુ લાંબો પહોળો લેખ લખવામાં આવેલો. કેટલાક અંશોમાં લેખ ગળી ગયો છે. કેટલીક પંક્તિઓની શરુઆતના બારેક અક્ષરો પત્થરનાં ચપતરાં સાથે ઉડી ગયા છે, અને કેટલીક પંક્તિઓમાં વચ્ચે વચ્ચે અક્ષરો એકદમ ઉડી ગયા છે અને કયાંક પાણીથી ઘસાઇ ગયા છે. કયાંક કયાંક અક્ષરની કોતરણી વધી ગઇ છે; અને જલપ્રવાહ તેમ જ બીજા કારણોથી ભ્રમોત્પાદક ચિન્હો ઉત્પન્ન થઇ ગયાં છે. કયાં સુધી ટાંકણાની નિશાની છે અને કયાં કાલકૃત ભ્રમ–જાલ છે–એનો ઉકેલ કરવો એ જ આ લેખનું રહસ્ય છે. કાળ પત્થરને પણ ભરખે છે, અવતારોની પણ કીર્તિનો લોપ કરી દે છે. તેથી ખારવેલના ઇતિહાસનો થોડોક લોપ થઇ જાય તેમાં કાંઇ આશ્ચર્ય નથી. આશ્ચર્ય અને આનંદની વાત તો એ છે કે બે હજાર વર્ષ પછી પણ એ લેખ કોઈ પણ પ્રકારે અસ્તિત્વ ધરાવે છે, અને એ કે એમાં જોડાઇ જવાથી સરસ્વતીના પ્રસાદ વડે બીજક કાંઈક બોલવા માંડયું અને ચુપકી સાધનાર કાળબ્રહ્મ કાંઇક કહેવા લાગ્યા.

જો કે ઇતિહાસ સંશોધકને આ લેખની જાણ સો વર્ષ પહેલાં પણ હતી. પરન્તુ આ લેખ સન ૧૯૧૭ પહેલાં પૂરેપૂરો વાંચી શકાયો ન હતો. પાદરી સ્ટર્લિંગે આ લેખની

Aho ! Shrutgyanam

ચર્ચા સન ૧૮૨૫માં કરી હતી. સૌથી પહેલાં બ્રાહ્મી અક્ષર વાંચનાર પ્રિંસેપે ગ્રીક (યુનાની) અને બ્રાહ્મી બન્ને અક્ષરોમાં નામની છાપવાળા એક સિક્કાની મદદ વડે આ લેખનો પાઠ અને અર્થ અંડબંડ પ્રસિદ્ધ કર્યો હતો. ત્યાર પછી ડો. રાજેંદ્રલાલે સન ૧૮૮૦માં બીજો પાઠ અને અર્થ છાપ્યાં, જેમાં રાજાનું નામ સુદ્ધાં બરાબર વાંચી શકાયું ન હતું. જનરલ કનિંગ્હામે બહુ પરિશ્રમે એક પાઠ (સન ૧૮૭૭માં) તૈયાર કર્યો. પરન્તુ તેમાંએ સફળતા ન મળી. સન ૧૮૮૫માં પં૦ ભગવાનલાલ ઇંદ્રજીતે પહેલી જ વાર એક એવો પાઠ પ્રકાશિત કર્યો કે જેથી લેખના મહત્ત્વનો કાંઈક પત્તો લાગ્યો. પરન્તુ ત્યાં સુધીમાં આ લેખની કોઈ છાપ લેવામાં આવી ન હતી. ફક્ત આંખથી જોઇને અક્ષરોની નકલ કરવામાં આવી હતી. એમ માની લેવામાં આવ્યું હતું કે ઊપર કાગળ ચપકાવવાથી આ લેખની છાપ ઉતરી જ ન શકે. લેખનો મોટો ભાગ વાંચી પણ શકાયો ન હતો. અને જે વાંચી શકાયો હતો તેમાં પણ ભૂલો હતી. મેં સન ૧૯૧૩માં મારા સાહિત્ય સખા મિ૦ રાખાલદાસ બેનરજી મારફત આ લેખની એક પંક્તિ વંચાવરાવી. અને તેની ચર્ચા મેં મારા રાજ્યકાલ નિર્ણયવિષયક એક લેખમાં કરી. એ જોઈ પ્રસિદ્ધ ઐતિહાસિક વિન્સેંટ સ્મીથે એવી ઇચ્છા દર્શાવી કે હું એ સંપૂર્ણ લેખ છાપું અને વાંચું. તે સાથે જ તેઓએ મિ૦ બેનરજીને પણ એ વિષે લખ્યું. પટણા આવ્યા બાદ અને ત્યાં અનુસંધાન સમિતિ નિમાયા બાદ મેં બિહારના ગવર્નર સર એડવર્ડ ગેટને કહ્યું કે આ લેખની છાપ મંગાવવી જોઇએ. સર એડવર્ડના લખવાથી પુરાતત્ત્વ વિભાગ તરફથી પં૦ રાખાલદાસ બેનરજીને ખંડગિરિ મોકલવામાં આવ્યા. તેઓએ પોતે અને મારા શિષ્ય ચિરંજીવી ડૉ. કાલીદાસ નાગની મદદથી બે છાપો બહુ મહેનતે તૈયાર કરી. એમાંથી એક મારી પાસે આવી અને બીજી ડા. ટામસ (લંડન) પાસે ગઇ. કેટલાક મહિના સુધી સખ્ત શ્રમ, ચિંતા અને મનન કરીને મેં લેખનો પાઠ અને અર્થ નક્કી કરી બિહાર-ઓરીસાના રિચર્સ સોસાયટીની જરનલ (પત્રિકા)માં (૧૯૧૭)માં પ્રસિદ્ધ કર્યો. છાપનાં પ્લેટચિત્રો પણ છાપવામાં આવ્યાં. આ પહેલાં છાપ ચિત્રો કયારેએ પ્રસિદ્ધ થયાં ન હતાં. યૂરોપના ઐતિહાસિક પંડિતોએ તથા પ્રો. **લૈનમને** અમેરિકામાં અને રા૦ હીરાલાલ બહાદુરે હિંદુસ્તાનમાં, શિલાલેખના પાઠો અને અર્થોની બહુ ચર્ચા કરી મારી મહેનત ઉપર જાણે પ્રમાણનો સિકકો માર્યો. એટલામાં વચ્ચે જ, અર્થાત્ વર્ષની અંદર જ, મેં પોતે ખંડગિરિ જઈ પહાડની ચટાન ઊપર માંચડાની મદદથી લેખને વાંચી અક્ષરે અક્ષર ફરીથી વધારે સંશોધિત કરી સંસ્કૃત છાયા સાથે એનો પરિષ્કૃત પાઠ બિહાર-ઉડીસાની જરનલના ચોથા ભાગ (જિલ્દ)માં ફરી છાપ્યો (સન ૧૯૧૮). પરન્તુ સ્થળે સ્થળે સંશય રહી જ ગયો. એ સંશય દૂર કરવા મેં ગવર્મેંન્ટને વિનતિ કરી કે લેખનું એક બીબું (cast) વિલાયતી માટી (Plaster of Paris.) ઉપર લેવરાવીને પટણા મંગાવી લેવું જોઇએ, જેથી સરળતા પૂર્વક અહિં કામ થઈ શકે. આ બીબું આવ્યા પહેલાં એવો વિચાર કરવામાં આવ્યો કે બીજો કોઈ લિપિજ્ઞ પહાડ ઉપર જઇ મારા નવા પાઠો તપાસી લે; કારણ કે છાપમાં ઘણા અક્ષરો આવી

Aho ! Shrutgyanam

શકતા ન હતા. આ માટે મારા કહેવાથી ગવર્મેંટે રાખાલદાસ બેનરજીને (જેઓ હિંદુ-સ્થાનમાં સર્વ શ્રેષ્ઠ સરકારી લિપિજ્ઞોમાંના એક છે.) ખંડગિરિ જવાનો હુકમ આપ્યો. અને સન ૧૯૧૯માં અમે બન્ને ત્યાં ગયાં. બન્નેએ મળીને પાઠ સરખાવ્યો. આ વખતે મેં ખારવેલના સમકાલીન એક યવનરાજાનો ઉલ્લેખ જોયો. એટલામાં ઉજળી માટીમાં બીજું પણ તૈયાર થઇને આવી ગયું હતું. અને કાગળ ઉપરની નવી છાપો પણ આવી ગઈ હતી. એ છાપો સાથે મેળવીને ૧૯૨૪માં મેં અને રાખાલદાસ બેનરજીએ ફરી સંશોધનો કર્યાં અને જ્યાં જ્યાં મતભેદ હતો તેનું નિરાકરણ કર્યું. એ મહેનતનું ફળ બીજા કામોની અધિકતાને લઇને પ્રકાશિત ન થઇ શક્યું. સન ૧૯૨૭માં તેને પ્રકટ કર્યાં પહેલાં બીબાં અને છાપો સાથે ફરી મેં મેળવણી કરી. ડિસેંબર ૧૯૨૭માં નવા પાઠનું પ્રકાશન બિહાર પત્રિકામાં કરવામાં આવ્યું. નવાં છાપ-ચિત્રો પણ-જે અહીં આપવામાં આવે છે ને આપવામાં આવ્યાં. આ રીતે દશ વર્ષ પછી આ કામ પુરું થયું. પં૦ નાથુરામ પ્રેમી, મુનિ જિનવિજયજી વિગેરે જૈન પંડિતોની સમ્મતિ થઇ કે હું આ લેખ તથા એનું વિવરણ હિંદીમાં પણ પ્રસિદ્ધ કરૂં. કેટલાક વિશ્વવિદ્યાલયોમાં મારો આ શિલાલેખનો પાઠ શિલાલેખના પાઠયક્રમમાં મુકરર કરવામાં આવ્યો છે. જૈન પંડિતોની આજ્ઞા માથે ચડાવી તેમ જ વિદ્યાર્થીઓને સગવડ મળે એવા ઈરાદાથી એ લેખને હિંદી અનુવાદ સાથે સભાની પત્રિકામાં પ્રકાશિત કરૂં છું. જૈન અને બીજા વિદ્વાનો મારી ભૂલોને સુધારશે તેમ જ તે મને જણાવશે એવી આશા છે. આ લેખ બહુ કઠણ છે, અને પત્થર ઘસાઇ જવાથી મુશ્કેલી બહુ જ વધી ગઇ. જ્યાં જે આના પંડિતો હોય તે બધાની મદદ પ્રાર્થું છું કે બની શકે ત્યાં સુધી સત્ય શોધી પ્રસિદ્ધ કરવું ઘટે.

શિલાલેખનું મહત્ત્વ અને તેની મુખ્ય હકીકતો.

લેખનું મહત્ત્વ એટલુ બધું છે કે વિન્સેંટ સ્મીથના ભારતીય ઇતિહાસના છેલ્લા સંસ્કરણમાં તેના સંપાદકે લખ્યું છે કે આ લેખના ઉદ્‌ઘાટનને લીધે એ ગ્રન્થનું નવું સંસ્કરણ કરવું પડયું.

અત્યાર સુધીમાં જૈન ધર્મનો આ સૌથી પ્રાચીન લેખ છે, એ ઉપરથી જણાય છે કે પટણાના નંદના સમયમાં ઉત્કલ યા કલિંગ દેશમાં જૈન ધર્મનો પ્રચાર હતો. અને જિનની મૂર્તિ પૂજવામાં આવતી હતી. નંદ કલિંગ જિનનામક મૂર્તિ ઉડીસાથી પટણામાં ઉઠાવી લાવ્યો હતો. અને જ્યારે ખારવેલે મગધ ઉપર સવારી કરી સૈકાઓ પછી બદલો લીધો ત્યારે તે ખારવેલ એ મૂર્તિને પાછી લઇ ગયો. અને તે સાથે જ અંગ-મગધના રાજ્યનું પુષ્કળ ધન કલિંગમાં ખેંચી ગયો.

મગધમાં કેટલાએ નંદો થઈ ગયા છે. એક નંદે પોતાનો સંવત ચલાવ્યો હતો જેનો વ્યવહાર અલબેરૂનીએ સન ૧૦૩૦ લગભગ મથુરામાંનો થતો જોયો હતો. તેમ જ એક

Aho ! Shrutgyanam

શિલાલેખમાં ચૌલૂકય વિક્રમાદિત્ય છઠ્ઠાએ પણ સન ૧૦૬૦ માં આ નંદ સંવતનું ચલણ જણાવ્યું છે. નંદ સંવત વિક્રમ સંવતમાં ૪૦૦ નો અંક ઉમેરવાથી નીકળી આવતો. આ ગણત્રી અલબેરૂનીએ આપેલી છે. અર્થાત્ તે વિક્રમથી ચારસો વર્ષ પહેલાં શરૂ થયો હતો. આ સમય નંદવર્ધનનો છે કે જે પહેલો નંદ હતો અને મહાપદ્મ, મહાનંદ વિગેરેનાં પહેલાં થયો. આ શિલાલેખમાં નંદ સંવતનો ઉલ્લેખ છે. તે સંવતના ૧૦૩જા વર્ષમાં એક નહેર ખોદવામાં આવી હતી. આ નહેરને લંબાવીને ખારવેલ કલિંગની રાજધાનીમાં લઇ આવ્યો. સંવત્સર ચલાવનાર નંદરાજ જ ખારવેલના લેખમાં નિર્દિષ્ટ નંદરાજ છે એ ચોખ્ખું છે, કારણ કે બે જગોએ એનો નિર્દેશ છે. એક તો સંવત સાથે અને બીજો મગધમાં મૂર્તિ ઉઠાવી લાવવાની બાબતમાં. જણાય છે કે તે જૈન હતો. કારણ કે તે પોતાને ત્યાં જૈન મૂર્તિ લઇ આવ્યો હતો. ઇસ્વીસનથી ૪૫૮ વર્ષ પહેલાં અને વિક્રમ સં. ૪૦૦ વર્ષ પહેલાં ઉડીસામાં જૈન ધર્મનો એટલો પ્રચાર હતો કે ભગવાન મહાવીરના નિર્વાણ પછી પચોતર વર્ષમાં જ ત્યાં મૂર્તિઓ પ્રચલિત થઈ ગઈ. જૈન સૂત્રોમાં લખેલું છે કે ભગવાન શ્રી મહાવીર પોતે ઉડીસામાં ગયા હતા, અને ત્યાં તેઓના પિતાના એક મિત્ર રાજ્ય કરતા હતા. આ લેખમાં લખેલું છે કે કુમારી પર્વત ઉપર અર્થાત્ ખંડગિરિ ઉપર, જ્યાં આ લેખ છે ત્યાં ધર્મવિજયચક્ર પ્રવર્ત્યું હતું, અર્થાત્ ભગવાન મહાવીરે પોતે જ જૈન ધર્મનો ઉપદેશ કર્યો હતો, અથવા તેઓના પૂર્વવર્તી કોઇ જિનતીર્થંકરે ઉપદેશ કર્યો હતો. ત્યાં પર્વત ઉપર એક કાય-નિષીદી અર્થાત્ જૈનસ્તૂપ હતો, જેમાં કોઇ અરિહંતનું અસ્થિ દાટવામાં આવેલું હતું. ખારવેલ યા એના પહેલાના વખતની એવી અનેક ગુફાઓ અને મંદિરો આ પર્વત ઉપર છે કે જેના ઉપર પાર્શ્વનાથનાં ચિન્હો તેમ જ પાદુકાઓ છે, અને જે કોરી કાઢેલાં છે, તેમ જ બ્રાહ્મી લિપિમાં લેખવાળાં છે. તેમાં જૈન સાધુઓ રહેતા હતા એ વાતનો ઉલ્લેખ છે. આ ઉપરથી એ સ્પષ્ટ છે કે આ સ્થાન એક જૈન તીર્થ તેમ જ ઘણું જુનું છે. મરાઠાઓના રાજ્ય કાલ દરમીયાન પણ જૈનોએ અહિં એક નવું મંદિર બંધાવ્યું હતું. યાત્રીઓએ બનાવરાવેલા અનેક નાના નાના સ્તૂપો અથવા ચૈત્યો અહિં એક જગ્યાએ છે જેને દેવસભા કહેવામાં આવે છે.

ખારવેલે બે વાર મગધ ઉપર ચડાઈ કરી હતી. પહેલીવાર ગોરથગિરિનો ગિરિદુર્ગ જે હવે 'બરાબર' પહાડ કહેવાય છે તે લીધો. અને તેણે રાજગૃહી ઉપર હુમલો કરી તેને ઘેરો ઘાલ્યો હતો. એ જ વખતે યવન રાજ ડિમિત (Demitrios) પટણા યા ગયા તરફ ચડાઈ લઈ જતો હતો. ખારવેલની વીરકથા સાંભળી એ પાછો હઠયો અને મથુરા પણ છોડીને ભાગ્યો. બીજીવાર તેણે બૃહસ્પતિ મિત્ર મગધરાજને પોતાના પગે પાડયો. અર્થાત્ નમાવ્યો. તે વખતે ખારવેલ પોતાના હાથીઓ સાથે પાટલિપુત્રના સુગાંગેય મહેલ સુધી પહોંચી ગયો હતો.

યવનરાજની ચડાઇની ચર્ચા વ્યાકરણ મહાભાષ્યકાર પંતજલિએ પણ કરી છે-"अरुणद् यवनः साकेतं," અને ગાર્ગીસંહિતામાં લખેલું છે કે દુષ્ટ વિક્રાંત યવન, મથુરા સાકેત

Aho ! Shrutgyanam

લેતો લેતો પટણા (કુસુમધ્વજ)ની તરફ કુચ કરશે જેથી બધા કાંપી ઉઠશે. આ શિલાલેખથી જાણવામાં આવ્યું કે એ યવનરાજ ડિમેટ્રિયસ હતો જે યુનાની ઇતિહાસમાં લખ્યા મુજબ બલ્ખ (બૈકિટ્રયા) પાછો ચાલ્યો ગયો હતો. આ બનાવ ઇસ્વીસન પહેલાં ૧૭૫ વર્ષમાં બનેલો છે. એ જ સમય પતંજલિનો પણ છે. આ વખતે મગધનો રાજા પતંજલિનો યજમાન પુષ્યમિત્ર હતો (" पुष्यमित्रं यजामहे ") પુષ્યમિત્ર પછી તેનો પુત્ર અગ્નિમિત્ર ભારતનો સમ્રાટ થયો જેને કે અમરકોષની એક ટીકામાં ચક્રવર્તી તરીકે નિર્દેશ્યો છે. અગ્નિમિત્રના સિક્કાની પેઠે બરાબર તેજ કોટી અને રૂપનો સિક્કો બહસતિમિત્રનો મળે છે. બહસતિમિત્રના સિક્કાઓ અગ્નિમિત્રના સિક્કાઓથી પહેલાંના મનાય છે. બૃહસ્પતિ મિત્રનો સગપણ સંબંધ અહિચ્છત્રના રાજાઓ સાથે હતો કે જેઓ બ્રાહ્મણ હતા. એ કોસમપભોસાના શિલાલેખથી નક્કી છે. મેં પુષ્યમિત્ર જે શુંગવંશનો બ્રાહ્મણ હતો–અને બૃહસ્પતિ મિત્ર એક છે એમ બતાવ્યું છે. પુષ્યનક્ષત્રનો સ્વામી બૃહસ્પતિ છે. આ એકતાને યુરોપના પ્રસિદ્ધ ઐતિહાસિકોએ સ્વીકારી લીધી છે.

બૃહસ્પતિમિત્ર મગધનો રાજા હતો આ તો સુનિશ્ચિત છે. એ નામને પં. ભગવાનલાલ ઇંદ્રજીતે બહુપતિ સાસિન વાંચ્યું હતું. આ પણ એક નામ છે, તેની જાણ તેઓને થઈ ન હતી.

જૈન ગ્રંથોમાં લખ્યું છે કે મૌર્ય ચંદ્રગુપ્તના સમયમાં જૈન સાધુઓ અને પંડિતોની સભા થઈ અને જે જૈન આગમો (અંગ) લુપ્ત પ્રાય થયાં હતાં તે ફરીથી વ્યવસ્થિત કરવામાં આવ્યાં. પરન્તુ આ ઉદ્ધારને ઘણા જૈનોએ ન સ્વીકાર્યો. આ લેખમાં લખ્યું છે કે ખારવેલે મૌર્યકાલમાં નષ્ટ પ્રાય થયેલાં અંગ સપ્તિક (સાત અંગ)નો, ચોથા ભાગનો પુનરુદ્ધાર કરાવ્યો.

જૈનોનું તપોનુષ્ઠાન પણ આ લેખથી સિદ્ધ થાય છે. આમાં જીવ દેહના જૈન વિજ્ઞાનનો પણ ઉલ્લેખ છે.

ખારવેલ ચેદિવંશમાં થયો. કલિંગનો પૂર્વ રાજવંશ નાશ પામ્યો હતો. કારણ કે અશોકે કલિંગ જીતી ત્યાં પોતાનો એક સુબો વાઇસરોય (ઉપરાજ, કુમાર) નીમ્યો હતો. પરન્તુ બૃહસ્પતિ મિત્રના કાંઇક સમયની પહેલાં ત્યાં એક નવો રાજવંશ કાયમ થઇ ગયો હતો, જેની ત્રીજી પેઢીમાં યુવાન અને બહાદુર ખારવેલ હતો. ચેદિવંશનો ઉલ્લેખ વેદમાં આવે છે. તેઓ બરાર (વિદર્ભ)માં રહેતા હતા. ત્યાંથી જ છત્તીસગઢ મહાકોશલ થઈને કલિંગમાં પહોંચી ગયા હતા. ખારવેલના સમયમાં મહારાજા સાતકર્ણિ પશ્ચિમમાં હતા. શિલાલેખોમાં એમના વંશનું નામ સાતવાહન છે, જેને પ્રાકૃત અને સંસ્કૃત ગ્રંથોમાં શાલવાહન કહેવામાં આવેલ છે. સાતવાહનોના પ્રથમ શિલા લેખો ઇસ્વીસન પૂર્વ ૨૦૦ વર્ષના અક્ષરોમાં લખાએલા નાના ઘાટ (નાસિક પ્રદેશ)માં મળી આવે છે.

Aho ! Shrutgyanam

ખારવેલ એક વર્ષ વિજય માટે નીકળતો અને બીજે વર્ષ ઘરે રહેતો, મહેલ વિગેરે બનાવરાવતો, દાન દેતો, તેમ જ પ્રજાહિતનાં કાર્યો કરતો. બીજી ચડાઇની સફળતા પછી તેણે રાજસૂય યજ્ઞ કર્યો, વાર્ષિક કર માફ કર્યો અને પ્રજાને નવા હકકો અનુગ્રહ આપ્યાં. બહુ જ તેજીથી ચડાઇ કરતો. આખા ભારત વર્ષમાં ઉત્તરાપથથી માંડીને પાંડય દેશ સુધી એની વિજય પતાકા ઉડી હતી એની સ્ત્રીએ એને બરાબરજ ચક્રવર્તી કહેલો છે. એ કલિંગનું એવું જ અભિમાન રાખતો જેવું કેટલાક પ્રાંતવાળાઓ પોતપોતાના પ્રાંતનું રાખે છે. એની રાણીએ કલિંગના સાધુઓ માટે પ્રાસાદ કરાવ્યો. પોતાના સ્વામીને "કલિંગ ચક્રવર્તી") કહયો અને પોતાની જિન મૂર્તિનો તેણીએ ("કલિંગ જિન"). કહીને ઉલ્લેખ કરેલો છે.

આશ્ચર્યની વાત છે કે જૈન ગ્રંથોમાં ચેદિરાજ ખારવેલનો નિર્દેશ સુદ્ધાં નથી. પુરાણોમાં જયાં કોશલના "મેઘ" ઉપાધિ ધારી રાજાઓનું વર્ણન છે તે કદાચિત્ આ જ "મહામેઘવાહન" ઉપાધિવાળા ખારવેલ વંશીઓનો નિર્દેશ છે.

ખારવેલે આપેલી કલિંગની મનુષ્યગણના

હિંદુઓના રાજયમાં મનુષ્યગણના થતી હતી કે જે આજકાલની કાચી પાકી મનુષ્ય ગણત્રીથી બહુ જ સારી હતી દરેક ઠાણામાં અર્થાત્ ગામોના કેંદ્ર અને સદર સ્થાનમાં રજીષ્ટર રાખવામાં આવતાં જે ચરિત્ર અને પુસ્ત કહેવાતા. જન્મ અને મૃત્યુની નોંધ કરવા સાથે આબાદી (વસતિ)નો સરવાળો હમેશાં તૈયાર રાખવામાં આવતો. આ ખાતાને પલટણ (ફોજ) એકઠી કરવા માટે તથા વેરો ઉઘરાવવા માટે ચાલતું રાખવામાં આવતું. એમાં પ્રજાનાં ગોધન, જમીન, આદિનું વર્ણન રહેતું. આ બધું વિવરણ કૌટિલ્યના (ચાણકય) અર્થશાસ્ત્ર સાથે મળતું આવે છે. યવન એલચી મેઘાસ્થિનીજે લખ્યું છે કે મૌર્ય રાજ્યમાં પ્રજાના જન્મ મરણનો હિસાબ તૈયાર રહે છે. આ વાતો ન જાણવાથી પં. ભગવાનલાલ ઇંદ્રજીતે લખ્યું છે કે મનુષ્યગણના તો હિંદુસ્થાનમાં હતી જ નહિ. અને તેથી જ તેઓ ખારવેલની પ્રજા (પ્રકૃતિ)ની ગણત્રી જે કે રાજાના પ્રથમ રાજ્ય વર્ષના હેવાલમાં આપવામાં આવી છે તેને સમજી ન શકયા. કલિંગદેશ ઉડીસાથી મોટો હતો. આંધ્રદેશ (તૈલ નદી) સુધી તેની હદ હતી. ખારવેલના પહેલા રાજવર્ષમાં કલિંગ પ્રજા પાંત્રીસ લાખ હતી.

એક સાધન આપણી પાસે છે જેની મદદથી આપણે એ ગણત્રીને તપાસી શકીએ છીએ. લગભગ ૭૫ અથવા સો વર્ષ પહેલાં અશોકે જયારે કલિંગને જીત્યો હતો ત્યારે કલિંગ પલટણના એક લાખ કેદી અને ૧૬ લાખ ઘાયલ તેમ જ ભાગેલા સિપાઇઓ ગણવામાં આવ્યા હતાં. એ વાત અશોકના શિલાલેખમાં નોંધાએલી છે. એ ઉપરથી કલિંગની આબાદીનો હિસાબ કાઢી શકાય છે. જર્મન યુદ્ધશાસ્ત્રના લેખકોએ હિસાબ આપ્યો છે (જેનું પ્રમાણ મેં મારા ઇંગ્રેજી (૧૯૧૭) લેખમાં આપ્યું છે) કે દેશ ઉપર આક્રમણ થતાં તેની રક્ષા માટે આબાદીમાંથી દર સેંકડે ૧૫ મનુષ્ય લડી શકે છે. આ રીતે અશોકના વખતમાં લગભગ આડત્રીસ લાખની વસ્તી કલિંગમાં હોવી જોઇએ. આ હિસાબે ખારવેલના રાજ્યની પાંત્રીસ લાખની આબાદી બરાબર લાગે છે.

Aho ! Shrutgyanam

લેખમાન

લેખની ૧૫ ફુટથી વધારે લંબાઇ અને પાંચ ફુટથી વધારે પહોળાઇ છે. અનેક માણસોની કલમોથી કોતરાઇ એ લેખ લખાએલો છે. કેટલી એ જાતના અક્ષરો છે.

લેખભાષા

ભાષા પાલિ સાથે બહુ મળે છે અને એના પ્રયોગો જાતકો તથા બૌદ્ધ પિટકો સાથે મળતા આવે છે. શબ્દરચના રચનારની કાવ્યકુશળતા સૂચવે છે. શબ્દો તોલાએલા છે. શૈલી સૂત્ર જેવી સંક્ષિપ્ત છે.

વૈદિક બાબતો વિગેરે

ખારવેલનો મહારાજ્યાભિષેક થયો હતો, તે એક વૈદિક કર્મ છે. બૃહસ્પતિસૂત્રમાં લખ્યું છે કે ૨૪ વર્ષ પછી રાજ્યાભિષેક થવો જોઇએ એ જ વાત આ લેખ ઉપરથી પણ સિદ્ધ થાય છે. જૈન હોવાથી રાજાએ અશ્વમેધ ન કરતાં રાજસૂય યજ્ઞ કરીને પોતાનું સાર્વભૌમપદ સિદ્ધ કર્યું હતું. લેખમાં ચેદિવંશને રાજર્ષિકુલવિનિઃસૃત કહેલ છે. એમાં અગ્નિકુંડથી સુસજ્જિત મકાનો રાજાદ્વારા બ્રાહ્મણોને અપાયાની હકીકત નોંધાએલી છે. ખારવેલે જે દાન કર્યું હતું એવા કલ્પવૃક્ષના દાનમાં સોનાનાં ઝાડો બનાવવામાં આવતાં હતાં; અને એ મહાદાન કહેવાતું હતું, એવું હેમાદ્રિએ ચતુર્વર્ગ ચિંતામણિ (દાન ખંડ) માં લખેલું છે.

રાનીવેન અને વર્ધમાન

ખારવેલની સરખામણી વેનની સાથે કરવામાં આવી છે. આ સરખામણી અભિવિજયની બાબતમાં છે. વેન પૃથ્વી માત્રનો રાજા હતો. તેણે કાયદાઓ પણ સારા ઘડયા હતા. આ વાત મનુસ્મૃતિમાં લખાએલી છે. પરન્તુ તેણે નાતજાતનું બંધન ફેંકી દીધું તેથી બ્રાહ્મણો ચીડાઈ ગયા. પદ્મપુરાણમાં તો તેને જૈન જ લખેલ છે. એમ જણાય છે કે જૈનોમાં વેનની પ્રતિષ્ઠા સારી હતી.

તીર્થંકર મહાવીરનું ગૃહસ્થાશ્રમ અવસ્થાનું નામ વર્ધમાન હતું. જૈન ગ્રંથોમાં લખેલું છે કે ભગવાનના જન્મથી વંશની અભિવૃદ્ધિ થવાને કારણે ભગવાનનું નામ વર્ધમાન પડયું (અભિધાન રાજેંદ્ર). ખારવેલની પ્રશસ્તિમાં જે ' **वर्धमान सेसयो वेनाभिविजयो** ' એવા શબ્દો છે તેમાં **वर्धमान** પદ શ્લેષાત્મક જણાય છે. "જે બચપણ (શૈશવ)થી વર્ધમાન છે. (અથવા થયો) " અને જે અભિવિજયમાં વેન છે (અથવા થયો). આ ઉપરથી ધ્વનિત થાય છે કે ભગવાન મહાવીર સ્વામીનું વર્ધમાન નામ સમસામયિક હતું. એ ધ્યાનમાં રાખવું જોઇએ કે આ લેખ જેટલો જૂનો છે તેટલો કોઇ પણ જૈન ગ્રંથ નથી.

હું શિલાલેખના બધા વિષયો કેટલીએ વાર ઇંગ્રેજીમાં લખી ચૂકયો છું. અહીં એ બધું લખવાથી આ પત્રિકાનો પૂરો અંક ભરાઇ જાય અથવા એથી પણ વધી જાય. એમ ધારી અહિં સંક્ષેપમાં જ કાંઇક કહેવામાં આવ્યું છે. પંડિતો ભૂલ ચૂક માફ કરશે.

शुभं भूयात्.

Aho ! Shrutgyanam

श्री खारवेल प्रशस्ति

संकेत–અસલ લેખમાં જે જે મુખ્ય શબ્દોનાં પહેલાં જગ્યા છોડી દેવામાં આવી છે એવા શબ્દોને અહીં જાડા ટાઇપમાં છાપવામાં આવે છે. વિરામચિન્હને માટે પણ જગ્યા ખાલી પડેલી છે. તે ઉભી પાઇથી બતાવવામાં આવ્યું છે. ગળેલા અક્ષરો કોષ્ટકમાં બંધ કરી છાપવામાં આવ્યા છે. ઉડી ગએલા અક્ષરો મીંડાથી સૂચવવામાં આવ્યા છે.

प्राकृत मूल–पाठ ।

(पंक्ति १)

नमो अराहंतानं [।] नमो सवसिधानं [।] **ऐरेन** महाराजेन **माहामेघवाहनेन चेतिराज** वसवधनेन पसथ–सुभलखनेन चतुरंतलुठितगुनोपहितेन कलिंगाधिपतिना **सिरि खारवेलेन**

(पंक्ति २)

पंदरसवसानि सिरि–कडार–सरीरवता कीडिता कुमारकीडिका [।] ततो लेखरूपगणना–ववहार–विधि–विसारदेन सवविजावदातेन नववसानि योवरजं पसासितं [।] संपुण–चतु–वीसति–वसो तदानि वधमान–**सेसयो** वेनाभिविजयो ततिये

(पंक्ति ३)

कलिंगराजवंस–पुरिसयुगे **माहारजा**भिसेचनं पापुनाति [।] अभिसितमतो च पधमे वसे वात–विहत–गोपुर–पाकार–निवेसनं पटिसंखारयति [।] कलिंगनगरि [f] खबीर–इसि–ताल–तडाग–पाडियो च बंधापयति [।] सवुयानपटिसंठपनं च

(पंक्ति ४)

कारयति [।।] पनतीसाहि **सतसहसेहि पकतियो** च रंजयति [।] दुतिये च वसे अचितयिता सातकंणि पछिमदिसं हय–गज–नर–रध–

संस्कृतच्छाया ।

नमोऽर्हद्भ्यः [।] नमः सर्वसिद्धेभ्यः [।] **ऐलेन** महाराजेन **महामेघवाहनेन चेदिराज** वंशवर्धनेन प्रशस्तशुभलक्षणेन चतुरन्त–लुठितगुणोपहितेन कलिङ्गाधिपतिना **श्री क्षारवेलेन**

पञ्चदशवर्षाणि श्रीकडारशरीरवता क्रीडिताः कुमारक्रीडाः [।] ततो लेख्यरूपगणनाव्यवहारविधिविशारदेन सर्वविद्यावदातेन नववर्षाणि यौवराज्यं प्रशासितम् [।] सम्पूर्ण चतुर्विंशतिवर्षस्तदानीं वर्धमानशैशवो वेनाभिविजयस्तृतीये

कलिङ्गराजवंश–पुरुष–युगे **महाराज्या**भिषेचनं प्राप्नोति [।] अभिषिक्तमात्रश्च प्रथमे वर्षे वातविहतं गोपुर–प्राकार–निवेशनं प्रतिसंस्कारयति [।] कलिङ्गनगर्याम् खिबीरर्षि* तल्ल–तडाग–पालीश्च बन्धयति [।] सर्वोद्यानप्रतिसंस्थापनञ्च

कारयति [।।] पञ्चत्रिंशद्भिः शतसहस्रैः× **प्रकृतीश्च** रञ्जयति [।] द्वितीये च वर्षे अचिन्तयित्वा सातकर्णिं पश्चिमदेशं+ हय–गज–नर–रथ–

---

* ऋषि–क्षिबीरस्य तल्ल–तडागस्य

× पञ्चत्रिंशच्छत–सहस्रैः प्रकृतीः परिच्छिद्य परिगणय्य इत्येतदर्थे तृतीया ।

\+ दिक्शब्दः पालीप्राकृते विदेशार्थोऽपि ।

Aho ! Shrutgyanam

प्राकृत मूल-पाठ ।

बहुलं दंडं पठापयति [।] कन्हवेंनां गताय च सेनाय वितासितं मुसिकनगरं [।] ततिये पुन वसे

(पंक्ति ५)

गंधव-वेदबुधो दंप-नत-गीतवादित संदसनाहि उसव-समाज कारापनाहि च कीडापयति नगरिं [।] तथा चवुथे वसे विजाधराधिवासं अहत-पुवं कालिंग पुवराज-निवेसितं......... वितध-मकुटसबिलमढिते च निखित-छत-

(पंक्ति ६)

भिंगारे हित-रतन-सापतेये सवरठिक **भोजके** पादे वंदापयति [।] पंचमे च दानी वसे **नंदराज**-ति-वस-सत-ओघाटितं तनसुलिय-वाटा पनाडिं नगरं पवेस [य] ति [।] सो........ भिसितो च राजसुय [°] संदश-यंतो सव-कर-वणं

(पंक्ति ७]

अनुगह-अनेकानि सतसहसानि विसजति पोरं जानपदं [।] सतमं च वसं पसासतो **वजि**-रघरव [ँ] ति-धुसित-घरिनीस [-मतुकपद] -पुंना [ति ? कुमार]........................[।] अठमे च वसे महता सेना.......-गोरधगिरिं

(पंक्ति ८]

घातापयिता **राजगहं** उपपीडापयति [।] एतिनं च कंमापदान-संनादेन संवित-सेन-

संस्कृतच्छाया ।

बहुलं दण्डं प्रस्थापयति [।] कृष्णवेणां गतया च सेनया वित्रासितं मूषिकनगरम् [।] तृतीये पुनर्वर्षे

गान्धर्ववेदबुधो दम्प*-नृत्त-गीतवादित्र-सन्दर्शनैरुत्सव-समाज-कारणैश्च क्रीडयति नगरीम् [।] तथा चतुर्थे वर्षे विद्याधराधिवासम् अहतपूर्वं कालिङ्ग-पूर्वराजनिवेशितं.........वितथ-मकुटान् सार्धितबिल्मांश्च निक्षिप्त-छत्र-

भृङ्गारान् हृत-रत्न-स्वापतेयान् सर्वराष्ट्रिक **भोजकान्** पादावभिवादयते [।]पञ्चमे चेदानीं वर्षे **नन्दराजस्य** त्रि-शत-वर्षे अवघट्टितां तनसुलिय-वाटात् प्रणालीं नगरं प्रवेशयति [।] सो (ऽपि च वर्षे षष्ठे) ऽभिषिक्तश्च राजसूयं सन्दर्शयन् सर्व-कर-पणम्

अनुग्रहाननेकान् शतसहस्रं विसृजति पौराय जानपदाय [।] सप्तमं च वर्षं प्रशासतो वज्रगृहवती घुषिता गृहिणी [सन्-मातृकपदं प्राप्नोति ?] [कुमारं]...........................[।] अष्टमे च वर्षे महता× सेना......गोरथ-गिरिं

घातयित्वा **राजगृहमुपपीडयति** [।] एतेषां च कर्मावदान-संनादेन संवीतसैन्य-

* दम्प=डफ इति भाषायाम् ?

× महता=महात्मा ? सेनाप्र **समस्यन्त**-पदस्य विशेषणं वा ।

Aho ! Shrutgyanam

प्राकृत मूल-पाठ।

वाहनो विपमुंचितु मधुरं अपयातो यवनराज डिमित......................[मो ?] यछति [वि] ....पलव..

(पंक्ति ९)

कपरुखे हय-गज-रध-सह-यंते सवघरा-वास-परिवसने स-अगिणठिया [।] सव-गहनं च कारयितुं बम्हणानं जातिं परिहारं ददाति [।] अरहतो............व......न....गिय

(पंक्ति १०)

...[क] . f. मान [ति]* रा [ज]-संनिवासं महाविजयं पासादं कारयति अठतिसाय सतसहसेहि [।] दसमे च वसे दंड-संधी-साम-मयो भरध-वस-पठानं महि-जयनं...ति कारापयति............[निरितय] उयातानं च मनि-रतना [नि] उपलभते [।]

(पंक्ति ११)

............मंडं च अवराजनिवेसितं पीथुड-गदभ-नंगलेन कासयति [f] जनस दंभावनं च तेरसवस-सतिक [˙]-तु भिदति तमरदेह-संघातं [।] वारसमे च वसे...हस...के. ज. सवसेहि वितासयति उतरापथ-राजानो......

(पंक्ति १२)

............मगधानं च विपुलं भयं जनेतो हथी सुगंगीय [˙] पाययति [।] मागधं च राजानं **वहसतिमितं** पादे वंदापयति [।]

संस्कृतच्छाया।

वाहनो विप्रमोक्तुं मथुरामपयातो यवनराजः डिमित.....................[मो ?] + यच्छति [वि] ....पल्लव..

कल्पवृक्षान् हयगजरथान् सयन्तॄन् सर्वगृहा-वास-परिवसनानि साग्निष्ठिकानि [।] सर्वग्रहणं च कारयितुं ब्राह्मणानां जातिं परिहारं ददाति [।] अर्हतः............व..........न....गिया [?]

...[क] . f. मानति [?] राजसन्निवासं महाविजयं प्रासादं कारयति अष्टात्रिंशता शतसहस्रैः [।] दशमे च वर्षे दण्डसन्धि-साममयो भारत-वर्ष-प्रस्थानं महीजयनं...ति कारयति............ [निरत्या ?] उद्यातानां च मणिरत्नानि उप-लभते [।]

....*........मण्डं च अपराजनिवेशितं पृथुल-गर्दभ-लाङ्गलेन कर्षयति जिनस्य दम्भापनं त्रयोदशवर्ष-शतिकं तु भिनत्ति तामर-देहसंघातम् [।] द्वादशे च वर्षे.............................भिः वित्रा-सयति उत्तरापथराजान्

............मगधानाञ्च विपुलं भयं जन-यन् हस्तिनः सुगाङ्गेयं प्राययति [।] मागधञ्च राजानं **बृहस्पतिमित्रं** पादावभिवादयते [।]

---

* 'मानवी' पण वांची शकाय छे।

+ नवमे वर्षे इत्येतस्य मूलपाठो नष्टोन्तार्हताक्षरेषु।

* एकादशे वर्षे इत्येतस्य मूलपाठो नष्टो गलितशिलायाम्।

Aho ! Shrutgyanam

प्राकृत मूल-पाठ ।

नंदराज–नीतं च कालिंगजिनं संनिवेसं.........गह –रतनान पडिहारेहि अंगमागध–वसुं च नेयाति [।]

(पंक्ति १३)

............तु [·] जठरलिखिल–बरानि सिहरानि नीवेसयति सत–वेसिकनं परिहारेन [।] अभुतमछरियं च हथि–नावन परीपुरं सव–देन हय–हथी–रतना [मा] निकं **पंडराजा** चेदानि अनेकानि मुतमणिरतनानि अहरापयति इध सतो

(पंक्ति १४)

............सिनो वसीकरोति [।] तेरसमे च वसे सुपवत–विजयचक–कुमारीपवते अरहिते [य ?]* प-खीण–संसितेहि कायनिसीदीयाय याप–आवकेहि राजभितिनि चिनवतानि वसासितानि [।] पूजाय रत–उवास–खारवेल–सिरिना जीवदेह–सिरिका परिखिता [।]

(पंक्ति १५)

.....[सु] कतिसमणसुविहितानं (नुं–?) च सत–दिसानं [नुं ?] आनिनं तपसि–इसिनं संघियनं [नुं ?] [;] अरहत–निसीदिया समीपे पभारे वराकर–समुथपिताहि अनेक–योजनाहिताहि प. सि. ओ......सिलाहि सिंहपथ–रानिसि–[.] धुडाय निसयानि

(पंक्ति १६)

................घंटालक्तो+ चतरे च वेडूरिय-

संस्कृतच्छाया ।

नन्दराजनीतञ्च कालिङ्गजिन–सन्निवेशं........ गृहरत्नानां प्रतिहारैराङ्ग–मागध–वसूनि च नाययति [।]

.........तुं जठरोल्लिखितानि वराणि शिखराणि निवेशयति शतवैशिकानां परिहारेण [।] अद्भुतमाश्चर्यञ्च हस्तिनावां पारिपूरम् सर्वदेयं हय–हस्ति–रत्न–माणिक्यं **पाण्ड्यराजात्** चेदानीमनेकानि मुक्तामणिरत्नानि आहारयति इह शक्तः [।]

............सिनो वशीकरोति [।] त्रयोदशे च वर्षे सुप्रवृत्त–विजयचक्रे कुमारी–पर्वतेऽर्हिते प्रक्षीण×–संसृतिभ्यः कायिकनिषीद्यां यापज्ञापकेभ्यः राज–भृतीश्चीर्णव्रताः [एव ?] शासिताः [।] पूजायां रतोपासेन क्षारवेलेन श्रीमता जीव देह–श्रीकता परीक्षिता [।]

...........सुकृति–श्रमणानां सुविहितानां शतदिशानां तपस्विऋषिणां सङ्घिनां [।] अर्हन्निषीद्याः समीपे प्राग्भारे वराकरसमुत्थापिताभिरनेकयोजनाहृताभिः...........शिलाभिः सिंहप्रस्थीयायै राज्ञ्यै सिन्धुडायै निश्रयाणि

........घण्टालक्तः [?], चतुरश्च च वैदूर्य-

---

* पंक्तिनी नीचे 'य' एवो एक अक्षर मालूम पडे छे ।

+ अथवा–घंटालीणह

× यप–क्षीण इति वा ।

Aho ! Shrutgyanam

प्राकृत मूल-पाठ ।

गभे थंभे पतिठापयति [,] पान-तरिया सत सहसेहि [।] **मुरिय**-काल वोछिंनं च चोयठि-अंग-सतिकं तुरियं उपादयति [।] खेमराजा स वढराजा स भिखुराजा धमराजा पसंतो सुनंतो अनुभवंतो कलाणानि

(पंक्ति १७)

........गुण-विसेस-कुसलो सव-पासंड-पूजको सव-देवायतनसंकारकारको [अ] पति-हत चकिवाहिनिबलो चकधुरो गुतचको पवत-चको राजसि-वस-कुलविनिश्रितो महा-विजयो राजा **खारवेल-सिरि**

संस्कृतच्छाया ।

गर्भान् स्तम्भान् प्रतिष्ठापयति [,] पञ्चसप्तशतसहस्रैः [।] **मौर्य** कालव्यवच्छिन्नञ्च चतुःषष्टिकाङ्गसतिकं तुरीयमुत्पादयति [।] क्षेमराजः स वर्द्धराजः स भिक्षुराजो धर्मराजः पश्यन् शृण्वन्ननुभवन् कल्याणानि

........गुण-विशेष-कुशलः सर्व-पाषण्डपूजकः सर्व-देवायतनसंस्कारकारकः [अ] प्रतिहत चक्रि-वाहिनि-बलः चक्रधुरो गुप्तचक्रः प्रवृत्त-चक्रो राजर्षिवंश-कुलविनिःसृतो महाविजयो राजा **क्षारवेलश्रीः**

ભાષાનુવાદ

(૧) અરિહંતોને નમસ્કાર, સિદ્ધોને નમસ્કાર, ઐર (ઐલ) મહારાજ, મહામેઘવાહન, (મહેંદ્ર) ચેદિરાજ-વંશવર્ધન, પ્રશસ્ત શુભલક્ષણવાળા ચતુરંતવ્યાપીગુણવાળા કલિંગાધિપતિશ્રી ખારવેલે

(૨) પંદરવર્ષ સુધી શ્રી કડાર (ગૌરવર્ણવાળા) શરીરવડે બાલ્યાવસ્થાની રમતો (ક્રીડાઓ) કરી. ત્યારપછી લેખ્ય (સરકારી હુકમનામાં)[૧] રૂપ (ટંકશાલ)[૨] ગણના (સરકારી હિસાબ કિતાબ આવક ખર્ચ[૩]) વ્યવહાર (કાયદા) અને વિધિ (ધર્મશાસ્ત્રો) માં વિશારદ થઇ, સર્વ વિદ્યાવદાત (બધી વિદ્યાઓમાં પરિશુદ્ધ) એવા [તેઓએ] નવ વર્ષ સુધી યુવરાજ તરીકે શાસન કર્યું. તે વખતે સંપૂર્ણ ચોવીસ-વર્ષની ઉમરના થએલ [તેઓશ્રી] જેઓ બાલ્યાવસ્થાથી વર્ધમાન છે અને જેઓ અભિવિજયમાં વેન (રાજ) છે, ત્રીજા

(૩) પુરુષયુગમાં (ત્રીજી પેઢીમાં) કલિંગના રાજવંશમાં મહારાજ્યાભિષેકને પ્રાપ્ત થયા. અભિષેક પછીના પ્રથમ વર્ષમાં વાવાઝોડાથી તૂટી ગયેલ દરવાજાવાળા કિલ્લાની મરામત કરાવી. કલિંગનગરી (રાજધાની) માં ઋષિ ખિબીરનાં તલાવડાં-તળાવો અને પાળો બંધાવ્યાં. બધા બાગોની મરામત

(૪) કરાવી. પાંત્રીસલાખ પ્રકૃતિ (પ્રજા) નું રંજન કર્યું. બીજા વર્ષમાં સાતકંણિ (સાતકર્ણિ) ની કશી પરવા કર્યા વિના જ પશ્ચિમદિશામાં (ચડાઇ કરવા માટે) ઘોડા, હાથી, પેદળ અને રથવાળી મોટી

૧ લેખ્યનો આ અર્થ (શાસન) કૌટિલ્ય અર્થશાસ્ત્રમાં ૧, ૩૧ જૂઓ.

૨ કૌટિલ્ય અ. ૧, ૩૩, જૂઓ.

૩ કૌ. **અ. ૧. ૨૮, રુપ, લેખા** અને **ગણના** ઉપર સૂત્ર હતાં, એવું મહાવગ્ગની ટીકા ઉપરથી માલૂમ પડે છે. મહાવગ્ગ ૧, ૪૯, જૈનસૂત્રમાં લખ્યું છે કે મહાવીરસ્વામિનું નામ એટલા માટે વર્ધમાન પડયું કે જન્મથી જ જ્ઞાતવંશની ધન; ધાન્યાદિ વડે વૃદ્ધિ થવા માંડી હતી.

Aho ! Shrutgyanam

સેના મોકલી. કન્હવેંનાં (કૃષ્ણવેણા નદી) ઉપર પહોંચેલી સેનાવડે મુસિક (મૂષિક) નગરને બહુ ત્રાસ આપ્યો. વળી ત્રીજે વર્ષે

(૫) ગંધર્વ વેદના પંડિત એવા [તેઓશ્રીએ] દંપ (ડફ ?) નૃત્ય, ગીત, વાદિત્રનાં સંદર્શનો (તમાશાઓ) વડે ઉત્સવ, સમાજ (નાટક, કુસ્તી, આદિ) કરાવી નગરીને રમાડી. તથા ચોથે વર્ષે, વિદ્યાધરાધિવાસને જેને કલિંગના પૂર્વવર્તી રાજાઓએ બનાવરાવ્યો હતો, અને જે પહેલાં પડયો ન હતો.[૪] ૦૦૦૦૦૦, [૫]જેના મુકુટો વ્યર્થ થઈ ગયા છે, જેનાં કવચ, બખ્તરો કાપીને બે પલ્લાં કરી દેવામાં આવ્યાં છે જેનાં છત્રો કાપી પાડી દેવામાં આવ્યાં છે,

(૬) અને જેના ભૃંગાર (રાજકીય ચિન્હ સોના ચાંદીના લોટા ઝારી,) ફેંકી દેવામાં આવ્યાં છે, જેનાં રત્ન અને સ્વાપતેય (ધન) છીનવી લેવામાં આવ્યાં છે, એવા બધા રાષ્ટ્રિક ભોજકોને પોતાના પગ ઉપર નમાવ્યા. હવે પાંચમા વર્ષમાં નંદરાજના એકસો ત્રીજા વર્ષ (સંવત) માં ખોદાએલી નહેરને તનસુલિય-વાટે રાજધાનીની અંદર લઇ આવ્યા. અભિષેકના [છઠ્ઠા વર્ષે] રાજસૂય યજ્ઞ ઉજવતાં કરના બધા રૂપિયા

(૭) માફ કર્યા, તેમ જ અનેક લાખો [૬]અનુગ્રહો પૌર જાનપદને બક્ષ્યા. સાતમા વર્ષમાં રાજ્ય કરતાં [તેઓની] ગૃહિણી વજ્રધરવાળી ધ્રુષિતા (નામચીન યા પ્રસિદ્ધ) માતૃપદવીને પ્રાપ્ત થઇ[૭] (?) [કુમાર ?] ૦૦૦૦૦૦ આઠમા વર્ષમાં મહા ૦૦૦ સેના ૦૦૦ ગોરધગિરિ[૮]

(૮) ને તોડીને રાજગૃહને ઘેરી લીધું. એનાં કર્મોનાં અવદાનો (વીરકથાઓ) ના સંનાદથી યુનાની રાજા (યવનરાજ) ડિમિતે...Demetrios પોતાની સેના અને છકડાં એકઠાં કરી મથુરા છોડી દેવા માટે પાછાં પગલાં ભર્યાં. ૦૦૦૦૦૦ નવમા વર્ષમાં [તે શ્રી ખારવેલે] આપ્યાં છે ૦૦૦૦૦૦ પલ્લવપૂર્ણ

(૯) કલ્પવૃક્ષો[૯] ઘોડા, હાથીઓ, રથો હાંકનાર સહિત, તેમજ મકાનો અને શાળાઓ અગ્નિકુંડો સહિત. એ બધું સ્વીકારાવવા માટે બ્રાહ્મણજાતિને જાગીરો આપી. અર્હતના ૦૦૦૦૦૦

(૧૦) રાજભવનરૂપ **મહાવિજય** (નામનો) પ્રાસાદ તેઓએ આડત્રીસ લાખ (પણ,) વડે બના-વરાવ્યો. દશમા વર્ષમાં દંડ–સંધિ–સામ પ્રધાન [તેઓએ] ભૂમિજય કરવા માટે ભારતવર્ષમાં પ્રસ્થાન કર્યું ૦૦૦૦૦૦. જેઓના ઉપર ચડાઇ કરી તેઓનાં મણિરત્નો પ્રાપ્ત કર્યાં.

(૧૧) ૦૦૦૦૦૦૦૦૦ ([૧૦]અગીયારમા વર્ષમાં) (કોઇ) ખરાબ રાજાએ બનાવરાવેલ મંડ (મંડી યા બજાર) ને મોટા ગધેડાઓના હળવડે ખેડાવી નાખ્યો. લોકોને છેતરનાર એકસો તેર વરસના તમરના દેહસંધાતને તોડી નાખ્યો. બારમા વર્ષમાં ૦૦૦૦૦૦૦૦૦૦૦૦ થી ઉત્તરાપથના રાજાઓને બહુ ત્રસ્ત કર્યા.

---

૪ અહતપૂર્વનો અર્થ નવું કપડું ચડાવીને એવો પણ થઇ શકે છે.

૫ અહીં અક્ષરો ગળી ગયા છે.

૬ અનુગ્રહનો આ અર્થ કૌટિલ્યમાં છે.

૭ આ વાકયનો પાઠ અને અર્થ સંદિગ્ધ છે.

૮ બરાબર પહાડ જે ગયા પાસે છે અને જેમાં મૌર્ય ચક્રવર્તી અશોકનાં કરાવેલા ગુફા મઠો છે તે મહાભારત અને એક શિલાલેખમાં ગોરથગિરિના નામથી ઉલ્લેખાએલ છે. આ એક ગિરિદુર્ગ છે આની કિલ્લાબંદી હજી પણ મજબુત છે. મોટી મોટી દીવાલોવડે દ્વારો અને દરારો બંધ છે.

૯ આ સોનાનાં થતાં. ચતુર્વર્ગ ચિંતામણી દાનકાંડ ૫, આ મહાદાનમાં છે.

૧૦ અહિંથી માંડી છેલ્લે સુધી દરેક પંક્તિમાં લગભગ ૧૨ અક્ષરો પંક્તિની શરૂઆતમાં પથ્થરના ચપતરાં સાથે ઉડી ગએલાં છે.

Aho ! Shrutgyanam

(૧૨) ૦૦૦૦૦૦ તે મગધવાસીઓને ભારે ભય ઉત્પન્ન કરતો છતો હાથીઓને સુગાંગેય (પ્રાસાદ)[૧૧] સુધી લઇ ગયો. અને મગધરાજ બૃહસ્પતિમિત્રને[૧૨] પોતાના પગ ઉપર નમાવ્યો. તથા રાજા નંદદ્વારા લઇ જવામાં આવેલ કલિંગજિન મૂર્તિને ૦૦૦ અને ગૃહરત્નોને લઈ પ્રતિહારોવડે અંગ–મગધનું ધન લઈ આવ્યો.

(૧૩) ૦૦૦૦૦૦૦૦૦ અંદરથી લખેલ (કોરેલ) સુંદર શિખરો બનાવરાવ્યાં. સાથેજ સો કારીગરોને જાગીરો આપી. અદ્દ્ભુત અને આશ્ચર્ય (થાય તેવી રીતે તે) હાથીઓવાળા વહાણ ભરેલ નજરાણાં હય, હાથી, રત્ન, માણિક્ય પાંડયરાજાને ત્યાંથી આ વખતે અનેક મોતી, મણિ, રત્ન હરણ કરાવી લાવ્યો. અહિં એ શક્ત (લાયક મહારાજે)

(૧૪) ૦૦૦૦૦૦૦૦૦ સીઓને વશ કર્યા. તેરમા વર્ષે પવિત્ર કુમારી પર્વત[૧૩] ઉપર જ્યાં (જૈન ધર્મનું) વિજયચક્ર સુપ્રવૃત્ત છે, પ્રક્ષીણસંસૃતિ (જન્મ મરણને વટાવી ગયેલ) કાયનિષીદી (સ્તૂપ) ઉપર (રહેનારાઓ) પાપ બતાવનારાઓ (પાપજ્ઞાપકો) માટે વ્રત પૂરાં થઈ ગયા બાદ મળનાર રાજભૃતિઓ કાયમ કરી દીધી (શાસનો બાંધી આપ્યાં). પૂજામાં રત ઉપાસક ખારવેલે જીવ અને શરીરની શ્રીની પરીક્ષા કરી લીધી. (જીવ અને શરીર પારખી લીધું.)

(૧૫) ૦૦૦૦૦૦ સુકૃતિ શ્રમણ સુવિહિત શત દિશાઓના જ્ઞાની, તપસ્વી, ઋષિ સંઘી લોકોનાં ૦૦૦૦૦૦ અરિહંતની નિષીદી પાસે, પહાડ ઉપર, ઉમદા ખાણોમાંથી કાઢી લાવવામાં આવેલા અનેક યોજનોથી લાવવામાં આવેલ ૦૦૦૦૦૦ સિંહપ્રસ્થવાળી રાણી સિંધુલાને માટે નિઃશ્રય ૦૦૦

(૧૬) ૦૦૦૦૦૦ ઘંટયુક્ત [૦] વૈડુર્યરત્નવાળા ચાર થાંભલાઓ સ્થાપન કર્યા પચોંતેરલાખના (ખર્ચ)થી. મૌર્યકાળમાં ઉચ્છેદ પામેલ ચોસટ્ઠિ (ચોસઠ અધ્યાયવાળા) અંગસપ્તિકનો ચોથો ભાગ ફરીથી તૈયાર કરાવ્યો. આ ક્ષેમરાજે, વૃદ્ધિરાજે, ભિક્ષુરાજે, ધર્મરાજે, કલ્યાણો દેખતાં સાંભળતાં અને અનુભવ કરતાં.

(૧૭) ૦૦૦૦૦૦૦૦૦૦૦૦ છે ગુણ વિશેષ કુશળ, બધા પંથોનો આદર કરનાર બધા (પ્રકારના) મંદિરોની મરામત કરાવનાર, અસ્ખલિત રથ અને સૈન્યવાળા ચક્ર (રાજ્ય) ના ધુર (નેતા) ગુપ્ત–(રક્ષિત) ચક્રવાળા, પ્રવૃત્તચક્રવાળા રાજર્ષિવંશવિનિઃસૃત રાજા ખારવેલ.

અનુવાદક સુખલાલજી

---

૧૧ મુદ્રારાક્ષસ નાટકમાં નંદ અને ચંદ્રગુપ્તનો 'સુગાંગ' નામક મહેલ પાટલિપુત્રમાં બતાવવામાં આવ્યો છે.

૧૨ બૃહસ્પતિ મિત્રના સિક્કાઓ મળે છે જે કે અગ્નિમિત્રના સિક્કાના પહેલાંના માનવામાં આવે છે અને જે એજ જાતનાં છે.

૧૩ આ નામ ખંડગિરિ–ઉદયગિરિનું છે જ્યાં આ લેખ છે. ભુવનેશ્વરની પાસે આ નાના પહાડો છે.

૧૪ લેખના આદિ અંતમાં એક એક મંગલ ચિન્હ બનાવવામાં આવ્યું છે. પહેલું બદ્ધમંગલ છે. અને બીજાનું નામ હજી જાણી શકાયું નથી.

Aho ! Shrutgyanam

जैनदर्शनमां धर्म अने अधर्मतत्त्व

[લેખક: શ્રીયુત હરિસત્ય ભટ્ટાચાર્ય એમ૦ એ૦ બિ૦ એલ૦]
(અનુવાદક: શ્રી, નગીનદાસ પારેખ અધ્યાપક ગૂજરાત મહાવિદ્યાલય)

[ચાલુ વર્ષના સંશોધકના પહેલા અંકમાં ધર્માસ્તિકાય વિષે પંડિત બેચરદાસનો એક લેખ પ્રકટ થયો હતો. તેનો મૂળ ઉદ્દેશ વિચારપ્રદેશમાં ઉતરવાનો અને તાત્ત્વિક શોધ માટે પ્રેરણા આપવાનો હતો. એ વાત નહિં સમજનાર કેટલાક શબ્દસ્પર્શી શ્રદ્ધાળુ મહાનુભાવો તરફથી અમને સૂચવવામાં આવ્યું હતું કે આ વિષે તમે જ કાંઇક લખો. જો કે એ વિષે તાત્ત્વિક અને ઐતિહાસિક વિચારણા કરવાને ઘણા ને ઘણો અવકાશ છે છતાં અમારે માટે હજી એ પ્રસંગ આવવાની વાર છે.

દરમીયાન 'માનસી' જેવા બંગાલી પત્રોમાં જૈનદર્શનસમ્મત ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય વિષે પુષ્કળ ચર્ચા ચાલેલી છે. એ ખંડનમંડનાત્મક ચર્ચામાં મોટા મોટા જૈનેતર પ્રોફેસરોએ ભાગ લીધો છે. પ્રો. શીલ અને ચક્રવર્તી જેવા તેમાં પડયા છે. જૈન સદ્‌ગૃહસ્થ પૂનમચંદ શામસુખીયાએ પણ એમાં રસભર્યો ભાગ લીધો છે. એ બધા લેખોનો સાર આ સ્થળે અત્યારે આપી શકાય તેમ નથી. છતાં એક એ વિષેના બંગાળી લેખનો અનુવાદ આ સ્થળે આપવો ઉચિત ધારીએ છીએ. એ લેખ બંગીય સાહિત્ય પરિષદ્ પત્રિકા પુસ્તક ૩૪ અંક ૨ જામાં પ્રસિદ્ધ થએલો છે. એના લેખક ભટ્ટાચાર્ય હરિસત્ય એમ૦ એ૦ બી૦ એલ૦ છે. એઓ જૈનદર્શનના ખાસ કરી જૈન તર્કશાસ્ત્રના સારા અભ્યાસી છે; લગભગ દશ વર્ષ અગાઉ તેઓએ પોતે કરેલ પ્રમાણનયતત્ત્વાલોકાલંકારનો ઇંગ્રેજી અનુવાદ અમને જોવા આપેલો જે પાછળથી ક્રમશઃ જૈન ગેઝેટમાં છપાયો છે, અને જેને ફરી પુસ્તકાકારે છપાવવાનો કેટલાક મિત્રો વિચાર કરે છે.

ઉક્ત ભટ્ટાચાર્યે પ્રસ્તુત લેખ માત્ર પ્રતિપાદકસરણીથી સમર્થ રીતે લખેલો છે અને એમાં અનેક વિરોધી દલીલોની સમીક્ષા પણ કરી છે. અનેક જૈન ગ્રંથોનો આધાર લેવા ઉપરાંત તર્કથી પણ ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાયનું સ્વતંત્ર અસ્તિત્વ સ્થાપન કરવાનો એ લેખમાં પ્રયત્ન છે, તેથી જૈન તત્ત્વજ્ઞાનના અભ્યાસીઓએ એ ખાસ મનનપૂર્વક વાંચવા જેવો છે. આશા છે કે જૈનેતર વિદ્વાનોએ જૈન તત્ત્વજ્ઞાનના એક ગંભીર પ્રદેશમાં કરેલી આવી સૂક્ષ્મ વિચારણા, રાત દિવસ જૈન તત્ત્વજ્ઞાનના અભ્યાસમાં રચ્યાપચ્યા રહેવાનું અભિમાન રાખનાર જૈન વિદ્વાનો અને ખાસ કરીને જૈન સાધુઓને છુટથી વિચાર કરવા પ્રેરશે અને સાચા અર્થમાં તેઓને દ્રવ્યાનુયોગભક્ત બનાવશે. સંપાદક]

Aho ! Shrutgyanam

१

ધર્મ

સાધારણ રીતે ધર્મશબ્દનો અર્થ પુણ્યકર્મ અથવા પુણ્યકર્મો થાય છે. ભારતીય વેદમાર્ગાનુયાયી દર્શનોમાં કોઇ કોઇ જગોએ ધર્મશબ્દમાં નૈતિક ઉપરાંત અર્થનો આરોપ કરેલો જોવામાં આવે છે. આ બધી જગાએ ધર્મશબ્દનો અર્થ વસ્તુની "પ્રકૃતિ" "સ્વભાવ" અથવા "ગુણ" થાય છે. બૌદ્ધ-દર્શનમાં પણ ધર્મશબ્દનો નૈતિક અર્થમાં પ્રયોગ જોવામાં આવે છે; પરન્તુ ઘણી જગાએ "કાર્યકારણ શૃંખલા" "અનિત્યતા" વગેરે કોઇ વિશ્વ નિયમ અથવા વસ્તુધર્મ પ્રગટ કરવાને પણ એનો પ્રયોગ થયો છે. પરન્તુ જૈનદર્શન સિવાય બીજા કોઇ પણ દર્શનમાં ધર્મ એક અજીવ પદાર્થરૂપે સ્વીકારવામાં આવ્યો નથી.

નૈતિક અર્થ સિવાય એક નવા જ અર્થમાં ધર્મશબ્દનો પ્રયોગ એક માત્ર જૈનદર્શનમાં જ જોવામાં આવે છે. જૈનદર્શનમાં ધર્મ એક "અજીવ" પદાર્થ છે. કાલ, અધર્મ અને આકાશની માફક ધર્મ "અમૂર્ત" દ્રવ્ય છે. એ લોકાકાશમાં સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે અને એના "પ્રદેશો" અસંખ્યેય છે. પંચ "અસ્તિકાય" માં ધર્મ પણ એક છે. એ "અપૌદ્ગલિક" (immaterial) અને નિત્ય છે; ધર્મ-પદાર્થ સંપૂર્ણપણે "નિષ્ક્રિય" છે અને "અલોક"માં એનું અસ્તિત્વ નથી.

જૈન દર્શનમાં ધર્મને "ગતિકારણ" કહેવામાં આવે છે. પરન્તુ એનો અર્થ એવો નથી કે ધર્મ વસ્તુઓને ચલાવે છે, ધર્મ નિષ્ક્રિય પદાર્થ છે. તો પછી એને કેવી રીતે ગતિકારણ તરીકે માની શકાય? ધર્મ કોઇ પણ પદાર્થની ગતિની બાબતમાં "બહિરંગ હેતુ" અથવા "ઉદાસીન હેતુ" છે; એ પદાર્થને ગતિ કરવામાં માત્ર સહાય કરે છે. જીવ અથવા કોઇ પણ પુદ્ગલદ્રવ્ય પોતાની મેળે જ ગતિમાન થાય છે; ધર્મ ખરી રીતે જોતાં કોઇ પણ રીતે એઓને ચલાવતો નથી; તો એ ધર્મ ગતિનો સહાયક અને ધર્મને લીધે પદાર્થોની ગતિ એક રીતે સંભવિત બને છે. દ્રવ્યસંગ્રહકાર કહે છે "જલ જેવી રીતે ગતિમાન મત્સ્યની ગતિમાં સહાયક છે તેવી રીતે ધર્મ ગતિમાન જીવ અથવા પુદ્ગલ દ્રવ્યની ગતિમાં સહાયક છે. એ ગતિહીન પદાર્થને ચલાવતો નથી." કુંદકુંદાચાર્ય અને બીજા જૈન દાર્શનિકો પણ આ વિષયમાં જલ અને ગતિશીલ મત્સ્યનું દૃષ્ટાંત આપે છે. "જલ જેવી રીતે ગતિશીલ મત્સ્યના ગમનમાં સહાયતા કરે છે તેવી જ રીતે ધર્મ પણ જીવ અને પુદ્ગલની ગતિમાં સહાયતા કરે છે." (૯૨ પંચાસ્તિકાય, સમયસાર,) તત્ત્વાર્થસારના કર્તા કહે છે કે "જે બધા પદાર્થો પોતાની મેળે ગતિમાન થાય છે, તેઓની ગતિમાં ધર્મ સહાયતા કરે છે; ગમન વખતે મત્સ્ય જેમ જલની સહાયતા ગ્રહણ કરે છે તેમ જીવ અને પુદ્ગલદ્રવ્યો પણ ગતિમાં ધર્મની સહાયતા ગ્રહણ કરે છે." વસ્તુઓના ગતિકાર્યમાં ધર્મના અમુખ્યહેતુત્વનું અને નિષ્ક્રિયત્વનું બ્રહ્મદેવ નીચે મુજબ દૃષ્ટાંત સાથે સમર્થન કરે છે. સિદ્ધ સંપૂર્ણપણે મુક્ત જીવ છે. તેમની સાથે સંસારનો કશો પણ સંબંધ નથી. તેઓ પૃથ્વીના કોઈ પણ જીવના ઉપકારક નથી, પૃથ્વીના કોઈ પણ જીવવડે તેઓ ઉપકૃત થતા નથી. તેઓ કોઈ પણ જીવને મુક્તિમાર્ગે લઇ જતા નથી. છતાં એ જો કોઇ પણ જીવ ભક્તિપૂર્વક સિદ્ધ પુરુષની ભાવના કરે, વિચાર કરીને જુએ કે અનંતજ્ઞાનાદિ વિષયમાં સ્વાભાવિક રીતે તે પણ સિદ્ધના જેવો જ છે, તો પેલો જીવ ધીરે ધીરે સિદ્ધત્વની પ્રાપ્તિને માર્ગે આગળ વધે છે. અહીં જણાય છે કે ખરી રીતે જોતાં જીવ પોતે જ મોક્ષ-માર્ગનો વટેમાર્ગુ બન્યો છે; છતાં સિદ્ધપુરુષ પણ તેની મુક્તિનું કારણ છે, એ વાતનો અસ્વીકાર કરાય એમ નથી. ખરી રીતે કે કોઇ પણ પ્રકારે વસ્તુઓને ન ચલાવવા છતાં, ધર્મ બરાબર એ જ રીતે તેઓની ગતિનું કારણ અથવા હેતુ છે.

Aho ! Shrutgyanam

લોકાકાશની બહાર ધર્મતત્ત્વનું અસ્તિત્વ નથી. એટલા માટે જ સ્વભાવથી જ ઉર્ધ્વગતિ હોવા છતાં મુક્તજીવ લોકાગ્ર ઊપર આવેલી સિદ્ધશિલા ઉપર રહીજાય છે અને તેથી ઉંચે અલોક નામના અનંત મહાશૂન્ય આકાશમાં વિચરી શકતા નથી. જે બધાં કારણોથી લોકાકાશ અલોકાકાશથી ભિન્ન છે તેઓમાંનું એક કારણ લોકમાં ધર્મની અવસ્થિતિ એ છે. વિશ્વમાં વસ્તુઓની સ્થિતિ અને વિશ્વ વસ્તુ-ઓની નિયમાધીનતા ગતિસાપેક્ષ છે. એટલા માટે ધર્મને લીધે જ લોકાકાશ અથવા નિયમસંબદ્ધ વિશ્વ સંભવી શક્યું છે, એમ કહી શકાય. એમ છતાં એ પણ યાદ રાખવું જોઇએ કે ધર્મ ગતિમાં સહાયક કારણ સિવાય બીજું કશું નથી. પદાર્થો પોતાની મેળે જ ગતિમાન અથવા સ્થિતિશીલ હોય છે અને કોઈ પણ સ્થિતિશીલ પદાર્થને ધર્મ ચલાવી શકતો નથી. એટલા માટે જ વિશ્વની વસ્તુઓ સતત દોડા દોડ કરતી જોવામાં આવતી નથી. વિશ્વમાં જે નિયમ અને શૃંખલા (વ્યવસ્થા) પ્રતિષ્ઠિત રહ્યાં છે તેનું એક કારણ ધર્મ છે એમ કહી શકાય.

અધ્યાપક શીલના મત પ્રમાણે ધર્મ ગતિનું સહાયક કારણ તો છે જ પણ તે “ એથી પણ બીજું કંઇક વધારે છે ” તેઓ કહે છે. “ તે એ સિવાય પણ કંઇકિ છે, તે નિયમબદ્ધ ગતિપરંપરાનું (system of movements) કારક અથવા તો કારણ છે, જીવ અને પુદ્ગલની ગતિઓમાં જે શૃંખલા (order) રહી છે તેનું કારણ ધર્મ જ છે” તેમના મત પ્રમાણે ધર્મ કંઇક લાઇબ્નીટ્સ પ્રતિપાદિત પ્રથમથી નિયત થએલ વ્યવસ્થા (Preestablished harmony) ના જેવો છે. પ્રભાચન્દ્રની “ સકૃદ્ગતિ યુગપદ્ભાવિગતિ ” એ ઉક્તિ ઊપર તેઓ પોતાનો મતવાદ સ્થાપન કરે છે, વસ્તુઓની ગતિઓમાં જે શૃંખલા અથવા નિયમ દેખાય છે તેનું કારણ ધર્મ જ છે એવો પ્રભાચંદ્રનો ખરેખર અભિપ્રાય છે કે કેમ તે વિષે સંદેહ છે. ઉક્ત શૃંખલાના કારણોમાં ધર્મ પણ એક છે એ વાત સ્વીકાર્ય છે, પરન્તુ વસ્તુઓની શૃંખલાબદ્ધ-ગતિમાં ધર્મ ઉપરાંત બીજાં કારણોની પણ જરૂર પડે છે એનો પણ સ્વીકાર કરવો પડશે. સરોવરમાં મત્સ્યપંક્તિ જે શૃંખલાથી જવર અવર કરે છે તે શૃંખલામાં સરોવરમાંનુ જ પાણી એક માત્ર કારણ છે એમ કહી ન શકાય. મીનપંક્તિની ઊપર જણાવેલી સુસંબદ્ધગતિને વિષે તળાવમાંનું પાણી જે રીતે કારણ બને છે તે રીતે મત્સ્યોની પ્રકૃતિ પણ કારણ બને છે. પ્રમેયકમલમાર્તંડમાં પ્રભાચંદ્ર કહે છે–

> “ विवादापन्नसकलजीवपुद्गलाश्रयाः सकृद्गतयः साधारणबाह्यनिमित्तापेक्षाः युगपद्भाविगतित्वादेकसरःसलिलाश्रयानेकमत्स्यगतिवत् । तथा सकलजीवपुद्गलस्थितयः साधारणबाह्यनिमित्तापेक्षा युगपद्भाविस्थितित्वादेककुण्डाश्रयानेकबदरादिस्थितिवत् । यत्तु साधारणं निमित्तं स धर्मोऽधर्मश्च ताभ्याम् विना तद्गतिस्थितिकार्यस्यासम्भवात् ”

એનો ભાવાર્થ એવો છે કે બધા જીવ અને પૌદ્ગલિક પદાર્થોની ગતિઓ એક સાધારણ બાહ્યનિ-મિત્તની અપેક્ષા રાખે છે; કારણ એ બધા જીવ અને પૌદ્ગલિક પદાર્થો યુગપત્ એટલે એકી વખતે જ ગતિમાન દેખાય છે. સરોવરનાં અનેક મત્સ્યોની યુગપદ્ગતિ જોઇને જેવી રીતે ઉક્ત ગતિનાં સાધારણ નિમિત્તરૂપે એક સરોવરમાં રહેલા પાણીનું અનુમાન થાય છે, તેવી રીતે જીવ પુદ્ગલની ગતિ પરથી એક સાધારણ નિમિત્તનું અનુમાન કરવું પડશે. બધા જીવ અને પૌદ્ગલિક પદાર્થોની સ્થિતિઓ એક સાધારણ બાહ્ય નિમિત્તની અપેક્ષા રાખે છે; કારણ એ બધા જીવ અને પૌદ્ગલિક પદાર્થો યુગપત્ સ્થિતિશીલ જોવામાં આવે છે. એક કુંડમાં અનેક બોરાંઓની યુગપત્ સ્થિતિ જોઈ જે રીતે ઉક્ત સ્થિ-તિનાં સાધારણ નિમિત્તરૂપે એક કુંડનું અનુમાન થાય છે તે રીતે જીવ, પુદ્ગલની સ્થિતિ પરથી એક

Aho ! Shrutgyanam

સાધારણ નિમિત્તનું અનુમાન કરવું પડશે. ધર્મ અને અધર્મ યથાક્રમે આ સાધારણ નિમિત્ત છે; કારણ એ બન્ને સિવાય ઉપરોક્ત ગતિસ્થિતિરૂપ કાર્ય સંભવતું નથી."

પ્રભાચંદ્રનાં ઊપર ઉતારેલાં વચન ઊપરથી એ જ સિદ્ધ થાય છે કે એકથી વધારે પદાર્થની યુગપત ગતિ પરથી ધર્મતત્ત્વના અસ્તિત્વનું અનુમાન કરાય છે. પરન્તુ જે રીતે એક પદાર્થ પછી બીજો એક પદાર્થ જાય એટલે જ તેઓ શૃંખલાબદ્ધ છે એમ કહી શકાતું નથી. તેવી રીતે બે કે તેથી વધારે પદાર્થોની યુગપત્ ગતિ ઊપરથી જ તેઓ શૃંખલાબદ્ધ છે એવું અનુમાન કરી શકાતું નથી. ગતિઓ યુગપત્ થઇ એટલે શૃંખલાબદ્ધ થઈ ગઈ એવું જ કંઇ નથી. ધારો કે કોઇ તળાવમાં એક માછલી ઉત્તર તરફ દોડે છે; એક માણસ પૂર્વ તરફ તરે છે; ઝાડ પરથી ખરી પડેલું એક પાંદડું પશ્ચિમ તરફ તણાતું જાય છે અને એક કાંકરો સરોવરના તળીયા તરફ ઉતરતો જાય છે. આ બધી ગતિઓ યુગપત્ છે અને એ યુગપત્ ગતિઓ, ગતિ કારણ જલને લીધે જ સંભવિ શકે છે. પરન્તુ એ બધી ગતિઓમાં યૌગપદ્ય હોવા છતાં કોઈ પણ શૃંખલા (વ્યવસ્થા) દેખાતી નથી. તે જ રીતે ધર્મ યુગપત્ ગતિઓનું કારણ હોવા છતાં એને તેમાં રહેલી શૃંખલાનું કારણ કહી શકાય નહિ. ધર્મને જૈનદર્શનમાં નિષ્ક્રિય પદાર્થ કહેવામાં આવ્યો છે. ગતિ પરંપરાની શૃંખલામાં ધર્મની ઉપયોગિતા છે એ સ્વીકાર્ય છે; પરન્તુ યાદ રાખવું જોઇએ કે ધર્મ ક્રિયાશીલ વસ્તુ નથી અને તેથી વિશ્વની ગતિઓમાં જે શૃંખલા છે તેનું એક માત્ર કારણ ધર્મ છે એવું કહી શકાય નહિ.

એટલે અમને લાગે છે કે અધ્યાપક ચક્રવર્તીએ, પંડિતવર શીલના ધર્મસંબંધી મતવાદની જે સમાલોચના કરી છે તે યુક્તિસંગત છે. પરન્તુ ગતિસમૂહની શૃંખલાનું કારણ શોધવા જતાં અધ્યાપક ચક્રવર્તીએ અધર્મતત્ત્વ લાવી મુક્યું છે. સ્થિતિ કારણ અધર્મ "યુક્તિથી" ધર્મનો "પૂર્વગામી" (logically prior) છે અને અધર્મનું ફળ અથવા કાર્યનો નિરાસ કરવા માટે અથવા તેને કંઇક અંશે મંદ કરવા માટે ધર્મના પ્રયત્નથી શૃંખલાની ઉત્પત્તિ થઇ છે, એવો તેમનો મત હોય એમ લાગે છે. વિદ્વાન અધ્યાપકનો આ મત અમો સ્વીકારી શકતા નથી. આપણે ભૂલી જવું ન જોઇએ કે ધર્મ અને અધર્મ બન્ને નિષ્ક્રિય તત્ત્વો છે. તેઓના અસ્તિત્વથી ગતિશૃંખલાના આવિર્ભાવને સહાયતા મળી શકે, પરન્તુ ગતિશૃંખલાની ઉત્પત્તિમાં તેઓનું ક્રિયાકારિત્વ બીલકુલ નથી.

ખરી વાત તો એ છે કે ધર્મ, અધર્મ, આકાશ અથવા કાલ ભેગાં અથવા અલગ અલગ વસ્તુઓની ગતિપરંપરામાં શૃંખલા લાવવાને સમર્થ નથી. એઓનું અસ્તિત્વ શૃંખલાના સહાયક તરીકે ગણાયા છતાં એઓ બધી રીતે નિષ્ક્રિય દ્રવ્ય છે. વિશ્વ નિયમનું કારણ નક્કી કરવા જતાં અદ્વૈતવાદ "**एकमेवाद्वितियम्**" સત્પદાર્થને લાવે છે અને ઇશ્વરવાદ એક મહાન સ્રષ્ટાનો નિર્દેશ કરે છે. જૈનદર્શન અદ્વૈતવાદ, કર્તૃત્વવાદ બન્નેનો વિરોધી છે એટલે શૃંખલાબદ્ધ ગતિઓનું અને તેની સાથે વિશ્વમાં રહેલા નિયમનું કારણ નક્કી કરવામાં જૈનોને પોતાની મેળે ગતિશીલ જીવ અને પુદ્ગલની સ્વાભાવિક પ્રકૃતિ ઊપર જ આધાર રાખવાની ફરજ પડે છે. બધા જીવોમાં સમાન જ જીવના ગુણો રહેલા છે. તેથી બધા જીવોનાં કર્મો અને ક્રિયાપદ્ધતિ ઘણે ભાગે એક પ્રકારની જ હોય છે. વળી એક જ કાલ, આકાશ, ધર્મ, અધર્મ અને પુદ્ગલની સાથે જોડાઇને બધા જીવને કામ કરવું પડે છે; એ કારણથી પણ જીવોમાં એક નિયમ અને શૃંખલાનો આવિર્ભાવ થાય છે. જડ જગતની શૃંખલા સંબંધે અમને લાગે છે કે જૈન દર્શન આધુનિક વિજ્ઞાનસંમત મત સ્વીકારવામાં લગારે આનાકાની નહિ કરે. વર્તમાન યુગના જડ વિજ્ઞાનના આચાર્યોની પેઠે જૈનો પણ કહી શકે કે જડ જગતમાં જે શૃંખલા છે તે જડ પદાર્થનાં સ્વાભાવિક ગુણમાંથી જન્મેલી છે.

Aho ! Shrutgyanam

જડનું સંસ્થાન (mass) અને ગતિ (motion) ગુરુત્વાકર્ષણના (law of gravity) નિયમ અને જડમાં રહેલી આકર્ષણ વિકર્ષણ શક્તિ (Principles of attraction and repulsion) માંથી જ જડ જગતની શૃંખલા ઉદ્ભવે છે. જડ વ્યાપારોમાં (Purely material phenomena) જે નિયમ જોવામાં આવે છે તેની પ્રતિષ્ઠામાં ધર્મ, અધર્મ, આકાશ અને કાલનું અસ્તિત્વ બહુ જ સહાયક છે, એ પણ અહિં સ્વીકારવું જોઇએ. જગતમાં જીવોનું અસ્તિત્વ પણ જડ જગતની શૃંખલાનું પોષક છે; કારણ અનાદિકાલથી જે બધા બદ્ધજીવો સંસારમાં ભ્રમણ કરી રહ્યા છે, તેઓનાં પ્રયોજન અને અભીપ્સા અનુસાર જડ દ્રવ્યો અથવા પુદ્ગલ ધીમે ધીમે બદલાતાં આવ્યાં છે. એ રીતે જણાય છે કે વસ્તુઓની ગતિમાં જે શૃંખલા છે તે મૂળ તો વસ્તુની જ ક્રિયાશીલ પ્રકૃતિમાંથી જ ઉદ્ભવેલી છે, અને ધર્મતત્વનું અસ્તિત્વ માત્ર એ શૃંખલાની પ્રતિષ્ઠાનું સહાયક છે એમ નથી. અધર્મ, આકાશ વિગેરે તત્ત્વો પણ એના પરિપોષક છે. પદાર્થો સ્વભાવથી જ ગતિસ્થિતિમાં કર્તૃત્વાધિકારી છે એમ તત્વાર્થરાજવાર્તિકકાર વિશેષ પણે કહે છે અને તેઓ ધર્મ અને અધર્મને " ઉપગ્રાહક " કહે છે. તેઓ કહે છે કે અંધ વ્યક્તિ ફરતી વખતે લાકડીની સહાય લે છે; લાકડી તેને ફેરવતી નથી, તેના ફરવામાં માત્ર સહાયતા કરે છે. જો લાકડી ક્રિયાશીલ કર્તા હોત; તો તે અચેતન અને ઉંઘેલી વ્યક્તિને પણ ફેરવત. એટલા માટે અંધની ગતિમાં લાકડી ઉપગ્રાહક છે. વળી દૃષ્ટિના વ્યાપારમાં પ્રકાશ સહાયકારી છે. દેખવાની શક્તિ આંખની જ છે, પ્રકાશ દૃષ્ટિશક્તિનો જન્માવનાર નથી. પ્રકાશ જો ક્રિયાશીલ કર્તા હોત, તો તે અચેતન અને ઉંઘેલી વ્યક્તિને પણ દર્શન કરાવત. એટલા માટે દૃષ્ટિ વ્યાપારમાં પ્રકાશ ઉપગ્રાહક છે. તેઓ કહે છે " બરાબર એ જ રીતે જીવો અને જડ પદાર્થો પોતાની મેળે ગતિમાન અથવા સ્થિતિશીલ થાય છે. તેઓના ગતિ અને સ્થિતિવ્યાપારમાં ધર્મ અને અધર્મ ઉપગ્રાહક એટલે નિષ્ક્રિય હેતુ છે. તેઓ તે ગતિના કે સ્થિતિના ' કર્તા ' કે જન્માવનાર નથી. ધર્મ અને અધર્મ જો ગતિ અને સ્થિતિના કર્તા હોત તો ગતિ અને સ્થિતિ અસંભવિત થાત." ધર્મ અને અધર્મને સક્રિય દ્રવ્યરૂપે કલ્પવામાં આવે તો જગતમાં ગતિ અને સ્થિતિ શા માટે અસંભવિત થાય, તેનું પણ પ્રતિપાદન કરેલ છે. ધર્મ અને અધર્મ સર્વવ્યાપક અને લોકાકાશમાં સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે. એથી જ્યારે જ્યારે ધર્મ કોઇ વસ્તુને ગતિમાન કરે ત્યારે ત્યારે અધર્મ તેને અટકાવી દે; એવી રીતે જગતમાં સ્થિતિ અસંભવિત થઈ પડે. એટલા માટે અકલંક-દેવ કહે છે કે જો ધર્મ અને અધર્મ નિષ્ક્રિય દ્રવ્ય ઉપરાંત બીજું કંઇક હોત તો જગતમાં ગતિ અને સ્થિતિ અસંભવિત થાત. ગતિ અને સ્થિતિ જીવો અને જડ પદાર્થોની ક્રિયાસાપેક્ષ છે. ધર્મ અને અધર્મ ગતિ અને સ્થિતિના સહાયક છે અને એક રીતે ધર્મ અને અધર્મને લીધે જ ગતિ અને સ્થિતિ સંભવે છે. અહિં આપણે જરા આગળ વધી શું એમ ન કહી શકીએ કે શૃંખલાબદ્ધ ગતિ અને શૃંખલાબદ્ધ સ્થિતિ જીવ અને જડ પદાર્થોની સ્વાભાવિક ક્રિયા ઉપર આધાર રાખે છે અને તેઓના સહાયક અને અપરિહાર્ય હેતુ હોવા છતાં ધર્મ અને અધર્મ એક સામટાં અથવા જુદાં જુદાં ગતિ સ્થિતિ–શૃંખલાનાં જન્માવનાર (cause) નથી ?

ધર્મ અને અધર્મ પ્રત્યક્ષનાં વિષય નથી અને તેથી તેઓ સત્પદાર્થ નથી, એવું કહેનારને જૈનો અયુક્તવાદી કહે છે. પ્રત્યક્ષનાં વિષય નહિં એવા અનેક પદાર્થોને સત્ય માનવાની આપણને ફરજ પડે છે અને આપણે તેમ માનીએ પણ છીએ. પદાર્થો જ્યારે ગતિશીલ કે સ્થિતિમાન જોવામાં આવે છે, ત્યારે જરૂર એવું કોઇ દ્રવ્ય હોવું જોઇએ કે જે તેઓને ગતિ અને સ્થિતિવ્યાપાર કરવામાં મદદ કરે. આ યુક્તિવડે ધર્મ અધર્મના અસ્તિત્વનું અને દ્રવ્યત્વનું અનુમાન કરવામાં આવે છે. કોઈ કોઇ કહે છે કે આકાશ જ ગતિનું કારણ છે અને આકાશથી ભિન્ન એવા ધર્મ, અધર્મ દ્રવ્યનો સ્વીકાર કરવાની

Aho ! Shrutgyanam

જરૂર નથી. જૈન દાર્શનિકો એ મતવાદની નિ:સારતા બતાવવા કહે છે કે અવકાશ આપવો એજ આકાશનો ગુણ છે. અવકાશપ્રદાન એ ગતિશીલ પદાર્થોને ગતિ ક્રિયામાં મદદ આપવા કરતાં જૂદી વસ્તુ છે એ સમજી શકાય એવું છે. એ બન્ને ગુણોની આ મૌલિક ભિન્નતા મૂળથી જ ભિન્ન એવા બે દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ પ્રતિપાદન કરે છે અને એટલા માટે ધર્મતત્ત્વ આકાશથી જુદું જ દ્રવ્ય છે. વળી એ પણ જણાય છે કે જો આકાશ ગતિ કારણ હોત તો વસ્તુઓ અલોકમાં પ્રવેશ કરી લોકાકાશની માફક ત્યાં પણ આમ તેમ સંચરી શકત. અલોક એ આકાશનો અંશ હોવા છતાં તે બિલકુલ શૂન્ય અને પદાર્થ રહિત છે (એટલું જ નહિં પણ સિદ્ધો સુદ્ધાં ત્યાં પ્રવેશ કરી શકતા નથી,) આ ઉપરથી જ સમજાય છે કે ધર્મ સદ્દ્રવ્ય છે, અલોકમાં એનું અસ્તિત્વ નથી અને લોકમાં વ્યાપ્ત રહી લોકાકાશ અને અલોકાકાશ વચ્ચે એક મોટી ભિન્નતા પ્રતિપાદન કરે છે. અદૃષ્ટ જ ગતિ કારણ છે ધર્મ દ્રવ્યની સત્તા નથી એમ પણ કોઇ કોઇ કહે છે. પરન્તુ યાદ રાખવું જોઇએ કે ચેતન જીવ જે શુભાશુભ કર્મ કરે છે, તેના જ ફળ તરીકે અદૃષ્ટ કલ્પાયું છે. ચેતન જીવને જવર અવર કરાવવામાં અદૃષ્ટ સમર્થ છે એમ દલીલ ખાતર માની લઇએ તો પણ પાપ-પુણ્ય કર્મના અકર્તા અને તજ્જન્ય અદૃષ્ટની સાથે કોઈ પણ જાતના સંબંધ વિનાના જે જડ પદાર્થો છે તેઓની ગતિનું કારણ શું હોઇ શકે ? અહિં યાદ રાખવું જોઇએ કે જૈન મત પ્રમાણે ધર્મ, પદાર્થને ચલાવનાર કોઇ દ્રવ્ય નથી, એ વસ્તુઓની ગતિ ક્રિયામાં માત્ર સહાયતા કરે છે. ગતિમાં ધર્મના જેવું એક નિષ્ક્રિય કારણ અવશ્ય સ્વીકારવું જોઇએ. અદૃષ્ટની સત્તા સ્વીકારીએ તો પણ તેથી ધર્મ એક સત્ તેમ જ અજીવ દ્રવ્ય છે એ મતને કોઈ પણ રીતે બાધ આવતો નથી.

२

અધર્મ

વિશ્વવ્યાપારના આધારની શોધ કરવા જતાં અનેક દર્શનો ખાસ કરીને પ્રાચીન દર્શનો બે વિરોધી તત્ત્વોની શોધ કરે છે. જરથુસ્ત્રે પ્રવર્તાવેલા ધર્મમાં આપણે " અહુરેમજ્દ " અને " અહરિમાન " નામે બે પરસ્પર વિરોધી—હિતકારી અને અહિતકારી દેવતાઓનો પરિચય પામીએ છીએ. પ્રાચીન યાહુદી ધર્મમાં અને ખ્રિસ્તી-ધર્મમાં પણ ઇશ્વર અને તેનો ચિરશત્રુ શયતાન વિદ્યમાન છે. દેવ અને અસુરની ભારતમાં પુરાતન ધર્મ કથા છે. ધર્મવિશ્વાસની વાત છોડીને જો આપણે દાર્શનિક તત્ત્વવિચારની આલોચના કરીએ તો ત્યાં પણ દ્વૈતવાદની એક અસર જોવામાં આવે છે. એ બધા દ્વૈતવાદમાં આત્મા અને અનાત્માનો ભેદ ખાસ ઉલ્લેખ યોગ્ય છે અને એ ભેદની કલ્પના લગભગ દરેક દર્શનમાં કોઇને કોઇ રીતે રહેલી છે. સાંખ્યમાં એ દ્વૈતપુરુષ-પ્રકૃતિના ભેદરૂપે વર્ણવવામાં આવ્યું છે, વળી વેદાંતમાં બ્રહ્મ અને માયાના સંબંધના વિચારમાં દ્વૈતનો કાંઇક આભાસ જણાય છે. ફ્રેંચ ફિલ્સુફ ડેકાર્ટના અનુયાયીઓ આત્મા અને જડની ભિન્નતા જોઇ શકયા હતા અને તેનો સમન્વય કરવાનો તેમણે વૃથા પ્રયાસ કર્યો હતો. જૈન દર્શનમાં જીવ અને અજીવ એ પરસ્પર ભિન્ન મૂળતત્ત્વો છે. આ બધા દ્વૈતો ઉપરાંત દાર્શનિકો બીજા પણ અનેક દ્વૈતો સ્વીકારે છે જેમકે સત્ અને અસત્ (Being and non Being) તત્ત્વ અને પર્યાય (Noumenon and Phenomenon) વગેરે.

પ્રાચીન ગ્રીકોએ બીજા એક સુપ્રસિદ્ધ ભેદની કલ્પના કરી હતી તે ભેદ ગતિ અને સ્થિતિ વચ્ચેનો. હેરાકલીટ્રાસના શિષ્યોના મત પ્રમાણે સ્થિતિ એ ખરો તાત્ત્વિક વ્યાપાર નથી, દરેક પદાર્થ દરેક ક્ષણે

Aho ! Shrutgyanam

બદલાયા કરે છે અને એવી રીતે દરેક પદાર્થ દરેક ક્ષણે જ ગતિશીલ છે, એમ કહી શકાય. બીજી બાજુએ વળી પારમેનિડિસના શિષ્યો કહે છે-ગતિ અસંભવિત છે, પરિવર્તન ન પામે એવી સ્થિતિ જ સ્વાભાવિક તત્ત્વ છે. એ બે પક્ષોના વાદવિવાદમાંથી ગતિ અને સ્થિતિ બન્નેની સત્યતા અને તાત્ત્વિકતા સમજાય છે. જેઓ કેવલ તત્ત્વવિચારનો પક્ષ ન લેતાં લોક વ્યવહાર તરફ પણ દૃષ્ટિ રાખે છે તેઓ ગતિ અને સ્થિતિમાંથી કોઇ પણ એકની સત્યતા બિલકુલ ઉડાવી દઇ બીજાની તાત્ત્વિકતા દર્શાવી શકતા નથી. જૈનો અનેકાંતવાદી છે; એથી તેઓ ગતિકારણ ધર્મ અને સ્થિતિકારણ અધર્મ, એ બન્નેની તાત્ત્વિકતા સ્વીકારે એમાં કંઇ નવાઈ નથી.

ધર્મને લીધે ગતિ છે અને અધર્મને લીધે સ્થિતિ છે ધર્મ અને અધર્મ બન્ને સત્ દ્રવ્ય છે, અજીવ દ્રવ્યમાં સમાવેશ પામે છે. બન્ને જ લોકાકાશવ્યાપી સર્વગતવ્યાપક પદાર્થ છે. મહાશૂન્ય અલોકમાં બન્નેનું અસ્તિત્વ નથી. "ધર્મ તેથી કંઇક વધારે છે-તે નિયમબદ્ધ ગતિ પરંપરાનો કારક કે કારણ છે—જીવ અને પુદ્ગલની ગતિઓમાં જે શૃંખલા રહેલી છે તેનું કારણ ધર્મ જ" છે—એમ માનવું યુક્તિસંગત નથી. જૈનદર્શનના મત પ્રમાણે જીવ અને પુદ્ગલ બન્ને પોતાની મેળે ગતિશીલ છે અને ધર્મ સંપૂર્ણપણે નિષ્ક્રિય દ્રવ્ય છે; એટલા માટે ધર્મ વિશ્વમાં રહેલી શૃંખલાનો વિધાયક છે એમ કહી શકાય નહિં. અધર્મ પણ નિષ્ક્રિય દ્રવ્ય છે. જીવ અને પુદ્ગલ પોતાની મેળે જ સ્થિતિશીલ છે. જગત્માં જો શૃંખલાબદ્ધ સ્થિતિ હોય તો તેનું કારણ અધર્મ છે એમ કહી શકાય નહિં—જીવ અને પુદ્ગલનો સ્વભાવ જ તેનું કારણ છે. ધર્મ અને અધર્મમાંથી એકે જગતમાં રહેલા નિયમનો કર્તા નથી. વળી એઓમાંના કોઇ એકને બીજાનો યુક્તિથી પૂર્વગામી (logically prior) કહી શકાય નહિં. ધર્મ અને અધર્મમાંથી કોઇ એક બીજાના વ્યાપારની પ્રતિક્રિયા કરે છે અને એ ચિરવિરોધ કે અનંતસંગ્રામ ઉપર વિશ્વશૃંખલા ટકેલી છે એમ માનવું એ યુક્તિવિરુદ્ધ છે. ગ્રીકદાર્શનિકે પ્રસિદ્ધ કરેલ "રાગ" (Principle of love) અને "દ્વેષ" (Principle of hate)ના સિદ્ધાંતની સાથે ધર્મ અને અધર્મના સિદ્ધાંતની તુલના થઈ શકે એમ નથી. ધર્મને બહિર્મુખી ગતિનું કારણ (principle "guaranteeing motion within limits") અને અધર્મને અંતર્મુખી ગતિનું કારણ કે મધ્યાકર્ષણ કારણ (કોષ્ટક Principle of Gravitation) કહેવું એ ખોટું છે એમ અમને લાગે છે. પરમાણુકાયસંરક્ષણમાં જે બે પરસ્પર વિરોધી (Positive and negative) વૈદ્યુતિક શક્તિનો વ્યાપાર (electro magnetic influences) જોવામાં આવે છે તેના જેવા પરસ્પર વિરોધી કોઈ બે તત્ત્વો સાથે ધર્મ અધર્મની તુલના થઇ શકે એમ નથી. ધર્મ અને અધર્મ સંપૂર્ણપણે નિષ્ક્રિય દ્રવ્ય છે. જેવી રીતે "કેંદ્રાભિમુખી" અને "કેંદ્રબહિર્ગામી" ગતિ (centripetal and centrifugal forces)ની સાથે તેમનું સરખાપણું નથી. તેવી રીતે તેમની ઉપર કોઇ પણ પ્રકારના ક્રિયાકારિત્વનો (dynamic energising) આરોપ કરી શકાય એમ નથી.

જૈનદર્શનમાં અધર્મનો અર્થ પાપ કે નીતિવિરુદ્ધ અપકર્મ એવો નથી એ એક સત્ અજીવ તત્ત્વ છે; વસ્તુઓની સ્થિતિશીલતાનું એક કારણ છે. જીવો અને જડ વસ્તુઓના સ્થિતિકારણ તરીકે એ વર્ણવાય છે. તેથી અધર્મ ગતિશીલ પદાર્થને અટકાવી દે છે, એવો અર્થ સૂચિત થતો નથી. અધર્મ એ સ્થિતિનું કારક સહભાવી કારણ છે, દ્રવ્યસંગ્રહકારે એને "**ठाणजुदाण ठाणसहयारी**" (**स्थानयुतानां स्थानसहकारी**) અર્થાત્ સ્થિતિશીલ પદાર્થનો સ્થિતિ સહાયક કહેલ છે. સ્થિતિશીલ પદાર્થની સ્થિતિને જે સહાયતા કરે તેને વિશુદ્ધ દર્શનવાળા અરિહંતોએ અધર્મ કહ્યો છે. પશુઓની સ્થિ-

Aho ! Shrutgyanam

તિઓનો પૃથ્વી જેમ સાધારણ આશ્રય છે તેમ જીવ અને પુદ્ગલોનાં સ્થિતિવ્યાપારનું અધર્મ સાધારણ આશ્રય છે. (તત્ત્વાર્થસાર અધ્યાય ૩-૩૫-૩૬) ગમનશીલ પશુઓને પૃથ્વી અટકાવી દેતી નથી, તેમ છતાં પૃથ્વી ન હોય તો તેઓની સ્થિતિ પણ સંભવતી નથી; તે રીતે કોઈ પણ ગતિશીલ વસ્તુને અધર્મ અટકાવી દેતો નથી તેમ છતાં અધર્મ સિવાય ગતિશીલ પદાર્થની સ્થિતિ પણ સંભવતી નથી. આ પ્રસંગે જૈન લેખકો અધર્મ સાથે છાયાની પણ સરખામણી કરે છે. "છાયા જેવી રીતે તાપથી બળતા પ્રાણીઓનું અને પૃથ્વી જેવી રીતે અશ્વોનું સ્થિતિકારણ છે તેવી રીતે અધર્મ પણ પુદ્ગલાદિદ્રવ્યનું સ્થિતિકારણ છે."

અધર્મ "અકર્તા" એટલે કે નિષ્ક્રિય તત્ત્વ છે. એ વસ્તુઓની સ્થિતિનો હેતુ કે કારણ હોવા છતાં કદાપિ ક્રિયાકારી (Dynamic or productive) કારણ નથી. એટલા માટે અધર્મ સ્થિતિનો "બહિરંગહેતુ" અથવા "ઉદાસીન હેતુ" કહેવાય છે. એ "નિત્ય" અને "અમૂર્ત" છે; સ્પર્શ, રસ, ગંધ આદિ ગુણો એમાં નથી. એ બધી બાબતમાં ધર્મ, કાલ અને આકાશની સાથે અધર્મનું સરખાપણું છે. એને વિશિષ્ટ ગુણ છે અને એ વસ્તુના સ્થિતિ પર્યાયોનો આધાર છે તેથી તે સદ્દ્રવ્ય છે. અધર્મ દ્રવ્યત્વરુપે અવશ્ય જીવ સમાન છે. જીવની માફક એ પણ અનાદ્યનંત અને અપૌદ્ગલિક (immaterial) છે. પહેલાં કહેવામાં આવ્યું છે કે અધર્મ, અજીવ અર્થાત્ અનાત્મદ્રવ્ય છે.

ધર્મ, કાલ, પુદ્ગલ અને જીવની પેઠે અધર્મ લોકાકાશમાં રહેલો છે. અનંત આકાશમાં એનું અસ્તિત્વ નથી. અધર્મ વર્તમાન (**अस्ति**) અને પ્રદેશવિશિષ્ટ (કાય) હોવાથી પંચ અસ્તિકાયમાં એની ગણતરી થાય છે એક અવિભાજ્ય પુદ્ગલ પરમાણુવડે જેટલું સ્થાન રોકાય છે તેનું નામ 'પ્રદેશ'. અધર્મ લોકાકાશની સીમામાં રહેલો હોઇ એના પ્રદેશો અનંત નથી; એઓ નિર્દિષ્ટ સીમામાં રહેલા હોઈ એઓનો અંત છે. જૈનો અધર્મ ધર્મ અને જીવના પ્રદેશોને "અસંખ્ય" અર્થાત્ ગણતરી ન કરવા યોગ્ય કહે છે.

આમ અધર્મ "અસંખ્યેયપ્રદેશ" હોવા છતાં એ એક છે—માત્ર એક જ વ્યાપક પદાર્થ છે. એ વિશ્વ વ્યાપી ("લોકાવગાઢ") અને વિસ્તૃત ("પૃથુલ") છે. ધર્મની માફક અધર્મના પ્રદેશો પણ પરસ્પર જોડાયેલા છે, તેથી અધર્મ એ એક વ્યાપક સંપૂર્ણ પદાર્થ કહેવાય છે. આ બાબતમાં કાલતત્ત્વની સાથે અધર્મનું જૂદાપણું છે, કારણ કે કાલાણુઓ પરસ્પર જોડાયેલા નથી.

ધર્મ અને અધર્મ બન્નેને મૂળથી એક જ દ્રવ્ય કહી શકાય કે નહિ? બન્ને એ લોકાકાશ વ્યાપી છે એટલે બન્નેનો "દેશ" એક છે. બન્નેનું "સંસ્થાન" અર્થાત્ પરિમાણ એક જ છે. બન્ને એક "કાલ"માં રહેલા છે. દાર્શનિકો એક જ "દર્શન" અર્થાત્ પ્રમાણની મદદથી બન્નેના અસ્તિત્વનું અનુમાન કરે છે. ધર્મ અને અધર્મ "અવગાહન"થી એક છે અર્થાત્ બન્ને પરસ્પર ગાઢપણે જોડાયેલા છે. બન્ને તત્ત્વ "દ્રવ્ય" છે, અમૂર્ત છે અને જ્ઞેય છે. એટલે ધર્મ અને અધર્મને બે ભિન્ન દ્રવ્ય ન ગણતાં બન્નેને એકજ દ્રવ્ય કહીએ તો શો દોષ? એના ઉત્તરમાં તત્ત્વાર્થરાજવાર્તિકકાર કહે છે કે ધર્મ અને અધર્મનાં કાર્ય ભિન્ન છે એથી એ બન્ને ભિન્ન દ્રવ્ય છે એક જ પદાર્થમાં એક જ સમયે રૂપ, રસ અને બીજા વ્યાપારો જોવામાં આવે છે; પરન્તુ તેટલા માટે રૂપ રસાદિને શું એક જ વ્યાપાર કહીશું?

આકાશ તત્ત્વને ગતિ કે સ્થિતિનું કારણ માનીને ધર્મ અને અધર્મના અસ્તિત્વનો અસ્વીકાર કરી શકાય તેમ નથી. અવકાશ અર્થાત્ સ્થાન દેવું એ જ આકાશનું લક્ષણ છે; જેવી રીતે નગરમાં ઘરો વિગેરે

Aho ! Shrutgyanam

રહેલાં હોય છે તેવી રીતે ધર્મ, અધર્મ અને બીજાં દ્રવ્યો આકાશમાં રહેલાં છે. જો સ્થિતિ કરાવવી અને ગતિ કરાવવી એ આકાશના ગુણ હોત તો અનંત મહાશૂન્ય અલોકમાં પણ એ ગુણોનો અભાવ હોત નહિં. અલોકાકાશમાં ગતિ–સ્થિતિ સંભવિત હોત તો લોકાકાશ અને અનંત અલોકાકાશ વચ્ચે કશો ભેદ રહેત નહિં. વ્યવસ્થિત લોક અને અનંત અલોકના ભેદ ઉપરથી જ સમજાય છે કે આકાશમાં ગતિ–સ્થિતિના નિમિત્ત કારણત્વનો આરોપ કરી શકાય તેમ નથી અને ગતિ–સ્થિતિના કારણરૂપે ધર્મ અધર્મનું અસ્તિત્વ અવશ્ય સ્વીકારવું જોઇએ. અવકાશ આપનાર આકાશ વિના ધર્મ અને અધર્મનું કોઇ પણ કાર્ય થઈ શકે નહિં એ ખરૂં છે; પરંતુ તેટલા માટે આકાશની સાથે ધર્મ અને અધર્મનો કાંઇ પણ ભેદ છે નહિં એવું કાંઈ નથી. વૈશેષિકદર્શનમાં દિગ્ કાલ, અને આત્મા જુદા જુદા પદાર્થ તરીકે સ્વીકારાયા છે. આકાશ વિના એઓમાંના કોઇનું પણ કાર્ય થઇ શકે નહિં એમ છતાં એ બધાંનું અસ્તિત્વ આકાશથી જુદું માનવાનાં આવ્યું છે. જો એક જ દ્રવ્યમાં જુદાં જુદાં કાર્યનો આરોપ કરી શકાય એમ હોય તો ન્યાયદર્શનસંમત અનેકાત્મવાદની યુક્તિયુક્તતા ક્યાં રહી ? વળી સાંખ્યદર્શન સત્ત્વ, રજસ્ અને તમસ્ નામે ત્રણ જુદા જુદા ગુણોનો પ્રકૃતિમાં આરોપ કરે છે તે પણ યુક્ત કેવી રીતે ગણાય ? એ ત્રણે ગુણમાંનો કોઇ પણ એક ગુણ જુદે જુદે ત્રણ પ્રકારે કામ કરે છે એમ માનત તો પણ ચાલત. મૂળથી જ ભિન્ન કાર્યોનું કારણ એક હોય તો સાંખ્યસંમત પુરુષ બહુત્વવાદ સિદ્ધ થઇ શકે નહિં. બૌદ્ધદર્શન રૂપસ્કંધ, વેદનાસ્કંધ, સંજ્ઞાસ્કંધ, સંસ્કારસ્કંધ અને વિજ્ઞાનસ્કંધ નામે પાંચ જુદા જુદા સ્કંધોનો ઉલ્લેખ કરે છે; છેલ્લા સ્કંધ સિવાય બાકીના બીજા સ્કંધો સંભવી ન શકે એવા હોવા છતાં બૌદ્ધો પાંચે સ્કંધોનો સ્વીકાર કરે છે. એટલે એક પદાર્થ બીજા પદાર્થ ઉપર આધાર રાખતો હોય તો પણ જો બન્નેના કાર્યમાં મૌલિક ભેદ હોય તો બન્ને પદાર્થનું જૂદું અસ્તિત્વ સ્વીકારવું જોઇએ.

ધર્મ અને અધર્મ અમૂર્ત દ્રવ્ય છે; એટલે તેઓ બીજા પદાર્થની ગતિ–સ્થિતિમાં કેવી રીતે સહાયક થઇ શકે ? એવી શંકા લાવવાને કારણ નથી. દ્રવ્ય અમૂર્ત હોવા છતાં પણ કાર્ય કરી શકે છે આકાશ અમૂર્ત હોવા છતાં પણ બીજા પદાર્થને અવકાશ આપે છે. સાંખ્યદર્શનસંમત પ્રધાન પણ અમૂર્ત છે; આમ છતાં પુરુષને માટે એનું જગત પ્રસવનું કાર્ય સ્વીકારાય છે. બૌદ્ધદર્શનનું વિજ્ઞાન અમૂર્ત હોવા છતાં નામ રૂપાદિની ઉત્પત્તિનું કારણ છે. વૈશેષિકસંમત અપૂર્વ પણ શું છે ? એ પણ અમૂર્ત છે; એમ છતાં એ જીવના સુખદુઃખાદિનું નિયામક છે. એટલે ધર્મ અને અધર્મ અમૂર્ત હોવા છતાં કાર્ય કરે છે એ વિષે શંકા લાવવી નિરર્થક છે.

ધર્મ અને અધર્મ શબ્દ સાધારણ રીતે નૈતિક અર્થમાં વપરાય છે; છતાં જૈનદર્શનમાં એ બન્ને દ્રવ્ય છે, બે એ અજીવ તત્ત્વ છે. કોઇ કોઈ ધર્મ અધર્મના એ બે અર્થ વચ્ચે સંબંધ શોધવાનો પ્રયત્ન કરે છે, તેની જ આલોચના અમો ઉપસંહારમાં કરીશું. ધર્મ ગતિનું કારણ છે અને અધર્મ સ્થિતિનું કારણ છે. નૈતિક અર્થમાં ધર્મ એટલે પુણ્યકર્મ અને અધર્મ એટલે પાપકર્મ. કોઇ કોઇના મત પ્રમાણે ધર્મનો ગતિકારણ ' એ તાત્ત્વિક અર્થ જ મૂળ અને પ્રાચીન છે; પાછળથી એમાંથી જ ધર્મનો નૈતિક અર્થ નીકળ્યો છે. તેઓ કહે છે કે જીવદ્રવ્ય સ્વભાવથી જ **उड्ढगई (उर्ध्वगति)** છે. અર્થાત્ તે વિશુદ્ધ સ્વભાવમાં જેટલે અંશે સ્થિત હશે તેટલે જ અંશે તેની ઉર્ધ્વગતિ થશે અને લોકાગ્ર તરફ આગળ વધશે. ધર્મ એ ગતિકારણ છે; એટલે સુખમય ઉર્ધ્વલોકમાં જવામાં જીવને જે સહાયક થાય તેને ધર્મ કહી શકાય. આ તરફ વળી પાપસ્પર્શરહિત પુણ્યકર્મ કરવાથી જ જીવ ઉર્ધ્વલોકમાં જઇ શકે છે. એ કારણથી જે ધર્મશબ્દ પહેલાં જીવની ઉર્ધ્વગતિનો સહાયક એવો અર્થ પ્રકટ કરતો હતો તે શબ્દ વખત જતાં પૂણ્યકર્મવાચક થઇ ગયો. તેવી રીતે અધર્મ મૂળથી જીવની સ્થિતિનો સહાયક એવા

Aho ! Shrutgyanam

અર્થનો વાચક હોઈ પાછળથી જીવો જે વડે સંસારમાં બંધાઇ રહે છે તે પાપકર્મનો વાચક થઇ પડયો છે. આ મતમાં અમારી આસ્થા બેસતી નથી. ધર્મ અને અધર્મના તાત્વિક અને નૈતિક એ બે અર્થો વચ્ચે ઉપર જે સંબંધસ્થાપન કરવાનો પ્રયત્ન કરવામાં આવ્યો છે તે યુક્તિસંગત (logical) પણ નથી અને કાલક્રમને બંધ બેસતો (chronological) પણ નથી. જીવની માત્ર સ્વાભાવિક ઉર્ધ્વ-ગતિને જ ધર્મ સહાયતા કરે છે એમ માનવું કેવી રીતે યુક્તિયુક્ત હોઇ શકે? જૈનદર્શનમાં ધર્મ સર્વ પ્રકારની ગતિનું કારણ છે, એમ કહેવામાં આવ્યું છે. જીવની ગતિને એ જેમ સહાયતા કરે છે તેમ પુર્ગલની ગતિને પણ સહાયતા કરે છે. બધા પ્રકારની ગતિનું કારણ ધર્મ જીવને માત્ર ઉર્ધ્વગતિમાં સહાયતા કરે એમ કેમ માની શકાય? જ્યારે જીવ જૈનસંમત નરકોમાંના કોઇ એકમાં જાય છે ત્યારે જીવની તે અધોગતિમાં પણ ધર્મ સહાયતા કરે છે એમ અમે સમજી શકીએ છીએ, ધર્મતત્ત્વ ઉર્ધ્વ ગતિને જે રીતે સહાયતા કરે છે તેવી જ અધોગતિને પણ સહાયતા કરે છે. એટલા માટે ધર્મશબ્દનાં 'ગતિકારણ' એવા તાત્ત્વિક અર્થ સાથે તેનાં 'પુણ્યકર્મ' એ નૈતિક અર્થનો કોઈપણ પ્રકારનો સંબંધ હોઈ શકે નહિ. અધર્મની બાબતમાં પણ કહી શકાય કે એ તત્ત્વ દુઃખમય સંસાર અથવા યંત્રણાપૂર્ણ નરકોમાં જીવની સ્થિતિ જેવી રીતે સંભવિત કરે છે તેવી જ રીતે વળી આનંદધામ ઉર્ધ્વલોકમાં જીવની સ્થિતિ સંભવિત કરે છે. એથી સ્થિતિકારણ અધર્મની સાથે પાપકર્મ રૂપ અધર્મનો કોઇ પણ સંબંધ હોઇ શકે નહિ. વળી એમ પણ કહી શકાય નહિં કે પુણ્યકર્મ કરવામાં અમુક પ્રયત્નશીલતા હોય છે અને પાપકર્મમાં અમુક જડતા હોય છે, તેથી ગતિ-કારણવાચક ધર્મ-શબ્દની સાથે પુણ્યકર્મવાચક ધર્મ-શબ્દનો સંબંધ છે અને સ્થિતિ-કારણ વાચક અધર્મશબ્દની સાથે પાપકર્મવાચક અધર્મશબ્દનો સંબંધ છે. જૈનધર્મની નીતિમાં જ નહિં પણ ભારતની લગભગ બધી જ ધર્મનીતિમાં એક વાતનો સ્વીકાર થએલો છે કે પુણ્યવાન, સુકર્મી અથવા ધર્મસાધક વ્યક્તિ ક્રિયાવાન ન પણ હોય. અચંચળ સ્થિતિ કે ચિરગંભીર ધૈર્યની ભારતીય ધર્મનીતિમાં અનેક સ્થળે પ્રશંસા કરવામાં આવેલી છે અને એને જ સાધનાનું મૂળ અને લક્ષ્ય કહેલ છે. એ દૃષ્ટિએ જોતાં ધર્મ કરતાં અધર્મ જ વધુ પ્રમાણમાં ધર્મપોષક છે એમ કહી શકાય.

ખરી વાત એ છે કે ગતિસ્થિતિ-કારણરૂપે ધર્મ અધર્મની તાત્ત્વિકતાનો સ્વીકાર એ જૈનદર્શનની વિશિષ્ટતા છે. એના નૈતિક અને તાત્ત્વિક બન્ને અર્થો વચ્ચે સંબંધ સ્થાપન કરવાનો પ્રયાસ સર્વથા વ્યર્થ લાગે છે.

Aho ! Shrutgyanam

कुंरपाल सोनपाल संबंधी केटलीक हकीकत

अने

अमदावादमां दूधेश्वर आगळथी जडेलो लेख

[લે૦ શ્રીયુત રત્નમણિરાવ ભીમરાવ]

લેખની જગ્યા

થોડા સમય ઉપર અમારી મિત્રમંડળી દૂધેશ્વર પાસે નદી કીનારે ‘ પીકનીક ’ માટે ગઇ હતી. દૂધેશ્વર વોટર વર્કસની જમણી બાજુના એક ખેતરમાં છેક નદી કીનારે એક કુઆના થાળાની બાજુમાં કાંઇ ધોળું જણાયું અને પાસેનાં ઝાંખરાં દૂર કરી જોયું તો આરસનો પત્થર જડેલો હોય એમ લાગ્યું. પત્થર ઉપરનો મેલ જરા સાફ કરીને જોયું તો તેમાં કેટલીક મૂર્તિઓ અને લેખ જેવું દેખાયું; તેથી આખોયે પત્થર બરાબર સાફ કર્યો ત્યારે શુદ્ધ ધોળા આરસમાં એક ઘોડેસ્વારની મૂર્તિ અને નીચે ત્રણ બીજી મૂર્તિઓ અને આજુબાજુ લેખ કોતરેલો જણાયો. મારા એક મિત્રે મને એ પત્થર બતાવ્યો અને લેખનો ભાગ આસપાસ પેન્સીલ ઘસીને ચોખ્ખો ઉકલે એવો કરી આપ્યો.

લેખનું સ્વરૂપ

ઈંટ ચુનાના કુઆમાં બાજુએ આ આરસનો પત્થર જડેલો છે, અને આરસ શુદ્ધ ધોળો છે અને આકાર લંબચોરસ છે. પત્થરની લંબાઇ આશરે પોણા બે ફીટ અને પહોળાઇ એક ફુટ છે. આસપાસ દોઢ કે પોણાબે ઇંચનો બાકીના પત્થરથી જરા ઉંચો હાંશીયો (margin) રાખેલો છે. અને એ હાંશીયાની ઉપર અને આજુબાજુ લેખ કોતરેલો છે. નીચેના ભાગમાં કાંઇ નથી. લેખ ત્રણ બાજુના હાંશીયામાં પુરો ન થવાથી તેનો છેવટનો થોડોભાગ ઉપરના હાંશીયાની લેખની લીંટીની તળે લખ્યો છે.

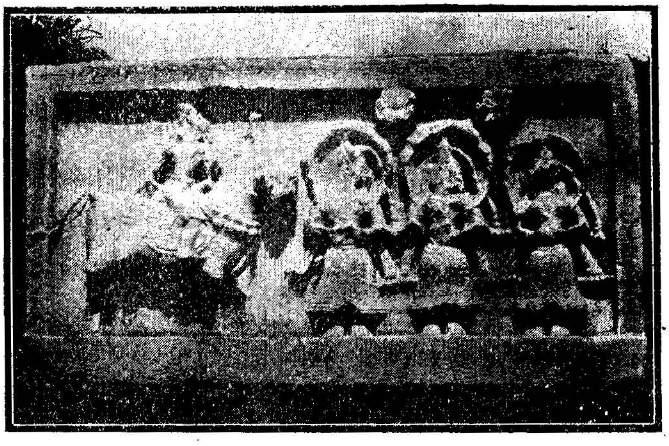

વચ્ચેના લંબચોરસ ભાગમાં ડાબી બાજુએ ઘોડેસ્વારની મૂર્તિ છે અને જમણી બાજુ તેની ત્રણ સ્ત્રીઓ સતી થઇ તેની મૂર્તિઓ છે. મથાળે સૂર્ય ચંદ્ર મુકયા છે. બધીયે મૂર્તિઓનાં મુખ તોડી નાંખેલાં છે. ઘોડાનું મુખ અખંડિત છે. ઘોડેસ્વાર લડવૈયો હોય એવો લાગે છે. સ્ત્રીયોના પહેરવેશ ઉત્તર ગુજરાત કે મારવાડ જેવા દેખાય છે અને ચુંદડીની ભાત પણ સ્પષ્ટ કોતરેલી છે.

લેખના અક્ષર બહુ સ્પષ્ટ કોતરેલા છે અને ભાષા કેટલીક તે વખતના લેખોમાં આવે છે એવી અશુદ્ધ અને મિશ્રણવાળી છે; એ ‘ સાગમન કીધો ’ ‘ સભં ભવતિ, વજે રાજે ’ ‘ ગરેઉ ’ ‘ દલી ’ વગેરે શબ્દોથી જણાશે. અર્થ સ્પષ્ટ છે. લેખ નીચે પ્રમાણે છે:

Aho ! Shrutgyanam

संवत १६७२ वर्षे वइशाष सुदि ३ गेरेउ सं। सोनपाल पुत्र सं। रूपचंद भारजा रूपश्री कोमा कसरजणी त्रणे सागमन कीधो श्रीपातसाहा सलेम वजेराजेः श्री जाहागीर दली श्री अहिमदाबाद नगरे साभमती तीरे सभं भवति. ओसव ज्ञातीय वृद्ध साषाय लोढा गोत्रे रषभदास ततपुत्र सं। कूअरपाल सोनपाल ॥

આ લેખ પ્રમાણે અમદાવાદમાં સાબરમતીને તીરે જહાંગીરના રાજ્યકાળમાં વિ. સં. ૧૬૭૨ વૈશાખ સુદ ૩ ને દિવસે એ પાળીઓ મુકેલો અને એ જગ્યાએ સોનપાલના પુત્ર રૂપચંદની ત્રણ સ્ત્રીઓ સતી થયેલી. કુંવરપાળ સોનપાલના નામથી પ્રસિદ્ધ, ઓસવાળ જ્ઞાતિના લોઢાગોત્રના ઋષભદાસના પુત્રોમાંથી સોનપાળનો એ પુત્ર થાય.

આગ્રાની પ્રશસ્તિ

આ કુંવરપાલ (કુંરપાલ) સોનપાલની એક પ્રશસ્તિ આગ્રાના એક મંદિરમાંથી પ્રો. બનારસીદાસ જૈનને જડેલી અને તે જૈન સાહિત્ય સંશોધકના ખંડ ૨ અંક ૧લામાં પૃ. ૨૫માં પ્રસિદ્ધ થઇ છે. એ પ્રશસ્તિ અને તે સાથે કુંરપાલ સોનપાલ સંબંધી કેટલીક પ્રતિમાઓના લેખોમાં પણ ઉલ્લેખો છે અને પ્રો. બનારસીદાસે ઉપયોગી સમજુતી સાથે પોતાના લેખમાં એ ઉલ્લેખો આપ્યા છે, તે નીચે પ્રમાણે છે:

आर्या । धनदो चर्षभदास । पेमाल्यौ विविधसौख्यधनयुक्तौ ।
अस्तां प्राज्ञौ दौ च तत्वज्ञौ तौ तु तत्पुत्रौ ॥ १४ ॥
रेषाभिधस्तयोर्ज्येष्ठः ।.....................॥ १५ ॥
रेषश्रीस्तत्प्रिया भव्या । शीलालङ्कारधारिणी ।....॥ १६ ॥
तत्सूनुः कुंरपालः । किल विमलमतिः स्वर्णपालो द्वितीय— ।
भ्रातुर्यौदार्यधैर्यप्रमुखगुणनिधिर्भाग्यसौभाग्यशाली ॥
तौ द्वौ रूपाभिरामौ । विविधजिनवृषध्यानकृत्यैकनिष्ठौ ।
त्यागे कर्णावतारौ निजकुलतिलकौ वस्तुपालोपमार्हौ ॥ १९ ॥
श्रीजहांगीरभूपालामात्यौ धर्म्मधुरन्धरौ ।
धनिनौ पुण्यकर्तारौ । विख्यातौ भ्रातरौ भुवि ॥ २० ॥
........तौ धन्यौ कामदौ लोके । लोढागोत्रावतंसकौ ॥ २१ ॥

પ્રતિમાના લેખો.

આ પ્રમાણે આગ્રાની પ્રશસ્તિમાં કુંરપાલ સોનપાલ માટે લખેલું છે. અને રેખા ઉર્ફે રષભદાસના પુત્ર લોઢાગોત્રના કુંરપાલ સોનપાલ તે આ પ્રશસ્તિમાં છે તે જ આપણા લેખના એ સિદ્ધ થાય છે. સોનપાલના પુત્ર રૂપચંદની સ્ત્રીઓ સતી થયાનો આપણો લેખ છે. હવે એ રૂપચંદ સંબંધી પ્રતિમા ઉપરના લેખનો ઉલ્લેખ જોઇએ.

संवत १६७१ आगरावास्तव्य ओसवाल ज्ञातीय लोढागोत्रे गाणी वंसे सं. ऋषभदासभार्या सुः रेषश्री तत्पुत्र संघराज सं. रूपचंद चतुर्भुज सं. धनपालादियुते श्री मदंचलगच्छे—

(જૈન લેખસંગ્રહ નં ૩૦૭)

Aho ! Shrutgyanam

આ ઉપરથી એમ જણાય છે કે રૂષભદાસ અને રેખશ્રીના જ કુંરપાલ સોનપાલ ઉપરાંત રૂપચંદ ચતુર્ભુજ વગેરે બીજા પુત્રો હતા. અને પ્રો. બનારસીદાસ પણ પોતાના લેખમાં એ પ્રમાણે લખે છે. પરંતુ રૂષભદાસ ઓસવાલ જ્ઞાતિનો અને લોઢાગોત્રનો એટલું આપણા લેખનું સમર્થન કરે છે. આપણા લેખમાં રૂપચંદને સોનપાલનો પુત્ર એટલે રૂષભદાસનો પૌત્ર કહ્યો છે. બીજી પ્રતિમાના લેખથી કુંરપાલ સોનપાલ રૂષભદાસના પુત્ર એમ સિદ્ધ થાય છે. અને એમાં રૂપચંદને ઋષભદાસના પુત્ર તરીકે લખ્યો નથી.

श्रीमत्संवत १६७१ वर्षे वैशाष सुदि ३ शनौ आगरा वास्तव्योसवाल ज्ञातीय लोढागोत्रे **गावंसे संघपति ऋषभदास** भा० रेषश्री पुत्र सं. कुंरपाल सं. सोनपाल प्रवरौ.... ॥

હિંદી કાવ્ય

આ સીવાય પાટણના ભંડારમાંથી એક હિંદી કાવ્ય જડેલું તે પણ કુંરપાલ સોનપાલ સંબંધી હોવાથી પ્રો. બનારસીદાસના લેખની તળે સંપાદકે આપ્યું છે. તેમાં નીચે મુજબ ઉલ્લેખ છેઃ—કાવ્યમાં કુંરપાલ સોનપાલને જગડુ, વસ્તુપાલ તેજપાલ વગેરે મહાપુરૂષો સાથે સરખાવે છેઃ

वस्तपाल तेजपाल, हुये रेखचंद नंद । कोरपाल सोनपाल, कीनी भलो करणी ॥ ४ ॥
अडेराय अवठंभ खितीपती रायखंभ । मंत्रीराय आरंभ, प्रगट सुभ साजको ॥ ८ ॥
हय गय हेम दान, मान नंदको समांन । **हिंदु सुरताण सोनपाल रेखराजको** ॥ १० ॥
सैनबर आसनके पैजपर पासनके । निजदल रंजन, भंजन परदलको ॥ ११ ॥
मदमतवारे, विकरारे अतिभारे भारे । कारे कारे बादरसे, बासव सुजलसे ॥ १२ ॥
कवि कहि रूप, नृप भुपतिनिके सिंगार । अति वडवार ऐरापति समबलके ॥ १३ ॥
रेखराजनंद कोरपाल सोनपालचंद । हेतवंनि देत ऐसे हथिनेके हलके ॥ १४ ॥

આ કવિતમાં કુંરપાલ સોનપાલને લોઢા એવું ગોત્રનું ઉપનામ લગાડેલું છે. એટલે કવિત ઉપરથી કુંરપાલ સોનપાલ લોઢા કુળના અને ઋષભદાસ જેનું બીજું નામ રેખરાજ અગર પ્રશસ્તિ પ્રમાણે રેખા હતું તેના પુત્ર થાય.

આ પ્રમાણે કુંરપાલ સોનપાલ આ પ્રશસ્તિ, પ્રતિમાના લેખ, અને હિંદી કવિતમાં આપેલા અને પ્રસ્તુત લેખના તે એકજ છે અને પ્રશસ્તિના લેખને અને આપણા લેખને એક વર્ષનું અંતર છે. પ્રશસ્તિ ૧૬૭૧ સંવતની છે. કુંરપાલ એ કુંવરપાલનું ટુંકુ નામ છે અને આપણા લેખમાં કૂઅરપાલ એમ સ્પષ્ટ આપેલું છે.

રૂપચંદ કોણ

હવે રૂપચંદ સોનપાલનો ભાઇ થાય એમ ઉપરની પ્રતિમાના લેખના આધારે પ્રો. બનારસીદાસ લખે છે. આપણા લેખ પ્રમાણે એ સોનપાલનો પુત્ર થાય. આ પ્રશ્ન વિચારવા જેવો છે. ઉપરની પ્રતિમાના લેખમાં રૂપચંદ ચતુર્ભુજ વગેરેને ઋષભદાસના પુત્ર કહ્યા છે પરંતુ તેમાં કુંરપાલ સોનપાલનું નામ નથી અને રૂપચંદ આદિને તેમના ભાઇ કહ્યા નથી. બીજી પ્રતિમાઓના લેખમાં કુંરપાલ સોનપાલનાં નામ છે પરંતુ રૂપચંદનું નામ નથી. એક લેખમાં કુંરપાળ સોનપાલને તેમના કુલમાં પ્રવર કહ્યા છે. એટલે રૂપચંદનો ઉલ્લેખ ઉપરની પ્રતિમાના લેખમાં અને આપણા લેખમાં જડે છે અને તે જુદી જુદી વિરૂદ્ધ વાત જણાવે છે.

Aho ! Shrutgyanam

પ્રશસ્તિમાં કુંરપાલ સોનપાલના આખા વંશ અને કુટુંબનાં નામ આપેલાં છે. પરંતુ તેનો પાછલો ભાગ સ્પષ્ટ ઉકલતો ન હોવાથી પ્રો. બનારસીદાસે ઉકલ્યા એટલા અક્ષરોજ આપેલા છે. એમાં રૂપચંદનું નામ દેખાતું નથી. પરંતુ કુંરપાલ સોનપાલના ભાઇ તરીકે રૂપચંદનું નામ નથી અને આવે એમ પણ નથી એમ પ્રશસ્તિ ઉપરથી જણાઇ આવે છે. પ્રશસ્તિની ૩૪ મી લીંટીમાં **अथ तयोः परिवारः** એમ લખીને **संङ्घराज** શબ્દ આવે છે અને તે પછી ઘણા શબ્દો તુટે છે.+ એ શબ્દો કુંરપાલ માટે હોય એમ જણાય છે. અને ત્યાં પ્રશસ્તિનો ૩૨ મો શ્લોક પૂરો થાય છે. ૩૫ મી લીંટીના મધ્યથી ૩૩ મો શ્લોક શરૂ થાય છે અને એ શ્લોકની શરૂઆતમાં **सूनवः स्वर्णपाल**—। ----[**चतुर्भुज**]------[**पुत्री**] **युगलमुत्तमम्** ॥ એવા તુટક શબ્દો આવે છે અને ત્યાં ૩૩ મો શ્લોક પુરો થાય છે. **स्वर्णपाल**-। આગળ જે એક અક્ષર તુટે છે તે **स्य** હોય એમ જણાય છે અને સોનપાલના પુત્રો એમ ચોખ્ખો અર્થ બેસે છે. તે પછી શબ્દો તુટે છે પરંતુ ચાર અક્ષર મુકીને કૌંસમાં પ્રો. બનારસીદાસ **चतुर्भुज** લખે છે એટલે ત્યાં શંકા પડે એવી રીતે ચતુર્ભુજ એવો શબ્દ વંચાતો હોવો જોઇએ, અને તે સ્પષ્ટ રીતે વંચાતો ન હોય. એટલે ચતુર્ભુજ પ્રો. બનારસીદાસ લખે છે એમ સોનપાલનો ભાઇ નહી પણ એનો પુત્ર હોઇ શકે. અને જે પ્રતિમાના લેખ ઉપરથી રૂપચંદ ચતુર્ભુજ ને કુંરપાલ સોનપાલના ભાઇઓ ધારવામાં આવે છે તેમાં ચતુર્ભુજની આગળ રૂપચંદને મુકેલો છે. એટલે પ્રશસ્તિમાં **चतुर्भुज** ની આગળ જે ચાર અક્ષર તુટે છે તેમાં **रूपचंद** શબ્દ જ હોવાનો ખાસ સંભવ છે. અને આખીયે લીંટી **सूनवः स्वर्णपालस्य । रूपचंद चतुर्भुजौ** ॥ એમ બેસી રહે છે. અને આપણા લેખમાં તો રૂપચંદને સ્પષ્ટ રીતે સોનપાલનો પુત્ર કહ્યો છે એટલે આ વાતને ટેકો મળે છે, અને પ્રતિમાના લેખમાં કાંઇ ભૂલ હોય કે ઋષભદાસના પૌત્રને બદલે પુત્ર લખાઇ ગયો હોય એમ સ્પષ્ટ જણાઈ આવે છે, પ્રશસ્તિ અને પ્રતિમાઓ એકજ દીવસે લખાઇ છે છતાં પ્રશસ્તીમાં ગુરૂવાર અને પ્રતિમાંમાં શનીવાર છે એ વારભેદ નોંધવા જેવો છે.

રૂપચંદ સોનપાલનો પુત્ર, ભાઈ નહી.

પ્રશસ્તિથી ચાર વર્ષ પહેલાંનો (વિ. સં. ૧૬૬૭). આગ્રાના જૈન સંઘે શ્રી વિજયસેનસૂરિ ઉપર લખેલો એક સાંવત્સરિક પત્ર જૈન સાહિત્ય સંશોધકના ખંડ ૧ અંક ૪ થામાં છપાયો છે. એમાં આગ્રાના અગ્રેસર જૈનોનાં નામ છે. એમાં કુંરપાલ સોનપાલનું નામ નથી. ઋષભદાસનું નામ છે, પરંતુ એ કુંરપાલ સોનપાલના પિતા કે બીજા તે નક્કી થતું નથી. એક બીજા ઋષભદાસનું નામ પાછળ ' સોની ' લખીને જુદું પાડયું છે એટલે પહેલા ઋષભદાસ તે કુંરપાલના પિતા હોઇ શકે. ઋષભદાસના ભાઇ પેમનનું અને તેના પુત્ર ખેતસી અને નેતસીનાં નામ આપ્યાં છે. પરંતુ એ પણ કુંરપાલના સગાજ કે બીજા તે સિદ્ધ થતું નથી. જો ઉપરના નામવાળા પુરૂષો કુંરપાલ સોનપાલના કુટુંબી જનો જ હોય તો કુંરપાલ સોનપાલનું નામ એ પત્રમાં નથી એનું કારણ એકજ હોઇ શકે કે એઓ આગ્રામાં હાજર ન હોય અને કુટુંબી જનો ન હોય તો એમનું કુટુંબ આગ્રામાં થોડા વખત માટે કામસર વસ્યું હોય અને એમનું વતન બીજે કયાંઇ હોય. રૂપચંદની સ્ત્રીઓ અમદાવાદમાં સાબરમતીને કીનારે સતીઓ થઇ એટલે રૂપચંદ કુટુંબ સાથે અમદાવાદ આવ્યા હશે અને એમનું અવસાન અમદાવાદમાં થયું હશે. એટલે શેત્રુંજે સંઘ આવ્યો તેની સાથે એ કુટુંબ અમદાવાદ આવ્યું હોય, કે રાજસેવાના કોઇ કામને અંગે અમદાવાદમાં નિવાસ હોય તે ચોક્કસ કહેવું મુશ્કેલ છે. આગ્રા સંઘના

આગ્રાસંઘનો કાગળ અને કુંરપાલ સોનપાલ

+ આ માટે જુઓ આગરા પ્રશસ્તિઃ જૈનસાહિત્ય સંશોધક ખંડ-૨-અં-૧-પૃ. ૩૩.

Aho ! Shrutgyanam

કાગળમાં જે નામો છે તે કુંરપાલના સગાંનાં ન હોય તો એમને આગ્રાની બહારના કોઈ સ્થળના વતની માનવા કે કેમ તે પણ પ્રશ્ન છે. જો એ કુટુંબ આગ્રાનું વતની ન હોય, અ-

રૂપચંદ અને અમદાવાદ

ગર ટુંક મુદત માટે આગ્રામાં વસ્યું હોય તો રૂપચંદના અમદાવાદમાં થયેલા મરણથી અમદાવાદ કે ગૂજરાતના કોઇ ભાગના વતની ઋષભદાસ વગેરેને માનવા કે નહી એ બીજો પ્રશ્ન છે. મૂર્તિઓના લેખ કુંરપાલ સોનપાલને સ્પષ્ટ રીતે આગ્રાનાજ વતની કહે છે, એટલે એ કુટુંબને આગ્રાનું જ વતની માનવાને ખાસ ટેકો મળે છે. પરંતુ ઉપરનાં કારણો ગૂજરાત બાજુનો સંભવ પણ ઉભો કરે છે. અને આગ્રા તેમજ અમદાવાદમાં એ કુટુંબનો કામ પ્રસંગે થોડો નિવાસ હશે એમ માનવાને લલચાવે છે. પરંતુ મૂર્તિઓના લેખ વિરૂદ્ધ સબળ આધાર ન મળે ત્યાં સુધી રૂપચંદ અમદાવાદમાં કામ પ્રસંગે જ સકુટુંબ આવ્યા હશે એમ માનવું પડે.

કુંરપાલ સોનપાલ અને જહાંગીરના સમયનો ઇતિહાસ

ઉપરની પ્રશસ્તિ અને હિંદી કવિતમાં જહાંગીરના અમાત્ય અને વસ્તુપાલ તેજપાલ જેવા આ બે ભાઇઓને વર્ણવ્યા છે. એટલે એ સમયના એ કોઇ મોટા માણસો હોવા જોઇએ એમ સમજાય છે. જહાંગીરના સમયના ઇતિહાસોમાં કુંરપાલ કે કુંવરપાલ અને સોનપાલ એવાં સ્પષ્ટ નામ જડતાં નથી. જહાંગીરે પોતાનું આત્મચરિત્ર લખ્યું છે એમાં પણ ચોખ્ખાં નામ જડતાં નથી. પણ પ્રશસ્તિ અને હિંદી કાવ્યના વર્ણનને કાંઇક ઠીક બંધ બેસે એવાં બે નામ જડે છે. એ બે નામ આ બે ભાઇઓનાં હશે કે કેમ તે ચોક્કસ કહી શકાતું નથી. છતાં વર્ણનમાં કેટલુંક સાદસ્ય રસમય છે એટલે ટુંકાણમાં અત્રે લખું છું. પરંતુ આ બાબત હજી વધારે તપાસ કરવાની અગત્ય છે.

પ્રશસ્તિમાં કુંરપાલ સોનપાલ બન્ને ભાઇઓને જહાંગીરના અમાત્યો કહ્યા છે. અને વસ્તુપાલ તેજપાલ સાથે સરખાવ્યા છે. હિંદી કવિતમાંથી પણ એટલું સમજાય છે કે બન્ને ભાઇઓ ધાર્મિક અને દાનેશ્વરી ઉપરાંત ખાસ કરીને લડવૈયા અને વીરપુરૂષો હતા, અને એમની પદવી રાજા જેવી હતી જેથી સોનપાલ તો **હિંદુ સુલતાન**–હિંદુ બાદશાહ કહેવાતો, રાજાના એ જમણા હાથ જેવા હતા. આ વર્ણન સાથે જહાંગીરના આત્મચરિત્રમાં જેમનું વર્ણન કાંઇક થોડું બંધ બેસતું આવે છે તે જોઇએ.

કુંવર, અને સુંદર ઉર્ફે રાજા વિક્રમાજીત

જહાંગીરના ઇતિહાસનાં જે પ્રસિદ્ધ પુસ્તકો છે તેમાં કુંરપાલ સોનપાલનાં નામ દેખાતાં નથી. જહાંગીરના આત્મચરિત્રમાં બે વ્યક્તિનાં નામ જણાય છે એમનું વર્ણન કાંઇક અંશે આ બન્ને ભાઇઓને મળે છે. કુંવર અને સુંદર નામના બે ભાઇઓએ જહાંગીરના રાજ્યકાળમાં કેટલોક વખત ઉપયોગી અધિકાર ભોગવ્યો છે. કુંવરનું નામ ફારસીમાં કનહર લખેલું છે અને એ સુંદરનો ભાઇ થાય અને એને ગૂજરાતના વહીવટ ઉપર નીમવામાં આવ્યો હતો એમ જહાંગીર લખે છે. ગૂજરાત પછી એને માળવાની દીવાની ઉપર નીમ્યો હતો. સુંદર અગર સુંદરદાસનાં પરાક્રમો કુંવર કરતાં વધારે જોવામાં આવે છે. અકબરના મનસબદારોની નામાવલીમાં એક સુંદરનું નામ છે તે આજ સુંદર કે બીજો એ નક્કી થઇ શકતું નથી. પરંતુ શાહજહાંના સલાહકારોમાં સુંદર અગત્યનો ભાગ લે છે, શાહજહાં એ વખતે શાહજાદો અને થોડો વખત ગૂજરાતનો સુબો હતો. એ વર્ષોમાં સુંદર કેટલીક લઢાઈઓમાં અને વિષ્ટિઓમાં સફળતા મેળવે છે, એ બધી વિગતને અહીં સ્થળ નથી. જહાંગીર લખે છે કે શાહજહાંના વકીલ તરીકે સારૂં કામ કરવાથી સુંદરને રાયરાયાઁનો ઇલકાબ આપ્યો અને રાજા વિક્રમાજીતનો ઇલકાબ પણ આપ્યો જહાંગીર એમ પણ લખે છે કે રાજા વિક્રમાજીત (વિક્રમાદિત્ય) હિંદુઓમાં મોટો રાજા

થઇ ગયો છે તેથી હિંદુઓમાં એ બહુ માનવાળો ઇલ્કાબ છે. લગભગ ઈ. સ. ૧૬૨૩ સુધી **શાહજહાંને** લીધે અને પોતાની કુશળતા અને પરાક્રમોથી સુંદરદાસ જહાંગીરનો ખાસ માનીતો અને મુખ્ય અમીર ગણાય છે. એ પછી શાહજહાં બળવો કરે છે ત્યારે સુંદરદાસ શાહજહાંનો પક્ષ લઈને જહાંગીર સામે લઢે છે. જહાંગીર લખે છે કે સુંદરના ચઢાવ્યાથીજ શાહજહાંએ બળવો કર્યો હતો અને બળવાખોર અમીરોમાં એ મુખ્ય હતો. બળવાની લઢાઈ ચાલી ત્યાં સુધી એ **શાહ**જહાંનો **જમણો** હાથ અને એના લશ્કરનો ખાસ સેનાપતિ હતો. એજ લઢાઇમાં જહાંગીરનો વિજય થાય છે, અને સુંદરનું મરણ થાય છે. કુંવર રાહ જોઈ છેવટે જહાંગીરના પક્ષમાં હોવાનું જણાવે છે અને બચે છે. *

સોનપાલ અને સુંદરદાસ

આ વર્ણન જોતાં સુંદર એ જ સોનપાલ એ કહેવું મુશ્કેલ છે. સોનપાલનું સ્વર્ણપાલ તો પ્રશસ્તિમાં જ આપેલું છે. અને સુંદર એ શબ્દનું ભાષાંતર હોઇ શકે. જહાંગીરના અમાત્ય, અને સુંદર એ સોનપાલનું નામ છે એમ માનીએ તો એ બે ભાઇનું ઉપરનું વર્ણન પ્રશસ્તિ અને હિંદી કાવ્યને ખાસ મળતું આવે છે. બન્નેએ ગૂજરાતની દીવાની ભોગવી છે. હિંદી કાવ્યમાં કુંરપાલ કરતાં સોનપાલનું વર્ણન વધારે છે અને એનેજ **हिंदुसुरताण** કહ્યો છે. **मंत्रीराय, राईनमुकटमणि**, વગેરે શબ્દો પણ ખાસ સૂચક છે. સુંદર અને સોનપાલ બન્ને લઢવૈયા અને પ્રતાપ અને સત્તામાં પોતે જ રાજા જેવા **खितिपतिरायखंभ**–જહાંગીર અને પછીથી શાહજહાંના ખાસ સ્તંભ–સહાયક–જેવા જણાય છે. એ પણ નોંધવા જેવું છે કે પ્રશસ્તિ બન્ને ભાઇઓને અમાત્ય કહે છે અને હિંદી કાવ્ય તેથી પણ વધુ રાજા જેવું વર્ણન કરે છે. જહાંગીરના રાજ્યનો હેવાલ જોતાં આ કુંવર અને સુંદર સીવાય આવા પરાક્રમના બીજા ભાઇઓ જણાતા નથી એટલે એ બે ભાઇઓ કુંરપાલ સોનપાલ હોય, સોનપાલ–સ્વર્ણપાલ,નું સુંદરદાસ થયું હોય. પાલ,દાસ વગેરે શબ્દો તો નામને છેડે લખનાર ગમેતેમ મુકતા એવા દાખલા છે.

વાંધા

પરંતુ કુંવર અને સુંદર એ બે ભાઇઓના જહાંગીરના આત્મચરિત્રમાં આપેલા વર્ણન સાથે કુંરપાલ સોનપાલનું વૃત્તાન્ત જેવું મળતું આવે છે તેવા કેટલાક વાંધા પણ એ સામ્યમાં આવે છે. જહાંગીરના સમયમાં રાજા વિક્રમાજીત નામના ઇલકાબવાળા ત્રણ પુરૂષો જણાય છે. એક પત્રદાસ રાજા વિક્રમાજીત, બીજો સુંદરદાસ વિક્રમાજીત, અને ત્રીજો બાંધુ અગર માંધુનો રાજા વિક્રમાજીત વાઘેલો. એમાં પત્રદાસ અને સુંદરદાસ બન્નેને રાયરાયાઁનો ઇલ્કાબ મળે છે. પત્રદાસ અકબરના વખતનો અમીર છે અને જહાંગીર એને ' ખત્રી ' લખે છે. બાંધુના રાજાને વાઘેલો લખે છે. આ ત્રણેને વિક્રમાજીત કહ્યા છે. અને તુઝુકે જહાંગીરીના ભાષાંતરકાર રોજર્સ અને બેવેરીજે આ ત્રણે પુરૂષોને એક બીજામાં મેળવીને કાંઈ ગોટાળો કર્યો છે એમ એ ગ્રંથની શબ્દ સૂચિ ઉપરથી જણાય છે. છતાં પણ બરોબર જોતાં સુંદરદાસ વિક્રમાજીત જૂદો જ પુરૂષ હોય એમ જણાઈ આવે છે અને એનાં પરાક્રમો બીજા બે કરતાં વધારે છે. બીજો વિરોધ જરા ભારે છે અને તે એ કે ચરિત્રના પાછલા ભાગમાં જહાંગીર સુંદરદાસને ' બ્રાહ્મણ ' કહે છે. શરૂઆતમાં એવું કાંઈ લખ્યું નથી. આપણા લેખનો સોનપાલ ઓસવાલ જ્ઞાતિનો છે એ સ્પષ્ટ છે. એટલે જહાંગીરે ભૂલમાં સુંદરદાસને બ્રાહ્મણ લખ્યો છે એવું સિદ્ધ ન થાય ત્યાં સુધી આ આખુંયે અનુમાન તુટી પડે છે: આટલા

---

* **જુઓ** Memoirs of Jehangir Vol. I P. 273—74, 402; Vol. II 185, 253—54, 261. **આઇન અકબરીના બ્લોકમેનના તરજુમામાં મનસબદારોમાં છેલ્લું નામ** સુંદરનું છે. **બ્લોકમેનનું ભાષાંતર આ લખતી વખતે મળી શકયું નથી. મનતુખેબુ ત્તવારીખ-બદાૈનીમાં પત્રદાસ વિક્રમાજીતનું નામ છે પણ સુંદરદાસનું નામ નથી.**

Aho ! Shrutgyanam

બધા સામ્યમાં આ એક વિરોધ ઘણો મોટો છે. જહાંગીર હિંદુની જ્ઞાતિ લખવામાં ભૂલ ન કરે કે બધી વીગત બરોબર નોંધે જ એમ માનવાનું કારણ નથી. યૂરોપીય રાજ્યોના પ્રતિનિધીઓની મુલાકાત આત્મચરિત્રમાં નોંધી નથી. સર ટોમસરોનું નામ જ નથી. એટલે સુંદરની જ્ઞાતિ ખરી જ લખી હશે એમ પણ ચોક્કસ કહેવું મુશ્કેલ છે. છતાં બ્રાહ્મણ જ્ઞાતિનો ઉલ્લેખ છે એટલે હાલ તો આ સામ્યને માટે વધારે કાંઈ ચોક્કસ કહેવાય નહી. એમ કહેવાય છે કે જહાંગીરના સમયમાં રાજા વિક્રમાજીતે જીવહિંસા અટકાવી હતી એમ તે સમયનો એક વિદેશી મુસાફર લખે છે. આ વિક્રમાજીત તે સુંદરદાસ હોય તો તે જૈન હોય એવો સંભવ બળવાન થાય.

કુંરપાલ સોનપાલ ગમે તે હોય, પણ જૈનોમાં કેટલીક મહાન વ્યક્તિઓમાં એમની પણ ગણત્રી થાય છે. અને આપણો લેખ એમની હકીકતમાં કેટલીક પુરવણી કરે છે. જહાંગીરના સમયના મહાપુરૂષોના હેવાલમાં આ બન્ને વ્યક્તિઓની હજી વધારે તપાસ થવાની જરૂર છે. મને જે સામ્ય નજરે પડ્યું છે તે વાંધાવાળું અને કાચું જ છે. આ સંબંધી કોઇ વધારે પ્રકાશ પાડશે એમ ઇચ્છું છું.×

× દુધેશ્વર આગળનો આ લેખ કુઆના થાળામાં જડેલો છે. પાળીઓ આખોયે ઘણો સુંદર છે અને અસલ સુંદર છત્રીમાં જડેલો હશે અને પછીથી એ તુટી જતાં નદી કીનારે રખડતો હશે તે આ કુઆમાં જડ્યો હશે એમ જણાય છે. ઘણા જૂના વખતથી ત્યાં જ સ્મશાન હતું એમ મીરાતે અહમદી લખે છે. એટલે સ્મશાનમાં રૂપચંદની પાછળ ત્રણે સ્ત્રીઓ સતી થઇ હશે. આ પાળીઓ હાલમાં છે એવા સ્થળમાં રાખવા જેવો નથી. અને અમદાવાદના કલારસિક અને ઇતિહાસના શોખીન ગૃહસ્થોએ કુઆના માલીક પાસેથી એની માંગણી કરી કોઈ સારે સ્થળે કે કોઇ સંગ્રહસ્થાનમાં અગર તો અમદાવાદના ભાવિ મ્યુઝીયમમાં મુકાવવા યત્ન કરવો જોઇએ.

Aho ! Shrutgyanam

जैन ऐतिहासिक चर्चा

જિનભદ્રગણિ ક્ષમાશ્રમણ વિરચિત જીતકલ્પભાષ્ય

દુઃષમાંધકારનિમગ્ન જિનપ્રવચનપ્રદીપ એવા શ્રીજિનભદ્રગણિ ક્ષમાશ્રમણ વિરચિત જીતકલ્પસૂત્ર જે અમે સંપાદિત કરી પ્રકાશિત કર્યું છે તેની પ્રસ્તાવનામાં અમે એ ધ્વનિત કર્યું હતું કે સુપ્રસિદ્ધ વિશેષાવશ્યક ભાષ્ય ઉપરાંત બીજાં પણ ભાષ્યો શ્રીજિનભદ્રગણિ ક્ષમાશ્રમણે કરેલાં હોય તેવું અનુમાન થાય છે અને તે અનુમાનના સમર્થનમાં અને નિશીથસૂત્રભાષ્યનો નિર્દેશ કર્યો છે. એક વિદ્વાન મુનિવરે જીતકલ્પભાષ્ય પણ સ્વયં એ સૂત્રકાર ક્ષમાશ્રમણનું કરેલું છે એ બાબતનો ચોક્કસ પુરાવો ખોળી કાઢયો છે, જેની નોંધ અહિં લઇએ છીએ. ઉક્ત જીતકલ્પસૂત્રનું પુસ્તક અમે એ મુનિવરને ભેટ મોકલ્યું તેની પહોંચ લખતાં તેઓ જણાવે છે કે—

" આપે મોકલાવેલ જીતકલ્પની બન્ને બુકો મળી હતી. સાથે જેમના નામની બુકો મોકલાવી હતી તે તેમને આપી દીધેલ છે. આપે મોકલાવેલ સ્નેહ-ભેટણા માટે જેટલો આનંદ પ્રદર્શિત કરૂં તેટલો ઓછો જ છે. આપની વિદ્વતા ભરી પ્રસ્તાવના વાંચી અત્યંત આનંદ થયો છે. તેમાંની એક વાત માટે આપનું ધ્યાન ખેંચું છું.

મેં જીતકલ્પ ભાષ્ય પૂર્ણ વાંચેલ નથી પણ જેટલું વાંચ્યું છે તેટલામાં એક ગાથા આવી છે તે ઉપરથી ચોક્કસ જણાય છે કે તે ભાષ્ય સ્વોપજ્ઞ છે. ભલે તેનો નિર્દેશ ચૂર્ણિકારે નથી કર્યો.

तिसमयहारादीणं गाहाणट्ठण्ह वी सरूवं तु ।
वित्थरयो वण्णेज्जा जह **हेट्ठाऽऽवस्सए** भणियं ॥ ६१ ॥

આ ગાથા જી. ક. ભા. માં ૬૧ મી છે. તે અવધિજ્ઞાનના વર્ણન પ્રસંગે આવે છે. નિર્યુક્તિની આઠ ગાથાઓ મૂકી છેવટે કહે છે કે " જેમ **નીચે આવશ્યકમાં** કહ્યું છે તેમ વિસ્તારથી વર્ણન કરવું." અન્ય આચાર્ય કૃત ભાષ્ય હોત તો તેમને **હેટ્ઠા** શબ્દ કહેવાની જરૂરત ન જ હોય એ આપ સ્વયં જાણી જ શકો.

Aho ! Shrutgyanam

अर्हम्

णमो त्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स

जैन साहित्य संशोधक

जैन इतिहास साहित्य तत्त्वज्ञान आदि विषयक सचित्र त्रैमासिक पत्र

तृतीय खंड

संपादक
श्री जिनविजयजी

प्रकाशक
जैनसाहित्य संशोधक कार्यालय
एलीसब्रीज, अमदावाद.

महावीरनिर्वाण संवत् २४५४. विक्रम संवत् १९८४.

Aho ! Shrutgyanam

તૃતીયખંડ–વિષયસૂચિ

૧ અધ્યાપક ડૉ. હર્મન યાકોબીનો પત્ર [સંપાદકીય] ૧૦૨–૧૦૪

૨ અધ્યાપક ડૉ. હર્મન યાકોબી લિખિત સમરાઇચ્ચકહાની પ્રસ્તાવના
[અનુ૦ શ્રીયુત ચિમનલાલ જેચંદ શાહ બી. એ.] ૨૮૨–૨૯૪

૩ અવ્યવહાર રાશિને વ્યવહાર રાશિની કલ્પના [શ્રીહર્ષચંદ્રજી સ્વામી] ૩૧૬–૩૧૭

૪ આજીવિક સંપ્રદાય [મૂળ લે. એ. એફ. આર. હોઅર્નલે] ૩૩૪–૩૫૮
[અનુ૦ શ્રી ચુનીલાલ પુરુષોત્તમ બારોટ]

૫ આનંદવિમલસૂરિએ કરેલું યતિબંધારણ [સંપાદકીય] ૩૫૯–૩૬૦

૬ આવશ્યક સૂત્રના કર્તા કોણ ?
[લે. અધ્યાપક શ્રીયુત પં૦ સુખલાલજી] ૨૨૯–૨૪૦

૭ આહાર શુદ્ધિ અને રસત્યાગ
[લે. શ્રીયુત વાલજી ગોવિંદજી દેસાઈ બી. એ. એલ. એલ. બી.] ૮૫–૮૭

૮ ઉજ્જયિનીના સંઘનું વિજ્ઞપ્તિ પત્ર [સંપાદકીય] ૨૭૭–૨૮૧

૯ એક ઐતિહાસિક શ્રુતપરંપરા
[લે૦ અધ્યાપક શ્રીયુત રસિકલાલ છોટાલાલ પરીખ] ૧૫૩–૧૬૦

૧૦ કડુઆ મતની પટ્ટાવલી (સંપાદકીય) ૨૭૩–૨૭૭

૧૧ કલિંગના ચક્રવર્તી મહારાજ ખારવેલના શિલાલેખનું વિવરણ ૩૬૬–૩૮૨
[લે. વિદ્યામહોદધિ શ્રી કાશીપ્રસાદ જાયસવાલ એમ. એ. પટણા]
(અનુ૦ પં૦ સુખલાલજી)

૧૨ કવિ દીપવિજયજી લિખિત મહાનિશીથ સૂત્ર પરિચય (સંપાદકીય) ૨૫૮–૨૬૧

૧૩ કુવલયમાંલા–આઠમા સૈકાની એક જૈન કથા (સંપાદકીય) ૧૬૯–૧૯૪

૧૪ કેટલાક વિચારવા લાયક પ્રશ્નો [એક મુનિ] ૩૧૮–

૧૫ કુંરપાલ સોનપાલ સંબંધી કેટલીક હકીકત અને અમદાવાદમાં દૂધેશ્વર આગળથી જડેલો લેખ [શ્રીયુત રત્નમણિરાવ ભીમરાવ] ૩૯૩–૩૯૯

૧૬ જિનપ્રભસૂરિકૃત ફારસી ભાષામાં ઋષભદેવ સ્તવન [સંપાદકીય] ૨૧–૨૯

૧૭ જૈન ઐતિહાસિક ચર્ચા ૪૦૦

૧૮ જૈનતત્ત્વ ચર્ચા [પં. સુખલાલજી] ૨૨૩–૨૨૮

૧૯ જૈનદર્શનમાં ધર્મ અને અધર્મ તત્ત્વ ૩૮૩–૩૯૨
[લે. શ્રીયુત હરિસત્ય ભટ્ટાચાર્ય એમ. એ. બી. એલ.]
(અનુ૦ શ્રી નગીનદાસ પારેખ અધ્યાપક ગૂજરાત મહાવિદ્યાલય)

Aho ! Shrutgyanam

૨૦ જૈન પ્રતિમાવિધાન અને ચિત્રકલા ૫૮–૬૧
[લે. શ્રીયુત નાનાલાલ ચમનલાલ મ્હેતા આઈ. સી. એસ.]
૨૧ ધર્મસમુદ્રકૃત શકુંતલા રાસ ૧૯૫–૨૧૫
[સંગ્રાહક શ્રીયુત મોહનલાલ દલીચંદ દેશાઇ બી. એ. એલ. એલ. બી.]
૨૨ ધર્માસ્તિકાય એટલે શું ? ૩૫–૪૨
[લે. પંડિત શ્રીયુત બેચરદાસ જીવરાજ ન્યાય–વ્યાકરણ તીર્થ]
૨૩ નલવિલાસ નાટકઃ એકગ્રંથ પરિચય ૨૧૬–૨૨૩
[લે. અધ્યાપક શ્રીયુત રામનારાયણ વિશ્વનાથ પાઠક]
૨૪ નવપ્રકાશિત જૈનગૂર્જર કવિઓ વિગેરેનો ગ્રંથપરિચય ૧૪૮–૧૫૨
[સંપાદક અને પં. સુખલાલજી]
૨૫ નંદુરબાર નિવાસી કાલૂશેઠની ગ્રંથ પ્રશસ્તિ [સંપાદકીય] ૧૬૬–૧૬૭
૨૬ પવનદૂતનો કર્તા ધોયી ૯૭–૧૦૨
[લે. રા. બ. શ્રીયુત કેશવલાલ હર્ષદરાય ધ્રુવ]
૨૭ પંન્યાસ પદવી [સંપાદકીય] ૩૧૯–૩૨૦
૨૮ ભાવનગરની જૈન ધર્મપ્રસારક સભાએ બજાવેલી જૈનસાહિત્યની સ્તુત્યસેવા ૬૮–૭૮
[લે, શ્રીયુત કુંવરજી આણંદજી શાહ]
૨૯ ભૂગોળ ખગોળ સંબંધી કેટલાક પ્રશ્નના ખુલાસા [લે. મુનિ હર્ષચંદ્રજી] ૩૬૧–૩૬૫
૩૦ મહમૂદ ગજનવી અને સોરઠના સોમનાથ (સંપાદકીય) ૨૫૨–૨૫૯
૩૧ મહાકવિ ધનપાલકૃત સત્યપુરીય શ્રી મહાવીર ઉત્સાહ (સંપાદકીય) ૨૪૧–૨૪૩
૩૨ મહાકવિ ધનપાલવિરચિત વિરોધાભાસાલંકારમય શ્રીમહાવીરસ્તુતિ ૨૯૫–૩૧૨
[વિવેચક–પં૦ શ્રી. બેચરદાસ જીવરાજ]
૩૩ મહામાત્ય વસ્તુપાલ તેજપાલના બે રાસ [સંપાદકીય] ૧૦૫–૧૨૦
૩૪ મહોપાધ્યાય શ્રીયશોવિજયગણિલિખિત ફલાફલ પ્રશ્ન પત્રક [સંપાદકીય] ૧૬૧–૧૬૫
૩૫ મૂર્તિપૂજાનું માહાત્મ્ય [સંપાદકીય] ૨૫૮–૨૬૧
૩૬ રત્નસિંહસૂરિકૃત આત્માનુશાસ્તિભાવના [અનુ–પં૦ સુખલાલજી] ૪૩–૪૬
૩૭ રાયચંદભાઇનાં કેટલાંક સંસ્મરણો ૪૭–૫૭
[લે. મહાત્મા ગાંધીજી]
૩૮ વડોદરા નરેશનો જૈનસાહિત્ય પ્રેમ [સંપાદકીય] ૮૨–૮૪
૩૯ વિબુધવિમલસૂરિ–વિજ્ઞપ્તિપત્ર [સંપાદકીય] ૩૨૬–૩૩૩
૪૦ શ્રીઉમાસ્વાતિવાચક અને તત્વાર્થાધિગમસૂત્ર ૬૨–૬૭
[લે. શ્રીયુત ચિમનલાલ દલસુખ શાહ બી. કોમ]
૪૧ શ્રીજિનભદ્રગણિ ક્ષમાશ્રમણનો સમય ૮૮–૯૬
[લે. શ્રીયુત મોહનલાલ ભગવાનદાસ ઝવેરી સોલીસીટર]

Aho ! Shrutgyanam

૪૨ શ્રીમદ્ દેવવાચક ક્ષમાશ્રમણકૃત વીરશાસન સ્તુતિ [સંપાદકીય] ૯

૪૩ શ્રીમદ્ દેવવાચક ક્ષમાશ્રમણકૃત શ્રમણસંઘની સ્તુતિ ૬–૮

૪૪ શ્રીમદ્ દેવવાચક ક્ષમાશ્રમણકૃત શ્રીમહાવીર દેવની નાંદિક સ્તુતિ ૧–૬

૪૫ શ્રીમત્ સિદ્ધસેન દિવાકરપ્રણીત ન્યાયાવતાર સૂત્ર ૧૨૧–૧૪૭
[વિવેચક–અધ્યાપક શ્રીયુત પં. સુખલાલજી]

૪૬ શ્રી વિબુધપ્રભુવિનિર્મિતા શ્રીઋષભકુંતલવર્ણન–પંચવિંશતિકા ૩૨૧–૩૨૫

૪૭ શ્રી સર્વવિજયવિરચિત ઋષભ અને વર્ધમાન જિનસ્તુતિ [સંપાદકીય] ૧૬૮

૪૮ શ્રી હેમચંદ્રસૂરિપ્રસાદીકૃત મંત્રપદો ,, ૯–૨૦

૪૯ શ્વેતાંબર સંપ્રદાયના ૮૪ ગચ્છ ,, ૩૦–૩૪

૫૦ સત્યપુરીય શ્રીમહાવીર ઉત્સાહ પરિચય ,, ૨૪૪–૨૫૧

૫૧ શ્રી જાતિને દૃષ્ટિવાદ અંગ ભણવાના નિષેધપર એક વિચાર [પં. સુખલાલજી] ૩૧૩–૩૧૬

૫૨ હિંદીકલા અને જૈનધર્મ ૭૯–૮૧
[લે. શ્રીયુત રવિશંકર મહાશંકર રાવલ]

ચિત્રસૂચિ

૧ શ્રી અજિતનાથ તીર્થંકરની ધાતુમયમૂર્તિ

૨ શ્રીમદ્ રાજચંદ્ર

૩ પૂજ્ય મુનિમહારાજશ્રી વૃદ્ધિચંદ્રજી

૪ શ્રી જૈનધર્મ પ્રસારક સભાનું સ્વીયભવન

૫ શ્રીયુત કુંવરજી આણંદજી (ભાવનગર)

૬ શ્રીયુત નાગરદાસ પરસોતમદાસ (રાણપુર)

૭ જૈનસાહિત્યના મહાન અભ્યાસી
પ્રો. હર્મન યાકોબી (જર્મની)

૮ મહં. શ્રી વસ્તુપાલ મહં. શ્રી લલિતાદેવી
મહં. શ્રી વેજલદેવી મહં.
શ્રી તેજપાલ મહં. શ્રી અનુપમાદેવી

૯ મહોપાધ્યાય શ્રીમદ્ યશોવિજય ન્યાયાચાર્ય સંકલિત અને સ્વહસ્તલિખિત પ્રશ્નચક્ર

૧૦ નંદુરબાર નિવાસી શ્રેષ્ઠી કાલુએ સં. ૧૫૫૧માં લખાવેલા જ્ઞાનભંડારના ગ્રંથોમાંના એક ગ્રંથનું અંતિમ પત્ર

૧૧ આબુ દેલવાડા જૈનમંદિર

૧૨ આબુ દેલવાડા જૈનમંદિર

૧૩ સિદ્ધક્ષેત્ર શત્રુંજય પાલીતાણા

૧૪ જર્મન પ્રો. ડબ્લ્યુ શુબ્રિંગ પી. એચ. ડી. ગયા શિયાળામાં અમદાવાદ આવેલા ત્યારે જૈન સાહિત્ય સંશોધક કાર્યાલય તરફથી તેમને આપવામાં આવેલી પાર્ટીના સમયે લીધેલો ફોટોગ્રાફ.

૧૫ ગૂજરાત પુરાતત્ત્વ મંદિર (અમદાવાદ)ની પ્રબંધ સમિતિ.

Aho ! Shrutgyanam

श्री जिनविजय सम्पादित ग्रन्थोनी नामावली

१ जैन तत्त्वसार (હિન્દી ભાષાંતર)

२ विज्ञप्ति त्रिवेणी (સંસ્કૃત મૂળ-હિન્દી પ્રસ્તાવના)

३ कृपारस कोष („ „ „)

४ शत्रुंजय तीर्थोद्धार प्रबन्ध „ „

५ द्रौपदी स्वयंवर नाटक „ „

६ प्राचीन जैन लेख संग्रह ભાગ ૧ લો. (પ્રાકૃત મૂળ-ગૂજરાતી વિવેચન.)

७ „ ભાગ ૨ જો (૫૫૭ શિલાલેખનો સંગ્રહ. „)

८ जैन ऐतिहासिक गूर्जरकाव्य संचय (૩૩ ઐતિહાસિક રાસોનો મોટો સંગ્રહ.)

९ हरिभद्राचार्यस्य समयनिर्णयः (સ્વતંત્ર સંસ્કૃત નિબંધ)

१० कुमारपाल प्रतिबोध (પ્રાકૃત ભાષાનો ૧૨ હજાર શ્લોકનો મહાન્ ગ્રંથ.)

११ प्राकृत कथा संग्रह (ગૂજરાત પુરાતત્ત્વ મંદિર ગ્રંથાવલી)

१२ पाली पाठावली (પાલી ભાષાની પાઠમાળા. ગૂ. પુ. મં.)

१३ अभिधानप्पदीपिका (પાલી ભાષાનો શબ્દકોષ ગૂ. પુ. મં.)

१४ जीतकल्पसूत्र-मूल, चूर्णि, टिप्पण समेत (વિસ્તૃત ગૂજરાતી પ્રસ્તાવના)

१५ विजयदेवमाहात्म्य (૧૭ મા સૈકાના એક પ્રસિદ્ધ જૈનાચાર્યનું સંસ્કૃત ચરિત્ર)

હાલમાં છપાતા ગ્રંથો

१६ प्राचीन गूजराती गद्य संदर्भ (૧૫ મા સૈકાના ગૂજરાતી ગદ્યનો સંગ્રહ.)

१७ गूजरातना इतिहासनो साधन-संग्रह, ग्रंथ १ लो.

(१) मेरुतुङ्गाचार्यरचितः प्रबन्धचिन्तामणिः सटिप्पण।

મુદ્રણસ્થાન : આદિત્ય મુદ્રણાલય, રાયખડરોડ-અમદાવાદ : મુદ્રક: ગજાનન વિશ્વનાથ પાઠક

Aho ! Shrutgyanam